आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की पी–एच० डी०
की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध सार

निर्देशक :

प्रोफ़ेसर अजब सिंह
पी–एच०डी०, डी०लिट्
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

शोधार्थीः

मुहम्मद इमरान ख़ान

हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़।

2002

शोध सार

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत आधुनिकता सैद्धान्तिक विश्लेषण करने का प्रयास किया है। आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि है, जो वैज्ञानिक एवं मानववादी दृष्टि के अभाव में विकसित नहीं हो सकती। इसीलिए आधुनिकता जीवन को वैज्ञानिक आधार प्रदान करती है। इसकी भंगिमा मनुष्य की चेतना से जुड़ी है, और यह मनुष्य की आत्मिक खोज को प्रश्रय देती है। इसमें मानव मूल्यों के द्वन्द्व की प्रक्रिया में घिरे हुए मानव बिम्ब उभरते हैं। अतः आधुनिकता मध्ययुगीन भावबोध के विरूद्ध एक दृष्टिकोण है, प्रक्रिया है, अद्यतनता भी है, मानव जीवन मूल्यों को नवीन भावबोध के साथ उपस्थित करना भी है, साथ ही वैज्ञानिक बौद्धिकता इसमें सर्वोपरि है। आधुनिकता एक दृष्टिकोणस तथा प्रक्रिया होने के कारण अपनी स्थिति में आज भी विकासमान पौधे की तरह है जो अपना क्षण प्रतिक्षण स्वरूप बदलती है। आधुनिकता को अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय विचारकों ने परिभाषा में बाँधने की कोशिश की है लेकिन वह इसे बाँध नही पायें।

पाश्चात्य विद्वानों ने आधुनिकता के सन्दर्भ में अपने मतों को इस प्रकार प्रस्तुत किया – कामू ने सिसिफस के आधार पर आधुनिकता को विसगंति के रूप में पहचाना है। इससे एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि आधुनिकता के बोध और नगर के बोध में नाता अवश्य है जी0एस0 फ्रेजर आधुनिकता को ऐतिहासिक सन्दर्भो में देखना उचित समझते हैं। स्टीफेन स्पेण्डर कथन है – आधुनिकता, समसामयिक परिप्रेक्ष्य और परिदृश्य के प्रति तीव्र जागरूकता है। मैथ्यू अर्नाल्ड आधुनिकता का मूल लक्षण ही युग का प्रतिनिधित्त्व मानता है। जो कलाकार की आत्मा और युग के प्रति जागरूकता के बिना सम्भव नहीं।

नाटर्न सिन्सवर्ग – आधुनिकता को अनिवार्य प्रक्रिया मानता है। ब्रायण्टी का मत है कि 'संस्कृति, राजनैतिक प्रणाली, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था जब तक पूरी तरह आधुनिक नहीं हो जाती, तब तक आधुनिक प्रणाली का निर्माण नहीं हो सकता।

पाश्चात्य विद्वानों के आधार पर भारतीय विचारकों ने भी आधुनिकता को व्याख्यायित करने की कोशिश की है। प्रोफेसर अजब सिंह का मत है– आधुनिक युग की सांसारिक

व्यस्तता में व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व एवं पहचान खो गई। इस खोये हुए व्यक्तित्व की खोज–प्रक्रिया की संज्ञा आधुनिकता है। डा0 इन्द्रनाथ मदान– ने आधुनिकता को एक प्रक्रिया मानते हैं जो अनेक दौरों से गुजर चुकी है अतः उसके किसी एक दौर पर अंगुली रख कर यह नहीं कहा जा सकता कि यह आधुनिकता है। डॉ0 गिरिजाकुमार माथुर आधुनिकता को नवमानव की खोज मानते हैं। डॉ0 बच्चन सिंह इसे एक ही बिन्दु पर स्थिति एवं गति दोनों मानते हैं। डॉ0 धर्मवीर भारती का मत है– इसका स्वीकार भी आधुनिकता है और अस्वीकार भी आधुनिकता है, डॉ0 रामेश्वर खण्डेलवाल आधुनिकता को जीवन और जगत को काल बिन्दु से देखने और समझने की एक भिन्न दृष्टि मानते हैं। डॉ0 जगदीश गुप्त आधुनिकता को पुरातन की सापेक्षता में स्वीकार करते हैं। डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी – आधुनिक वह जीवन दृष्टि है जिससे हम अपनी युगीन संस्कृति को समझना चाहते हैं। डॉ0 रामदरश मिश्र, आधुनिकता को 'मूल्य एवं निर्यात' दोनों ही स्वीकार करते हैं।

पाश्चात्य एवं भारतीय विचारकों के मतों को देखने के पश्चात् यह कहा जा सकता है। आधुनिकता काल सापेक्ष दृष्टि होने के कारण प्रश्नाकुल मानसिकता है। इसमें बौद्धिकता का निरूपण भी है। इसीलिए यह बँधी बँधायी परम्परागत व्यवस्था को तोड़ती है। अतः आधुनिकता को न केवल परम्परा में देखा जा सकता है और न ही परम्परा से हटकर। न ही इसे अतीत के सापेक्षा में देखा जा सकता है। न अतीत से हटकर। इसमें ऐतिहासिक दृष्टि भी है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान आधुनिकता को प्रक्रिया मानते हैं, इसमें बुद्धिवाद का निरूपण भी है और खण्डन भी। अतः आधुनिकता जीवन को समग्रता में देखने की शक्ति देती है। इसी विवेचन के आधार पर हमने आधुनिकता को प्रवृत्तियों के रूप में बाँधने का प्रयास किया है–

1. आधुनिकता जीवन के प्रति प्रवृत्तिवादी बौद्धिक चिन्तन धारा है।
2. आधुनिकता तार्किक वैज्ञानिक दृष्टि एवं संदेह युक्त जिज्ञासु मानसिकता को महत्त्व देती है।

3. आधुनिकता आन्तरिक अनुभूतियों की काल्पनिक अभिव्यक्ति है इसके मूल में आन्तरिक भावना प्रधान रहती है आधुनिक काव्य में व्यक्ति की प्रधानता महत्त्वपूर्ण है क्योंकि व्यक्तिवाद के आधार पर भाव प्रवणता तथा कल्पनाशीलता इस काव्य में विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।
4. आधुनिकता में मानवतावादी चेतना सर्वोपरि है। इसमें भावना के स्थान पर विवेक को तथा आदर्शमयता के स्थान पर आकांक्षा को महत्त्व दिया जाता है।
5. आधुनिक एक काल सापेक्ष दृष्टि है जो मनुष्य को आधुनिक समाज से जोड़ती है। इसके साथ ही वह जड़ता का विरोध भी करती है तथा मनुष्य जीवन को पूर्णतः में देखना चाहती है।

द्वितीय अध्याय में आधुनिकता का तुलनात्मक अनुशीलन किया है। आधुनिकता का आशय देशकाल बोध से लिया जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि आधुनिकता मानवीय प्रगति की सूचना देती है। मानववाद आधुनिकता की प्रवृत्ति है। आधुनिकता में साहित्य का मूल्यांकन यथार्थपरक धरातल पर किया जाता है, क्योंकि विभिन्न परिस्थितयों एवं वातावरण के फलस्वरूप बौद्धिक कल्पनाएँ विभिन्न परिवर्तनों को ग्रहण करती हुए अत्यन्त नवीनतम रूप में दृष्टिगोचर होने लगी। डॉ0 बच्चन सिंह के अनुसार 'आधुनिकता ज्ञान विज्ञान और टेक्नॉलाजी के फलस्वरूप उत्पन्न मानवीय स्थितियों का नया, गैर–रोमेंटिक और अमिथकीय साक्षात्कार आधुनिकता है। आधुनिकता के विषय हम जिस युग बोध की चर्चा कर रहे हैं। वह समय के समानान्तर मनुष्य को मनुष्य रूप में समझने की माँग है, इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक दृष्टि भी मानववाद का ही पक्ष है, क्योंकि कोई भी वैज्ञानिक दृष्टि मानवता के विरोध में खड़ी नही हो सकती। अशोक वाजपेयी तथा डॉ0 नामवर सिंह–आधुनिकता को मूल्य के रूप में स्थापित करना चाहते हैं। हरिचरण शर्मा के अुनसार– 'आधुनिकता का वास्तविक अर्थ विगत सांस्कृति मूल्यों को अपने अन्दर समेटकर मानव की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य विषय के दायित्त्व की सक्रियता और चेतना को स्वीकार करके चलना है

आज के संघर्षगामी जीवन में मनुष्य की संवेदना कुछ दूसरे और नये ढंग से अनुभव कर रही हैं अनुभूति और संवेदना का यह नयापन आधुनिकता का ही एक अंग हैं।.

समकालीन अंग्रेजी शब्द (Contemporary) का समानार्थक है जिसका अभिप्राय है– सम+काल अर्थात् जो काल या समय के 'सम' या साथ–साथ। 'समय' का अर्थ केवल 'काल' नही समय सन्दर्भ है जो उस युग को इतिहास की दृष्टि से विशिष्ट बना देता है।

समकालीनता में यथार्थ का बोध प्रमुख रहता है। यही यथार्थ बोध कविता में कथ्य बनकर उभरता है। डॉ0 ज्ञानवती अरोरा का समकालीनता के विषय में विचार है, "समकालीनता को एक मानसिकता भी कहा जा सकता है जो नये जीवन सन्दर्भों को उसके नये आयामों में जींवत रूप में प्रस्तुत करती है यह प्रस्तुति यथार्थ के धरातल पर होती है। ये जीवन सन्दर्भ जीवन को अर्थवत्ता प्रदान करते हैं। एक नयी दृष्टि, नयी राह और धारणायें मिलती और बनती हैं, जो जीवन का मार्ग दर्शन करने में सक्षम है। कोरी भावुकता अथवा आदर्श जो इस धरती पर सम्भव नहीं, उसका सन्निवेश नहीं रहता है।" समकालीनता ही वह बिन्दु, साहित्य जगत् में है, जहाँ से साहित्य रचना अग्रसर होती है ; क्योंकि समकालीनतात में परम्परा है, संस्कृति है, वह केवल 'आज' नहीं है। 'आज' बीते कल से ही निर्मित होता है। 'आज' और 'कल' का जोड़ ही समकालीनता है।

इस प्रकार समकालीनता देशकाल के सन्दर्भो में संपृक्त है यानी वह ऐतिहासिक है, काल विशिष्ट है, सामयिक सन्दर्भ, मानवीय प्रसंग है, राजनीति को भावबोध द्वारा साहित्य में प्रस्तुत करती है। ऐतिहासिक दबाब भी है, विरोधी पक्ष को भी देखा–समझा गया है। इसके बिना समकालीनता नहीं हो सकती। समकालीनता वस्तुतः आधुनिकता का लघु रूप है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान का विचार है–समकालीन के पहचान की कोशिश में आधुनिकता का रूप उभरता है। समकालीनता को आधुनिकता से जोड़ना भूल होगी। क्योंकि हम आधुनिक बनकर समकालीनता से शत् प्रतिशत अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ पाते हैं, समकालीन होकर आधुनिकतता से अपना सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।

आधुनिकता एक युग विशेष का भाव है जबकि समकालीनता वर्तमान की स्थिति से उत्पन्न आयाम है। डॉ0 अजब सिंह ने समकालीनता के विषय में अपने विचार प्रकट किये हैं–"समकालीन मानव जीवन बोध के फलस्वरूप कवि लोकतान्त्रिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक चेतना को चित्रित करता है फलतः सामाजिक धरातल चरमरा जाता है, एक नूतन परिवेश उभरता है। युग सापेक्षता के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद ने एक नया रूप लिया, यथार्थवाद के चिन्तन ने उसे एक नया रूप दिया।"

जिस प्रकार मध्ययुग से विलग कर आधुनिकता खड़ी हुई उसी प्रकार आधुनिकता के प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्तर आधुनिकता अस्तित्व में आई। यह घोर यथार्थवादी एवं वैज्ञानिक दृष्टि है तथा साथ ही ऐसी फिसलदार पदावली है जिसे आसानी से स्थिर नहीं किया जा सकता। देवेन्द्र इस्सर–उत्तर आधुनिकता को साहित्य एवं संस्कृति की नयी सोच के रूप में देखते हैं। वैसे उत्तर आधुनिकता सभ्यता, सांस्कृति, धर्म, कला एवं साहित्य को पुनर्मूल्यांकित एवं व्याख्यायित करना चाहती है। आधुनिकता में जिन मानव मूल्यों का ह्रास हुआ। उत्तर आधुनिकता उसे फिर से जीवित देखना चाहती है। अतः हम उत्तर आधुनिकता को आधुनिकता के अगले चरण के रूप में भी सकते हैं।

तृतीय अध्याय में हमने आधुनिकता बोध के विविध आयामों को रूपायित करने अद्यतन प्रयास किया है। इसके अन्तर्गत–मनोवैज्ञानिकता : मनोविश्लेषणवाद, मार्क्सवादी : समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, शैलीवैज्ञानिक सन्दर्भ तथा अतिमानववादी सन्दर्भों को आधुनिकता के आयामों के रूप में विवेचित किया है। आधुनिकता एक गतिशील प्रक्रिया है जो अनेक दौरों से गुजरने की गवाही देती है और गुजर रही है। 20वीं शताब्दी के मध्य दुनिया भर में मानवजाति की सभ्यता, संस्कृति और परिस्थितियों को नवीनता के क्षितिज मिले। मनोविज्ञान के उत्तरोत्तर विकास ने मानव जीवन को अत्यन्त प्रभावित किया। आधुनिक ज्ञान विज्ञान ने मनुष्य को इतना प्रभावित एवं तर्क सम्मत बना दिया, जहाँ उसके मूलभाव, कुण्ठाभाव बन गये, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति में दमित इच्छाऐं दिखाई देती है। एक दूसरे के प्रति अविश्वास की भावना जागृत हो गई। अब आस्था के स्थान पर अनास्था और निष्ठा के

स्थान पर विश्वासघात, दयाकरूणा के स्थान पर स्वार्थ, आत्म केन्द्रित रूप ही परिलक्षित होते है। डॉ0 श्यामसुन्दर दास का मत है," मनोविज्ञान में बुद्धि को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है। मानसिक कार्यो में इसकी प्रधानता रहती है। हमारे यहाँ इसे अन्तःकरण की निश्चयात्मिकावृत्ति माना है। इसे हम मन की चेतनशक्ति भी सकते हैं। जब हमारा मन बुद्धि द्वारा ज्ञान को प्राप्त कर लेता है तब उसके सम्बन्ध में हमारे मन में अनेक प्रकार के भाव हमारे मन में अभिव्यक्ति होते हैं। अतः आधुनिकता भी इसी बुद्धिवाद का निरूपण है। बौद्धिकता के अभाव आधुनिकता आगे नहीं बढ़ सकती।

आधुनिक हिन्दी कविता में मार्क्सवादी विचारधारा के फलस्वरूप आधुनिकता एक नयी चेतना के रूप में उभर रही है। आधुनिकता ने जीवन और जगत के पुराने पड़े हुए मूल्यों के विरूद्ध बराबर धर्मयुद्ध किया है। निरर्थक परम्पराओं और निर्जीव रूढ़ियों को साहस पूर्वक अस्वीकार किया है और नये एवं लोक मंगल मूल्यों की स्थापना भी की है।

मार्क्सवाद की भाँति आधुनिकता भी मनुष्य को अपना लक्ष्य मानती है। मार्क्सवादी पूँजीवाद का विरोधी तथा सर्वहारा वर्ग का सच्चा हितैषी है। मार्क्सवाद समाज में सर्वहारा वर्ग को स्थापित कर जनवाद को व्यापक आधार देना चाहता है। यही जनवाद आधुनिकता का मानववाद है। समाजवादी यथार्थवादी भी मार्क्सवादी विचारधारा है, जो अपने केन्द्र में मानव कल्याण तथा नवीन परिवर्तन एवं विचरणा के लिए मनुष्य को प्रेरित करती है। मार्क्सवादी मान्यताओं के अनुसार समाजवादी यथार्थवाद को मूलतः मानववादी मानता है। डॉ0 अजब सिंह का मत है कि समाजवादी यथार्थवाद को लेखक संसार के परिवर्तन की सम्पूर्णतः में देखता है। समाजवादी यथार्थवाद संघर्ष का परिणाम है। अतः समाजवादी यथार्थवाद नवीन विचारधारा एवं नई चेतना का प्रतिनिधित्त्व करता है।

आधुनिक युग में अस्तित्वाद एक ऐसा दर्शन है जो मनुष्य के संकट को प्रकट करता हुआ ; मानवीय स्थिति को आधुनिक सन्दर्भो में व्याख्या करता है। अस्तित्ववादी के लिए मानव संकट से उत्पन्न एकाकीपन, अलगाव, विच्छिन्नता, निर्वासन की अनुभूति, चयन या वरण की स्वतन्त्रता, ऊब उदासी और अजनबी, की संवेदना चिंतन के मूल है। ये ही तत्त्व

आधुनिकता बोध में भी समाहित है, आज के आधुनिक युग में मनुष्य इस आधुनिकता की अन्धी दौड़ में अपने अस्तित्त्व की तलाश में भटक रहा है। यही अस्तित्त्ववाद की तलाश ही आधुनिकता है।

आधुनिक युग में कवि एवं लेखक के भावबोध में परिवर्तन के साथ–साथ उसकी शैली में भी परिवर्तन हुआ है। कवि या लेखक की शैली उसके आस--पास के परिवेश से पूर्ण प्रभावित होती है। आज के इस वैज्ञानिक युग में रचनाकार भी इसके प्रभाव से नहीं बच पाये तो उनका काव्य इससे कैसे अछुता रह सकता है। अतः उनकी शैली ने भी वैज्ञानिक रूप ले लिया है। अब वह नवीन उपमान, बिम्ब तथा प्रतीकों के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त करता है। डॉ० **भोलानाथ तिवारी** का कथन है, "आज शैली का अर्थ न केवल शब्द और भाषा रचना तक, बल्कि कवि और लेखकों की उस समस्त रचना पद्धति और रचना साधनों तक विस्तृत हो गई हैं जिनसे काव्य के बाह्य अवयवों या रूप पक्ष का निर्माण होता है।

भक्ति चेतना का आधुनिक सन्दर्भ अतिमानववादी दृष्टि है, आज के इस वैज्ञानिक एवं भौतिकवादी युग में मनुष्य अबाध गति से बहता चला जा रहा है, किन्तु वह पूर्ण रूप से अपनी धार्मिक वृत्तियों से छुटकारा नहीं पा रहा है। **महर्षि श्री अरविन्द** का कथन है– "विकास की यह प्रक्रिया निरन्तर आगे बढ़ रही है और विकास के क्रम में चेतना की एक स्थिति अवश्य आयेगी, जिसे अतिमानस कहते हैं। दूसरे शब्दों में "अतिमानस सत्य चेतना है, सत्य स्वयं उसके अधिकार में है और वह अपनी निजी शक्ति सामर्थ्य के द्वारा उसे चरितार्थ द्वारा उसे चरितार्थ करता है। डॉ० **अजब सिंह** का अतिमानस के सन्दर्भ में विचार है, "अखण्ड मानव अपने विकास क्रम दिव्य चेतना के क्रमिक रूप में मानववाद, नवमानववाद एवं अतिमानववादी रूप ही अतिच्छन्दसमय है। इसकी प्राप्ति जीवन की सार्थकता है। यही मानव का पुरुषार्थ है। अतः वह व्यक्ति जो सर्वगुण सम्पन्न, देवगुणों से युक्त हो, वह अतिमानव है, अर्थात जब मनुष्य ईश्वर से साक्षात्कार कर लेता है। उसके सारे संशय नष्ट हो जाते हैं तथा इसके कर्म क्षीण हो जाते तो उसे अतिमानव कहते है।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत हम आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता बोध के विविध चरणों का विश्लेषण प्रस्तुत किया है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो भारतेन्दु युग अर्थात 1850 से आधुनिक काल के साथ ही आधुनिक कविता व आधुनिकता की शुरूआत मानी जा सकती है। यद्यपि ऐसी नहीं है कि इससे पहले आधुनिकता के बिन्दुओं के नहीं खोजा सकता। आदिकाल, भक्तिकाल भी अपने समय के आधुनिक काल रहे हैं कुछ विद्वान् आधुनिकता की शुरूआत राजाराम मोहनराय से मानते हैं उन्होंने 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। ब्रह्म समाज सर्वथा एक नवीन विचारधारा को प्रश्रय देकर एक विशाल मानववाद को प्रतिष्ठित किया।

कुछ विद्वान् आधुनिकता का आरम्भ 1857 से मानते हैं तो कुछ इसकी शुरूआत भारतीय नवजागरण से मानते हैं। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान आधुनिकता की शुरूआत निराला की कविता कुकुरमुत्ता से मानते है। वैसे ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो आधुनिक काल 1850 से आधुनिकता का आरम्भ माना जा सकता है। इस दृष्टि से नवजागरण स्वच्छन्दतावाद, छायावाद, छायावार्दोत्तर (नवस्वच्छन्दतावाद), प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी–कविता, नवगीत, अकविता, सहजकविता तथा आज की अद्यतन कविता आदि में आधुनिकता के विविध चरणों का अध्ययन अपेक्षित है।

पंचम अध्याय में कविवर केदारनाथ 'कोमल' के व्यक्तित्त्व एवं जीवन दर्शन का अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है। साहित्य वस्तुतः रचनाकार के अनुभव का प्रतिफलन है। वह किसी न किसी परिवेश में अवश्य ही सांस लेता है। यही परिवेश उसे कुछ न कुछ अनुभव प्रदान करता है। इसका प्रभाव उसके व्यक्तित्त्व पर पड़ता है। रचना के निर्माण में रचनाकार को व्यक्तित्त्व का बहुत अधिक महत्व होता है। व्यक्तित्त्व और रचना एक दूसरे से पूर्ण रूप से जुड़े हुए हैं। रचनाकार के व्यक्तित्त्व के बिना जीवन्त साहित्य की सृष्टि असम्भव है। कवि का काव्य उसके व्यक्तित्त्व द्वारा, और काव्य का वैशिष्ट्य कवि की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति के द्वारा जाना जाता है। किसी भी काव्य की अच्छी परख के लिए उसके कवि मर्म को

पहचानना आवश्यक होता है कवि अथवा मनुष्य की पहचान या तो उसके रचना संसार से होती है या फिर उसकी अभिव्यक्ति से।

कवि केदारनाथ 'कोमल' का जन्म पंजाब के मालेर कोटला में 17 फरवरी 1931 में हुआ। इनके बचपन में ही इनके पिता का स्वर्गवास। 'कोमल जी' अपने पिता की अन्तिम सन्तान थे। **केदारनाथ 'कोमल'** अपने उपनाम के अनुसार ही इतने सरल व कोमल विचार के थे, जिससे उनके पूरे व्यक्तित्त्व की तस्वीर प्रत्येक मनुष्य के हृदय में उतर जाती है। कवि 'कोमल' का जीवन अभावों में गुजरा, कई बार उन्हें धनाभाव में पढ़ाई छोड़नी पड़ी। वे जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे। कवि 'कोमल' संघर्ष की साक्षात् मूर्ति थे। **केदारनाथ 'कोमल'** ने इतने अधिक अभाव व समस्यायें होने के पश्चात् भी शिक्षा नहीं छोड़ी। वे कभी भी समस्याओं एवं संघर्ष के पहाड़ो से घबराये नहीं, बल्कि एवं शिल्पकार की भाँति अपने को तराश कर अपने व्यक्तित्त्व का निर्माण करते रहें और साथ ही अपने रचना कर्म से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाते रहे।

षष्ठ अध्याय में **कविवर केदारनाथ 'कोमल'** के काव्य संसार का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है। कविवर केदारनाथ 'कोमल' सृजन के प्रेरक तत्त्व के रूप में कवि की समकालीन परिस्थितियां अनुभूति भाव एवं उनका आत्मसंघर्ष सब मिलकर काव्य का सृजन करते हैं। समकालीन कविता में केदारनाथ 'कोमल' मील का पत्थर थे। कवि का रचना संसार आधुनिक हिन्दी साहित्य की उपलब्ध काव्य सृष्टि है जो अपने परिवेश में साधारण मनुष्य की मनोदशा को समाहित किये हुए है। कोमल जी को प्रारम्भिक साहित्य की प्रेरणा अपने जीवन की परिस्थितियों से ही प्राप्त हुई। इनके काव्य में बौद्धिकता, मुक्तछन्द आदि श्रेष्ठ तत्त्व मौजूद हैं। कवि ने अपनी कविताओं में वैयक्तिक अनुभूतियों को नया स्वरूप प्रदान किया है। इनके समस्त काव्यों में व्यंग्य का पुट विद्यमान है। तथा समाज में व्याप्त अंध विश्वास रूढ़ियों पर भी करारे व्यंग्य है। ये अपने समस्त काव्यों में मानववादी दृष्टिकोण को अपनाते हैं। कवि ने वर्तमान और उसके आधुनिक जीवन की संघर्षपूर्ण अभिव्यक्ति का अपने काव्य में बड़े सुन्दर ढंग से संजोया है। वे जनसामान्य को ऐसे चौराहे पर लाकर

खड़ा करना चाहते हैं कि जहाँ से वह अपने लक्ष्य की ओर आसानी से जा सके। कवि का यह काव्य संग्रह मानववादी दृष्टिकोण के साथ–साथ सामाजिक परिस्थितियों को उजागर करने में पूर्ण सक्षम है। कवि के इस काव्य संग्रह में मनुष्य की खोई हुई मर्यादा, कुण्ठा, संत्रास तथा मनुष्य के संघर्षशील जीवन की यथार्थपरक अभिव्यक्ति की है। **कोहरे से निकलते हुए** कवि का यह काव्य संग्रह प्रगतिवादी चेतना को उजागर करता है। आधुनिक युग में मनुष्य जीवन की जटिलताओं तथा समस्या रूपी कोहरे में इतना उलझा गया है कि कभी–कभी उसे स्वयं का भी बोध नहीं हो पाता कवि मनुष्य को इस कोहरे से निकालकर, उसे नये आयाम व दिशायें देना चाहता हैं। **सूरज के आस–पास**–इस संग्रह की कविताऐं मानवीय अनुभूति तथा जीवन के विविध आयामों का अपने अन्दर समेटे हुए हैं। यहाँ कवि का सूरज आधुनिक मनुष्य की आस्था का प्रतीक है। कवि ने यहाँ यथार्थवादी दृष्टि को अपनाया है। कवि **'कोमल'** ने इस संग्रह के शुरू में कुछ पंक्तियाँ लिखी है –"संसार के उन लोगों के नाम जो सूरज की तालाश में तम पी रहे है।"यह संग्रह समाज की स्थिति के साथ–साथ समाज की राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों को भी प्रस्तुत करता है। **मेरे शब्द : मेरा लहू** इस संग्रह में लेखक की पीड़ा लहू बनकर फूटी है। जिसे शब्दों के माध्यम से वाणी दी गई है। यहाँ वे मनुष्य के स्वाभीमान को जागृत करना चाहते हैं। कवि का यह काव्य संग्रह देश भक्ति से पूर्ण राजनीतिक वातावरण, समाजिक बंधनो, रूढ़ियों, अंधविश्वासो तथा जनसामान्य की पीड़ा को उजागर करने वाला काव्य है। **अन्धे सूरज का सफर** कविवर केदारनाथ 'कोमल' का यह संकलन प्रथम तीनों संग्रहों की चुनी हुई कविताऐं सरलता, सहजता, सादगी एवं सच्चाई की मुँह बोलती तस्वीरें हैं इनकी कवितायें आज के समाज की सामाजिक दशा, राजनीतिक तथा आर्थिक छटपटाहट, निराशा एवं बौखलाहट भरे माहौल में अपनी अलग पहचान रखती हैं। यहाँ कवि का मूल उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्त्व व अस्तित्त्व का बोध कराना है। **पतझड़ के हस्ताक्षर** कवि का यह संग्रह चार भागों में विभाजित है। इस संग्रह की भूमिका स्वयं कवि **केदारनाथ 'कोमल'** ने **शायद हम** नाम से लिखी । उन्होंने लिखा है– "विज्ञान की प्रविधि की विस्फोटक प्रगति से जीवन की नस–नस में हलचल मच

गई है..........। मनुष्य–मनुष्य नहीं रहा । वह मशीन बनता जा रहा है। चारों ओर प्रदुषण, मन में प्रदुषण, आदर्शों के टूटते आइने।" अतः यह काव्य संकलन आज के बदलते, टूटते, पिघलते मानव मूल्यो की झलक प्रस्तुत करता है। **एक समन्दर : मेरे अन्दर** यहाँ कवि ने सागर के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त किया है। वर्तमान समय का मनुष्य अपने अन्दर एक सागर लिये हुये है। यह सागर कुछ और नहीं बल्कि उसका व्यथित मन है। आज के इस भौतिकवादी युग में प्रत्येक व्यक्ति परेशान है। **शब्द–नाच**– यह कवि का अन्तिम काव्य संग्रह है। यह संग्रह चार भागों में विभाजित है –'देवता की आँख' , अंबर सी पेशानी', दर्द युगों पुराना, तथा बूँद–बूँद । कवि ने इस संग्रह में समाकलीन परिवेश, राजनीतिक व आर्थिक रूप से पीड़ित समाज के मनुष्य को अभिव्यक्ति दी है। अतः कवि केदारनाथ कोमल का समस्त काव्य मानववादी दृष्टिकोण के साथ–साथ मनुष्य को संघर्ष करने की प्रेरणा देता है।

सप्तम अध्याय के अन्तर्गत आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अनुशीलन किया है। कवि कोमल की काव्य यात्रा इतनी जीवन्त एवं सशक्त है कि कब आम–आदमी के मन मस्तिष्क पर अंकित हो जाती है पता ही नहीं चलता। इन्होंने आधुनिक कविता अथवा समकालीन कविता को एक नया रूप प्रदान किया। इसका स्पष्टीकरण **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी** के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है– "कोमल की नये ढंग की कविताओं में बड़ी मार्मिक संवेदनाएं है।" कवि कोमल की कवितायें आधुनिकता बोध के सभी आयामों, दिशाओं तथा विशेषताओं को उजागर करती हैं इनके काव्य में आधुनिक जीवन के संघर्ष और कठिनाइयों की गहरी संवेदना उभरकर सामने आयी है। कवि कोमल के प्रथम काव्य में उनकी काव्य यात्रा जो आधुनिकता, मौलिकता, युग सापेक्षता के अनुरूप है, जो जीवन की सच्चाई, ईमानदारी, आत्मविश्वास, और लोगों के भोगे हुए जीवन का सहज योग बनकर कवि को अस्थावान एवं चेतनावान बनाती है, कवि कोमल का सम्पूर्ण काव्य मानववादी दृष्टिकोण से प्रेरित है, यही मानववादी दृष्टिकोण मनुष्य को आधुनिकता–बोध से जोड़ता है, कवि ने आधुनिक मनुष्य की भटकी हुई मानवीयता का

सामाजिक विषमता को भी चित्रित किया है। इस दृष्टि से इनकी कुछ कविताऐं–लोग माहौल, बेनाम सा दर्द, दीवारें, राही, जहर की तालाश, मशाल भीख सभ्य लोग तथा तुफान : कुछ नोट्स आदि कवितायें मानववादी दृष्टि के साथ–साथ समाज को यथार्थवादी दृष्टि भी प्रदान करती हैं। दूसरी ओर घर में इन्कलाब देश तथा रक्तस्नात मिट्टी आदि देशभक्ति पर कविताएं हैं। जो आधुनिकता के इस युग में मनुष्य को संघर्ष करने के लिए प्रेरित करती हैं।

अतः कविवर केदारनाथ 'कोमल' के समस्त काव्य में हमें मार्क्सवादी दृष्टि, सामाजिक यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, नवस्वच्छन्दातवाद तथा प्रगतिवादी चेतना आदि सभी दृष्टियों को देखा जा सकता है जो आधुनिकता बोध के आयाम है। इनके काव्य में जीवन संघर्ष इतना तीव्र है कि आज के कुठिंत एवं त्रस्त मनुष्य को व्यंजना देने में पूर्ण सक्ष्म है। ये अपने समस्त काव्य में मनुष्य की अस्मिता की खोज में भटकते हैं जो आधुनिकता की एक विशेषता है। अतः कवि केदारनाथ 'कोमल' ने हमें आधुनिकता के नये आयाम, नवीन दिशायें एवं नवीन क्षितिज प्रदान किये हैं।

कविवर केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं में आधुनिकता की दृष्टि से अनुशीलन किया गया है। वस्तुतः आधुनिकता एक वैचारिक एवं मानवीय दृष्टि का साहित्यिक नाम है।

☆☆☆

आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की पी–एच0 डी0
की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

निर्देशक :

प्रोफ़ेसर अजब सिंह
पी–एच0डी0, डी0लिट्
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

शोधार्थी

मुहम्मद इमरान ख़ान

हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़।

2002

M.A. LIBRARY

MAULANA AZAD LIBRARY
ACC No.
T-5986
Aligarh Muslim University, Aligarh

24 JUN 2005

T5986

ममतामयी माँ और परम श्रद्धेय स्नेही
पिता को सादर समर्पित, जिनकी ममता
और स्नेह की छाया में रहकर, मैं अपना
सहज ही शोध प्रबन्ध सम्पन्न कर सका।

मुहम्मद इमरान ख़ान

Professor Ajab singh
Chairman

Department of Hindi
Aligarh Muslim University
Aligarh

Date : 28/11/2008

B.A. Hons, M.A, Ph.D. D.Lit

The International man of the year 1997-98

The twentieth Century for Achievement Award. 1997-98

Who's Who, The Twenty First century Award

The International Biographical Center, Cambridge

C.B 230 P (England)

Acharaya Ramchandra Shukla Namit Puraskar of the year

1998 for the best book of Hindi criticism - यथार्थवाद : पुनर्मूल्यांकन

Certificate

This is to certify that the thesis entitled **"Adhunikta Bodh kee Dristi se Kedarnath 'Komal' kee kavitaon ka Alochnatmak Adhayan"** has been written by **Mr. Mohd Imran Khan** under my supervision. It is an original research work and is suitable for submission for the Award of Ph.D degree in Hindi of the Aligarh Muslim university, Aligarh.

Ajab Singh

Professor Ajab singh

Supervisor

Mr. Mohd. Imran Khan is a Bonafide research scholar in Hindi, Working under my supervision since 15 July 1997. He has been attending Department regularly from the date of admission till date.

Ajab Singh

Professor Ajab singh

Supervisor

विषयानुक्रमणिका

प्राक्कथन i–v

प्रथम अध्याय : आधुनिकता बोध का सैद्धान्तिक विश्लेषण : 1–52

(क) पाश्चात्य विचारक : आधुनिकता–बोध

(ख) भारतीय विचारक : आधुनिकता–बोध

(ग) मध्ययुगीन भाव बोध के प्रति प्रतिक्रिया : आधुनिकता–बोध

(घ) आधुनिकता–बोध {बौद्धिकता के प्रति प्रतिक्रिया} धर्म की पुर्नस्थापना : उत्तर आधुनिकता–बोध

द्वितीय अध्याय : आधुनिकता एवं समकालीनता एक तुलनात्मक अध्ययन 53–88

(क) आधुनिकता का सम्यक् विश्लेषण

(ख) आधुनिकता–बोध की प्रतिक्रिया : उत्तर आधुनिकता–बोध

(ग) आधुनिकता–बोध और उत्तर आधुनिकता–बोध का तुलनात्मक अध्ययन।

तृतीय अध्याय : आधुनिकता–बोध के विविध आयाम 89–147

(क) मनोवैज्ञानिकता : मनोविश्लेषणवाद

(ख) मार्क्सवादी : समाजवादी यथार्थवादी सन्दर्भ

(ग) अस्तित्ववादी सन्दर्भ

(घ) शैली वैज्ञानिक सन्दर्भ

(ङ) अतिमानववादी : अतिछन्दस सन्दर्भ

चतुर्थ अध्याय :	आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता–बोध के विविध चरण	148–179
पंचम अध्याय :	केदारनाथ कोमल का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन	180–185
षष्ठम अध्याय :	केदारनाथ कोमल के काव्य रचना संसार का सामान्य परिचय	186–203
सप्तम अध्याय :	आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन (क) भावगत वैशिष्ट्य (ख) शिल्पगत वैशिष्ट्य	204–319
अष्ठम अध्याय :	उपसंहार	320–323
	सन्दर्भ ग्रन्थ सूची	324–343
	नामानुक्रमणिका	344–348

प्राक्कथन

छात्र जीवन के आरम्भ से ही आधुनिक हिन्दी कविता के अध्ययन में मेरी स्वाभाविक रूचि रही है। मैं इसे अपना सौभाग्य कहूँ या अपने श्रद्धेय गुरू की अनुकम्पा कहूँ कि उन्होंने मुझे आधुनिक हिन्दी कविता के रचना शिल्पी **'केदारनाथ कोमल'** की कविताओं पर आधुनिकता–बोध की दृष्टि से शोध करने का अवसर प्रदान किया। आधुनिकता की दृष्टि से कविवर **केदारनाथ 'कोमल'** का काव्य समकालीनता में जीवन की व्याख्या करता है। 'कोमल जी' का काव्य मार्क्सवादी व अस्तित्ववादी चिन्तन के साथ–साथ आधुनिकता के सभी आयामों को अपने अन्दर सामाहित किये हुए हैं, तथा साथ ही नवीन तार्किक दृष्टिकोण एवं नवमानव की खोज भी करता है।

आधुनिकता हमें मानववादी दृष्टिकोण एवं नवमानव की खोज की दृष्टि प्रदान करती है इस दृष्टि से कविवर **केदारनाथ 'कोमल'** का मानववादी दृष्टिकोण हमें चिन्तन के नये बिन्दु, नवीन दिशा व नवीन उन्नयन का मार्ग प्रशस्त कराता है। वे अपने काव्य के माध्यम से वर्तमान समाज के मनुष्यों को धुन्ध व कोहरे से निकालकर एक ऐसे चौराहे पर खड़ा करना चाहते हैं; जहाँ से वह अपने लक्ष्य की ओर आसानी से जा सके। स्व. **श्री केदारनाथ कोमल** का काव्य आधुनिक मनुष्य को कुण्ठा एवं संत्रास से निकाल कर तथा उसके अन्दर 'स्व' का भाव जागृत कर, उसे आधुनिकता के बहुआयामी संन्दर्भों की ओर प्रेरित करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आधुनिकता ने हमें नवीन बौद्धिक उपलब्धि के लिए प्रेरित किया। इसने हमारे चिन्तन एवं हमारी संस्कृति को नया सन्दर्भ दिया।

आधुनिकता–बोध का मूल बिन्दु 'मानव' है, इसलिए मानव के बहुआयामी सन्दर्भो को व्याख्यायित करना ही आधुनिकता की सहजता है। मानव के साम्यवादी व मार्क्स– वादी सन्दर्भ ही समाजवादी यथार्थवाद के नाम से जाना जाता है। यही **'समाजवादी यथार्थवाद'** मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र का प्राण माना जाता है। इसे ही **प्रोफेसर** नामवर सिंह ने मुक्तिबोध की **'अन्धेरे में'** शीर्षक कविता के सन्दर्भ में **गोर्की** के 'माँ' उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में **'क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद'** के नाम से सम्बोधन दिया है। ये सब मार्क्सवादी सौन्दर्य शास्त्र

के सर्जनात्मक कल्पना वैभव का नवीन आयाम है। अतः केदारनाथ 'कोमल' अपनी सर्जनात्मक काव्य चेतना के माध्यम से केवल सामाजिक समस्याओं को ही आधुनिक समाज के समक्ष खड़ा नहीं करते वरन् उनका सलक्ष्य हल व संघर्ष करने की भी प्रेरणा देते हैं। इस प्रकार इनके काव्यात्मक चेतना में क्रान्ति एवं विद्रोह को आधुनिकता के महत्त्वपूर्ण आयाम को चित्रित एवं रेखांकित करते हैं।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध आठ अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय में आधुनिकता के सैद्धान्तिक तथ्यों का अनुशीलन किया गया है। आधुनिकता एक वैचारिक एवं बौद्धिक दृष्टि है जो हमें वर्तमान परिवेश में सोचने एवं चिन्तन करने का खुला निमन्त्रण देती है। यद्यपि प्रत्येक युग की अपनी आधुनिकता रही है, लेकिन समकालीन व वर्तमान तत्वों का मूल्यांकन जितना आधुनिक युग में हुआ है उतना कहीं देखने को नहीं मिलता। आधुनिकता को न केवल परम्परा से कटकर देखा जा सकता है और न केवल परम्परा से जोड़कर। आधुनिकता मध्ययुगीन भावबोध के प्रति प्रतिक्रिया है। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। आधुनिकता नवमानव एवं नवचेतना की खोज है। अतः इसके किसी एक दौर पर अँगुली रखकर यह नहीं कहा जा सकता कि यही आधुनिकता है। वस्तुतः इसे कई रूपों में देखा और समझा जा सकता है। इसीलिए आधुनिकता एक प्रक्रिया है और यह निरन्तर गतिशील चिन्तन–बोध का आयाम भी है।

द्वितीय अध्याय में आधुनिकता एवं समकालीनता को तुलनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। आधुनिकता बौद्धिकता का ही परिणाम है जो हमें मानवीय प्रगति की सूचना देती है। यहीं मानवीय प्रगति हमें अभिनव जीवन दृष्टि एवं नवीन चिन्तन का बोधक है। समकालीनता में आधुनिकता को खोजा जा सकता है। वर्तमान में आधुनिकता एवं समकालीनता दोनों समाहित होते हैं। समकालीनता एक मानसिकता है जो नवीन जीवन मूल्यों को जीवंत रूप प्रदान करती हैं। समकालीनता में यथार्थवादी दृष्टि प्रमुख है। यहीं यथार्थवादी दृष्टि कविता में कथ्य के स्तर पर उभर कर सामने आता है, जो देश काल बोध से सम्बन्धित दृष्टि है, काल विशिष्ट है जबकि आधुनिकता अपने अन्दर युग बोध समेटे होती

है। आज आधुनिकता अपने विकास के चरम बिन्दु पर पहुंच गई है। इसीलिए आज हम उत्तर आधुनिकतावादी होने का दावा कर रहे हैं। उत्तर आधुनिकतावादी दृष्टि वस्तुतः मध्ययुगीन एवं मानवतावादी चेतना के प्रति असक्तिभाव की वापसी है। जो जीवन, साहित्य एवं संस्कृति को प्रभावित कर रही है।

शोध प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में आधुनिकता के विविध आयामों का अनुशीलन एवं मूल्यांकन गवेषणात्मक दृष्टि प्रस्तुत किया है। जैसे मनोवैज्ञानिकता : मनो– विश्लेषणवाद, मार्क्सवाद – समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, शैलीविज्ञान तथा अतिमानववादी आयामों को व्याख्यायित किया गया है। जो आधुनिकता के ही विविध आयाम हैं।

चतुर्थ अध्याय में आधुनिक कविता के अन्तर्गत आधुनिकता के विविध चरणों को अनुसंधान परक दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। इसके अन्तर्गत–नवजागरण, स्वच्छन्दतावाद : छायावाद, छायावादोत्तर कविता–नवस्वच्छन्दतावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, नवगीत अकविता, सहजकविता एवं अद्यतन कविताओं का भी विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय में आधुनिक हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर केदारनाथ 'कोमल' के व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन पर प्रकाश डाला गया है।

षष्ठ अध्याय में केदारनाथ 'कोमल' के रचना संसार का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय में आधुनिकता की दृष्टि से कविवर केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का गवेषणात्मक अनुशीलन किया गया है।

अष्ठम अध्याय में शोध प्रबन्ध की उपलब्धियाँ एवं उपसंहार को प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध कार्य मेरे श्रद्धेय आचार्य गुरूवर डॉ० अजब सिंह, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़, के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। उनका शिष्यत्व ही मेरे लिए अत्यन्त गौरव की बात है। अपनी अत्यन्त व्यस्थता के बावजूद इस शोध प्रबन्ध को

पूर्ण कराने में यथा सम्भव सहायता प्रदान की तथा शोध कार्य को बड़ी तन्मयता के साथ जाँचा। अतः इस कार्य के लिए मैं आजीवन उनका ऋणी रहूंगा।

परम पूजनीय मातृतुल्य चाची **श्रीमती मोहनी सिंह** के प्रति मैं किन शब्दों में कृतज्ञताज्ञापन करूँ जिनके बहुमूल्य विचारों एवं महत्त्वपूर्ण सुझावों से मुझे सदैव प्रोत्साहन मिलता रहा है। शोध कार्य की पूर्णतः में उनके उद्‌बोधन वाक्यों की अपनी महिमा है।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ के हिन्दी विभाग के सभी गुरूजनों के प्रति मैं अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ, जिनका स्नेह मुझे सहज ही मिलता रहा है। मेरे शोधकाल के दौरान में प्रोफेसर सैय्यद ज़ाफर रज़ा जैदी, प्रोफेसर उदयशंकर श्रीवास्तव, प्रोफेसर अयूबखान 'प्रेमी', डॉ० रमेशचन्द्र शर्मा, डॉ० शर्मीला डॉली कुद्‌दुसी तथा डॉ० इफ्फत असगर आदि समय–समय पर अपने बहुमूल्य विचार व सुझाव देते रहे हैं। इसके साथ ही शोध कार्य को शीघ्रता से सम्पन्न करने के लिए प्रोत्साहित करते रहे।

इस शोध कार्य के लिए मैं **स्व. कविवर केदारनाथ 'कोमल'** को कैसे विस्मृत कर सकता हूँ, जिन्होंने मुझे न केवल मूलशोध ग्रंथ व अन्य सामग्री ही उपलब्ध करायी अपितु मुझे समय–समय पर अपने अमूल विचारों से मेरा मार्ग प्रशस्त करते रहे। अतः मै इसके लिए उनका आभार व्यक्त करता हूँ।

इस शोध कार्य के लिए जिन्होंने मुझे प्रेरित किया उनको मैं कैसे भूल सकता हूँ उनके विराट अनुभव एवं साधना ने मुझे सदैव कठिनाइयों से उबारते हुए इस योग्य बनाया कि मैं यह कार्य सम्पन्न कर सकूँ। मेरे प्रिय अब्बू–अम्मी को इस कार्य के पूर्ण होने पर उनका आभार व्यक्त कर कोई औपचारिकता नहीं करना चाहता, क्योंकि इसके लिए मैं अपने पास शब्दों का आभाव समझता हूँ। फिर भी मैं नतमस्तक होकर शत्– शत् नमन् करता हूँ।

मेरे अग्रज ज़नाब शमीम अहमद, ज़नाब मुहम्मद आरिफ तथा बड़ी बहन श्रीमती रिहाना अख्तर व बहनोई ज़नाब अख्तर हुसैन, भाभी फरहाना व रजिया खाँन, इन सभी का विशेष रूप से आभारी हूँ, जिनका शोधकार्य के दौरान सदैव प्रोत्साहन व स्नेह मिलता रहा है। अपने प्रिय अनुज–अनुजा मुहम्मद नाज़िम, दावर ज़फ़ीर, रजिया, नसरीन, वाजिया,

तबस्सुम तथा रूकसाना इन सभी का भी स्नेह व सहयोग मिलता रहा है। अपनी भतीजी असना शमीम व भतीजा मुहम्मद आतिफ़ जिनकी मीठी तोतली बोली व किलकारियों ने मुझे हमेशा प्रफुल्लित किया।

शोध कार्य में सहयोग देने के लिए अपने सभी मित्रों– जनाब खान परवेज रफी, एतशाम अली जाफरी, डॉ0 मौहम्मद आरिफ, डॉ0 प्रतापसिंह, अनीसुर रहमान सिद्दीकी, मौ0 सलीम, डॉ0 एम.पी. सिंह, कुँवर बहादुर सिंह तथा मौ0 अफ़ज़ल आदि के प्रति मैं बहुत आभारी हूँ, जिनका मित्रवत् सान्निधय सदैव सुलभ रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के लेखन व सामग्री संचयन में मौलाना आज़ाद पुस्तकालय के बन्धुवर डॉ0 राधेश्याम, जनाब राकिम अली, जनाब वाजिद भाई तथा पीर मौहम्मद व हिन्दी सेमीनार के प्रभारी डॉ0 मौहम्मद उस्मान एवं श्रीमती परवेज़ फातिमा से मुझे विशेष सहायता मिली जिसके लिए मैं इन सबका आभारी हूँ।

शोध प्रबन्ध के टंकण के क्रम में मेरे स्नेही विशाल मणि त्रिपाठी एवं अनुराधा ने जो तत्परता का परिचय दिया इसके लिए मैं उनका ह्रदय से आभारी हूँ।

शोध प्रबन्ध के लेखन में जिन विद्वानों के परामर्शों एवं सुझावों का संबल मिला है। मैं उनका ह्रदय से आभार व्यक्त करता हूँ। शोध प्रबन्ध के लेखन में अगर कहीं त्रुटी रह गई हो तो विद्वान् उसके लिए क्षमा प्रदान करने की कृपा करें।

मुहम्मद इमरान ख़ान
शोध छात्र
हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़।

प्रथम अध्याय :

आधुनिकता–बोध का सैद्धान्तिक विश्लेषण

(क) पाश्चात्य विचारक : आधुनिकता–बोध

(ख) भारतीय विचारक : आधुनिकता–बोध

(ग) मध्ययुगीन भावबोध के प्रति प्रतिक्रिया : आधुनिकता–बोध

(घ) आधुनिकता–बोध (बौद्धिकता के प्रति प्रतिक्रिया) धर्म की पुर्नस्थापना : उत्तर आधुनिकता–बोध

प्रथम अध्याय

आधुनिकता–बोध का सैद्धांतिक विश्लेषण

आधुनिकता को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हमें पहले आधुनिकता को भलि–भाँति समझ लेना चाहिए। आधुनिक शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में हुआ है। यह शब्द संस्कृत के 'अधुना' शब्द से स्वार्थ में 'ठक' प्रत्यय लगकर निर्मित हुआ। अतः 'अधुना' शब्द कल्पित आधुनिक शब्द का अर्थ अत्यन्त नूतन है। जो कई अर्थों में अभिव्यक्त हुआ है। भाव प्रत्यय 'सा' शब्द से संयुक्त होने पर इस शब्द से गुण अवस्था एवं परिणाम का बोध होता है। इससे आशय यह है कि प्राचीन एवं मध्ययुगीन गुण अवस्था एवं परिणाम का होता है अभिप्राय यह है कि प्राचीन एवं मध्ययुगीन अवस्था एवं परिणाम आदि अनेक परिस्थितियों एवं वातावरण के परिणाम स्वरूप बौद्धिक कल्पनाएं विभिन्न परिवर्तनों को ग्रहण करती हुई अत्यन्त नवीनतम रूप में दृष्टिगोचर होने लगी। इसे ही आधुनिकता की संज्ञा दी गई। डॉ0 अजब सिंह ने अपनी पुस्तक में लिखते हैं –"आधुनिक युग की संसारिक व्यस्तता में व्यक्ति का अपना व्यक्तित्त्व एवं उसकी पहचान खो गई। इस खोये हुए व्यक्तित्त्व की खोज–प्रक्रिया की संज्ञा आधुनिकता है।"[1]

आधुनिकता के सन्दर्भ में हम आज तक कोई भी मापदण्ड स्थापित नहीं कर पाएं हैं; क्योंकि यह आज भी अपनी स्थिति में गतिशील है। इसकी कोई उपयुक्त परिभाषा भी नहीं दी जा सकी है। इसलिए आधुनिकता को कभी परम्परा के अन्तर्गत देखा गया और कभी परम्परा से कटकर। कभी इसे समकालीन से जोड़ा गया तो कभी बौद्धिकता से। आधुनिकता आदिकाल से लेकर आज तक अपने विकास की ओर बढ़ रही है। इसीलिए इसके किसी भी दौर पर हाथ रखकर यह नहीं कहा जा सकता कि यह आधुनिकता है, क्योंकि जब भी किसी पुरानी परम्परा के स्थान पर कोई नई परम्परा स्थापित की जाती है तो वही

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 8

आधुनिकता कहलाती है।

आधुनिकता के सन्दर्भ में विद्वानों ने अनेक मतवाद दिये हैं। कोई आधुनिकता को काल निर्पेक्ष दृष्टि से कहता है, तो काई इसे वैज्ञानिक दृष्टि। कुछ विद्वानों ने आधुनिकता को रोमांटिक बोध का संस्कार कहा है। "आधुनिक ज्ञान–विज्ञान और टेक्नोलॉजी के फलस्वरूप उत्पन्न मानवीय स्थितियों का नया, गैर रोमैंटिक और अमिथकीय साक्षात्कार आधुनिकता है।"[1] आधुनिकता के सन्दर्भ में सबसे अधिक विवाद तो इस बात को लेकर है कि कुछ विद्वान् इसे मूल्य मानते हैं,तो कुछ प्रक्रिया। इसे प्रक्रिया मानने का अर्थ मूल्यों की अनुपस्थिति क्यों मान लिया जाये। ऐतिहासिक विकास के क्रम में उसे मूल्य चिन्तन के शिलशिले के रूप में या मूल्यों की छानबीन और पड़ताल के रूप में क्यों न ग्रहण किया जाए ?आधुनिकता को मूल्य मानने का अर्थ इतिहास विरोधी क्यों समझा जाए? जबकि मूल्यों को हम ऐतिहासिक परिस्थिति में ही ग्रहण और अर्जित करते हैं। आधुनिकता को प्रक्रिया मानने वालो का एक मकसद यह जरूर रहा है कि इसकी साहित्यिक अभिव्यक्ति को एक शिलशिले के रूप में देखा जाए। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान आधुनिकता को प्रक्रिया के रूप में ही मानते हैं–"आधुनिकता एक प्रक्रिया है, इसमें बुद्धिवाद का निरूपण भी आता है और खण्डन भी।"[2]

यदि आधुनिकता को प्रक्रिया के रूप में ही ग्रहण किया जाए, तो हमारे सामने अनेक प्रश्न खड़े हो जाते हैं। आधुनिकता प्रक्रिया है तो फिर किसकी प्रक्रिया है। तो मेरा मानना है कि 'यह मानव संस्कृति के विकास बोध की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया अंधविश्वास से बाहर निकलने की प्रक्रिया है, तथा बुद्धिवादी बनाने की, धर्म के सही रूप पर पहुचाने की प्रक्रिया है।' इसीलिए यह अपनी स्थिति में आज भी गतिशील है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान आधुनिकता को प्रक्रिया मानते है उनका कहना है कि "आधुनिकता एक प्रक्रिया होने के कारण एक से

---

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा.) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 1987 पृ0 455
[2] इन्द्रनाथ मदान ; निबन्ध और निबन्ध ; प्र0सं0 1966, पृ0 96

अधिक दौरों से गुजरती है और आज भी जारी है। इसलिए इसके किसी एक दौर पर अँगुली रखकर यह कहना कठिन है कि आधुनिकता यह है।"[1]

यदि हम आधुनिकता के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में झाँकने की कोशिश करे तो एक तथ्य स्पष्ट रूप से उभर कर हमारे सामने आता है–"आधुनिकता मध्ययुगीन भावबोध के विरूद्ध एक दृष्टिकोण है, प्रक्रिया है, अद्यतनता भी है, मानव–जीवन मूल्यों को नवीन भावबोध के साथ उपस्थिति करना भी है, साथ ही वैज्ञानिक बौद्धिकता इसमें सर्वोपरि है।"[2] वैसे हर युग अपने समय में आधुनिकता रहा है। यदि इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो आधुनिकता के अंकुर सर्वप्रथम यूरोप से ही फूटते हैं। यूरोपीय रेनेसां आधुनिक युग की पहली सीढ़ी है। यहीं से आधुनिकता की शुरूआत मानी जाती है। डॉ0 अजब सिंह कहते हैं, कि "स्वच्छन्दतावाद के मूल में विद्रोह तथा नवीनता की भावना प्रधान रहती है। विद्रोह की यह भावना भाव और कला दोनों रूपों में मिलती है, स्वच्छन्दतावादी कवि सत्ता, परम्परा तथा रूढ़ियों का विरोधी होता है।"[3] यही परम्परा तथा रूढ़ियों के प्रति विरोधी भावना तथा नवीनता की चेतना हमें आधुनिकता की ओर ले जाती है।

भारतीय इतिहास में आधुनिकता का जनक **राजाराम मोहन राय** को माना जाता है क्योंकि उन्होनें समाज में व्याप्त सती प्रथा जैसी अनेक कुरीतियों के प्रति विद्रोह किया और नारी को उनके अधिकारों प्रति सचेत किया। हिन्दी साहित्य में आधुनिकता के बीज आदि काल व भक्तिकाल में देखने को मिल जाते हैं, क्योंकि **अमीर खुसरो**, **तुलसी** और **कबीर** आदि अपने युग में आधुनिक थे। कबीर ने अपने समाज में व्याप्त अनेक कुप्रथाओं पर चोट की, मनुष्यों को उन सभी अंधविश्वासों और आडम्बरों से दूर रहने के लिए सचेत किया। इसलिए कबीर अपने युग के आधुनिक पुरूष हैं। और आज भी प्रासंगिक हैं।"आधुनिक काल अपने ज्ञान–विज्ञान और प्रविधियों के कारण मध्यकाल से अलग हुआ, क्योंकि यह काल

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 19
[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 7
[3] वही, पृ0 9.

औद्योगिकरण, नगरीकरण और बौद्धिकता से चिपका हुआ है, जिसके फलस्वरूप नवीन आशाएँ उभरी और भविष्य का नूतन स्वप्न देखा जाने लगा। देश, राष्ट्र, धर्म, ईश्वर आदि की नवीन व्याख्याएँ होने लगी।"[1]

वास्तविकता तो यह है कि आधुनिकता की शुरूआत हिन्दी साहित्य में 1850 से होती है क्योंकि इस काल को साहित्य लेखकों ने आधुनिक काल कहा है। इस काल में हिन्दी साहित्य में अनेक विद्याओं तथा अनेक वादों का सुत्रपात हुआ। आधुनिक काल की कविता रीतिकाल कविता से भिन्न थी, क्योंकि भारतेन्दु युगीन कविता का स्वर राष्ट्रीयता तथा स्वाधीनता की भावना से ओत–प्रोत था, तथा साथ ही इसमें नवजागरण के बीज भी विद्यमान थे।इसके बाद छायायुगीनवादी कविता का प्रादुर्भाव हुआ। इसमें राष्ट्रीयता के अतिरिक्त प्रकृति का मानवीय चित्रण व नारी का सौन्दर्य चित्रण को बहुत ही मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया गया। इसके बाद प्रगतिशील युगीन कविता की शुरूआत हुई।प्रगतिशील कविता के अन्तर्गत सर्वसाधारण व्यक्ति को ले लिया गया तथा इसमें बौद्धिकता का स्वर भी प्रकट होने लगा। अन्त में प्रयोगशील या नई कविता के आते–आते कविता को मूल भाव ही बदल गया। इस युग की कविता में लयता, रस आदि का तिरोभाव होने लगा तथा पुराने उपमानों के स्थान पर नये उपमानों की कविता के अन्तर्गत लाया गया। तथा बौद्धिकता के साथ–साथ अतिबौद्धिकता आदि ने स्थान ले लिया।आधुनिक कविता कें अन्तर्गत जितने भी वाद आये उन सभी को आधुनिकता की सीढ़ियाँ कहे तो कोई समीचीन नहीं होगा। इन सभी नई कविता के आयामों को पार करते हूए हम आज आधुनिकता की पूर्ण मंजिल को प्राप्त करने की कोशिश कर रहें हैं।

आधुनिकता एक वैचारिक दृष्टि है तभी तो इसके बारे में इतने तरह के मतभेद प्रस्तुत किये गये हैं कि कभी–कभी तो 'जॉनक्रोव रेन्सम' का यह कथन सही प्रतीत होता है

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ. 7

कि,"आधुनिकता अपरिभाष्य"[1] है,यह पूर्णरूप से सत्य है कि आधुनिकता सामाजिक राजनैतिक एवं संस्कृति ऐतिहासिक खतरों से ही एक विराट् वैश्विक मानवीय स्थिति फटकर खुल जाती है, ऐसी स्थिति जो प्रत्येक पल में हजारों किस्सों के बदलाव की शर्त झेल रही है, और जिसका सौन्दर्यशास्त्र भी उसका अपना और विशिष्ट है जो किसी एक विशिष्टता का पक्षधर होने की त्रुटियों से भी नितान्त वरी है। प्रायः यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि आधुनिकता का कोई एक कोण स्थापित नहीं हो पाया है क्योंकि आधुनिकता का प्रश्न इतने व्यापक रचना संन्दर्भ से एक समान्तर स्तर पर जुड़ता है कि किसी एक विशिष्ट रचना सन्दर्भ से सम्बद्ध करके इस व्याख्यायित अथवा विश्लेषित करना इसके आत्मिक स्वरूप को खण्डित करने का खतरा मोल लेना है। सम्भवता यही कारण है कि 'आज तक जितनी भी परिभाषाएं इसकी व्याख्या के लिए रची या गढ़ी गई है, एक असंगत और लगभग निरर्थक अभ्यास का ही कर्म सिद्ध हुई है। परिभाषाओं की व्यर्थता को समझते हुए ही शायद अधिक संजीदा चिन्तकों ने इसे परिभाषित करने का कार्य स्थागित कर दिया है।

आधुनिक–बोध से संयुक्त हर रचना समकालीन सन्दर्भो से अनिवार्य रूप से जुड़ी रहती है; किन्तु इसके बावजूद आधुनिक लेखक समकालीनता का अतिक्रमण करता है और इसकी नई व्याख्या करता है। इस प्रकार आधुनिकता काल निरपेक्ष दृष्टि है वह एक प्रश्ना–कुल मानसिकता है, जो हर बंधी–बँधायी व्यवस्था, मर्यादा अथवा धारणाओं को तोड़ती है, आधुनिकता का यह क्रियाशील रूप उसे जड़ या स्थिर धारणा बनने से बचाता है। वह एक 'सश्लिष्ट व्यापार है। जिसमें अनेक गुण विशेषताऐं, अनेक प्रवृत्तियां, विरोधात्मक स्थिति में एक साथ विद्यमान रहती है। नरेन्द्र मोहन आधुनिकता को संकीर्ण मतवाद के शिकंजे में कसने के विरोधी हैं। समकालीन चिन्तन में आधुनिकता की इतनी अधिक तस्वीरें प्रस्तुत की गई हैं कि किसी एक को स्वीकार करना असम्भव है; कोई उसकी एक तस्वीर को नकारता है, तो कोई उसकी दूसरी तस्वीर को नकारता हुआ 'नेति–नेति' कह सकता है। या फिर

[1] एम.के. स्पीयर्स ; डायोनसिस ऐड दि सिटी. में उद्धत जॉनक्रोव रेंन्सम का कथन ; पृ0 4

उसे 'प्रेम मूरति' मानकर तुलसी की चौपाई से सन्तुष्ट हो सकता है–**जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।** अतः यही भावना आधुनिकता के सन्दर्भ में पूर्ण रूप से सार्थक प्रतीत होती है। इसलिए आधुनिकता को विद्वानों ने अपने–अपने ढंग से परिभाषित करने की कोशिश की है।"नतीजे के तौर पर आधुनिकता एक ऐसी मानसिकता की शक्ल में जाहिर होती है, जो आध्यात्मिक चिन्तन, धार्मिक दर्शन पर प्रश्न चिन्ह लगाने तथा आस्था और *विश्वास की जगह मानवीय विवेक और विचार को केन्द्रिय महत्व देने से पैदा हुई है।*"[1]

आधुनिकता का स्वाभाव विकल्पात्मक है कोई भी नियम या सिद्धान्त अपनी प्रकृति में विकल्प हीन होता है, यह उसकी अनिवार्य नियति है। सच ता यह है कि आधुनिकता का विकल्पात्मक स्वभाव अनके अन्तर्विरोधों को जन्म देता है जब आलोचक आधुनिकता को समझने के लिए इन अन्तविरोधों से जूझता है तो आधुनिकता की अनुभूति एक निराले रूप में करता है कि "इसमें एक ओर वैयक्तिकता है, दूसरी ओर सामाजिकता; एक ओर मानव–नियति का अहसास है,दूसरी ओर आत्मसंघर्ष की विकट स्थिति इसे कहीं समसामयिक माना गया है, कही समसामयिकता का अतिक्रमण करने वाली मूल्य दृष्टि कहीं इसे एक काल खण्ड में व्याप्त बोध की स्वीकृति माना गया है, कहीं आधुनिकता और समसामयिकता का अन्तर ही गड़बड़ा गया है। यह आधुनिक प्रकृति की द्वंद्वात्मक स्थिति को सूचित करता है, जिसमें अटकलें लगाने की छूट ले ली जाती है।"[2]

आधुनिकता के विषय में जितनी भी मान्यताएं प्रस्तुत की गयी हैं उसमें एक बात को सबने स्वीकार किया है कि आधुनिकता एक विशिष्ट दृष्टिकोण है या एक ऐसी विचार पद्धति जो मध्ययुगीन विचार पद्धति से भिन्न भिन्न ऐतिहासिक चेतना से सम्पन्न नई दृष्टि से सोचने समझने और अपने समय को व्याख्यायित करने की धारणा है दूसरे शब्दों यह एक ऐसी जीवन दृष्टि है, जिसमे परम्परा से विच्छेद के कई सूत्र विद्यमान है आधुनिकता का यही मूल्यांकन देशकाल के साथ जीवित और संचेतन संबन्ध से रूपापित होता है हम चाहें

[1] डॉ० नरेन्द्र मोहन ; आधुनिकता के सन्दर्भ में हिन्दी कहानी ; प्र०सं०, पृ० 13
[2] डॉ० नरेन्द्र मोहन ; आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ ; प्र०सं० 1973, पृ० 18–19

तो यहाँ से शुरू कर सकते हैं कि जहाँ से मनुष्य ने अपने काल के प्रति आधिक सचेतनता दिखलाई वहीं से वह आधुनिक हुआ, तो क्या कहना उपयुक्त है कि जो परम्परागत नही हैं वह आधुनिक है, लेकिन इतना कह देने से आधुनिकता का स्वरूप स्पष्ट नहीं हो जाता। इसलिए डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ ने कहा–"आधुनिकता एक विचार विधि एक व्यवस्था की समग्र धारणा, एक चिन्तन पद्धति, एक वृत्ति अथवा मूल्य चक्र से अभिहित होती है।"[1] अर्थात् वह एक ऐसी विचार विधि है। जो व्यवस्था को समग्रता देती है। हमारे विचार में यह समग्रता के प्रति जीवंत इतिहास बोध से आती है।

आधुनिकता परम्परा से कटकर अलग न होकर परम्परा से विच्छेद होती है। परम्परा में विच्छेद से जो मानसिकता, आचरणशीलता और विचारशीलता सामाजिक यथार्थ की सही पहचान कराती है, और जीवन के संश्लिष्ट उलझावों की जकड़न को तोड़ती है वह सही आधुनिकता है, इसलिए आज से लगभग चार सौ वर्ष पहले के कबीर आज भी आधुनिक प्रतीत होते हैं क्योंकि उन्होनें अपने समय में पहले के निश्चित सामाजिक सम्बन्धों को न केवल प्रश्नाकुल दृष्टि से देखा था, बल्कि उन्होंने उन बन्धनों को भी तोड़ा जो समाज के लिए अभिशाप एवं प्रगति में बाधक थे। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने "आधुनिकता को कभी अपरम्परागत कहा गया है तो कभी ऐतिहासिक अनिरन्तरता, तो कभी उसे अन्त के बोध की दृष्टि से पहचानने की कोशिश भी की गई।"[2]

"आधुनिकता एक ऐसी अवधारणा और प्रक्रिया है जिसके तहत सर्जक चिन्तक पुराने का विश्लेषण करता हआ, उसे वर्तमान के प्रसंग में जाँचता है और भविष्य का रूपायन भी करता है"[3] आज हम जिस समाज में रह रहें हैं आज उसका स्वरूप पहले जैसा नहीं रह गया, हर चीज परिवर्तनशील है' अर्थात् आस्था संस्कार, विश्वास जो समाज के प्रमुख तत्त्व

[1] डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ ; आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण ; प्र0सं0 1969 , पृ0 313,
[2] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 19
[3] परिशोध (वार्षिक पत्रिका) ; सन् 1982, अंक 34, पृ0 38

माने जाते हैं। आज वह भी अपना अर्थ बदल रहे हैं। सही आधुनिकता इन बदलते हुए अर्थों को मानव हित में परिवर्तित करती है, और गलत आधुनिकता एक खालीपन पैदा करती है। सत्य तो यह है कि हम जितना अपने युग की समस्याओं, चुनौतियों और तदर्थ उपजी स्थिति का बौद्धिक रूप से सामना करते हैं, उतने ही आधुनिक होते हैं। इस बौद्धिक दृष्टि से भावना का योग भी निरन्तर बना रहता है।

आधुनिकता से हमारा आशय देशकाल के बोध से है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि आधुनिकता मानवीय प्रगति का बोध है, इसका यह अर्थ हुआ कि हम समसामायिक सन्दर्भों से जुड़ जाते हैं। आज आधुनिक संकट के दौर से गुजर रहे हैं, धर्म, विज्ञान भाषा नैतिकता और दर्शन के क्षेत्र में संकट उपस्थित है, इस संकट का बोध कवि और साहित्कार दोनों को होना चाहिए। यही संकट बोध आधुनिकता है। विज्ञान ने मानव मूल्यों में क्रॉंतिकारी परिवर्तन ला दिया है विज्ञान के कारण ही जीवन दृष्टि में परिवर्तन आ गया है, नैतिक मूल्य तिरोहित होते जा रहें हैं। विश्वास के स्थान पर परिक्षण श्रद्धा के स्थान पर विश्लेषण को महत्व दिया जाने लगा है। सारे मूल्यों का अवमूल्यन हो रहा है इसे समझे बिना आधुनिकता को समझना बहुत ही जटिल कार्य है। पूँजीवादी व्यवस्था के कारण भी मानव मूल्यों का अवमूल्यन हुआ। आधुनिकता को यथार्थ की गतिशीलता को स्वीकार करके चलना होगा। यथार्थ की कटुता के साथ सौन्दर्य बोध को जोड़कर ही आधुनिकता मानव के क्षण प्रतिक्षण होने वाले परिवर्तन के प्रति विशेष आस्थावान रहकर ही जीवित रह सकते हैं।

डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने अपनी पुस्तक में आधुनिकता व आधुनिकतावाद में अन्तर किया है– आधुनिकता में आधुनिकतावाद बिल्कुल नहीं है आधुनिकता दिमाग में उपजे सुक्ष्म दार्शनिक प्रत्ययों पर आधारित नहीं है आधुनिकता तो सामाजिक सम्बन्धों तथा सामाजिक परिवर्तन की विचार विधि है। आधुनिकता मानसिक प्रत्ययों तथा सामाजिक रहस्यों को समझने तथा विश्लेषित करने की विधि है। ताकि विशेष देशकाल के सन्दर्भ में मनुष्य सचेतन एवं स्वतंत्र होकर परिवर्तन कर सके।आधुनिकता में सिद्धान्त एवं व्यवहार का योग है जिससे यह अविवेकशील तथा अप्रतिबद्ध भी नहीं है, प्रस्तुत दार्शनिक एवं कर्म निर्देशक है।

नये जमाने के कुछ फैशन परस्त विचारक या चमत्कार पैदार करने वाले आलोचक चाहे आधुनिकता के अतीत या पुरातन से सम्बन्ध विच्छेद करने में अपनी शान समझते हो, पर प्रबुद्ध विचारक अतीत से कटकर आधुनिकता का समर्थन नहीं कर सकता। अतीत की सापेक्षता में आधुनिकता को देखने की उसकी मौलिकताएं मिट नहीं सकती। इसलिए आधुनिकता का अर्थ यह लिया जाए कि "विगत सांस्कृतिक मूल्यों को अपने अन्दर समेट कर मानव की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य विषय पर दायित्व की सक्रियता और चेतनता को बनाए रखा जाए तो उसे आधुनिकता कहा जा सकता है"[1]

आधुनिकता के सन्दर्भ में एक भ्रामक स्थिति यह भी है कि गांव से नगर जाना, नगरों से महानगर तक पहुँचना आधुनिक साज–सज्जा का होना, टेलीविजन फ्रिज, कॉफी हाउस, बीयर की बोतलें ट्रांजिस्टर लटकाए हिप्पीवेश भूषा में घूमना आदि ही आधुनिकता हैं, जबकि वस्तु स्थिति ऐसी नहीं है, फैशन और आधुनिकता में अन्तर है फैशन अल्प जीवी होता है, वह केवल परिवेश पर ही प्रभाव डाल पाता है, केवल परिवेश में परिवर्तन मात्र हो जाने से आधुनिकता नहीं आ जाती , महानगर में रह कर अस्तित्ववाद की चर्चा करने वाला व्यक्ति व्यक्तिगत जीवन में दकियानूस हो सकता है और आधुनिक कोठी में रहने वाला व्यक्ति घोर परम्परावादी है और आडम्बर प्रिय भी हो सकता है। ये सब परिवेश की यथार्थ स्थितियाँ होती है, जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता, इसलिए कहा जा सकता है– "आधुनिकता राष्ट्रीय संस्कृति की बहुधर्मी अभिव्यंजना है वह इतिहास एवं समाज की मिली–जुली प्रगतिशीलता का आयाम है वह संस्कृति का मूल्य चक्र तथा अनेक वर्गो की चिन्तन पद्धतियों का अमूर्त पैटर्न है पूरे समाज में इतिहास दर्शन का विश्लेषण करना वैज्ञानिक जीवन दृष्टि का विकास करना आधुनिकता है।"[2]

---

[1] डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल ; आंचलिकता से आधुनिकता बोध, प्र0सं0 1972, पृ0 132
[2] डॉ0 सुरेन्द्र सिन्हा ; हिन्दी उपन्यास ; सं0 1972, पृ0 117

ऐतिहासिक काल की दृष्टि से हम आधुनिक के अन्तर्गत रेनेसां के पूर्ण मनुष्य की धारणा वाले आधुनिक काल, पूँजीवाद के प्राकृत मनुष्य का परायीकृत, धारणा वाले वर्तमान काल तथा क्रौंतियों के संघ मनुष्य की धारणा वाले समसामयिक काल इन तीनों का समादर किया जा सकता है। रेनेसां ने तर्कशील की, औद्योगिक क्रौंति ने स्वच्छन्दतावाद की, तथा समसामयिकता ने क्रौंति की केन्द्रीय धारणाऐं या चरम मूल्य प्रदान किये हैं। इस विषय में डॉ0 अजब सिंह का मत है कि" पाश्चात्य आधुनिकता में विवेकशीलता, उदारता, विविधता, अनेकता, स्वतंत्रता, लौकिकता तथा व्यक्ति के आत्म गौरव पर अधिक बल दिया जाता है लेकिन पूर्वी आधुनिकता में वैज्ञानिक भौतिकवाद एवं साम्यवाद शासनों का संगम है।"[1] वहीं दूसरी ओर डॉ0 सिंह स्वच्छन्दतावाद एवं नवस्वच्छन्दतावाद को भी आधुनिकता का एक रंग मानते हुए कहते है कि "स्वच्छन्दतावाद को नवीन धरातल पर रखता जो युग सापेक्षता के साथ अभिव्यंजित होता है,उसे नवस्वच्छन्दतावाद कहेंगे। नवस्वच्छन्दतावाद स्वच्छन्दतावाद के प्रति प्रतिक्रिया है, जो आधुनिकता का परिणाम है।"[2]

यह एक संयोग की बात है यूरोप में आधुनिक युग और आधुनिकता दोनों एक दूसरे के सहवर्ती रहे हैं। इस तरह से यह युग आधुनिक का इतिहास तथा अस्तित्व है ; जिसने आधुनिकता का बिम्ब प्रस्तुत किया। यह बिम्ब है मनुष्य और समाज का और इस काल को जगमगाने या धुधला करने वाले घटक है– समाजशास्त्र, इतिहासवाद, यथार्थवाद और वैज्ञानिक संस्कृति के ये घटक आधुनिकता को विशिष्ट तथा वैश्वक वस्तुनिष्ठ तथा आत्मनिष्ठ, विकासात्मक तथा द्वंद्वात्मक यथार्थ तथा फेंटेसी पूर्ण इत्यादि जैसे अन्तर्विरोधों को गूथकर उसकी समर्थ सम्भावनाओं को प्रकट करते हैं। आधुनिकता यथार्थवाद का एक नव आयाम है, डॉ0 अजब सिंह यथार्थवाद को स्वच्छन्दता का ही विकसित रूप मानते हैं उनका मत है कि "यथार्थवाद में स्वच्छन्द प्रवृत्ति होती है, जिसे बाद में स्वच्छन्दता विरोधी कह देते हैं। यह स्वच्छन्द प्रवृत्ति यथार्थवाद में व्यंग्य के द्वारा अभिव्यक्त होती है और इसकी पहचान

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987 ; पृ0 46–47
[2] वही, पृ0 53

'आधुनिकता' है।"[1]इस तरह आधुनिकता अनेक अंत श्रेणियों का सामंजस्य करती है इससे एक बात तो पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि "आधुनिकता कोई दर्शन तथा यूतोपिया नहीं है, बल्कि बहुविधि विचार धाराएं है जो संस्कृति में समाज एवं सभ्यता को अपेक्षित करती है, इसीलिए हम आधुनिकता को विचार विधि कह सकते है,"[2] तथा "मानववाद, नवमानववाद, आधुनिकता की एक प्रवृत्ति है।"[3]

अब हम कह सकते है कि आधुनिकता मानवीय चेतना से जुड़ी है और मनुष्य की आत्मिक खोज को प्रश्रय देती है। मानव मूल्यों से उद्भूत द्वन्द प्रक्रिया ही आधुनिकता की उदभावना भूमि है। आधुनिकता मानव जीवन को समझने एवं समझाने का एक नूतन प्रयास है वस्तुतः आधुनिकता मानव जीवन मूल्यों की प्रक्रिया है। इसीलिए सुरेन्द्र सिन्हा का कथन है–"आधुनिकता में विवेकशीलता एवं प्रतिवद्धता का संयोग होने से मनुष्य को आस्था प्राप्त होती है, और वह समाज को सचेतन रूप से परिवर्तित करने की दिशा में प्रयत्नशील होता है शक्तिपरक मानवीय सृजनात्मकता तथा सार्वभौम मानवीय उत्तरदायित्वों का संश्लिष्ट रूप ही आधुनिकता है।"[4] आधुनिकताबोध जिन कारणों के दबाव में संघटित हुआ है उनमें विज्ञान को प्रमुखता दी जाती है। विज्ञान का उद्य केवल भौतिक क्षेत्र को ही प्रभावित नहीं करता है, बल्कि उससे मानव चेतना भी प्रभावित होती है।

डॉ0 बच्चन सिंह "आधुनिकता को एक बिन्दु पर स्थिति और गति दोनों ही मानते हैं।"[5] डॉ0 सिंह आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहते हैं –'आधुनिकता न तो सपाट बयानी में होती है और न बिम्ब योजना में। वह एक दृष्टिकोण में होती है।'[6] अन्त में डॉ0 सिंह का निष्कर्ष आधुनिकता के सन्दर्भ में यह है कि "आधुनिकता तो आधुनिकता है ही

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987 ; पृ0 54
[2] डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ ; आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण ; सं0 1969, पृ0 313
[3] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 48
[4] डॉ0 सुरेन्द्र सिन्हा ; हिन्दी उपन्यास ; सं0 1972, पृ0 116
[5] आलोचना (पत्रिका) ; अप्रैल–जून 1973, पृ0 113
[6] वही, पृ0 114

उसका अस्वीकार भी आधुनिकता है आधुनिकता के स्वीकार अस्वीकार के परे जाना भी आधुनिकता है।"[1]

आधुनिकता जीवन को समग्रता में देखने की शक्ति देती है। आधुनिकता अपने समस्त परिवेश का केन्द्र स्थल मनुष्य को स्वीकारती है मानव जीवन प्रतिक्षण विकास की स्थिति में है। इसके प्रति आस्था रखकर ही आधुनिकता हमें दृष्टि देती है फलतः हम अपने परिवेश के एवं परिस्थितियों के साथ-साथ अपनी गतिविधि को भी रेखांकित करते हैं। इसकी साहित्यिक गतियाँ हैं जो विकासमान अवस्था में सदैव रहती हैं। जो विकासमान अवस्था में सदैव रहती हैं। ऐसी स्थिति में इसकी परिभाषा करना कठिन है, इसकी काल सापेक्षता की दृष्टि से व्याख्या तो हो सकता है लेकिन परिभाषा नहीं। आधुनिकता उस विकासमान पौधे की तरह है जो हर क्षण विकास की स्थिति में है और उसका रूप एवं सौन्दर्य भी क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहा है। ऐसी स्थिति में उस विकासमान पौधे को परिभाषित करना कठिन कार्य है उसे सांकेतिक किया जा सकता है, परिभाषित नहीं। आधुनिकता वैज्ञानिक दृष्टि है, वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में आधुनिकता गतिशील नहीं हो सकती। इसीलिए आधुनिकता जीवन को वैज्ञानिक आधार देना चाहती है,............"आधुनिकता इसीलिए कोई रूढ़ि नहीं है, वह एक ऐतिहासिक परिधि है, जो इस युग के मानसिक धरातल को कुछ नई उपलब्धियों के अनुसार काटती छाँटती है अथवा उसमें नये संदर्भ जोड़ती है और पुराने को या ऐसे को जो सतत् गतिशील नहीं रह पाते, अपने से पृथक भी करती है।"[2]

वर्तमान युग की आधुनिकता के मूल में वैज्ञानिक दृष्टि, उससे उत्पन्न भौतिकवादी सभ्यता और उसकी जटिल समस्यायें विद्यमान हैं जब वैज्ञानिक प्रविधि को जीवन और समाज के सभी पक्षों पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदि पर भी लागू किया जाने

---

[1] आलोचना (पत्रिका) ; अप्रैल-जून 1973, पृ0 114
[2] अभिनव भारती (वार्षिक पत्रिका) ; सन् 1983-84, पृ0 115

लगता है, तो इन सब पक्षों के मूल में स्थित रागात्मक और नैतिक आधार विघटित होने लगता है। क्योंकि विज्ञान वस्तु सत्य और बौद्धिक विश्लेषण में विश्वास रखता है और वस्तु (पदार्थ) बौद्धिक विश्लेषण का रागात्मक नैतिकता, आध्यात्मिकता से दूर का भी सम्बन्ध नहीं होता है। यही कारण है कि पारम्परिक रागात्मक सम्बन्धों का विच्छेद नैतिक मूल्यों का विघटन मानसिक द्वन्द्व और तनाव, व्यक्तिवाद और उससे निष्पन्न आत्मकेन्द्रियता विज्ञान जनित भौतिकवादी सभ्यता की नैसर्गिक परिणतियाँ हैं। पुरानी परम्पराओं और चिर प्रतिष्ठित जीवन मूल्यों में उसे आज के यथार्थ जीवन की समस्याओं का कोई समाधान नहीं मिल पा रहा है। वर्तमान अर्थव्यवस्था और केन्द्रिय सामाजिक गठन में संघर्ष और उससे उत्पन्न ग्लानि, विक्षोभ असन्तोष, ईष्या और विषाद का होना अवश्य सम्भावी है। यही व्यवस्था की नियति है, इसी के लिए आज का मानव अभिशप्त है "ऐसी सभ्यता में जो आधुनिक भाव बोध है, वह है अनाशा और दुःख भावना का, ग्लानि और विरक्ति का, अगति का,।"[1]

आज जिस आधुनिक भाव बोध का उल्लेख किया जा रहा है वही आज के कवियों तथा लेखकों द्वारा बहुचर्चित आधुनिकता का आधार है **सुरेश सिन्हा** के शब्दों में "आधुनिकता में विवेकशीलता एवं प्रतिबद्धता का संयोग होने से मनुष्य को आस्था प्राप्त होती है और वह समाज को सचेतन रूप से परिवर्तित करने की दिशा में प्रयत्नशील होता है शक्तिपरक मानवीय सृजनात्मकता तथा सार्वभौम मानवीय उत्तरदायित्वों का संश्लिष्ट रूप ही आधुनिकता है।"[2]

गिरिजा कुमार माथुर ने भी आधुनिकता को व्याख्यायित करते हुए लिखा है कि "वस्तुतः आधुनिकता परिवर्तित भाव-बोध की वह स्थिति है, जिसका प्रादुर्भाव यान्त्रिक तथा वैज्ञानिक क्रम के वर्तमान बिन्दु पर जाकर हुआ है।"[3] वैज्ञानिक वस्तुन्मुखी दृष्टि को जीवन, साहित्य और कला पर लागू करने से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं, वे ही आधुनिकता के आवयविक तत्व

---

[1] गजानन माधव मुक्तिबोध ; नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध ; सं0 1960, पृ0 183
[2] डॉ0 सुरेश सिन्हा ; हिन्दी उपन्यास ; सं0 1972, पृ0 116
[3] गिरिजाकुमार माथुर ; नई कविता : सीमाएं और संभावनाएं ; सं0 1973, पृ0 106

हैं। संक्षेप में ये तत्व इस प्रकार हैं –

1. वैज्ञानिक विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रश्रय देने के कारण क्षण का, अंश का, और छोटी–मोटी घटनाओं का जीवन के पुष्कल प्रवाह से कटकर महत्वपूर्ण हो उठना,
2. वस्तु सत्य (तथ्य) की स्वीकृति के कारण पदार्थेतर धर्म, ईश्वर, नैतिक मूल्यों, रागात्मक सम्बन्धों और भावसत्यों का विघटन की ओर उन्मुख होना,
3. अहं केन्द्रित वस्तु भोगी (व्यक्ति स्त्री या पुरूष–को भी वस्तु के स्तर पर रखकर भोगने वाली)वैयक्तिकता के प्राब्ल्य के कारण अर्थ और काम पर केन्द्रित असयंत भोगवादी वृत्ति की प्रधानता।
4. साहित्य और कला के क्षेत्र में रस अलंकार, लय, छन्द, तुक औचित्य, सामंजस्य संन्तुलन आदि पारस्परिक प्रतिमानों के साथ ही प्रतिभा, साधना और संयम की शर्तों का निराकरण।
5. महानगरीय बोध में मानव की लघुता और 'लघुमान' के अकेलेपन, संत्रास अवसाद आदि की प्रधानता।
6. यान्त्रिक सभ्यता की जटिलताओं से उत्पन्न जीवन संघर्ष, टूटन, घुटन और अनास्था।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आधुनिकता सम्बन्धी उक्त दृष्टिकोण सीमित और एकांगी है। आधुनिक–बोध और आधुनिकता की इसी एकागिकता को ध्यान में रखकर **रामधारी सिंह 'दिनकर'** ने ठीक ही कहा है : "इसलिए हमारा ख्याल है कि साहित्य में साधारणतः जिसे आधुनिक बोध कहा जाता है। वह कोई शाश्वत मूल्य नहीं है। मूल्य शायद वह है ही नहीं मूल्यों के विघटन से उत्पन्न वह एक दृष्टि है, जिसमें घबराहट, निराश, शंका, त्रास और असुरक्षा का भाव है, अतएव आधुनिक बोध की सारी व्याप्तियाँ ऐसी नहीं हैं जो आँख मूंदकर स्वीकार कर ली जाए ।"[1]

---

[1] डॉ0 रामधारी सिंह दिनकर,; शुद्ध कविता की खोज ; प्र0सं0 सितम्बर 1966, पृ0 216

आधुनिकता का विवेचन जिस प्राथमिक एवं मुख्य समस्या को चुनौति के रूप में उभरता है वह है–उसका विकल्पात्मक स्वभाव। कोई भी नियम या सिद्धान्त अपनी प्रकृति में विकल्पहीन होता है। यह उसकी अनिवार्य नियति है। तभी हम उसे नपे–तुले शब्दों में परिभाषित कर लेते हैं। किन्तु अपनी संरचना में अनेक विकल्पों को (जो विरोधी भी हो सकते हैं) संजोए रखती है। सच तो यह है कि आधुनिकता का विकल्पात्मक स्वभाव अनेक अन्तर्विरोधों को जन्म देता है, तो आधुनिकता की अनुभूति एक निराले रूप में करता है। वह अनुभव करता है कि "इसमें एक ओर वैयक्तिकता है, दूसरी ओर सामाजिकता ; एक ओर मानव नियति का अहसास है; दूसरी ओर आत्मसंघर्ष की विकट स्थिति।इसे कहीं समसामयिक माना जाता है, कहीं सामसामयिकता का अतिक्रमण करने वाली मूल्य दृष्टि, कहीं इसे एक काल खण्ड में व्याप्त बोध की स्वीकृति माना गया है; कहीं आधुनिकता और समसामयिकता का अन्तर ही गड़बड़ा गया है। यह आधुनिक प्रकृति की द्वंद्वात्मक स्थिति को सुचित करता है। जिसमें अटकलें लगाने की छूट ले ली जाती है।"[1]

यदि व्यापक रूप से देखा जाए तो आधुनिकता जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में पृथक–पृथक अर्थ सन्दर्भ रखती है और वह मूलतः सभ्यता और संस्कृति के पारस्परिक अतिक्रमण का एक सहयोगी बिन्दु है। यही कारण है कि अपने व्यापक प्रसार तथा पृथक–पृथक अर्थ सन्दर्भो के कारण उसको समग्रतः इस रूप में व्याख्यायित नहीं किया जा सकता कि वह सबको स्वीकार हो सके। जीवन के जिस क्षेत्र में भी प्रगतिशीलता के दिखाई पड़े वही आधुनिकता भी कुछ जटिल मिश्रणों के साथ विद्यमान हैं–"अर्थ के क्षेत्र में 'औद्योगिकता' आधुनिकता कहलाई, राजनीति में 'जनतंत्र' और समाज के क्षेत्र में 'मानववाद'को आधार बनाया गया.......।"[2]

आज आधुनिकता को परिवेशगत अर्थ से भी जोड़कर देखा जा रहा । कुछ लेखक परिवेश को वर्तमान की सीमा तक ही स्वीकार करते हैं। परम्परा का उस पर कोई प्रभाव स्वीकार नहीं करते। अज्ञेय ने परिवेश को स्पष्ट करते हुए लिखा–"परिवेश मेरे लिए देशकाल

---

[1] डॉ0 नरेन्द्र मोहन ; आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ ; प्र0सं0 1973, पृ0 18–19
[2] विशम्भर नाथ उपाध्याय ; जलते और उबलते प्रश्न ; जुलाई सं0 1969 पृ0 60

का सतत परिवर्तनशील संबध हैं, बल्कि उस संबध का भी वह रूप है जो मेरी चेतना को छूता है, क्योंकि निस्सन्देह ऐसा भी बहुत कुछ हो रहा होगा–हो रहा है–जो मेरी चेतना से परे है; उसे मैं परिवेश कहने का दम कैसे भरू?"[1]

सत्य तो यह है कि परिवेश को हम आधुनिकता के अर्थ में स्थूल रूप में स्वीकार नही करते बल्कि हम उसे काल की प्रवहमानता और उसकी सापेक्षता से अर्जित एक संवेदनात्मक दृष्टि के रूप में प्राप्त करते हैं। यही वजह है कि आधुनिकता के सन्दर्भ में हम जिस परिवेशगत सत्य को आधार मानकर चलते हैं। वह मूलतः देशकाल की परिवर्तनशीलता मानव सम्बन्धों की गतिशीलता को ही रेखांकित करता है। वह काल को उसके सातत्य में स्वीकार करता है। आधुनिकता का अतीत से कोई विरोध नहीं है, न ही वह कोई 'खंडित घटना' है। बल्कि सच पूछिये तो "आधुनिकता परम्परा के प्रति एक यथार्थवादी दृष्टि का नाम है। वह क्लासिकल परम्परा के प्रति भी जागरूकता अपनाती है। अपनी परम्परा से एक नया सम्बन्ध ज्ञान और उस सन्दर्भ में भी अपनी प्रतीति ही आधुनिकता की सार्थकता है। वह उसके प्रति संवेदना में फलीभूत होती है।"[2]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आधुनिकता कोई आरोपित कर्मकाण्ड नहीं है क्योंकि उसका कोई भी रूप स्थिर नहीं है, वह अपनी विकासशील स्थिति में आज भी गतिशील है हम यह निःसंकोच कह सकते हैं कि आधुनिकता कोई मूल्य नहीं बल्कि मूल्यों के प्रति सचेत करती है। काल सापेक्षता की दृष्टि से आधुनिकता गति की द्योतक है काल की नहीं। आधुनिकता वास्तव में इन अर्थो से भी भिन्न है। यह एक मानसिक दृष्टि है जो हमें मूल्यों को नये सन्दर्भों में देखने की दृष्टि देती है।

आधुनिकता का एक और अर्थ जीवन के प्रति दृष्टिकोण में परिलक्षित होता है यद्यपि स्वयं दृष्टिकोण जीवन के तत्त्वों में से एक है; क्योंकि जीवन की सार्थकता बिना दृष्टिकोण

---

[1] सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय'; आलबाल ; प्र०सं० 1970, पृ० 17
[2] धनज्जय वर्मा ; हस्तक्षेप ; प्र०सं० 1975 ; पृ० 215

के सम्भव ही नहीं है फिर भी जब हम यह कहते हैं कि आधुनिकता जीवन के प्रति यथार्थ दृष्टिकोण है तो उसका तात्पर्य यह है कि आधुनिकता यथार्थ के माध्यम से सौन्दर्य के चिर विकसित सम्भाव्य की स्वीकृति है। यथार्थ चूंकि स्वयं प्रत्येक क्षण विकसित होने वाली प्रवृत्ति है इसलिए इस सम्भाव्य सौन्दर्य के साथ–साथ नयी चेतना को गतिशील बनाने में सहायक है।

हमारे विचार से आधुनिकता, परम्परा की ही एक कड़ी है। परम्परा को आधुनिकता से अलग करके देखना समीचीन प्रतीत होता है आज हम जिसको आधुनिकता कहते हैं ;भविष्य में वह एक दिन परम्परा बन जायेगी। इसलिए आधुनिकता अतीत से प्रस्थान है–"आधुनिकता में कभी अनिरन्तरता का बोध है तो कभी परम्परा का कभी अपरम्परा की बात है तो कभी परम्परा से नये स्तर पर जुड़ जाने की बात है। आधुानिकता की प्रक्रिया में प्रश्नचिन्ह की निरन्तरता है जो इसके अन्दाज और मिजाज़ दोनों को बदलती रही है और बदल रहीं है।"[1] आधुनिकता की भंगिमा मानवीय है। इसमें मानव मूल्यों के द्वन्द की प्रक्रिया में घिरे हुए मानव बिम्ब उभरते हैं। आधुनिकता में मूल्यों के द्वन्द की प्रक्रिया निहित है। इसी के फलस्वरूप प्रगति विकास एवं क्रॉंति का प्रत्यय आन्वेषित कर सकी है।

आधुनिकता को अवधारणाओं द्वारा ही समझा जा सकता। इसे समझने में यह धारणाएं सहायक बन सकेगी–समाजशास्त्र राजनीति, मनोविज्ञान, दर्शन, विज्ञान इत्यादि समाजशास्त्र, दर्शन, राजनीति, मनोविज्ञान, विज्ञान एवं साहित्य कला आधुनिकता से जुड़कर मानवी कार्यकलापों को समझने में सहायक बने रहते हैं इसलिए आधुनिकता की दृष्टि कोई हवाई अथवा दिव्य दृष्टि नहीं है, बल्कि विचारों के इतिहास की उपलब्धि है यह उपलब्धि मानवीय जीवन को समझने एवं समझाने का एक नूतन प्रयास है। अतः आधुनिकता की पहचान में विचारों के इतिहास का सन्दर्भ और व्यवहारिक क्रिया दर्शन अपेक्षित हो गया है। आधुनिकता में मनुष्य का इतिहास वस्तुतः उसके विचारों का इतिहास है।

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 70

अन्ततः हम आधुनिकता का सैद्धान्तिक विश्लेषण करने के उपरान्त हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि आधुनिकता एक मानवीय दृष्टि है जो अपने अन्दर ज्ञान, विज्ञान, कला एवं संस्कृति को पूर्ण रूप से समेटे हुए है। इसी आधार पर हमने आधुनिकता को प्रवृत्तियों में बांधने की कोशिश की है जो निम्नलिखित है–

1. आधुनिकता जीवन के प्रति प्रवृत्तिवादी बौद्धिक चिन्तन धारा है।
2. आधुनिकता तार्किक वैज्ञानिक दृष्टि एवं संदेहयुक्त जिज्ञासु मानसिकता को महत्व देती है।
3. आधुनिकता आन्तरिक अनुभूतियों की काल्पनिक अभिव्यक्ति है। इसके मूल में आन्तरिक भावना प्रधान रहती है। आधुनिक काव्य में व्यक्ति की प्रधानता महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि व्यक्तिवाद के आधार पर भाव प्रवणता तथा कल्पनाशीलता इस काव्य में विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।
4. आधुनिकता में व्यक्तिवादी की चेतना सर्वोपरि है। मनुष्य अपने विवेक, अपनी दृष्टि, और अपनी रूचि को सब कुछ मानता है। आधुनिकता में भावना के स्थान पर विवेक को, तथा आदर्शमयता के स्थान पर आकांक्षा को महत्व दिया जाता है।
5. आधुनिक एक वैचारिक दृष्टि है जो मनुष्य को आधुनिक समाज से जोड़ती है। इसके साथ ही वह जड़ता का विरोध भी करती है तथा मनुष्य को पूर्णता की ओर विकासमान करती है।
6. आधुनिकता, आधुनिक कला को लक्ष्य मानती है। आधुनिकता में महत्त्वपूर्ण से अधिक सार्थकता और सुन्दरता से अधिक प्रमाणिकता पर बल दिया जाता है। यह आधुनिकता की विशेषता है।

(क) पाश्चात्य विचारक : आधुनिकता–बोध

आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि है जो मनुष्य को अपनी समसामयिकता परिस्थितियों से आगे सोचने के लिए प्रेरित करती है। इसलिए जो मनुष्य अपने परिपेक्ष से हटकर तर्क की कसौटी पर अपने को समृद्ध करते हुए, विकास की ओर उन्मुख करता है वह मनुष्य आधुनिक है। आधुनिकता की शुरूआत सर्वप्रथम पश्चिमी देशों में देखने को मिलती है। एक पाश्चात्य समीक्षक ने बीसवीं शदी में आधुनिकतावाद का निरूपण करते हुए इसे 'नगरबोध' से जोड़ा है।[1] इनके अनुसार "आधुनिकता की शरूआत तब से मानी जा सकती है जब से दियोनीसस का नगर में आना हुआ है यह एक ही आधुनिकता देव है जो आधुनिकतावाद के स्वरूप को उजागर ही नहीं करता है, बल्कि इसे एक साकार रूप भी प्रदान करता है। इसे एक रूपक के तौर पर लिया गया है जो वर्तमान की स्थिति को पूर्ण रूप से प्रभावित कर रहा है। इस विसंगति, क्रूरता, सामाजिक भागीकरण नग्नता आदि में आँका जा सकता है।"[2]

दूसरा देव है अपोलो जो बिल्कुल दियोनीसस के विपरीत है, अंग्रेजी साहित्य का इतिहास इसका प्रमाण है–रेनेसां से लेकर आज तक। आधुनिकता में यह देव प्रतीक रूप में फिर से उभरने लगा है अवचेतन मन इसी देव को सूचित करता है–मानव की वे परतें जो चेतन मानस की पकड़ में नहीं आती, बुद्धि के परे है। फ्रायड़ के अवचेतन से लेकर मार्क्स की जनता तक यह देव आधुनिकता का बेहतर प्रतीक है; लेकिन यह काफी भी नहीं है यदि इससे नगर के प्रतीक को जोड़ दिया जाए तो यह आधुनिकता का पूरक प्रतीक बन जाता है। कामू ने सिसिफस के आधार पर आधुनिकता को विसंगति के रूप में पहचाना है इसमें एक बात तो स्पष्ट रूप से दिखाई देती है कि आधुनिकता के बोध और नगर के बोध में नाता अवश्य है यह बात आधुनिकता के बारे में है जो कविता में आधुनिकता से भटक तो जाती है; लेकिन इसके बिना बात अधुरी भी समझी जाती है। भारतीय परिवेश में अभी सिसिफस की जगह हनुमान हैं और दियोनीसस के स्थान पर शिव हैं।

---

[1] मीनरो के0 स्पीयर्स ; दियोनीसस एण्ड दि सिटी, पृ0 3

[2] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 48

जी0 एस0 फ्रेजर ने "ऐतिहासिक सन्दर्भ में आधुनिकता की बड़े विस्तार से व्याख्या की है।[1] फ्रेजर के अनुसार किसी रचना के आधुनिक होने का अर्थ पाँच, दस, विगत पचास या साठ वर्ष या शायद पुनर्जागरण के बाद के प्रकाशन से नहीं है। किसी भी आधुनिक रचना में कुछ मूलभूत विशेषताएं होती है अतः किसी रचना को आधुनिक कहने का अर्थ है– उसकी मूलभूत आंतरिक विशेषताओं की ओर संकेत करना।"[2] साहित्य में आधुनिकता का लक्षण है– अतीत में कल्पना–प्रवण अभिरूचि।[3]

आधुनिकता के सवाल को समझने के लिए यदि इसे आज के मिथक सन्दर्भ समझने की कोशिश की जाए तो इस मिथक के अपने कई अर्थ सामने आने लगते हैं। मानव जाति का समूचा इतिहास, चाहें वह किसी भी संस्कृति से सम्बद्ध रहा हो, वह इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य ने विभिन्न परिस्थितियों में भी अपने आप को कभी कठमुल्ला घोषित नहीं किया। इतनी संस्कृतियों, विश्व के एक कोने से दूसरे कोने तक फेलने की क्षमता रखने वाली सभ्यताओं ने, अपने अस्तित्व इसी बिन्दु पर खड़े होकर उभारे हैं। इसका मुख्य कारण मनुष्य अपने अस्तित्व की खोज में निरन्तर प्रयासशील रहा है। आज तक मनुष्य ने अपने अस्तित्व की खोजें अपने से अलग हटकर की थी, लेकिन बीसवीं शदी तक पहुँचते–पहुँचते उसे यह विश्वास हो गया है कि यदि उसे अपनी धुरी खोजनी ही है तो पहले स्वयं को समझना होगा।

मेरी धारणा है कि आधुनिकता मानव विकास यात्रा की जटिल संश्लिष्ट और गतिशील प्रक्रिया है। वह केवल एक स्थिति और धारणा ही नहीं है। निरन्तर नये होने की वृत्ति और वर्तमानता का बोध भी है। वह मानवीय सभ्यता का और संस्कृति की ऐतिहासिक उपलब्धियों से संपृक्त तो है ही, लेकिन उनकी सीमाओं में कैद नहीं है, न ही मोहताज़ है। इसलिए मै

---

[1] G.S. Fraser ; The Mordern writer and His world (Modernity and the Historical sense) Ed. 1960, P.P. 11-20

[2] Ibid, P.P 12

[3] Ibid, P.P 12-13

आधुनिकता को परम्परा या पूरातनता का केवल विलोम नहीं कहता और न उसे काल क्रमानुसार वृत्त लेखन का मात्र एक विश्लेषण मानता प्राचीन और आधुनिक या नए और पुराने का ऐसा पूर्ण विरामात्मक विभाजन न केवल भ्रामक है; वह अवैज्ञानिक और अनआधुनिक भी है जिसे हम एकदम नूतन मान बैठे हैं, सम्भव है वह सदियों पुराना हो और फिर काल और इतिहास की गति भी इतनी सीधी और सपाट नहीं होती कि रेखाएं काटकर उन्हे बांटा जा सके। इसके बावजूद यह सच है कि आधुनिकता का सारा चिन्तन और उपक्रम प्राचीन और आधुनिक के द्वन्द्व से उपजी संक्राँति का परिणाम है, बल्कि कहा जाय कि आधुनिकता एक संक्राँति कालीन चेतना है, तो अत्युक्ति नहीं होगी।

पश्चिमी विचारक **स्टीफेन स्पेण्डर** कहता है– आधुनिकता, समसामयिकता परिपेक्ष्य और परिदृश्य के प्रतितीव्र जागरूकता है। यद्यपि वह उसके मूल्यों को स्वीकार नहीं करती है। वह जीवन को उसकी सम्पूर्णता में देखती है, और उसका स्वीकार या अस्वीकार करती हैं। आधुनिकता प्रेरणा की एकता और प्राथमिकता, सृजनात्मक गति की पर्याय है। वह पूर्वाग्रहों से मुक्त दृष्टि है– चाहें वह जीवन सत्यों और मूल्यों के प्रति हो अथवा कला की वस्तु और शैली के प्रति। संवेदन से लेकर अनुभव–ग्रहण और अभिव्यक्ति तक में वह पूर्वग्रहों से मुक्त दृष्टि और वृत्ति का नाम है। मैं **स्टीफेन स्पेण्डर** के विचार से सहमत हूँ, क्योंकि आधुनिकता का एकमात्र उद्देश्य जीवन को उसकी सम्पूर्णता में ही देखना है। इसलिए आधुनिकता आज भी अपनी स्थिति में विकास मान है। दूसरे जीवन कभी भी अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सकता।

मैथ्यू अर्नाल्ड आधुनिकता का मूल लक्षण ही युग का प्रतिनिधित्व मानता है। यह कलाकार की आत्मा और युग के प्रति जाकरूकता के बिना सम्भव नहीं है। रोमैण्टिक कवि और काव्य अपनी आन्तरिक दुनियां में निवास करता था और युगीन जीवन से लगभग असम्पृक्त था। उसने युगीन जीवन से पलायन किया। **वर्ड्सवर्थ** ने आधुनिकता से कटकर संघारामों में शरण ली, **कॉलरिज** ने अफीम में और **कीट्स** ने ऐन्द्रिय संवेदनों में। **स्काट** इतिहास लेखक हो गया। इसके विपरीत ही **नरिखहाइने** की गहन आधुनिकता का आख्यान

करता हुआ विन्सेन्ट बकले कहता है: उसकी आधुनिकता का स्रोत चिन्तन और जीवन की म्रियमाणता से मुक्ति है याने वर्तमान की उस्थिति और जीवन से सीधा साक्षात्कार। आत्यन्तिक स्वातंत्र्य, रूढ़ स्वच्छन्दतावाद और रूढ़शास्त्रवाद का तीखा अस्वीकार और उन्नीसवीं शताब्दी की दृष्टिरेखा पर सारी चीजों का केन्द्रीयकरण ही उसे आधुनिकता बनाता है।

मैथ्यू अर्नाल्ड ने आधुनिकता को समस्त अचिर भावों से मुक्ति देकर कतिपय सनातन बौद्धिक, आत्मिक और नागरिक गुणों से विभूषित किया है। एक समाज कब आधुनिक कहा जा सकता है ?......तब, जबकि वह एक आत्म–संयम आत्म विश्वास, मस्तिष्क की स्वतंत्र क्रिया और विरोधी दृष्टियों के प्रति सहिष्णुता की स्थिति में होता है, जब वह जीवन के अनुकूल, सुविधा और रूचि में विकास के लिए समुचित सामग्री संचित करता है, उसके सदस्य बौद्धिक रूप से प्रौढ़ होते हैं। इस बौद्धिक प्रौढ़ता के लक्षण है: बुद्धि से निर्णय की तत्परता, तथ्यों का समीक्षात्मक आकलन, और नये चरित्रों की खोज की जिज्ञासा।

प्रो0 साइडेल ने सच ही कहा था कि आधुनिकीकरण का अर्थ पश्चिमीकरण नहीं है बल्कि आदिमयों की और समाज की एक नये प्रकार की सभ्यता का निर्माण है। आधुनिकीकरण हमेशा नवसंस्कृतीकरण की समस्या रही है। दरअसल वह आदमियों की वृत्तियों सामाजिक व्यवहारों और सम्बन्धों तथा आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों को व्यंजित करने वाला शब्द है और ये सारे परिवर्तन एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। विकासशील देश इन ऐसे ही परिवर्तनों से गुजर रहे हैं। आधुनिकीकरण के अर्थ भिन्न सन्दर्भो में भिन्न हो जाते हैं। लेकिन वे सब मिलकर विकास और परिवर्तन की एक दिशा स्थिति को मूर्त करते हैं।

अर्थशास्त्रियों के लिए आधुनिकीकरण का अर्थ है: मनुष्य द्वारा तकनीकी ज्ञान का प्रयोग। इसके द्वारा वह प्राकृतिक साधनों का उपयोग कर उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति करता है। समाजशास्त्रियों या नृतत्वशास्त्रियों के लिए आधुनिकीकरण अवकलन की प्रक्रिया–प्रासेस आव डिफ्रेन्शियेशन है– जो आधुनिक समाज का लक्षण कहा जा सकता है। उन्होंने उन पद्धतियों की खोज की जो नयी सामाजिक संरचना के उदय और जिम्मेदारियों को वहन कर सकने में सक्रिय होती हैं। नये पेशों और धन्धों के उदय नयी और संश्लिष्ट शिक्षा के द्वारा

सामाजिक संरचना में अवकलन या नये समाज के उदय की प्रक्रिया को ही वे आधुनिकीकरण की प्रक्रिया कहते हैं। इसी प्रसंग में समाजशास्त्री आधुनिकीकरण के कुछ विघटनकारी लक्षणों का हवाला भी देते हैं और तनावों की वृद्धि, मानसिक अस्वास्थ्य, हिंसा, तलाक, बाल अपराध और जातीय–धार्मिक तथा वर्ग संघर्ष को उनमें प्रमुख मानते हैं। राजनीतिशास्त्री आधुनिकीकरण की चर्चा करते हुए उन प्रणालियों का जिक्र करते हैं जिनके द्वारा शासन, परिवर्तन और नवीनीकरण की अपनी सामर्थ्य में वृद्धि करता है ताकि उसकी नीतियाँ, सामाजिक कल्याण के हित में हो। इस प्रसंग में प्रजातंत्र को आधुनिक शासन प्रणाली कहा जा सकता है।

लियोनार्ड बाइण्डर कहता है कि राष्ट्रवाद का विचारादर्श मनुष्य की मूल्य पद्धति को बदलने का कारगर साधन है लेकिन वह भी आधुनिकता के प्रतीकों को आधुनिकता का सार न समझने की चेतावनी देता है। वह कई बार बुद्धिजीवियों के पास एक विचारादर्श होता है, वह आधुनिक भी हो सकता है। लेकिन इसके बावजूद उनका व्यवहार और कार्य विकास में बाधक हो सकता है भारतीय सन्दर्भों में तो इसके पर्याप्त उदाहरण मिल जाते हैं। यहाँ आधुनिकता के कई प्रवक्ता अपने व्यक्तिगत जीवन में ठेठ दकियानूस हैं आदर्श रूप में प्रजातंत्र और धर्म निरपेक्षता सरीखे विचारादर्श देश के कई राजनीतिक और सामाजिक नेताओं के पास भी है, लेकिन अपने व्यवहार में वे सामन्तवादी, जातिवादी, निरंकुश और साम्प्रदायिक हैं। चुनाव के मौके पर उनके ये व्यवहार काफी खुलकर समाने आ जाते हैं। अब तो चुनाव इसी आधार पर ही लड़े जाते हैं।

उपर्युक्त विद्वान के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिकता के अन्तर्गत संकीर्णता को कोई स्थान नहीं है। आधुनिकता में वर्तमान से असंतोष की प्रवृत्ति तो होती है लेकिन इसमें निरन्तर गतिशीलता इसका प्रमुख लक्षण है।

एक पाश्चात्य विद्वान नाटर्न सिन्सवर्ग ने डॉ0 इन्द्रनाथ मदान की तरह ही आधुनिकता को अनिवार्य प्रक्रिया कहता है, और राल्फ ब्रायटी कहता है कि संस्कृति, राजनैतिक प्रणाली सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था जब तक पूरी तरह आधुनिक नहीं हो जाती तब तक

आधुनिक प्रणाली का निर्माण नहीं हो सकता। मार्क गालेण्टर भी आधुनिक न्याय व्यवस्था का सम्बन्ध आधुनिकीकृत अर्थव्यवस्था और समाज से जोड़ता है। इसका तार्किक निष्कर्ष यह है कि बिना आधुनिकीकरण के आधुनिकता सम्भव नहीं है।और आधुनिकीकरण जब तक सफल नहीं हो सकता जब तक की उत्पादन पद्धतियों और सम्बन्धों में परिवर्तन नहीं होता।

सामाजिक और भौतिक स्तर पर भी इस युग ने आधुनिकता को वस्तु केन्द्रित कर दिया है। इसलिए जब लोग उसे व्यक्ति केन्द्रित मानने की चेष्ठा करते हैं, तभी उन्हें अनास्था और मूल्य हीनता नजर आने लगती है, और उसे ही वे आधुनिकता मान बैठते हैं। इसका कारण यह यही है, कि वे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन की द्वन्द्वात्मकता को उल्टे रूप में देखते हैं।

अल्बर्ट हर्शमान – कहता है कि जब मनुष्य के व्यवहार और उसकी मूल्य पद्धति में असंगति होती है तब मूल्य ही बदलते हैं, न की व्यवहार। **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी** का कहना सही है कि 'मनुष्य की जीवन शक्ति बड़ी निमर्म है वह सभ्यता और संस्कृति के वृथा मोहों को रौंदती चली आ रही है। न जाने कितने धर्माचारों विश्वासों उत्सवों और व्रतों को धोती–बहाती यह जीवन धारा आगे बढ़ी है। जितना कुछ इस जीवन शक्ति को समर्थ बनाता है, उतना उसका अंग बन जाता है, बाकी फेंक दिया है।' इसका मतलब यह है कि जब भी मनुष्य विकास की ओर प्रवृत्त होगा, अवसर अथवा प्रेरणा द्वारा या युद्ध सरीखी प्रेरक स्थितियों के कारण वह परिवर्तन के लिए विवश होगा, तभी मूल्यों और वृत्तियों में परिवर्तन होगा।

(ख) भारतीय विचारक : आधुनिकता–बोध

आधुनिकता बोध एक काल निरपेक्ष दृष्टिकोण होने के कारण ही एक प्रश्नाकुल मानसिकता है जो हर परम्परागत बँधी–बँधायी व्यवस्था को तोड़ती है। आधुनिकता का यह क्रियाशील रूप उसे एक जड़ या स्थिर धारणा बनने से बचाता है वह एक 'संश्लिष्ट व्यापार' है जिसमें अनेक गुण, अनेक विशेषतायें, अनेक प्रवृत्तियाँ विरोधात्मक स्थिति में एक साथ विद्यमान रहती हैं। **डॉ० विनय मोहन शर्मा** ने आधुनिकता के इसी सहज स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा है "आधुनिकता की काल सीमा निर्धारित करना कठिन है, क्योंकि वह कालसापेक्ष और कालजयी भी है।[1] आधुनिकता के विषय में अपना मत व्यक्त करते हुए डॉ० **शम्भूनाथसिंह** के अनुसार,"आधुनिकता 'क्षण–क्षण अपने को पुनस्संघटित और नवीनीकृत करती चलती है।'[2]

इन दोनों मतो से स्पष्ट होता है कि आधुनिकता का स्वरूप हर रोज बदलता है। वस्तुतः आधुनिकता परिवर्तित भाव बोध की वह स्थिति है जिसका प्रारम्भ वैज्ञानिक विकास के साथ–साथ वर्तमान बिन्दु पर होता है। आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि होने के कारण क्षण–क्षण विकासशील रहती है इसीलिए आज तक इसे किसी भी परिभाषा में नही बांधा जा सका। अतः विद्वानों ने इसे अपने–अपने मतानुसार परिभाषित करने की कौशिश की है।

आधुनिकता के सन्दर्भ में प्रथम प्रश्न है– आधुनिकता की चर्चा अतीत एवं परम्परा की सापेक्षता में करना चाहिए या फिर उससे पूरी तरह कट कर? इस प्रथम प्रश्न पर ही विद्वान् दो वर्गो में विभाजित हैं। कुछ विद्वान् आधुनिकता की चर्चा अतीत की सापेक्षता में करते हैं जबकि कुछ अन्य अतीत से बिल्कुल कट कर इसकी चर्चा करते हैं।

लक्ष्मीकांत वर्मा, डॉ० जगदीश गुप्त, गिरिजाकुमार माथुर आदि विद्वान् आधुनिकता की चर्चा अतीत की सापेक्षता में ही करते हैं। **लक्ष्मीकान्त वर्मा** ने स्वीकार किया कि 'भाव

---

[1] डॉ० विनयमोहन शर्मा ; साहित्यान्वेषण ; प्र०सं० 1969, पृ० 30
[2] डॉ० शम्भूनाथ सिंह ; प्रयोगवाद और नई कविता ; प्र०सं० 1969, पृ० 176

बोध का यह परिवर्तन जहाँ देशकाल की सापेक्षता में अपने प्राचीन को भी पुर्नमूल्यांकित करता है।"[1] **डॉ0 जगदीश गुप्त** भी आधुनिकता को पुरातन की सापेक्षता में ही स्वीकारते हुए कहते हैं – "आधुनिकता मेरे निकट पुरातन को गाली देना नहीं है, वरन् सार ग्राहिणी तत्व दृष्टि के साथ विगत सांस्कृतिक समृद्धि को आत्मसात करते हुए मानव की वर्तमान नियति एवं उसके भावी विकास के प्रति अपने दायित्व का विशिष्ट एवं सक्रिय अनुभव करना है।"[2]

गिरिजाकुमार माथुर भी आधुनिकता को इसी रूप में स्वीकार करते हुए कहते हैं...... आधुनिकता अधिक एवं आंतरिक मूल्यगत भाव है,उसका एक पक्ष दीर्घकालीन सांस्कृतिक विकास से सम्बधित हैं दूसरा पक्ष सामयिक है जिसके अर्न्तगत परिवेश और रूपकार का परिवर्तन, शैली और भंगिमा का नव–रूपान्तर आता है। इन दोनों पक्षों की पीठिका पर उदित परिवर्तित, मूल्यबोध ही आधुनिकता के दृष्टिकोण को जन्म देता है।"[3] **डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ** भी चाहें आधुनिकता को 'आधुनिक रिनैसां' की समस्या मानते हैं, फिर भी वह यह स्वीकार करते हैं कि आधुनिकता की बात प्राचीन से कटकर नहीं हो सकती। उनका कथन है......"आधुनिक बोध पता लगाता है कि जो प्राचीनतम् है, उसमें सार्थक नवीनतम क्या है।"[4]

इसके विपरीत विद्वानों का दूसरा वर्ग जो आधुनिकता की चर्चा अतीत से कटकर करता है। **डॉ0 विश्वम्भरनाथ उपाध्याय** आधुनिकता से समद्ध नहीं मानते, उनका कथन है..... ..."आधुनिकता देशकालातीत धारणा नहीं हो सकती। ......काल क्रमण आधुनिकता का बोध इतिहास में और विशेषकर अपने इतिहास में कुछ वर्षों का बोध है और इस बोध का जिम्मेदार बाह्य विकास है जिसने इस आंतरिक बोध को जन्म दिया है।"[5] **विपिनकुमार अग्रवाल** भी आधुनिकता को 'खण्डित घटना' स्वीकार करते हैं जिसका बीती हुई घटनाओं

---

[1] लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नये प्रतिमान : पुराने निकष, सं0 1966, पृ0 15
[2] नयी कविता (पत्रिका) ; अंक 6, पृ0 64
[3] गिरिजाकुमार माथुर ; नयी कविता सीमाएं एवं सम्भावनाएँ ; सं0 1973, पृ0 104–105
[4] डॉ0 रमेश कुन्तल मेध ; आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण ; सं0 1969, पृ0 14
[5] डॉ0 विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ; जलते और उबलते प्रश्न ; सं0 जुलाई 1969, पृ0 69–71

से बहुत दूर का सम्बन्ध है।[1] डॉ० राम स्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार "आधुनिकता वह जीवन दृष्टि है जिसमें हम अपनी युगीन संस्कृति को समझना चाहते हैं। ....जिसका आरम्भ 19वीं शती के इतिहास चिन्तन की पृष्ठभूमि में हुआ है।"[2]

दोनों पक्षों के मत जानने के बाद यह बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि नये जमाने के साथ चलने का दावा करने वाले कुछेक फैशन परस्त एवं चौकाने वाले आलोचक भले ही अतीत एवं परम्परा से सम्बन्ध विच्छिन्न करने में अपनी शान समझते हों, लेकिन कोई भी प्रबुद्ध चिंतक इस बात से इन्कार नहीं कर सकता है कि अतीत से कटकर भी आधुनिकता जैसी कोई चीज हो सकती है। आधुनिकता अतीत से प्रस्थान है यदि इसमें प्रस्थान नहीं होगा तो यह जड़ हो जायेगी और जब कोई चीज जड़ बन जाती है तो वह परम्परा बन जाती है। इसलिए हम आधुनिकता को परम्परा से कटकर कतई नहीं देख सकते।

अब प्रश्न आधुनिकता को प्रक्रिया मानने या न मानने का है। हमारे विचार से आधुनिकता को प्रक्रिया मानना ही उपयुक्त है। इसका एक कारण यह भी है कि आधुनिकता अपनी स्थिति में आज भी विकास मान है। इसीलिए डॉ० इन्द्रनाथ मदान आधुनिकता को प्रक्रिया ही स्वीकार करते हैं क्योंकि आधुनिकता अनेक दौरो में गुजरने की गवाही देती है, और उसके किसी एक दौर पर अंगुली रख कर यह कहना कठिन है कि यह आधुनिकता है। इसी सन्दर्भ में डॉ० मदान 'आधुनिकता को प्रक्रिया मानते हैं, इसमें बुद्धिवाद का निरूपण भी आता है और खण्डन भी।'[3]

डॉ० विनय भी आधुनिकता को प्रक्रिया मानते हुए अपना विचार इस प्रकार स्पष्ट किया है–"आधुनिकता एक ऐसी अवधारणा और प्रक्रिया है जिसके तहत सर्जक चिन्तक पुराने का विश्लेषण करता हुआ उसे अपने वर्तमान के प्रसंग में जाँचता है और भविष्य का

---

[1] नयी कविता (पत्रिका) ; अंक 7, पृ० 33
[2] वही, पृ० 43
[3] डॉ० इन्द्रनाथ मदान ; निबन्ध और निबन्ध ; प्र०सं० अक्टूबर 1966, पृ० 96

रूपायन भी करता है।"[1] किसी भी प्रक्रिया को पकड़ा नहीं जा सकता है क्योंकि उसके अन्तर गति होता है और गति रूककर गति नहीं रहती। इसलिए आधुनिकता एक प्रक्रिया ही है।

आधुनिकता के सन्दर्भ से जुड़ा हुआ अगला प्रश्न है कि आधुनिकता काल–सापेक्ष धारणा है या कालजयी। इन विवाद को लेकर अनेक विद्वानो ने आधुनिकता के सन्दर्भ में अपने विचारों को प्रस्तुत किया है। धनंजय वर्मा कथन है "आधुनिकता का मतलब आधुनिक में रहना ही नहीं, उसे जीना भी है, आधुनिकता कालसापेक्ष धारणा नहीं है, वह दृष्टि सापेक्ष है और व्यक्ति के एटीट्यूड टेम्परामेन्ट और उसके समूचे अन्तर्वाह्य व्यक्तित्व से जुड़ा है।"[2] इस रूप में आधुनिकता अपने को दो अर्थो में अभिव्यक्त करती है। एक तो समय सापेक्ष प्रक्रिया के रूप में, दूसरे युग के विभिन्न प्रभावों से उत्पन्न चेतना के रूप में। इन्हीं दो अर्थो को अभिव्यक्ति देते हुए डॉ0 नरेन्द्र भानावत कहते हैं "आधुनिकता को दो रूपों में समझा जाता सकता है एक समय सापेक्ष क्रिया के रूप में ....आधुनिकता इतिहास चक्र की अन्तिम परिणति है, जो परिवर्तन और विकास की विभिन्न सारणियों को पार कर उपलब्ध है ....आधुनिकता का दूसरा रूप है.......विभिन्न प्रभावों से उत्पन्न चेतना के रूप में ।"[3]

अतः आधुनिकता समय–सापेक्ष हो सकती है, जिसमें अपने युग की नूतन चेतना सन्निहित रहती है। जैसे आज की आधुनिकता का वैशिष्ट्य उसके बौद्धिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के स्तर पर मानवीय अस्तित्व के संकट के स्तर पर, शैली–शिल्प के स्तर पर देखा जा सकता है। इसके साथ–साथ आधुनिकता कालजयी भी है।

आधुनिकता पर विचार करते समय एक वर्ग उसे मूल्य मानने या न मानने वालों का है। आचार्य नरेन्द्र देव, अज्ञेय, डॉ0 रामदरश मिश्र आदि विद्वान् आधुनिकता को एक मूल्य के रूप में स्वीकार करते हैं ; अज्ञेय आधुनिकता को 'वस्तु और नैतिक मूल्य' के रूप में स्वीकार

---

[1] परिशोध (वार्षिक पत्रिका) ; सन् 1982, अंक 34, पृ0 38,
[2] धनंजय वर्मा ; आस्वाद के धरातल ; सं0 1969, पृ0 44
[3] डॉ0 नरेन्द्र भानावत ; साहित्य के त्रिकोण ; प्र0सं0 1968, पृ0 3

करते हैं। डॉ0 रामदरश मिश्र आधुनिकता को 'मूल्य एवं नियति' दोनों ही रूप में स्वीकार करते हैं।

इसके विपरीत रामधारी सिंह 'दिनकर' डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल इसे मूल्य स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है। दिनकर का कथन है......"आधुनिकता कोई मूल्य नहीं है, बल्कि अत्याधुनिक कवि और लेखक जो कुछ लिखते है; उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि मूल्यों के विघटन का पर्याय है।"[1] डॉ0 नगेन्द्र ने भी "आधुनिकता की चेतना जीवन की भाँति साहित्य सर्जना की विधि का ही अंग कहा है जो सच्चे अर्थ में मूल्य नहीं बन सकती।"[2] डॉ0 भगवतीप्रसाद शुक्ल का कथन है– "आधुनिकता स्वयं कोई मूल्य नहीं हैं, वह तो दृष्टि भर है, एक अनुभूति है।"[3]

दोनों पक्षों पर विचार करने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिकता नैतिकता, सौन्दर्य बोध आदि के समान कोई शाश्वत मूल्य नहीं है, अपितु आधुनिकता को हम एक दृष्टि या फिर मानसिक स्थिति का परिचायक कह सकते हैं जो व्यक्ति की चेतना व्यवहार या टैम्परामैंट से अधिक जुड़ा हुआ है।

आधुनिकता के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या आधुनिकता और समसामयिकता एक है या फिर अलग–अलग ? आधुनिकता समसामयिकता को अपने आधार के रूप में ग्रहण करती है किन्तु अपनी रचनात्मकता में वह समसामयिकता के उन सन्दर्भों को नकार देती है जो मानव के सांस्कृति विकास की गत्यात्मकता को अवरूद्ध करते हों। समसामयिकता आधुनिक होने का मानदण्ड नहीं है बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि आधुनिकता की सर्जनात्मक अर्थवत्ता समसामयिकता के अतिक्रमण करने में है। रचनाकार को देशकाल की ससीमता में कालजीवी होना पड़ता है अपनी रचनाओं के माध्यम से वह कालजयी होना चाहता है। समसामयिकता से हमारा तात्पर्य है देशकाल के दायित्व के

---

[1] रामधारी सिंह दिनकर ; साहित्यामुखी ; प्र0सं0 1987, पृ0 159
[2] डॉ0 नगेन्द्र ; नयी समीक्षा नये सन्दर्भ ; प्र0सं0 1970, पृ0 67
[3] डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल ; आँचलिकता से आधुनिकता तक ; प्र0सं0 1972, पृ0 131

साथ–साथ उस समय की गहन अनुभूति को ग्रहण करने की शक्ति जो उन परिस्थितियों में पैदा होती है और बिना किसी पूर्वग्रह के सामयिक औचित्य के साथ अपने आपको अभिव्यक्त करती है। आधुनिकता और समसामयिकता के सन्दर्भ मे एक वर्ग जहाँ आधुनिकता को समसामयिकता तक सीमित रखना चाहता है, वहीं दूसरा वर्ग दोनों को अलग–अलग स्वीकार करके चलता है।

प्रथम वर्ग के लेखकों में देवेन्द्र इस्सर का कथन है......."इस युग पर....ईश्वर में मनुष्य की आस्था नहीं रही......समस्त मूल्यों का भ्रम खुल चुका है।......आज सामुहिक और व्यक्ति जीवन में अनुरूपता नहीं। भविष्य न केवल अनिश्चित है, बल्कि अरक्षित भी है। जो कुछ है वह वर्तमान ही है। वह एक क्षण है, जिसमें हम जीवित हैं।......क्षणवाद के इस दर्शन में सृष्टि के किसी 'क्रासमिक' तत्त्व को सम्मिलित करने का अभिप्राय है आधुनिकता के लेबल से वंचित हो जाना।"[1] इसी प्रकार मलयज भी आधुनिकता की व्याख्या समसामयिकता के सन्दर्भ में करना उचित समझते है।

इसके विपरीत दूसरा वर्ग आधुनिकता और समसामयिकता को अलग–अलग स्वीकारता है। लक्ष्मीकान्त वर्मा का मत है –"आधुनिकता युग विशेष का गुण है। समसामयिकता स्थिति विशेष का आयाम है। आधुनिकता ऐतिहासिक विश्लेषण है जो हमे देशकाल बोध देती है। समसामयिकता देशकाल बोध के साथ–सक्रियता की भी पुष्टि करती है जिस भी देशकाल में हम है उसकी सीमाएं और विस्तार को हम समसामयिकता के यथार्थ द्वारा अनुभव करते हैं जीवन के इन्हीं सन्दर्भों में आधुनिकता के परिवेश और समसामयिकता के आयाम में हमें अपनी दृष्टि और अपने दायित्व का बोध होता है।"[2]

दोनों वर्गों के मत जानने के बाद यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आधुनिकता एक युग विशेष की भावानुभूति है, जबकि समसामयिकता को वर्तमान से उत्पन्न स्थिति विशेष कह सकते हैं। आधुनिकता के अन्तर्गत जिस संवेदना की बात की जाती है

---

[1] देवेन्द्र इस्सर ; साहित्य और आधुनिक युग बोध ; प्र0सं0 1973, पृ0 14
[2] लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नयी कविता के प्रतिमान ; सं0 संवत् 2014 वि0, पृ0 265

वह एक सीमा तक समसामयिकता में देखी जा सकती है, किन्तु इस आधार पर दोनों को एक समझना भूल होगी, क्योंकि आधुनिक होते हुए भी यह अवश्य नहीं हैं कि हम विचारों से समसामयिक भी हों। समसामयिकता में जहाँ वर्तमान जीवन के प्रति क्रियाशील होने का भाव है, वहाँ वह अतीत एवं भविष्य दोनों से अलग स्थिति विशेष भी कही जा सकती है। समसामयिकता में समग्र युग को पकड़ पाना संभव नहीं होता, जबकि आधुनिकता में ऐसा संभव होता है।

उपर्युक्त विवेचना से जो निष्कर्ष उभर कर सामने आते हैं, वह इस प्रकार कहे जा सकते हैं। आधुनिकता की चर्चा हम पूरी तरह परम्परा से हटकर नहीं कर सकते हैं। दूसरे आधुनिकता को अतीत से कटकर नहीं देखा जा सकता, प्राचीन में जो सार्थक नयापन है, उसे आधुनिकता में स्वीकार करना होगा। तीसरे आधुनिकता की धारण काल–सापेक्ष होते हुए भी कालजयी कहीं जा सकती है। आज तक कोई भी ऐसा युग नही रहा, जो अपने समय में आधुनिक नहीं रहा हो, यह बात अलग है कि आज का युग आधुनिकता के प्रति अधिक सचेत है। चौथे काल सापेक्ष के अर्थ में आधुनिकता उधार ली हुई वस्तु नहीं है, अतः यह एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है जिसे अवश्य आना है। पाचवें आधुनिकता नैतिकता, सौन्दर्यबोध की तरह कोई शाश्वत मूल्य नहीं है, और वह व्यक्ति की मानसिकता, आचरण, व्यवहार एवं चेतना से अधिक जुड़ी हुई है। छटें आधुनिकता एवं समसामयिकता में आधुनिकता अधिक व्यापक एवं मनुष्य के विकास के सभी मार्गों को प्रशस्त करती हुई चलती है जबकि समसामयिकता के अन्तर्गत समग्र युग को नहीं पकड़ा जा सकता क्योंकि यह संकुचित एवं सीमित है।

(ग) मध्ययुगीन भाव–बोध के प्रति प्रतिक्रिया आधुनिकता–बोध

मध्यकालीन भाव बोध पर चर्चा करने से पूर्व इस प्रसंग को ठीक प्रकार समझ लेना अति आवश्यक है इस देश में इतिहास में मध्यकाल से जुड़ा एक पेचीदा प्रश्न है, मध्यकाल से क्या अभिप्राय है और उसकी निश्चित अवधि क्या होनी चाहिए। मध्ययुग की जो अवधि निश्चत की जाती है उस समय भारतवर्ष ने कई उतार–चढ़ाव देखे हैं। मध्यकाल से जिस स्तब्ध अथवा कुंठित मनोवृत्ति का आभास होता है उसे भक्तिकालीन संत साहित्य के रूप में पहली बार चुनौती मिली थी। संतो की वाणी में परिवर्तन की प्रबल इच्छा है। भक्ति साहित्य में परिवर्तन के प्रति 'व्याकुलता' को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी आधुनिक इसलिए नहीं मानते कि "उसका अनुध्यात् आदर्श परलोक में मनुष्य को मुक्त कराना है। इसी लोक में इसी मर्त्य जगत को सुन्दर और शोभान बनाने के उद्देश्य से नहीं लिखा गया। भक्ति साहित्य संसार के बाह्य रूप को यथास्थित छोड़कर व्यक्ति मानव के चित्त में परिवर्तन लाने पर अधिक जोर देता है।............ भक्ति साहित्य अपने–आप में स्तब्ध–कुंठित साहित्य नहीं है, पर परिवर्तन का लक्ष्य अदृष्ट होने के कारण वह पूर्ण मुक्त नहीं है।"[1]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उक्त कथन एक सुक्ष्म अन्तर्विरोध है। इसके अतिरिक्त आचार्य द्विवेदी जी ने सम्पूर्ण भक्ति साहित्य एक ही दृष्टिकोण की व्याप्ति दिखाकर नानक, कबीर आदि निर्गुणिये सन्तो के विशिष्ट योगदान को उपेक्षित कर दिया है। अर्न्तविरोध यह है कि द्विवेदी जी भक्ति साहित्य में परिवर्तन के लिए व्याकुलता भी देखते है। और परलोक में मनुष्य की मुक्ति कामना की। उनकी मान्यता है कि भक्ति साहित्य इसी मर्त्य जगत को सुन्दर और शोभन बनाने के उद्देश्य से नहीं लिखा गया। परन्तु समूचे भक्ति साहित्य में एक ही दृष्टिकोण की अन्तव्याप्ति नहीं दिखाई देती। सगुण साहित्य में परलोक सुधार तथा मृत्यु के बाद आत्मा की मुक्ति कामना इसलिए विद्यमान है कि उस पर पुराणों एवं शास्त्रों का प्रभाव था।

---

[1] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ; मध्यकालीन भाव बोध का स्वरूप ; प्र0सं0 1970, पृ0 19

संत कवियों की समाज के समूचे ढांचे को बदलने की इच्छा से युक्त वाणी और सामाजिक यथार्थ तथा उस यथार्थ का भोक्ता विशाल जन समुदाय दूसरी तरफ थी सामाजिक आर्थिक यथार्थ के प्रति शासक वर्ग की उपेक्षापूर्ण दृष्टि। मध्यकालीन बोध और चिन्तन से अलग एक नये ढंग की आधुनिक बोध और चिन्तन का विकास हुआ। आस्था और विश्वास के स्थान पर मानवीय विवेक और विचार को केन्द्रीय महत्व प्राप्त हुआ। इससे सामाजिक संकल्पना की स्थिर और पिटी–पिटाई धारणा में बदलाव आया विचारों की दुनिया में यह निश्चित ही एक नयी की शुरूआत थी। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने आठवीं शताब्दी से 18 वीं शताब्दी तक के समय को मध्यकाल माना है इतिहासकार स्थूल रूप से 10वीं से 17 बीं शताब्दी तक के समय को मध्यकाल के अन्तर्गत मानते हैं। कबीर से लेकर तुलसी तक का समय भी इसी कालाविधि के अन्तर्गत मानते हैं।

"चौदहवीं–पन्द्रहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक के काल को हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकाल कहा जाता है। विश्व के इतिहास का मध्यकाल सातवीं – आठवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। सातवीं शताब्दी से विश्व इतिहास में सत्रहवीं के अन्त तक, किन्तु भारत में मध्यकाल या मध्ययुग की संज्ञा पाता है। इस युग के पुनः दो भाग किये जाते हैं– पूर्व मध्ययुग (बारहवीं शताब्दी के अन्त तक) उत्तर मध्यकाल (तेरहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक) चलता है। इतिहास में मध्ययुग की यह कल्पना व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की समस्त प्रवृत्तियों के आधार पर की गई है।"[1]

युरोप के इतिहास में रोमन साम्राज्य के पतन के बाद से लेकर विज्ञान के अभ्युदय तक के काल को मध्यकाल कहते हैं ; विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टि के जन्म से पूर्व को यह काल यूरोप में "अन्धकार युग" के नाम से भी जाना जाता है। स्तब्ध मनोवृत्ति का यही काल सही परिचायक है। अतः "मैडिएवल एज" के अनुकरण पर मध्यकाल भी स्तब्ध मनोवृत्ति का प्रतीक बन बैठा, यूरोप के मध्यकाल की सीमा सन् 476 ई0 लेकर 1553 ईसवीं तक

[1] धीरेन्द्र वर्मा ; हिन्दी साहित्य कोश, भाग 1, सं0 1985, पृ0 471

निर्धारित की गई।'[1] मध्ययुग कालगत सातत्व का एक सुविधामूलक विभाजन है। इतिहास के क्षेत्र में जहाँ यह शब्द एक अवधि विशेष में घटित घटनाओं और उनसे सम्बद्ध व्यक्तियों से जुड़ा है, वहाँ साहित्यिक दृष्टि से जुड़ा है, वहाँ साहित्यिक दृष्टि से यह शब्द उस अवधि विशेष से जुड़ी जनसामान्य की मानसिकता का द्योतक है स्पष्ट है कि इस शब्द का काल वाचक या इतिहासपरक अभिधान जहाँ देशकाल से बद्ध होता है, वहाँ साहित्य में वह एक सार्वभौम और सामान्य अवधारण का प्रतीक बन जाता है। "आज जब हम मध्ययुगीन विशेषण का प्रयोग करते हैं तो हमरा तात्पर्य आधुनिक युग की वैज्ञानिक एवं बौद्धिक चेतना के प्रतिकूल एक विशेष प्रकार की जीवन–चेतना से होता हैं जो विश्वास प्रधान रूढ़िगत आदर्शवादी संकीर्ण, धर्मभीरू प्रेरणा रहित और स्थूल नैतिकता के आग्रह से पूर्ण रही है।'[2]

समाजिक दृष्टि से भी इस काल को आदि से अन्त तक घोर अद्यःपतन का युग ही कहा जाना चाहिये । इस काल में सामान्तवाद का बोल बाला था, और सामन्तशाही के जितने भी दोष हुआ करते थे, उनका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव जनसामान्य के जीवन पर पड़ रहा था। सामाजिक व्यवस्था के केन्द्र बिन्दु बादशाह थे और उनके अधीन अन्य कर्मचारी थे। ये मनसवदार व सेठ और साहूकार श्रमिक वर्ग पर तरह–तरह के अत्याचार किया करते थे। श्रमजीवी वर्ग को किसी न किसी की बेगार करनी पड़ती थी और उसके बदले मिलती थी कोड़ो की मार। कहने का अभिप्राय है कि इस युग में गरीबों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी और शासक वर्ग एवं सम्पन्न वर्ग श्रम किये बिना ही सम्पन्न था।

जनसामान्य की चिकित्सा, शिक्षा, सम्पत्ति रक्षा आदि का भी इस काव्य में कोई प्रबन्ध न था। ऐसी शोचनीय अवस्था में यदि लोग भाग्यवादी अथवा नैतिक मूल्यों से रहित थे। नारी को अपनी सम्पत्ति मानकर ही उसका भोग इनके जीवन का मूल मन्त्र हो गया

[1] डॉ0 अम्बादत्त पाण्डेय ; आधुनिकता और आलेचना ; प्र0सं0 1985, पृ0 131
[2] डॉ0 रामचन्द्र तिवारी ; मध्ययुगीन काव्य साधना ; प्र0सं0 सितम्बर 1962, पृ0 1,

था। इसी कारण समाज में विलासिता भी अपने चर्मोत्कर्ष पर थी। किसी की कन्या का अपहरण अभिजात वर्ग के लोगो के लिए साधारण बात थी। इसीलिए अल्पायु में लड़कियों का विवाह अधिक प्रचलित हो गया था।

मध्ययुग में उपर्युक्त विसंगतियाँ समाज के अन्दर व्याप्त थी, जिसकी वजह से मनुष्य अपने परिवेश से इतना आतंकित तृस्त और हतोत्साहित हो चुका था इसीलिए वह ऐसे समाज से जल्दी से जल्दी से छुटकारा पाना चाहता था। इसी कारण सामज के अन्दर विद्रोह का भाव प्रकट हुआ। विद्रोह आधुनिक युग का एक प्रमुख लक्षण है। यहीं से आधुनिक काल की शुरूआत हुई, अर्थात् जब से मनुष्य अपने परिवेश के प्रति स्वचेतन हुआ, स्वचेतन से आश्य है– व्यक्ति का जीवन परिवेश के विषय में यथार्थपरक जाग्रत दृष्टिकोण। आधुनिक शब्द के अर्थ – एक मध्यकाल से भिन्नता और नवीन इहलौकिक दृष्टिकोण की सूचना देता है।मध्यकाल अपने अवरोध, जड़ता और रूढ़िवादिता के कारण स्थिर और एक रस हो चुका था। एक विशिष्ट ऐतिहासिक प्रक्रिया ने उसे पुनः गत्यात्मक बनाया। मध्य–कालीन जड़ता और आधुनिक गत्यात्मकता को साहित्य और कला के माध्यम से समझा जा सकता है। रीतिकाल में कला और साहित्य अपने कथ्य, अंलकृति और शैली में एक रूप हो गया। न छन्दों में वैविध्य था और न विन्यास। आधुनिक युग में बँधे हुए घाट टूट गये और जीवन धारा विविध स्रोतों से फूट निकली।'

आधुनिक शब्द का जो दूसरा अर्थ ध्वनित होता है, वह है – "इहलोकिक दृष्टिकोण। धर्म, दर्शन, साहित्य आदि सभी के प्रति नये दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ। मध्यकाल में परलौकिक दृष्टि से मनुष्य इतना अधिक आच्छन्न था कि उसे अपने परिवेश की सुध नहीं थीं, पर आधुनिक युग अपने पर्यावरण के प्रति आधिक सतर्क हो गया।"[1]

आधुनिककाल से अगला चरण आधुनिकता का आता है, जो मध्ययुग के प्रति प्रतिक्रिया है। यहाँ आकर मनुष्य ने भगवान के स्थान पर अपने आपको स्थापित कर लिया है। आस्था

---

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; द्वितीय सं0, 1976, पृ0 438

और विश्वास के स्थान पर मानवीय विवेक को प्रधानता प्रदान की गयी अर्थात् पूर्ण रूप से मानव ही छा गया। मानववाद आधुनिकता की एक प्रवृत्ति है। आधुनिकता के अन्तर्गत साहित्य आदि का अंकन यर्थाथ के धरातल पर होने लगा, क्योंकि इसके पीछे एक कारण है वह है मनुष्य की तार्किक दृष्टि। मानवीय एवं इहलोक की अनुभूतियाँ प्रधान बन गई। संघर्षशील मानव ही काव्य का नायक बन गया।

असल में आधुनिकता की समस्त शक्ति विकास की धारणा मे छिपी है। जिसने मानव मस्तिष्क को सदा अनुप्रेरित किया है। विकास का जो प्रारूप पिछली दो शताब्दियों के बीच परिलक्षित हुआ है। उसे देखकर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आधुनिकता ने केवल पूर्ववर्ती विचारणाओं से सभी अर्थो में पृथक है अपितु वह महत्तम भी है। वस्तुतः आधुनिक की विचारणा को आधुनिकता में ढालने की विधि तकनीकी विकास द्वारा ही निर्मित हुई। मोटेतौर पर 19 वीं शताब्दी का सम्पूर्ण बदला हुआ चेहरा, जो मध्यकाल से बिल्कुल अलग प्रतीत होता है; उद्योगीकरण के कारण निर्मित हुआ। अतः उन्नीसवीं शताब्दी में आधुनिक चेहरे पर न केवल विकास की कामना का विचार है, न सिर्फ तकनीकी विकास की सम्भावनापरक परिकल्पना है, बल्कि सीधे–सीधे ओद्योगिकरण का विकास है। जिसने राज–नीतिक नगरो, या सांस्कृतिक ऐतिहासिक नगरो को आर्थिक नगर या औद्योगिक बस्तियाँ बनाया। इसी कारण आधुनिकीकरण को सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया स्वीकार किया गया। इसीलिए आधुनिकीकरण को अनिवार्य रूप से आर्थिक प्रगति से सम्बद्ध माना जाना चाहिये।

विज्ञान ने न केवल बड़ी–बड़ी मशीनों का आविष्कार भर ही है और न गणित, भौतिकशास्त्र रसायन शास्त्रादि मात्र ही है, वरन् वह जीवन को देखने सुनने और उसको विकसित करने का एक आधार और दृष्टिकोण भी है, जो वैज्ञानिक साधनों और मानव जीवन के बहुमुखी विकास के लक्ष्य में एकता स्थापित करता है। विज्ञान उत्पादन के व्यक्तिगत साधन और शक्ति के स्थान पर सामूहिक साधन और शक्ति के महत्व की प्रतिष्ठा की। इन्हीं साधनों और शक्ति से हुए उत्पादन पर समाज के स्वामित्व और उनसे मानव

जीवन को आपसी सहयोग से सुखी बनाने वाले समाज–निर्माण के नए लक्ष्य की दिशा उजागर हुई।

छायावाद मुक्त व्यक्ति चेतना के महत्व की स्वीकृति का काव्य है उसने सच्चे अर्थों में मध्यकालीन सामन्ती समाज और सभ्यता के रूढ़ परिपाटी बद्ध संस्कारों, मूल्यों और बोधों के प्रति क्रॉंति की ओर एक सर्वथा नवीन अनुभूति जन्य स्वच्छन्द भाव सत्य और सौन्दर्य बोध की वाणी दी। इस प्रकार तत्कालीन जीवन को व्यक्ति चेतना को उभार कर छायावाद ने आधुनिकता के एक बहुत महत्वपूर्ण आयाम को उद्‌घाटित किया। 'व्यापक रूप से आधुनिकीकरण बर्हिगत अवस्थाओं तथा आधुनिकता अंतर्मुखी संकल्पों की आविर्भावक हैं। जब दोनों एकतान और समन्वित हो जाते हैं तब हम नवीन आधुनिकता की दहलीज से मानवीय स्वतंत्रता तथा ऐतिहासिक समाजवादी भविष्य की ओर चल पड़ते हैं। इस समन्वय का परिणाम समाज के रचनागठन, सामाजिक सम्बंधों का एवं सांस्कृतिक रूपों का क्रान्तिकारी परिवर्तन है।"[1]

आधुनिकता उस विकाससमान पौधे की तरह है जो हर क्षण विकास की स्थिति में है और उसका रूप एवं सौन्दर्य भी क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहा है। ऐसी स्थिति में आधुनिकता के बारे में अन्तिम रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। "आधुनिकता जीवन को समग्रता में देखने की शक्ति देती है। आधुनिकता अपने समस्त परिवेश का केन्द्रस्थल मनुष्य को स्वीकारती है मानव जीवन प्रतिक्षण विकास की स्थिति में है। इसके प्रति आस्था रखकर ही आधुनिकता हमें दृष्टि देती है फलतः हम अपने परिवेश एवं परिस्थितियों के साथ–साथ अपनी गतिविधि को भी रेखांकित करते हैं। आधुनिकता साहित्यिक गतियाँ है जो विकास मान अवस्था में सदैव रहती है।'[2]

मानव इतिहास में बीसवीं शताब्दी ऐसी ही संक्रान्ति का काल है और स्वभावतः गहरी चिन्ता का भी। मानव ज्ञान और बोध के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई और आज

---

[1] संस्कृति (त्रैमासिक पत्रिका) ; हेमंत 1890 शक, अंक 1, वर्ष. 10, पृ0 19
[2] अभिनव भारती–हिन्दी शोध एवं आलोचना (वार्षिक पत्रिका) ; सं0 1983–84, पृ0 114।

भी लगातार हो रही है। कला और साहित्य के क्षेत्र में आज भी नवीन प्रयोग हो रहे हैं। इस सन्दर्भ में आधुनिकता की वृत्ति, उस सब को न तो सहज स्वीकार करने की है और न सहज अस्वीकार करने की। वैज्ञानिक दृष्टि के समानान्तर, परीक्षण और प्रयोग से अनुभवों सत्यों का साक्षात्कार करने की वृत्ति ही उसकी सही दिशा हो सकती है। आधुनिकता के क्रान्तिकारी स्वरूप का मूल कारण ही यह है कि आधुनिक कला की सर्वोत्तम कृतियों ने अतीत और वर्तमान के बीच एक तनाव की अभिव्यक्ति के साथ ही उनके बीच संतुलन का प्रयत्न भी किया। वह प्रयोगात्मक शैली में ही सम्भव था। जो कुछ अतीत के विरोध में आता है, वह केवल वर्तमान में संकेन्द्रित होता है, उसकी प्रकृति भविष्यवादी होती है वह परम्परा पर विश्वास नही करता। विषय निर्वाह और सम्प्रेषण के लिए भविष्यवादी आस्था आधुनिकता की प्रतिज्ञा नहीं है। आधुनिकतावाद का बुनियादी प्रस्थान भी अतीत से वर्तमान का और वर्तमान से अतीत का साक्षात्कार रहा है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मध्यकाल से विरोध करके हम आधुनिक काल में प्रविष्ट हुए। आधुनिक काल अपने ज्ञान–विज्ञान के कारण मध्यकाल से अलग हुआ। यह काल औद्योगिकरण, बौद्धिकता और नगरीकरण से सम्बद्ध है; जिसमें भविष्य के प्रति नवीन आशाएं हैं। इन्हीं भविष्य के प्रति आशाओं के प्रति हम निरन्तर गतिशील हैं यह गतिशीलता ही आधुनिकता है। आज आधुनिकता के इस दौर में भारत एक महाशक्ति के रूप में उभर रहा है। आधुनिकता के इस युग में हम वैज्ञानिक, तकनीकी और ज्ञान के क्षेत्र में काफी हद तक आत्मनिर्भर हो रहे हैं। मध्यकाल में जीवन के केन्द्र में ईश्वर प्रतिष्ठित था। अतः उस समय के व्यक्ति की चेतना आस्था के अगुओं से निर्मित हुई थी। आधुनिक मनुष्य के केन्द्र में विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टि है, अतः वह प्रत्येक विषय अथवा तथ्य को स्वीकार करने से पहले उसे तर्क की कसौटी पर परख कर देखना चाहता है। आधुनिकता के इस दौर में हमने समाज के अन्दर से बुराईयों व अंधविश्वासों को समाप्त करने के लिए कृतसंकल्प है।

राजनैतिक क्षेत्र में हम आत्मनिर्भर हैं, हमारा अपना लोकतंत्र है, अपनी सरकारें हैं, सभी को समानता का अधिकार है। आज के इस आधुनिकता के युग में हम किसी का

मध्ययुगीन समाज की तरह शोषण नहीं कर सकते, न अपहरण कर सकते हैं, और न ही नारी को केवल भोग की दृष्टि से देख सकते हैं।

तकनीकी व वैज्ञानिक दृष्टि से भी हम विकसित हो रहे हैं। इस युग में मशीनों का इतना विकास हुआ कि व्यक्ति व्यवस्था का पुर्जा हो गया। उसका व्यक्तित्व और पहचान खो गई। इस खोये हुए व्यक्तित्व की खोज प्रक्रिया का नाम 'आधुनिकता' है। रक्षा के क्षेत्र में भी हमने अपने आपको काफी सीमा तक आत्मनिर्भर कर लिया। अभी कुछ ही महीनों पूर्व हमने पोखरन परमाणु विस्फोट किया जिसने सारी दुनिया को चकित कर दिया इसके बाद अभी कुछ दिन पूर्व हमने गौरी टू का सफल परीक्षण किया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हम अपनी रक्षा करने में पूर्ण सक्षम हैं। अतः निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि अतीत से वर्तमान और वर्तमान से भविष्य की ओर उन्मुख होना ही आधुनिकता है।

(घ) आधुनिकता बोध : बौद्धिकता के प्रति प्रतिक्रिया, धर्म की पुर्नस्थापना : उत्तर आधुनिकता–बोध।

आधुनिकता बोध बौद्धिकता के प्रति प्रतिक्रिया है, लेकिन बौद्धिकता को जानने से पूर्व हमें नवजागरण को जान लेना अतिआवश्यक है क्योंकि सम्पूर्ण नवजागरण का आन्दोलन बौद्धिकता का ही परिणाम है नवजागरण एक वैचारिक आन्दोलन था। जिसनें मध्ययुगीन समय की सारी पुरानी मान्यताओं और जीवन मूल्यों को ध्वस्त कर मानव को प्रगति के नये मार्ग पर अग्रसर किया। अर्थात् यह आन्दोलन समाज के सारी कुरीतियों, बुराईयों, विडम्बनाओं एवं अन्धविश्वासों को दूर करके नये आदर्श, नव मानव मूल्यों तथा समाज को नवीन गतिशीलता एवं चेतना प्रदान करता है। इस आन्दोलन का हमारे यहाँ एक मात्र कारण यह भी था कि मध्ययुग में मनुष्य की दृष्टि सदैव परलोक पर लगी रहती थी, लेकिन अब उसकी दृष्टि लोक में संचरण करने लगी है।

19वीं शताब्दी में सम्पूर्ण भारत में जिस नवीन चेतना का प्रचार प्रसार हुआ, उसे विद्वानों ने विभिन्न नामों से अभिव्यक्त किया।जैसे–रेनेसां, पुर्नजागरण, पुनरूत्थान, नवोत्थान, नवजागरण एवं समाज सुधार आदि। डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने इस युग को 'नवोत्थान'[1] कहा है। डॉ0 रामधारी सिंह दिनकर ने इसके लिए पुनरूत्थान शब्द का प्रयोग करते हुए कहा "भारतीय नवोत्थान का एक प्रधान लक्षण अतीत की गहराइयों का अनुसंधान था।"[2] नवजागरण के फलस्वरूप समाज का आधुनिकीकरण प्रारम्भ हुआ इससे प्रभावित होकर आर्थिक नीति, शिक्षा पद्धति तथा समाज की रूढ़ परम्पराओं आदि में बुनियादी परिवर्तन हुए। ऐनसाइक्लोपीडिय अमेरिका के अनुसार रैनेसां मूल रूप से फ्रैंच का शब्द है जिसका अर्थ है– 'पुर्नजन्म'[3]। मानक हिन्दी कोश के अनुसार–"जागरण किसी जाति, समाज आदि को

---

1 डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ; आधुनिक हिन्दी साहित्य ; सं0 1954 पृ0 3
2 रामधारी सिंह दिनकर ; संस्कृति के चार अध्याय ; पंचम सं0 अगस्त 1970, पृ0 538
3 Encyclopedia America ; Ed 1966, Part 23, Page 3677.

अपनी वास्तविक परिस्थितियों और उनके कारणों का ज्ञान हो जाता है और वह उन्नति एवं रक्षा के लिए सचेष्ट हो जाता है।"[1]

नवजागरण काल में मनुष्यों में सौदर्य चेतना से युक्त मानवतावादी विश्व दृष्टि का उदय हुआ। **हिन्दी साहित्य कोश** के अनुसार–"नवजागरण युग वस्तुतः सन्यासवाद के प्रति उपभोगवाद के विद्रोह का युग था।"[2] नवजागरण मुख्यतः जनसामान्य की एक विशिष्ट जागरूक स्थिति का उजागर करता है जिसके द्वारा नवीन परिवेश के अनुकूल जीवन और जगत को नये कोण, नये चिन्तन बिन्दु प्राप्त होते हैं। "नवजागरण पश्चिमी इतिहास चिन्तन और साहित्य में इसका आशय उस नये युग के आरम्भ से लिया जाता है जो गुणात्मक रूप से मध्यकाल से भिन्न है।"[3]

यूरोप में नवजागरण 14वीं शदी के अन्त में आया लेकिन भारतीय इतिहास में नवजागरण आधुनिक काल अर्थात् 19वीं शदी से प्रारम्भ होता है। वैसे यहाँ नवजागरण की शुरूआत 1857 से और इसका अन्त 1920 के आस–पास माना जाता है, नवजागरण पूरे भारत में एक न होकर भक्ति आन्दोलन की तरह कहीं पहले और कहीं बाद में आया। वैसे मैं नवजागरण को आधुनिकता की तरह एक प्रक्रिया मानता हूँ, क्योंकि आज भी हमारे समाज को नवजागरण की आवश्यकता है और वह हो भी रहा है। डॉ० मीरा रानी बल का नवजागरण के सन्दर्भ में मत है–"नवजागरण की अवधारणा में मानवात्मन, मनमस्तिष्क संस्कृति–सभ्यता, भावभाषा, जीवन शैली और जन दृष्टिकोण में वैचारिक अभिनवीकरण तथा बदलाव का भाव या प्रक्रिया निहित होती है। इसमें नया आत्मबोधन मन, नयी सोच और चिन्तन धारा तथा नयी रचनात्मक दिशाएं स्वतः प्रस्फुटित जागरित होने लगती है। जनता को गतानुगतिकता से आबद्ध संकीर्ण मनोभूमि में बौद्धिक उत्क्रांति का उन्मेष होता है।"[4]

---

[1] रामचन्द्र वर्मा, (सम्पा०) ; मानक हिन्दी कोश; दूसरा खण्ड, प्र०सं०, पृ० 353
[2] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा०) ; हिन्दी साहित्य कोश; भाग 1, तृतीय सं० 1985, पृ० 313
[3] Encyclopedia Britannica; Vol. 15, Page 660.
[4] डॉ० मीरारानी बल ; राष्ट्रीय नवजागरण और हिन्दी पत्रकारिता ; प्र०सं० 1994 पृ० 23

19वीं शदी के राष्ट्रीय जागरण को ही 'नवजागरण' कहा जाता है। इसका एक अर्थ यह भी है कि इससे पूर्व इस तरह की जागृति भारतीय समाज में देखने को नहीं मिलती। सोये हुए राष्ट्र के जन जीवन में नवीन चेतन और ज्ञान का संचार करने वाले आलोक को नवजागरण कहा गया। यूरोपीय इतिहास में रेनेसां यूरोपीय समाज के मध्ययुगीन दृष्टिकोण, जनमान्यताओं जीवन और चिन्तन धारा में वैचारिक ऐतिहासिक प्रक्रिया या आन्दोलन था। **'जॉन ऐडिंग्टन साइमंड'** के शब्दों, "रेनेसां को यूरोपिय प्रज्ञा के सर्वांगपूर्ण आन्दोलन के अर्थ में समझा जायगा, जो आत्ममुक्ति लाने वाला, विवेक और इन्द्रियज्ञान के सहज अधिकारों में पुनः विश्वास स्थापित करने वाला, मानव के निवास स्थान के रूप में इस नक्षत्र पर विजय प्राप्त करने वाला तथा व्यक्ति और राज्य दोनों के लिए ऐसे सैद्धान्तिक नियमों का निर्माण करने वाला, जिसका स्वरूप मध्ययुग के नियमों से भिन्न है।"[1]

("It will be considered as implying a comprehensive movement of the Europen intelleet and will towards self emamcipaliorn towords reassertion of the natural rights of the reason and the senses towords the conquest of this planet as a place of human occupation, and towords the formation of regulative theories both for state and individual differing form those medieval time.")

इससे यह स्पष्ट होता है कि नवजागरण की चेतना सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्वरक्षा की चुनौती को जनसामान्य में जागृत कर, उसकी समस्त सर्जनात्मक एवं वैचारिक शक्तियों को उभारकर तथा अतीत के ज्ञान वैभव को मुखर कर नवयुग और नवमानव को जन्म देती है। नवजागरण की प्रक्रिया बहुमुखी एवं बहुआयामी होती है इसलिए यह प्रक्रिया भारतीय जीवन के प्रत्येक पहलू, अंग और क्षेत्र को प्रभावित करती है, इतिहास

---

[1] Encyclopedia Britannica ; Ed. IX , Part. XX, Page 38.

कारों ने रैनेसां को आधुनिक युग और मध्ययुग का संक्रान्ति काल मात्र माना है। डॉ0 नगेन्द्र के अनुसार-"भारतीय पुनर्जागरण के मूल में व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का विशेष महत्व है।"[1]

आधुनिक युग में ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज तथा थियोसोफ़िकल सोसाइटी आदि की मान्यताओं ने भी भारतीय समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। इन सभी साम्प्रदायों ने मनुष्यों को रूढ़िगत बन्धनों से छुटकारा दिलाकर मनुष्य को नवीन मानव मूल्य तथा मनुष्य में स्वच्छन्द चेतना जाग्रत कर मनुष्यों को उन्नति की ओर अग्रसर किया।

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि नवजागरण मध्ययुगीनता के बन्धनों, पूँजीवाद एवं सामंतवाद के प्रति विद्रोह एवं मुक्ति दिलाने का बौद्धिकता से पूर्ण वैचारिक आन्दोलन था। तब मनुष्य ने बन्धनों, अन्धविश्वास एवं रूढ़ियों के आवरण को तोड़कर स्वच्छन्द रूप से सोचा। इसके फलस्वरूप समाज में नवीन परिवर्तन अविष्कार तथा औद्योगिक व तकनीकी उपलब्धियाँ हुई। इस प्रकार "नवजागरण की सांस्कृतिक चेतना परम्परा और आधुनिकता चिन्तन से निर्मित ऐसी तरंगे हैं जो देश जाति भाषा-सभ्यता और जीवन पद्धति को प्रवाह में बहाकर ले जाती है और साम्राज्य को नवजागृति के चमत्कारी जल से आप्लावित कर जीवन का रूख ही बदल देती है।"[2] इस क्रम में हम नवजागरण से आधुनिक तक तथा बाद में आधुनिकता की ओर उन्मुख हुए।

आधुनिकता बोध बौद्धिकता के प्रति प्रतिक्रिया है। क्योंकि बौद्धिकता ही हमें अपने परिवेश से निकाल कर अपने विकास और भविष्य के बारे में सोचने के लिए प्रेरित करती है। बिना बौद्धिकता के आधुनिकता का आगे बढ़ना असम्भव है। आदिकाल से लेकर आज तक हमने जो भी विकास किये हैं। वह सब बौद्धिकता का ही परिणाम है। यह एक मानसिक दृष्टि है जो हमें कुछ नवीन सोचने के लिए प्रेरित करती है। इसके अन्तर्गत राजनीतिक दृष्टि, वैज्ञानिक चेतना, सामाजिक चेतना और ग्रामीण परिवेश भी आ जाता है। रामधारी सिंह.दिनकर के अभिमतानुसार "बुद्धिवाद असल में इन्द्रिवाद है जो सूँघा जा सकता है।

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 1987, पृ0 448
[2] डॉ0 मीरारानी बल ; राष्ट्रीय नवजागरण और हिन्दी पत्रकारिता ; प्र0सं0 1994, पृ0 24

छुआ जा सकता है, सुना और देखा जा सकता है। बुद्धि उसी का विश्वास करती है, किन्तु आदमी के भीतर ऐसी गहराइयाँ भी है, जहाँ इन्द्रियों की पहुँच नहीं है और मन भी जहाँ किसी बड़े मन की सहायता के बिना नहीं जा सकता।"[1]

प्रश्न यह है कि आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में बौद्धिकता की भूमिका क्या है। बौद्धिकता की आलोचना आधुनिकता के सन्दर्भ में ही की जा सकती हैं। क्या विचार और बौद्धिकता में किसी संवाद की कोई गुँजाइश नहीं है? वस्तुतः परिवेश की प्रकृति के अनुरूप बौद्धिकता के स्वरूप में भी परिवर्तन होता है मध्यकाल में बौद्धिकता का सीधा सम्बन्ध शुष्क ज्ञान के ग्रहण में था उसमें जीवन के स्पन्दन का पूर्ण आभाव था अर्थात् मनुष्य में कुण्ठा निराशा अंधविश्वास भोग विलास आदि के अतिरिक्त कुछ नहीं था। यही कारण है कि दर्शन के निर्जीव सत्यों को जनसाधारण को प्राणवान रूप में पहुँचाने के लिए तुलसी, सूर आदि महान कवियों को उनमें जीवन के कण–कण को जुगाकर रखना पड़ा। उस युग में बौद्धिक वर्ग अपने पाण्डित्य के बल पर चिन्तन मनन और जीवन के बीच एक अन्तराल रखता था।

वर्तमान युग में बौद्धिकता को एक नया अर्थ सन्दर्भ मिला। विज्ञान ने मनुष्य की आकाश की ओर ललचा कर देखती आँखों को धरती पर टिका दिया अर्थात् मध्ययुग का मनुष्य जो पूर्ण रूप से भगवान पर टिका था उसके अच्छे बुरे कर्मो का जो भी फल प्राप्त होता वह उसका श्रेय ईश्वर को ही देता था। इसका मूल कारण था बौद्धिकता का अभाव। लेकिन वर्तमान युग में भावना को बुद्धि का पुष्ट आधार मिल गया। अब यह अनुभव किया जाने लगा है कि "बुद्धि, दर्शन, चिन्तन, ज्ञान, विज्ञान सबको पहले जीवन में आत्मसात् होना पड़ता है, आत्मसात् होकर मानव संवेदना का अंग बन जाता है तभी शक्तिशील साहित्य की सृष्टि होती है।"[2]

बौद्धिकता की सार्थकता जीवन और परिवेश के गतिशील सन्दर्भों के जुड़े रहने में है। कुछ लोगों का मानना है कि बौद्धिकता का परिणाम निराशा है तो ऐसा सर्वथा नहीं

---

[1] रामधारी सिंह दिनकर ; आधुनिक बोध ; प्र0सं0, 1973, पृ0 13

[2] डॉ0 रामदरश मिश्र ; आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि ; प्र0सं0 1975, पृ0 23

होता है क्योंकि आज इस बौद्धिकता के कारण ही विकास के बहुत से मार्ग प्रशस्त हुये हैं और बहुत सी चीजों का अविष्कार किया या यूँ कह सकते हैं कि सारी की सारी वैज्ञानिक एवं तकनीकी दृष्टि बौद्धिकता का ही परिणाम है। तो ऐसे में बौद्धिकता का परिणाम निराशा मानना बेइमानी होगी। हजारों वर्षों से चिन्तक वर्ग दार्शनिक ऊहापोह में उलझा रहा किन्तु जनता ने उसी चिन्तन को अपने मानसपटल में प्रतिष्ठित किया जो जीवन से पुष्टि किया गया। बौद्धिकता की सामर्थ्य को अमूर्त जगत से उसकी संवादहीनता के आधार पर चुनौती देते हैं जबकि सत्य यह है कि –"साधित अमूर्तता एक पिछड़ापन है। यह नया मूल्य नहीं है। बुद्धि तो स्वयं अमूर्तता को भेदती है। बुद्धि का संघर्ष ही अमूर्त के प्रति है। वह उसे परत दर परत उजागर करती चलती है।"[1]

जिस बौद्धिकता को आधुनिक मनुष्य ने स्वीकार किया है वह तो जीवन की धूप और छाया को सम्पूर्ण आस्था के साथ ग्रहण करती है। जहाँ तक प्रश्न बौद्धिकता और आस्था के विरोध का है। इसके पीछे कोई गम्भीर तर्क तो हमें प्रतीत नहीं होता। आस्था के मूल में केवल भावुकता ही हो ऐसा नहीं है। ऐसा होने पर आस्था विवेक हीनता के अंधेपन से ग्रस्त हो जायेगी। अतः आधुनिकता वर्तमान में ही संचरण करती है तथा बौद्धिक प्रेमी भी है। आधुनिक साहित्य के प्रबुद्ध विद्वान् डॉ० नामवर सिंह के शब्दों में 'रोमेण्टिक कवि, आलोचक जहाँ 'भावुकता' और 'सहृदयता' की मांग करते रहे, वहीं आधुनिक कवि समझदारी की मांग करते हैं।"[2]

वैसे तो आधुनिकता की तरह ही बौद्धिकता प्रत्येक युग में रहीं है ; किन्तु वर्तमान युग में जो बौद्धिकता का पुट उभर कर हमारे सामने आया है, इतना प्रखर रूप किसी और युग में देखने को नहीं मिलता। भारतीय नवजागरण बौद्धिकता का ही परिणाम है। नवजागरण का मूल प्रस्थान बिन्दु है –सुषुप्त मनुष्यों में नवीन स्फूर्त चेतन, विवेक युक्त, मुक्त चिन्तन और राष्ट्रीयता की भावना ज्ञान संवेदन का जनमानस में स्फुरण करना यह

---

[1] कमलेश्वर ; नयी कहानी की भूमिका ; द्वितीय सं० 1969, पृ० 65
[2] डॉ० नामवर सिंह ; कविता के नये प्रतिमान ; तृतीय सं० 1982, पृ० 41

आत्मबोध, आत्मपरीक्षण जिससे समस्त मानव जाति को प्रबुद्ध, स्वाधीन, आधुनिक और कर्तव्यशील बनाया। यह संचरण बिन्दु ही आधुनिकता का प्रवेश द्वार है।

बौद्धिकता की अवधारणा में मानवता मनमस्तिष्क सभ्यता संस्कृति, भावभाषा जीवन शैली और जन दृष्टिकोण में वैचारिक नवीनीकरण तथा बदलाव का भाव निहित रहता है, इसमें नया आत्मबोध मन, नई सोच और चिन्तन की नई धाराएँ स्वयं प्रस्फुटित होने लगती हैं। मानव की संकीर्ण मनोभूमि में बौद्धिकता का उन्मेष होने लगता है।

आधुनिक ज्ञान विज्ञान ने मनुष्य को बहुत अधिक बुद्धि सम्मत बना दिया है। नीत्शे का कथन है कि " ईश्वर मर गया है।" बौद्धिक जगत में एक क्रॉन्ति सी आ गई।"[1] वस्तुतः यथार्थ के स्वरूप में परिवर्तन होता गया। पुराने मूल्य समाप्त हुए और नूतन मानव जीवन मूल्यों की शुरूआत हुई। सोचने–समझने एवं चिन्तन की, सारी प्रक्रियाओं में बदलाव की स्थिति के साथ एक क्रॉन्तिकारी परिवर्तन आया।

अतः मानव जाति की वैश्विक –संस्कृति आज बुद्धिवादी –विकास से जुड़ी हुई है और इस बुद्धिवादी –विकास का केन्द्र बिन्दु विज्ञान है। दार्शनिकों का कहना है कि आधुनिक युग में बुद्धिवादी विकास जैसा कि विज्ञान की प्रगति से स्पष्ट है, आदमी के नैतिक और सामाजिक विकास की ओर अपेक्षाकृत ध्यान दे पाया है इससे स्पष्ट होता हे कि बौद्धिकता के विकास के साथ आधुनिकता का भी विकास होता है यही कारण है कि आज आधुनिकता अपने चरम बिन्दु पर नहीं पहुंच पाई है, अपनी स्थिति में आज भी गतिशील है, क्योकि बौद्धिकता दिन व दिन मनुष्य की प्रगति के द्वार खोल रही है लेकिन आधुनिकता का उद्देश्य मनुष्य जीवन को पूर्णता में देखना है। जब तक यह बौद्धिकता कार्य करती रहेगी, तब तक आधुनिकता का घुमता हुआ चक्र अपनी मंजिल पर नही पहुँच सकता। आधुनिकता के चलते–चलते साथ ही पिछले लगभग दो दशक से हिन्दी साहित्य में उत्तर आधुनिकता की धारणा पनप रही है। इसे स्पष्ट करने से पूर्व इसके बारे में मैं अपनी दृष्टि स्पष्ट कर

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 1987, पृ0 455

दूँ। 'उत्तर आधुनिकता मेरी दृष्टि में साहित्य, संस्कृति, कला एवं धर्म को पुर्न व्याख्यायित करने की पुनः कोशिश कर रहीं है।' उत्तर आधुनिकता भी आधुनिकता की भाँति अभी तक कोई मापदण्ड स्थापित नहीं कर पाई है। इसका मुख्य कारण है कि मानव जीवन गतिशील है और इसके मूल में मनुष्य केन्द्रित है इसीलिए यह भी गतिशील है।

उत्तर आधुनिकता साहित्य के लिए अत्यन्त ही नवीन विद्या है जो आधुनिकता के विरोध में खड़ी हो रही है और घोर यथार्थवादी दृष्टि है, कुछ विद्वान् उत्तर आधुनिकता को मार्क्सवाद के विरोध में देखते हैं तो कुछ इसे मार्क्सवाद और पूँजीवाद का विकसित रूप मानते हैं, वैसे मूल रूप से उत्तर आधुनिकता पश्चिमी अवधारणा है। 'जां फ्रास्वा लियोतार' को इसके अग्रणी विचारकों के रूप में माना है। 'अर्नल्ड टोयनबी' ने '1920' में 'पोस्ट मॉडर्न' शब्द का प्रयोग किया इसी समय 'ओस्वेल्डस्पेंगलर' का पुस्तक 'दि डिक्लाइन ऑव दि वैस्ट' के दोनों भाग (1922-23) तथा टी. एस. इलियट की प्रसिद्ध कविता 'दि वेस्टलैंड' (1922) भी चर्चा में थी।

इस प्रकार "पाश्चात्य सभ्यता के पतन और आधुनिकता के अन्त की दास्तान जिसमें मनुष्य बौद्धिक विलासिता, सांस्कृतिक संशय और मूल्यों के विघटन के बीच हाईटेक मल्टी मीडिया फ्यूजन और आक्रमक भौतिकता के बलबूते पर ज्ञान, प्रगति, मूल्य, सौन्दर्य, सत्ता और मनोरंजन में नया समीकरण करने का प्रयास कर रहा है।"[1]

हिन्दी साहित्य में उत्तर आधुनिकता की गूंज 1975 के आस-पास से सुनाई पड़ने लगती है। सुधीश पचौरी के मतानुसार, "उत्तर आधुनिकता, जो उत्तर आधुनिक स्थियितयों का सांस्कृतिक तर्क है और अपरिवर्तनवादी सांस्कृतिक प्रतिज्ञाओं को समस्याग्रस्त करता है, जो साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र के लिए एक निर्णायकवाद है क्योंकि उससे साहित्य और संस्कृति एक बार फिर नए रूप लेते हैं।"[2]

[1] देवेन्द्र इस्सर, उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, पृ0 30
[2] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिकता : साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 9 (भूमिका से)

अभी तक उत्तर आधुनिकता अपना कोई मापदण्ड या दृष्टिकोण स्थापित नहीं कर पाई है, इसीलिए विद्वान् इसके पक्ष एवं विपक्ष को लेकर काफी संशय की स्थिति में हैं। तो पहले हमें उत्तर आधुनिकता के सन्दर्भ में नकारात्मक दृष्टि रखने वाले विद्वानों के मतों को देख लेना चाहिए। 'जां फ्रांस्वा लियोतार' इसके प्रवर्तक है वे उत्तर आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहतें है– "यह महावृंतातों के प्रति अविश्वास है।"[1] ल्योतार के चिन्तन में 'महावृतांत' इतिहास का दूसरा नाम है। इस प्रकार इतिहास को उत्तर आधुनिकता का मूल केन्द्र बिन्दु बनाकर इसकी शुरूआत होती है। दूसरे नायक 'जॉक देरिदा' का मत है–"उत्तर आधुनिकता संस्कृति, साहित्य, इतिहास आदि में वस्तुतः एक आराजकता एवं व्यर्थता का दर्शन गढ़ रहीं है, जहाँ वस्तुनिष्ठता एवं भौतिक सत्य की अवधारणा को नकारने की कोशिश है।"[2]

उत्तर आधुनिकता का धरातल आधुनिकता के धरातल से अधिक संवेदनशील है। जो मनुष्यों को चेतन शुन्य से निकाल कर अति अहं की स्थिति में लाकर खड़ी करना चाहती है उसके परम्परागत मूल्यों प्रकृति एवं सौन्दर्य की भावना को तरासना चाहती है। डॉ0 शैलेश जैदी उत्तर आधुनिकता के सन्दर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुए कहते हैं कि –"उत्तर आधुनिकता को आधुनिकता का विस्फोट कहना समाचीन नहीं है। उत्तर आधुनिकता पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से भारतीय शरीर में रिसने वाला एक ऐसा विष है जिससे भारत को भले ही खतरा न हो, भारतीयता को निश्चित खतरा है।"[3] 'जी. आर. एल्टन' 1991 में इतिहास के बारे में उत्तर आधुनिक विचारों को "भीषण", "विध्वंसक", "अनर्गल" एवं अर्थहीन" कहकर खारिज कर दिया था। उन्होनें इसके विस्तृत विवेचन करते हुए कहते हैं–"पूर्ण सापेक्षवाद एक बिल्कुल गलत सिद्धान्त है; यह एक शुन्यवाद है।"[4]

---

[1] पहल (त्रैमासिक पत्रिका) अप्रैल–जून 1999 अंक 61, पृ0 150
[2] वही, पृ0 150
[3] नया मानदण्ड (त्रैमासिक) ; अक्टूबर 1996 से मार्च 1997 तक ; संयुक्तांक 6–7,वर्ष 4, पृ0 130
[4] ज्ञानरंजन (सम्पादक) पहल (त्रैमासिक-पत्रिका) अप्रैल–जून 1999 अंक 61, पृ0 152

समाजवादी वामपंथी इतिहासकार '**राफैल सैमुअल**' का कहना है कि "समकालीन चिन्तन में विखंडनवादी मोड़ से इतिहास को कमोवेश एक तथ्य–आधारित अतीत के विवरण के बजाए एक कपोल कल्पना या गल्प के रूप में देखने की प्रवृत्ति है।"[1] ब्रिटिश इतिहास कार '**मार्विक**' का मानना है कि "उत्तर आधुनिकतावादी विचार गम्भीर इतिहास अध्ययन के लिए एक खतरा है।"[2] अपने देश में भी उत्तर आधुनिकता के इतिहास विरोध एवं यथार्थ विरोध का भूत लोगों के सर चढ़कर बोल रहा है। प्रसिद्ध इतिहासकार '**रामशरण शर्मा**' से जब "उत्तर आधुनिकता के सन्दर्भ में उनकी दृष्टि जाननी चाही तो उन्होनें जवाब दिया– "हम नहीं जानते है कि उत्तर आधुनिकता क्या है, आप ही बताइये।"[3] डॉ0 रामविलास शर्मा भी उत्तर आधुनिकता के बोध को नकारते हूए कहते हैं कि "मैं नहीं जानता कि उत्तर आधुनिकता किस चीज का नाम है।"[4]

वैसे कुछ लोगों का मानना है कि "समाजवाद की विफलता से पैदा हुई हताशा में उत्तर आधुनिकता एक नये विचार के रूप में आकर्षित कर रही है, उम्मीद है जल्द ही उनका मोह भंग हो जायेगा। सच्चाई यह है कि उत्तर आधुनिकता का एक बड़ा हिस्सा व्यर्थ की बकवास है, जिसका कोई माने मतलब नहीं है और उसका कोई अर्थ न निकलने के लिए पाठक दोषी नहीं हैं।"[5]

किसी भी वाद, सिद्धान्त एवं आन्दोलन के केवल एक ही पक्ष को देखने मात्र से हम उसके प्रति कोई दृष्टि स्थापित नहीं कर सकते और यह संगत भी नहीं है इसलिए उसके नकारात्मक पक्ष पर दृष्टिपात करने के बाद हमें उसके पक्ष पर भी विचार कर लेना चाहिए। इस सन्दर्भ में मेरा मानना यह है कि हम जब तक किसी चीज के करीब नहीं जाएंगे तब

---

[1] पहल (त्रैमासिक) अप्रैल–जून 1999 अंक 61, पृ0 152
[2] वही, पृ0 152
[3] वही, पृ0 155
[4] वही, पृ0 155
[5] वही, पृ0 155–156

तक उसके सत्य से अपरिचित रहेंगे। उत्तर आधुनिकता घोर यथार्थवादी है वह अपने अन्दर समाज की कटुता को समेटे हुए है। यह प्रत्येक वस्तु को तर्क की कसौटी पर परखती है। उत्तर आधुनिकता अतिबौद्धिकता का परिणाम है। इसीलिए वह अपने अन्दर नकारात्मक व स्वीकारात्मक दोनों दृष्टि रखती है। इस धारा ने साहित्य, शिल्प, संचार आदि की रचनात्मक उपलब्धियों एवं गतिविधियों को गम्भीरता से प्रभावित किया है और जीवन को एक नयी दिशा मिली है। **गिरीश्वर मिश्र** का मानना है कि "उत्तर आधुनिकता के युग में मानविकी, भौतिक विज्ञान और साहित्य को एक दूसरे से अलग करने वाली सीमाएँ टूट रही हैं सिद्धान्त तथा तथ्य, व्यवहार और भाषा तथा संस्कृति और जीवन के बीच कृत्रिम भेद समाप्त हो रहे हैं। वस्तुनिष्ठता और चिन्तन की क्षमता के प्रति श्रद्धा का आधुनिकतावादी दौर बीत रहा है और ऐसा करते हुए तमाम ऐसे मुद्दे, प्रश्न और दृष्टियाँ जिन्हें कभी अप्रासंगिक करार दिया गया था, पुनः सार्थकता ग्रहण कर रही है।"[1]

विश्व के इतिहास में आज ऐसे परिवर्तन हो रहें हैं कि मनुष्य विस्मित एवं विभ्रमित रह जाता है। आज के इस उत्तर आधुनिकता के दौर में ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हमारा समस्त इतिहास और समाज, हमारा साहित्य और दर्शन, हमारी कला और संस्कृति एवं विश्व दृष्टि, हमारे मूल्य हमारा भीतरी एवं वाह्य परिदृश्य, पुरानी समस्त संरचनाएं ध्वस्त हो गई है, और विचार एवं व्यंजना के नये–नये वैकल्पिक रूप और माध्यम विकसित हो रहें है इसी लिए **देवेन्द्र इस्सर** ने इसे "साहित्य और संस्कृति को प्रभावित करने वाली नयी सोच के रूप में देखते है।"[2] दूसरे अर्थों में **देवेन्द्र इस्सर** कहते हैं–"उत्तर आधुनिकता वर्तमान युग की संस्कृति और उसके चिन्तन एवं सौन्दर्य शास्त्र को चिह्नित करने वाला एक व्यापक परिभाषित

---

[1] नया मानदण्ड (त्रैमासिक पत्रिका) ; अक्टूबर 1996 से मार्च 1997 ; संयुक्तांक 6–7, वर्ष 4, पृ० 24
[2] समकालीन भारतीय साहित्य (द्विमासिक पत्रिका) ; जुलाई–अगस्त 1999 ; अंक 8, पृ० 200

परिभाषिक शब्द है।"[1]

उत्तर आधुनिकता इसके बावजूद एक मनोदशा है उन लोगों की मनोदशा जो स्वयं पर विचार करने के आदि हैं ; ताकि वे स्वयं अपनी अंतर्वस्तु खोज सकें और दूसरों को बता सकें कि उन्होंने क्या पाया हैं। डॉ0 हेमन्त जोशी के अनुसार "उत्तर आधुनिकता मोटे तौर पर वह सामाजिक अवस्था है, जहाँ आधुनिक कहा जाने वाला समाज इतना विकसित हो गया है कि उसके संचालन के लिए अब विभेदीकरण पर्याप्त नहीं रहा, अतः वह एक बार फिर से एकीकरण की ओर बढ़ता है, यहाँ संस्कृति अब वर्ग संस्कृति की शक्ल लेने लगती है और वह स्वयं एक उत्पाद बनकर प्रस्तुत होती है।"[2] 'जॉन मैकगोवान' ने उत्तर आधुनिकता के सन्दर्भ में लिखा है कि "उत्तर आधुनिकता का लक्ष्य इसी पूँजीवादी समग्रता को विखंडित करना है। इसके लिए वह समग्रतावाद के तले दबे कुचले लोगों को सत्ता देती है।"[3]

आज उत्तर आधुनिकता को सबसे महत्वपूर्ण दर्शन एवं चिन्तन के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है अनेक समकालीन पश्चिमी बुद्धिजीवियों के विभिन्न विचारों के तालमेल को यह नाम दिया गया और आज इसे पूरी दुनिया का चिन्तन बनाकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है –"उत्तर आधुनिकता के बहुआयामी और दूरगामी प्रभाव का अनुमान इस बात से भी लगाया जाता है कि फिल्म से लेकर फैशन तक, साहित्य से लेकर संस्कृति तक, कामशास्त्र से कॉमिक्स तथा विज्ञान से विज्ञापन तक प्रत्येक वस्तु विद्या और ज्ञान इतिहास, दर्शन, समाज मीडिया मडोना–यानी जीवन का प्रत्येक पहलू और अभिव्यक्ति इसके दायरे में शामिल है।"[4]

---

[1] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, पृ0 29
[2] नया मानदण्ड; (त्रैमासिक पत्रिका) ; अक्टूबर 1996 से मार्च 1997 ; संयुक्तांक 6–7, वर्ष 4, पृ0 80
[3] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिकता : साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 15
[4] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, पृ0 29–30

वैसे अभी यही कहा जा सकता है कि उत्तर आधुनिकता अभी कोई अपना निश्चित कोण स्थापित नहीं कर पायी है, इसीलिए उत्तर आधुनिकता और आधुनिकता के बीच कोई स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना बहुत ही दुस्कर कार्य है। अभी केवल इतना कहा जा सकता है कि आधुनिकता बौद्धिकता की प्रतिक्रिया का परिणाम है और उत्तर आधुनिकता को हम अतिबौद्धिकता का परिणाम, आधुनिकता का विस्तार, आधुनिकता के मूल में मानव केन्द्रित था लेकिन इसके मूल में अब अतिमानव, नवमानव भी है।

उत्तर आधुनिकता ने आर्थिक नीतियों में समूचा बदलाव किया। पूँजीवादी व्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का बढ़ता वर्चस्व, जिससे जीवन में बढ़ते हस्तक्षेप ने विकासशील राष्ट्रों की स्थिति ही बदल डाली। उत्तर आधुनिकतावादी युग में इलेक्ट्रॉनिक, मीडिया, इण्टरनेट, कम्प्यूटर, साइबर, प्यूजन, तकनीकी औद्योगीकरण का बहुत बड़ा योगदान रहा है जिसके माध्यम से सारी दुनिया की तस्वीर ही बदल गयी। अंत में 'जॉन मैकगोवन का कथन कहा जा सकता है–"उत्तर आधुनिकतावाद एक ऐसी फिसलदार पदावली है कि हम उसे आसानी से स्थिर नहीं कर सकते।"[1]

❋❋❋

[1] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिकता : साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 13

द्वितीय अध्याय :

आधुनिकता एवं समकालीनता एक तुलनात्मक अध्ययन

(क) आधुनिकता का सम्यक् विश्लेषण

(ख) आधुनिकता–बोध की प्रतिक्रिया : उत्तर आधुनिकता–बोध

(ग) आधुनिकता–बोध और उत्तर आधुनिकता–बोध का तुलनात्मक अध्ययन।

द्वितीय अध्याय

आधुनिकता एवं समकालीनता एक तुलनात्मक अध्ययन

प्रस्तुत अध्याय में हम आधुनिकता और समकालीनता का अध्ययन करेंगे। यहाँ समकालीनता के समझनें से पूर्व आधुनिकता को स्पष्ट एवं विवेचित करना आवश्यक है। आधुनिकता के संदर्भ में **प्रो0 इन्द्रनाथ** 'मदान' का है– 'आधुनिकता एक प्रक्रिया होने के कारण एक से अधिक दौरों से गुजरती है और आज भी जारी है, इसीलिए इसके किसी एक दौर पर अँगुली रखकर यह कहना कठिन है कि आधुनिकता यह है।'[1] प्रो. मदान जी के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिकता अपनी स्थिति में आज भी आबाध गति से विकास सम्पन्न है।

आधुनिकता का आशय देशकाल बोध से लिया जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं कि आधुनिकता मानवीय प्रगति की सूचना देती है तथा नये परिवेश को अपने अन्दर समाहित करके चलती है। इसीलिए इसे कभी परम्परा में खोजा गया तों कभी परम्परा से हटकर इसे आँकने की कोशिश भी की गई। लेकिन आधुनिकता मध्य युग के विरोध में प्रकट हुई। डा0 **अजब सिंह** ने अपने एक लेख में लिखा है 'आधुनिकता मध्ययुग की प्रक्रिया है। यहाँ भगवान को छोड़ दिया गया है और इसके स्थान पर मानव छा गया है। मानववाद आधुनिकता की एक प्रवृत्ति है। आधुनिकता में साहित्य का अंकन यथार्थ परक धरातल पर होता है। यथार्थ अंकन में मानवीय एवं इहलोक की अनुभूतियाँ प्रधान बन गई है।[2]

यह बात पूर्ण सत्य है कि ऐसा कोई भी युग नही रहा जो अपने समय में आधुनिक न कहलाया हो, किन्तु यह भी सही है कि अपनी आधुनिकता के प्रति कोई भी इतना सचेत नही रहा जितना की आज का युग। आधुनिकता के सन्दर्भ में **राजीव सक्सेना** 'आधुनिकता कोई इम्पोर्टेड लबादा नहीं है जिसे ओढ़ने मात्र से काम चल जायेगा। यह एक जीवन–मूल्यों सम्बन्धी अनिवार्यता है जो सारे सामाजिक सम्बन्धों को तोड़ रही है। स्वयं

---

[1] **डॉ0 इन्द्रनाथ मदान** ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 19
[2] अभिनव भारती (वार्षिक पत्रिका) ; 1983–84, पृ0 111

इसके अन्दर से जन्म ले रही है और नये आधार पर उसको पुर्नगठित करने की माँग कर रही है। आधुनिकता एक चुनौती है,जो अत्यन्त पीड़ादायक और जठिल प्रक्रिया से जीवन में स्थान बनाती जा रही है आवश्यकता इस चुनौती को स्वीकार करने की है।'[1]

आधुनिकता के विषय में हम जिस युग बोध की चर्चा कर रहें हैं। वह समय के समानान्तर मनुष्य को मनुष्य के रूप में समझनें की माँग है,इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक दृष्टि भी मानवतावाद का पक्ष प्रस्तुत करती है; क्योंकि कोई भी वैज्ञानिक जीवन दृष्टि मानवता के विरोध में खड़ी नहीं हो सकती है; रही यथार्थ की गतिशीलता और ऐतिहासिक बोध की बात, वह भी इस मानवतावाद से दूर नहीं जान पड़ती है अतः यह बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि यदि 'आधुनिकता को सार्थकता प्रदान करनी है, तो वह मानवतावाद[2] से संपृक्त विशिष्ट युग बोध के माध्यम से ही हो सकती है और इस कार्य के लियें ऐतिहासिक बोध की आवश्यकता रहती है।'संसारिक व्यस्तता में व्यक्ति का अपना व्यक्तित्त्व एवं उसकी पहचान खो गई। इस खोयें हुए व्यक्तित्व की खोज प्रक्रिया की संज्ञा आधुनिकता है।'[3]

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आधुनिकता का महत्वपूर्ण बिन्दु हैं, उद्योग टेक्नोलोजी इसके ही परिणाम है। वैज्ञानिक दृष्टि का अर्थ है, निष्ठुर होकर सत्य की खोज। बुद्धि इस खोज के क्रम में श्रद्धा–विश्वास परम्परा किसी बाधा को स्वीकार नहीं करती हैं। आधुनिक मनुष्य अपने चिन्तन में निर्भीक और निर्मम होता है। आधुनिक युग के सन्दर्भ में डॉ0 अजब सिंह का मत है–"आधुनिक काल अपने ज्ञान–विज्ञान और प्रविधियों के कारण मध्य काल से विलग हुआ। यह काल औद्योगीकरण, नगरीकरण और बौद्धिकता से चिपका हुआ है, फलस्वरूप नूतन आशाएं उभरी और भविष्य का नूतन स्वप्न देंखा जाने लगा। देश, धर्म, राष्ट्र, ईश्वर आदि की नवीन व्याख्याएं होने लगी।'[4] किन्तु यह बिना वैज्ञानिक दृष्टि के सम्भव नही है। आधुनिकता बिना इस वैज्ञानिक दृष्टि के विकसित नहीं हो सकती।

---

1 संचेतना कथा : समीक्षा (त्रैमासिक) ; सितम्बर–दिसम्बर 1969 ; वर्ष 3, अंक 3–4, पृ0 53
2 मुक्तिबोध ; नई कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबन्ध ; सं0 फरवरी 1960, पृ0 16
3 डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां ; प्र0सं0 1975, पृ0 8
4 वही, पृ0 7

AZAD LIBRARY ACC No. T-5266 Aligarh Muslim University, Aligarh

आधुनिकता जीवन को वैज्ञानिक आधार देना चाहती है; इसीलिए उसके पास वे सभी तत्त्व अर्थहीन है,जो मात्र परम्परा और अन्धविश्वास के बल पर समस्त मानवीय अनुभूति को एक परिधि में बाधें रखना चाहते हैं। जैसे जीवन बिना किसी गतिशील चेतना के कोई अर्थ नहीं रखता, ठीक उसी तरह गतिशील तत्त्व की कोई व्याख्या बिना वैज्ञानिकता के संम्भव नहीं है। **'अशोक वाजपेयी'** और **'नामवर सिंह'** आधुनिकता को एक मूल्य के रूप में स्थापित करना चाहते हैं और इस तरह वे इसे आधुनिकतावाद में बदल देते हैं; जब कि यह एक प्रक्रिया है जो बुद्धिवाद के निरुपण और बुद्धिवाद के विरोध दोनो में आंकी जा सकती है।'[1] दूसरे आधुनिकता के विषय में हरिचरण शर्मा ने लिखा– "आधुनिकता का वास्तविक अर्थ विगत सांस्कृति मूल्यों को अपने अन्दर समेंटकर मानव की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य विषय दायित्व की सक्रियता और चेतनता को स्वीकार करके चलना है। आज के संघर्षगामी जीवन में मनुष्य की संवेदना कुछ दूसरे और नये ढ़ंग से अनुभव कर रही है अनुभूति और संवेदना का यह नयापन आधुनिकता का ही एक अंग है।"[2] अतः आधुनिकता का वास्तविक अर्थ विगत सांस्कृतिक मूल्यों को अपने अन्दर समेट कर मानव की वर्तमान स्थिति और चेतना को स्वीकार करना है। आज के संघर्षमयी जीवन में मनुष्य की संवेदना कुछ और दूसरे ढंग से अनुभव कर रही है। यही कारण है कि "मानव केवल आधुनिकता की ओर अबाधगति से बढ़ रहा है। आधुनिकता का मूल्य ऐतिहासिक दृष्टि के साथ ही है। पुरातन युग और एतिहासिक बोध को मानसिक स्तर पर लाकर ही आधुनिकता को प्राप्त किया जा सकता है।"[3]

'आधुनिकता नये बोध के लिए वैज्ञानिक दृष्टि को स्वीकार करके चलती है। यह वैज्ञानिक दृष्टि साहित्य को जिस ओर ले जाने का क्रम उठाती है वह साहित्य की श्रेष्ठ दिशा है। आधुनिकता परीक्षण को हेय दृष्टि से नहीं देखती। आज के युग के वैज्ञानिक

---

[1] डॉ० इन्द्रनाथ मदान ; आधूनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र०सं० 1976, पृ० 37
[2] डॉ० हरिचरण शर्मा ; नयी कविता : नये धरातल ; प्र०सं० 1969, पृ० 20
[3] डॉ० धर्मवीर भारती ; आधुनिक साहित्य बोध ; प्र०सं०, पृ० 7

युगीन दृष्टि की आवश्यकता एवं आधुनिकता इसकी पूरक है।'[1] आधुनिकता यथार्थवाद की गतिशीलता को स्वीकार करके चलती है इतना ही नहीं वह यथार्थ की तथाकथित कटुता और उग्रता को सौन्दर्य दृष्टि से देखने के निमित्त प्रोत्साहित करती है। अतः आधुनिकता जीवन के प्रति यथार्थ दृष्टिकोण है और यथार्थ क्षण प्रतिक्षण परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजरता रहता है। 'आधुनिकता सम्पूर्ण विकास एवं गति का केन्द्र मनुष्य एवं उसकी उपलब्धि को मानती है। आधुनिकता के स्पर्श से ही मनुष्य शक्ति सम्पन्न होकर सब अनर्गल एवं निर्जीव मान्यताओं को हटाता है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि आधनिकता मानव के क्षण प्रतिक्षण होने वाले विकास के प्रति विशेष आस्थावान है।'[2]

साहित्य में आधुनिकता बोध का अर्थ आज–कल समझा जाता है कि रचनाकार को अपने कथ्य या 'वस्तु' की चिन्ता में न उलझ कर यह ध्यान देना चाहिए कि उसकी शैली ताजी, चुस्त और दुरूस्त हो। परन्तु इस मत को ही अन्तिम सत्य नही माना जा सकता है। ' मानवीय गुण ही आधुनिक साहित्य के लक्षण हो सकते हैं। मानवीय गुण के निर्णायक तत्त्व है– आनन्द और कल्याण, हितम् और प्रियम्। अभिव्यक्ति की सफलता के मूल्यांकन की कसौटी है– संप्रेषण क्षमता। नया साहित्यकार इसका विरोधी है। परन्तु साहित्य के मूल्यांकन की इससे अधिक सच्ची कसौटी कोई नहीं हो सकती।'[3]

आधुनिकता के विवेचन के पश्चात् हमें समकालीनता को भी समझ लेना चाहिए, तभी दोनों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। विद्वानों, आचार्यों और स्वयं रचनाकारों ने 'समकालीन' के भिन्न अर्थ अपने मतानुसार कियें हैं।'समकालीन' अंग्रेजी शब्द 'Contemporary' का समानार्थक है, जिसका अभिप्राय है सम+काल अर्थात् जो काल या समय के 'सम' या साथ–साथ हो। इस प्रकार 'समकालीन' का अर्थ ग्रहण किया जा सकता

---

[1] परिषोध (मासिक पत्रिका) ; सन् 1981 संयुक्त अंक 32–33, पृ0 79.
[2] वही पृ0 80.
[3] डॉ0 नगेन्द्र ; नई समीक्षा : नये सन्दर्भः द्वितीय सं0 1974, पृ0 67

है–'समय के साथ'। 'समय' का अर्थ केवल 'काल' नही, समय सन्दर्भ है जो उस युग को इतिहास की दृष्टि से विशिष्ट बना देता है।

समकालीन शब्द विशेषण है, और समकालीनता भावबोध संज्ञा।' समकालीन का साहित्य में सभी विद्याओं के साथ प्रयोग किया गया।' जैसें– समकालीन कविता, समकालीन कहानी, समकालीन उपन्यास, समकालीन निबन्ध आदि। 'समकालीनता' के भाव बोध के उद्‌भव के पीछे कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु रहे हैं, यह भाव बोध धीरे–धीरे विकास की ओर उन्मुख हुआ। यह प्रमुख तत्त्व उस काल विशेष की उपज थे, जिसमें
धर्म,संस्कृति, अर्थतन्त्र का विकृत रूप या आर्थिक असन्तुलन, भ्रष्ट व्यवस्था सत्ता की असफलता और असामाजिक तत्त्व आदि कुछ ऐसे तीखे अनुभव थे, जिसने समकालीन बोध को जन्म दिया।

समकालीनता में यथार्थ का बोध प्रमुख रहता है यही यथार्थ कविता में कथ्य बनकर उभरता है। "समकालीनता को एक मानसिकता भी कहा जा सकता है जो नये जीवन सन्दर्भो को उनके नये आयामों में जीवंत रूप में प्रस्तुत करती है प्रस्तुति यथार्थ के धरातल पर होती है। ये जीवन सन्दर्भ जीवन को अर्थवेत्ता प्रदान करते हैं। एक नई दृष्टि, नई राह और धारणायें मिलती और बनती है; जो जीवन का मार्ग दर्शन करने मे सक्षम है कोरी भावुकता अथवा आदर्श जो इस धरती पर सम्भव नही, उसका सन्निवेश नही रहता है।'[1]

समसामयिकता से हमारा तात्पर्य देश काल के दायित्व के साथ–साथ उस क्षण की तीव्रानुभुति की पकड़ से है, जो परिस्थितियों से उत्पन्न है' तथा जो समसामयिक औचित्य की रक्षा करने में सबसे अधिक अपनी भूमिका अदा करती हैं। समसामयिक आधुनिक दुनिया से तो सम्बन्ध रखता है तथा अपनी रचनाओं में इसी बोध को व्यंजित करता हैं।'[2] हम विचार में आधुनिक होते हुए भी हम समसामयिक नहीं हो सकते हैं क्योंकि समसामयिकता

---

[1] डॉ0 ज्ञानवती अरोरा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम ; सं0 1994. पृ0 2

[2] The contemporary belong to the modern world, represent it in his work and accepts the historic forces moving through it its values of the seience and progress."
Stephen spender: The struggle of the Modern. Ed. 1963, Page 77.

का परिवेश इतना विस्तृत नहीं होता। वह तो स्थिति विशेष को प्रतिबिम्बित करने का माप मात्र है। "समसामयिकता सतत् गतिशील सत्य को समस्त मानवीय संवेदनाओं के साथ देखने का प्रयास करती है। सत्य का यह गतिशील रूप शाश्वतवाद को स्वतः खण्डित करता है।"[1] 'समकालीनता' समय सापेक्ष होते हुए भी अपना एक विस्तृत परिवेश रखती है। हर युग अपने समय का समकालीन होता है और समकालीन का अपना पूरा युग। समकालीनता का तात्पर्य तात्कालिकता से बिल्कुल नहीं हैं यह इतिहास जन्य परिस्थितियों का परिणाम होती है। "समकालीनता ही वह बिन्दु, साहित्य जगत में है, जहाँ से साहित्य रचना अग्रसर होती है ; क्योंकि समकालीनता में परम्परा है, संस्कृति है, वह केवल 'आज' नहीं है। 'आज' बीते 'कल' से ही निर्मित होता है। 'आज' और 'कल' का जोड़ ही समकालीनता हैं।"[2]

समकालीनता का अर्थ है परिवर्तनों और परिस्थितियों को सही कोण से देखने का आग्रह। समकालीनता के सम्बन्ध में राजेन्द्र यादव का मत है: "इम्पोस्टर से सावधान' दूसरे शब्दों में समकालीनता व्यक्ति के उस नकाब को उतार फेंकती है जो उसने ओढ़ा हुआ है, और 'मानव' होने का भ्रम पैदा करा रहा है जबकि वह मानवीयता, संस्कृति और दायित्व जैसे शब्दों के अर्थो से कोसों दूर है।"[3]

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि समकालीनता देशकाल के सभी संदर्भो से संपृक्त रहती है, अर्थात् समकालीनता देशकाल से संबद्ध है यानी एतिहासिक है, काल विशिष्ट है, सामयिक सन्दर्भ, मानवीय प्रसंग है, राजनीति को भावबोध द्वारा काव्य में प्रस्तुत करती है। ऐतिहासिक दबाव भी है, विरोधी पक्ष को भी देखा–समझा गया। इसके बिना समकालीनता नहीं हो सकती।

इस प्रकार हम आधुनिकता और समकालीनता का विवेचन करने के पश्चात् दोनों के अंतर को भलीभाँति समझ सकतें हैं। आधुनिकता का आरंभ पश्चिम में पुनर्जागरण ;15 वीं

---

[1] डॉ0 लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नयी कविता के प्रतिमान ; सं0 संवत् 1 श्रावण 2014 वि, पृ. 270
[2] डॉ0 ज्ञानवती अरोरा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम ; सं0 1994, पृ0 3
[3] राजेन्द्र यादव ; कहानी : स्वरूप और संवेदना ; सं0 1979, पृ0 45

शदी) में हुआ जबकि भारतीय हिन्दी साहित्य में 19वीं शदी के मध्य में आधुनिकता का आरम्भ माना जाता है। समकालीन का आरम्भ हिन्दी कहानी के सन्दर्भ में 1960 ई0 के आस–पास से माना जाता है आधुनिकता काल सीमा से परिबद्ध नहीं होती है वह मध्यकालीन जीवन प्रवृत्तियों पर नवीन चेतना के उदय की वाचक है। जबकि समकालीनता समय सापेक्ष है जिसे 60–90 के मध्य माना गया है।

समकालीनता शब्द वस्तुतः आधुनिकता का लघु रूप है। इस विषय में प्रख्यात विद्वान् **प्रो. इन्द्रनाथ मदान** ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है कि "समकालीन की पहचान की कोशिश में आधुनिकता का बोध उभरता है और इसमें विचारशीलता का पुट है, जिसे बुद्धिवाद का निरूपण कहा गया है।"[1]

आधुनिकता में हम जिस संवेदना की बात करते हैं। वह किसी हद तक समकालीनता में भी दिखाई देती है, किन्तु यह मानना भूल होगी कि समकालीनता एवं आधुनिकता एक ही अर्थ प्रदान करते हैं। हम आधुनिक बनकर समकालीनता से शत्–प्रतिशत अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ पाते हैं, जबकि हम समकालीन होकर आधुनिकता से अपना संबन्ध स्थापित कर सकते हैं। **डा0 जगदीश गुप्त** ने 'आधुनिकता का मूल आधार मानवतावादी चेतना को बताया है। बीते हुए युगों की तरफ एक दृष्टि डालने से ऐसा प्रतीत होता है कि पुरातन एवं आधुनिकता की संघर्ष मुक्ति ही में कोई न कोई मानवीय दृष्टिकोण अवश्य रहा है।'[2]

आधुनिकता वर्तमान के सम्बन्ध में भविष्य की ओर उन्मुख विकसित बोध है। किन्तु, आधुनिकता बड़ी तीव्रता से समकालीनता के प्रति सचेत रहती है, जबकि आधुनिकता नवविकसित मूल्यों को स्वीकार नहीं करती है जो संघर्ष की स्थिति में होते है आधुनिकता एक युग विशेष का भाव है जबकि समकालीनता वर्तमान की स्थिति से उत्पन्न आयाम है। '**डा0 अजब सिंह** समकालीनता के विषय में अपने बिचार इस प्रकार प्रकट किये हैं–"समकालीन मानव जीवन बोध के फलस्वरूप कवि लोकतान्त्रिक, आर्थिक एवं सांस्कृति

---

[1] **डॉ0 इन्द्रनाथ मदान** ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973,पृ0 37.
[2] **परिशोध (मासिक पत्रिका)** ; 1981 संयुक्तांक 32–33, पृ0 80

चेतना को चित्रित करता है। फलतः सामाजिक धरातल चरमरा जाता है, एक नूतन परिवेश उभरता है। युग सापेक्षता के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद ने एक नया रूप लिया, यथार्थवाद चिन्तन ने उसे एक नया रूप दिया।"[1]

आधुनिकता और प्रौद्योगिक उन्नति का काफी सीमा तक सहसंबंध है, जिसके परिणाम स्वरूप एक नई व्यवस्था विकसित हुई है। इसके विपरीत समकालीनता प्रौद्योगिकीय अर्थव्यवस्था और महानगरीय जीवन की विसंगति, असंगति, त्रास, संत्रास आदि में निहित यथार्थ के अनेक रूपों और बहुविधि आयामों का प्रत्यक्षीकरण है।आगे चलकर आधुनिकतावादी दृष्टि के कारण दो चिंतन धाराओं का आविर्भाव हुआ और समाजवादी, पूँजीवादी संस्कृति, उपभोक्तावादी है, जिसमें आम व्यक्ति का शोषण होता है। समाजवादी व्यवस्था के शिखर पुरूष **कार्लमार्क्स** थे ; जिन्होंने सर्वहारा वर्ग का समर्थन और श्रम के महत्व का प्रतिपादन किया। "समसामयिकता में एक ओर जीवन के प्रति क्रियाशील होने का भाव है तो दूसरी ओर अतीत और भविष्य से दोनों से अलग हटकर युग बोध की स्थिति–विशेष के प्रति ममत्व का भाव है। आधुनिकता बोध में हम ऐतिहासिक बोध को हृदयागम करते हुए अतीत और भविष्य के रूढ़ आग्रहों से अलग हटकर एक युग विशेष से सम्पृक्त दिखाई देते हैं।"[2]

"आधुनिकता युग विशेष का गुण है। समसामयिकता युग विशेष का आयाम है। आधुनिकता एक ऐतिहासिक विश्लेषण है जो हमें देशकाल का बोध देता हैं, समसामयिकता देशकाल के बोध के साथ सक्रियता की भी पुष्टि करती है। जिस देशकाल में हम उसकी सीमाऐं और विस्तार हम समसामयिकता के यथार्थ के द्वारा अनुभव करते है।"[3]

आधुनिकता पूँजीवादी संस्कृति, भोगवादी सभ्यता की समर्थक और पोषक है। 'अर्थ' की महत् शक्ति में उनका पूर्ण विश्वास है जबकि समकालीनता ने शोषक वर्ग अर्थात् आम

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद, प्र0सं0 1987, पृ0 53.

[2] डॉ0 हरिचरण शर्मा ; नयी कविता का मूल्यांकन : परम्परा और प्रगति की भूमिका पर ; प्र0सं0 1972, पृ0 400

[3] डॉ0 लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नयी कविता के प्रतिमान ; सं0 संवत् 1 श्रावण 2014 वि, पृ0 275

आदमी की मानसिकता को पहचाने एवं परखने की कोशिश की। पूँजीवाद ने जनसामान्य की पीड़ा को उभारा हैं, जिसके कारण उसमें निराशा और अवसाद को जन्म दिया। शोषित वर्ग के आक्रोश की इस चिनगारी को समकालीनता विस्फोटक बना देती है। यद्यपि समाज, राजनीति और धर्म से कूड़े–करकट को काँट छाँट कर समाज और व्यक्ति के स्वच्छ, स्वस्थ, रूप को प्रतिष्ठित करना उसका मुख्य उद्देश्य है। फायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त तथा सार्त्र के अस्तित्ववादी चिंतन ने आधुनिकता के व्यक्तिवादी चिन्तन में कुछ नये बिन्दु जोड़ दिये हैं, जिसने समाज की अपेक्षा व्यक्ति को अधिक महत्वपूर्ण बना दिया। समकालीनता में व्यक्ति और समाज दोनों ही है।

"आधुनिकता एक प्रक्रिया है जो निरन्तर गतिमान है इसके उपरान्त उत्तर आधुनिकता की भी संकल्पना की गई है। परन्तु समकालीनता के साथ ऐसी कोई अवधारणा नहीं हो सकती हैं, क्योंकि वह कोई प्रक्रिया न होकर काल खण्ड विशेष से जुड़ी रहती है। हर युग की अपनी समकालीनता होती है, जबकि आधुनिकता में नैरन्तर्य है।[1]" इस प्रकार समकालीनता हमें अतीत और भविष्य के उचित बोध एवं संबंध से तो परिचित कराती ही है, वर्तमान युग की वृत्ति को भी समझने में सहायता प्रदान करती है। इस प्रवृत्ति के कारण वह युग की आधुनिकता को समझने में भी सहायता देती है। इसीलिये डा0 नीहाररंजन रे जैसे विचारकों का मत है कि "समकालीनता' शब्द 'आधुनिकता' की धारणा को बेहतर ढंग से मूर्त करता है।"[2]

आधुनिकता वैज्ञानिक और बौद्धिक दृष्टि है समकालीनता किसी युग विशेष की बहुआयामी दृष्टि है। आधुनिकता का अपना अलग सौन्दर्यशास्त्र है जबकि समकालीनता सौन्दर्य शास्त्र की परम्परागत लीक को स्वीकार नहीं करती वह तो स्वच्छन्दता को स्वीकार

---

[1] डॉ0 ज्ञानवती अरोरा : समकालीन हिन्दी कविता : यथार्थ के विविध आयाम ; सं0 1994, पृ016

[2] Dr- Nihar ranjan Ray, "I there fore, of ten wonder if the term contemporane it does not better orrticulate the concept of modernity especially in view of the faot that modernity by itself can not be the citerion of judgment of good or bad art," Inaugural Address, 'Modernity and contemporary Indian Literature' Page no. 5

करके चलती है। ऐसी स्वच्छन्दता जो व्यापक प्रभाव डालने में समर्थ हो, और समाज तथा मानवता की विद्रूप छवि को रेखांकित करते हुए भी स्वस्थ सचेतन दृष्टि रखे।

निष्कर्ष रूप से, जो समय चल रहा है, वही वर्तमान है। उसमें समकालीनता और आधुनिकता सभी समाये हुए है। वर्तमान तत्कालिकता नहीं है। उसे किसी भी निश्चित समय की सीमा में बांधा नहीं जा सकता। हर युग का अपन एक वर्तमान होता है और उसकी कुछ विशेषतायें होती हैं, यह विशेषताएं समाज, राजनीति, धर्म, अर्थव्यवस्था, संस्कृति और साहित्य की भी हो सकती हैं। जिससे मनुष्य का आज (वर्तमान) का जीवन बिना प्रभावित हुए नही रह सकता । इस प्रकार वर्तमान देशकाल की सीमा में भी नही बाधा जा सकता। वर्तमान की काल सीमा दीर्घ नही हो सकती, क्योंकि तब वह वर्तमान नही रहेगा। वर्तमान आधुनिक के समान कोई प्रक्रिया नही, जो निरन्तर परिवर्तनशील होती रहे। वर्तमान में स्थिरता एवं टकराव है, जिसका अर्थ गतिहीनता या जड़ता नही, अपितु परिवर्तन होता है।

(क) आधुनिकता का सम्यक् विश्लेषण

आधुनिकता का सम्यक् विश्लेषण करने से पूर्व हमें आधुनिक को समझ लेना आवश्यक है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल के विकास का क्रम एक शताब्दी पहले से ही प्रारम्भ हो गया था—बदलाव के स्पष्ट चिन्ह 19वीं0 शदी के उत्तरार्ध में दिखाई पड़ने लगे थे।[1] आधुनिक युग का आरम्भ यूरोप के इतिहास में 15वीं शती में पुनर्जागरण युग के साथ माना गया है। परन्तु आधुनिक युग का आरम्भ वास्तव में 17वीं शती में विज्ञान के विकास के साथ ही स्पष्ट लक्षित होता है। वैसे आधुनिक शब्द का प्रयोग अनेक अर्थो में हुआ है। यह शब्द संस्कृत के 'अधुना' शब्द से स्वार्थ में 'ठ्क्' प्रत्यय लगाकर बना है। अतः इसका अर्थ अत्यन्त नूतन है। भाव प्रत्यय 'ता' शब्द से संयुक्त होने पर इस शब्द से गुण, अवस्था एवं परिणाम का बोध होता है। अभिप्राय यह है कि "प्राचीन एवं मध्य युगीन गुण अवस्था एवं परिणाम आदि विभिन्न परिस्थितियों एवं वातावरण के फलस्वरूप बौद्धिक कल्पनाएं विभिन्न परिवर्तनों को ग्रहण करती हुई, अत्यन्त नवीनतम् रूप में दृष्टि गोचरा होने लगीं। इसे ही आधुनिकता की संज्ञा दी गई।"[2]

डा. नगेन्द्र ने 'आधुनिक' शब्द का सामान्यतः तीन अर्थो में प्रयोग स्वीकार किया है—

1—समय सापेक्षः जिससे आधुनिक काल एवं विशेष काल का सूचक है।

2—आधुनिक का सम्बन्ध वर्तमान से है, और वर्तमान परिवर्तनशील है। अतः आधुनिकता का रूप बदलता रहता है। इस प्रकार 'आधुनिक' वर्तमान से बंधा नहीं है।जैसे—बौद्ध काल आज प्राचीन है, परन्तु अपने समय में वह आधुनिक था। अतः आज ही हमारे सम्मुख 'आधुनिक' है।

3—आधुनिक मध्ययुग की विचार—पद्धति से भिन्न,एक विशिष्ट दृष्टि कोण है,एक नये जीवन दर्शन का वाचक है, यद्यपि इसमें ऐतिहासिक अर्थ भी शामिल है।वस्तुतः आधुनिकता की

---

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 1987, पृ0 437

[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ.6

धारण का मूल आधार ऐतिहासिक चेतना है; जो अपने पूर्ववर्ती कालो से भिन्न है। अतः "यह आधुनिक एक परिभाषिक शब्द है जो समय से परिबद्ध नही है। इस अर्थ में'आधुनिक' एक विशिष्ट धारणा का उपर्युक्त विशेषताओं की संहति का वाचक है। उस पर समय के क्रम का नियन्त्रण नहीं है। उदाहरण के लिए–शंकराचार्य की अपेक्षा बुद्ध का जीवन दर्शन आधुनिक है। हिन्दी में सूरदास की अपेक्षा कबीर अधिक आधुनिक है।"[1]

आधुनिक की चर्चा करने के उपरान्त हम नवजागरण पर भी एक दृष्टि डालते चलें। नवजागरण 'आधुनिक मानव सभ्यता के उद्गम विकास की आदर्श मूल प्रतीक'[2] व्यवस्था है। नवजागरण न केवल आधुनिक युग अरूणोदय मात्र है न केवल अतीत की वापसी, न उच्च क्लासिक ज्ञान का संरक्षण, न सांमती व्यवस्था के विरूद्ध राज व्यवस्था न अभूतपूर्व अविष्कारों की खोज मात्र है। नव का मूल प्रस्थान बिन्दु है, मानव और उसकी स्वतन्त्र सत्ता का विकास इसकी मूल चेतना हैं। सुषुप्त जनमानस में नव स्फूर्त चेतना, विवेक युक्त मुक्त चिन्तन और राष्ट्र भाव ज्ञान संवेदना का स्फूरण जागरण।

नव जागरण, संस्कृत भाषा का 'नव' उपसर्ग जागृ धातु में ल्युट प्रत्यय के योग से उत्पन्न है।[3] जिसका अर्थ "जागते रहने की अवस्था या भाव है। लाक्षणिक अर्थ में 'जागरण' वह अवस्था है जिसमें किसी जाति, देश, समाज आदि को अपनी वास्तविक परिस्थितियों और उनके कारणों का ज्ञान हो और वह उन्नति एवं रक्षा के लियें सचेष्ट हो।"[4]

भारतीय इतिहास में नवजागरण की शुरूआत 1857 से और उसका अन्त 1920 ई.के आस–पास माना जाता है। जबकि यूरोप एवं पश्चिमी देशों में नवजागरण का आरम्भ रेनेसां के समानान्तर माना जाता है। "यूरोप की 14वीं शती के समान भारत में 19वीं शदी सांस्कृतिक संक्रमण काल की शदी कही जा सकती है, जिसमें मध्य युगीन जीवन आदर्श तो

---

[1] डॉ0 नगेन्द्र ; नयी समीक्षा : नये सन्दर्भ ; प्र0सं0 1970, पृ0 61–62
[2] Encyclopoedia Britannica 1977 Ed. 15th page 662.
[3] संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ ; तृतीय सं0 1967, पृ0 467
[4] रामचन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; मानक हिन्दी कोश ; दूसरा खण्ड, पृ0 353

विद्यमान थे ही, साथ ही इस नवयुग में जनमानस नव चेतना तथा नव वैज्ञानिक उद्वेलन का अनुभव करने लगा था, जिसके फलस्वरूप परम्परागत एवं आधुनिक विचारणा का अन्तर्द्वन्द्व जीवन साहित्य, कला एवं पत्रकारिता आदि में प्रतिफलित होने लगा था।"[1]

वैसे मैं नवजागरण को आधुनिकता की तरह ही एक प्रक्रिया मानता हूँ, क्योंकि आज भी हमारे समाज को विभिन्न क्षेत्रों में इसकी आवश्यकता है और बहुत हद तक आज यह आधुतिकता के सन्दर्भ में हो भी रहा है। हमारे यहाँ नवजागरण आधुनिक युग के समान्तर चलता है। एस. सी. सरकार के अनुसार 1757 में बंगाल में आधुनिक काल का उदय और मध्य काल अन्त माना जाता है सन् 1818 में महाराष्ट्र अग्रेजों के अधीन हो गया, वहाँ आधुनिक काल का आरंभ इसी समय माना जाता है।ब्रिटिश सरकार भारतीयों पर अपनी शिक्षा प्रणाली को थोपना चाहती थी जिसे भारत की जनता ने सरलता पूर्वक स्वीकार नहीं किया। कुछ विदेशी विद्वान, विल्सन और शेक्सपीयर आदि, देशी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने के पक्षपाती थे।

शिक्षा समिति के एक भारतीय सदस्य जगन्नाथ सेठ ने सन् 1841 में कहा था – "यहि हमारा उद्‌देश्य भारतीय जनता का ज्ञान वर्धन और उसके मस्तिष्क का परिष्कार करना है, तो हमें उसे देशी भाषा में शिक्षा देनी चाहिए।स्त्री शिक्षा के लियें और दूसरा कौन उपाय हो सकता है? मेरा दृढ़ विश्वास है कि यह शिक्षा भारतीय जनता की पहुँच के बाहर है।"[2]"आत्म चेतस् का भाव तो संपूर्ण भारतीय नवजागरण में है, यही चेतना भारतीय अस्मिता, सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान है। भारतेन्दु ने इसी आत्म चेतस् को समष्टि चेतस् की ओर उन्मुख किया।"[3]

एस. सी. सरकार का कहना है कि पहले के मार्क्सवादी नवजागरण पर विचार करते हुए परम्परा बनाम प्रगति के सन्दर्भ पश्चिमीवाद का समर्थन करते थे। परम्परा और

---

[1] डॉ0 मीरारानी बल ; राष्ट्रीय नवजागरण एवं हिन्दी पत्रकारिता ; प्र0सं0 1994, पृ.22
[2] डॉ0 बच्चन सिंह ; हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास ; प्र0सं0 1996, पृ0 299.
[3] वही, पृ0 305

आधुनिकता के आधार पर लिया गया निर्णय ब्रिटिश साम्राज्यवाद के शोषण पर पर्दा डाल देता है। लेकिन औपनिवेशक पराधीनता बुर्जुआ आधुनिकता के मार्ग में दीवार बनकर खड़ी थी, ऐसे में जो भी आधुनिकता आयी, वह आधुनिकता का 'कैरिकेचर' थी।[1]

नवजागरण पर चर्चा करने के पश्चात् आधुनिक युग की महत्वपूर्ण कड़ी 'स्वच्छन्दतावाद' पर भी विचार करना आवश्यक है, क्योंकि स्वच्छन्दतावाद भी बहुत से महत्वपूर्ण बिन्दुओं को लेकर आया जिन्हें आधुनिकता के सन्दर्भ में भी ग्रहण किया गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावाद आधुनिकता की महत्वपूर्ण कड़ी है। आधुनिक सन्दर्भ और अर्थ में 'रेनेसाँ' शब्द का प्रयोंग संभवतः पहली बार बाल्जाक ने 1829 ई. में अपनी नाट्य कृति **'Balde scsaux'**में किया था।'[2] वालेस के.फर्गुसन का भी मत है– "रेनेसाँ काल को अव्यवस्थित परिवर्तनों का युग परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें काफी कुछ अभी भी मध्ययुगीन था, तो काफी कुछ में आधुनिक मान्यताऐं पहचानी जा सकती थीं, और काफी कुछ अपने में विलक्षण था यह महान् मध्ययुग और आधुनिक युग के बीच का सेतु काल है,लेकिन साथ ही यह एक सांस्कृतिक युग था।जिसकी अपनी पहचान थी, क्योंकि यह काल राजनीतिक सामाजिक और बौद्धिक उत्तेजनाओं से पूर्ण था।"[3]

यूरोपीय इतिहास में रेनेसां यूरोपीय समाज के मध्ययुगीन दृष्टि कोण, जनमान्यताओं, जीवन और चिन्तन धारा में वैचारिक ऐतिहासिक प्रक्रिया या आन्दोलना था। जाँन एंडिग्टन साइमंड के शब्दों में–"रेनेसां को यूरोपीय प्रज्ञा के सर्वांगपूर्ण आन्दोलन के अर्थ में समझा जायेगा जो आत्मिक मुक्ति लाने वाला, विवेक और इन्द्रिय ज्ञान के सहज अधिकारों में पुनः विश्वास प्रस्थापित करने वाला, मानव के निवास के रूप में इस नक्षत्र पर विजय प्राप्त करने

---

[1] डॉ0 बच्चन सिंह ; हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास ; प्र0सं0 1996, पृ0 300
[2] Chamber's Ecyclopedia, Ed. 1967 vol. 11. Page 591
[3] Wallace. k. ferguson; A survey of European civilization; IIIrd ed Part 1. to 1660. page 323

वाला तथा व्यक्ति और राज्य दोनों के लिए ऐसे सैद्धान्तिक नियमों को निर्माण करने वाला, जिसका स्वरूप मध्ययुग के नियमों से भिन्न है।"[1]

अंग्रेजी के रोमैंटिक से मिलती–जुलती प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त करने के लिए हिन्दी में 'स्वच्छन्दतावाद शब्द का प्रयोग हुआ। इस शब्द की उत्पत्ति रोमांस (Romance) शब्द से हुई है। रोमैंटिक या रोमैंटिसिज्म दोनो का मूल उद्‌गम एक ही शब्द रोमांस है। रोमान्स लैटिन शब्द 'रोमना' (Romana) से निःसृत है। कहा जाता है कि फिड्रिक श्लेगल ने रोमाण्टिक का सर्वप्रथम प्रयोग 1798 में'क्लासिक के साथ–साथ कविता की नई तथा पुरानी धारा के भेद को स्पष्ट करने के लिए किया जो एक दूसरे का विलोम था।[2] कुछ विद्वानों ने इसे 'प्रसाद' जयन्ती के अवसर पर वाराणसी में रमन्तवाद कहा। डा. रामेश्वर लाल खण्डेवाल ने अपने शोध प्रबन्ध मे इसे 'रोमान्सवाद'[3] कहा। दिनकर जी ने भी इसे 'रोमांन्सवाद'[4] नाम से अभिहित किया।

इंग्लैण्ड में स्वच्छन्दतावाद की शुरूआत 1798 ई. में 'लिरिकल वैलेडस' से मानी जाती है। इसकी भूमिका अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद का घोषणा पत्र माना जाता है इस संग्रह में विलियम वर्ड्सवर्थ के मित्र कोलरिज ने भी सहयोग दिया। स्वच्छन्दतावाद के विषय में भारतीय स्वच्छन्दतावाद के मर्मज्ञ विद्वान डा. अजब सिंह ने कहा है– "स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा के निर्माण में औद्योगिक क्रान्ति का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसने वहां के आर्थिक ढांचों को काफी कमजोर कर दिया। यह क्रौंति एक प्रकार की आर्थिक या सामाजिक परिवर्तन ही नहीं थी यह सब प्रकार की क्रौंति थी। तत्पश्चात् विज्ञान को प्रश्रय मिला,

---

[1] It will be considered as implying a conprehensive movement of the Europen intellect and will towards self emancipation, towards reassertion of the natusral rights of the reason and the senses, towards reassertion of the natural right self the reason and the senses towards the conquest of this plamet as a place of human occupation and towards the formation of regulative thuries both for state and individual differing from those medieval times Encyclopedia Britannica; Ed ix, 1875-1889 val. xx page 38.

[2] The Encyclopedia American Ist Ed. In 1829, Vol.xxiii, Page 655.

[3] डॉ0 रामेश्वर लाल खण्डेलाल ; आधुनिक कविता में प्रेम और सौन्दर्य ; प्र0सं0 1958, पृ0 318–19

[4] डॉ0 रामधारी सिंह दिनकर ; शुद्ध कविताकी खोज ; प्र0सं0 सितम्बर 1966, पृ0 29.

नये–नये प्रयोग एवं अविष्कार होने लगे। विज्ञान की सार्वभौमिकता के सामने धर्म की पुरातन रूढ़ियाँ खण्डित होने लगी।"[1]

डॉ० अजब सिंह ने स्वच्छन्दतावादी काव्य की अनेक प्रवृत्तियों का संकेत किया है। जैसे–कल्पना, अनुभूति, व्यक्तिवाद, मानववाद, प्रेम सौन्दर्य, प्रकृति प्रेम, उदात्त तत्त्व विस्मय और रहस्यानुभूति, विषाद और असन्तोष, विद्रोह और नवीनता, अतीत प्रेम, मिथक, बिम्ब विधान, प्रतीक योजन, मानवीयकरण तथा प्रगीतात्मक आदि।'[2] इनमें से अधिक तर प्रवृत्तियां जैसे– व्यक्तिवाद, मानववाद, विषाद और असन्तोष, विद्रोह और नवीनता, अतीत प्रेम, बिम्ब, मिथक, प्रतीक, मानवीकरण आदि को आधुनिकता के अन्तर्गत भी देखा जा सकता है।

"स्वच्छन्दतावाद नवीन काव्य अनुभूति की भूमि पर पुरानी परम्पराओं और रूढियों से विद्रोह कर चेतन प्रकृति तथा लोक जीवन की अनुभूति को वाणी देता है।"[3] अतः उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आधुनिकता स्वच्छन्दतावाद की अगली कड़ी है, क्योंकि आन्तरिक अनुभूतियों की काल्पनिक अभिव्यक्ति आधुनिकता में भी होती है। इसके मूल में आन्तरिक भावना ही प्रधान रहती है। आधुनिकता में व्यक्तिवाद को विशेष महत्व है।

हिन्दी साहित्य में छायावाद 'रोमांटिक उत्थान की वह काव्य धारा है जो लगभग 1918 से 37 (उच्छवास' से 'युगान्त') तक मानी जाती है। स्वच्छन्दतावाद की इस सामान्य भाव धारा की विशेष अभिव्यक्ति का नाम हिन्दी साहित्य में छायावाद पड़ा। "तत्कालीन पत्रिकाओं से पता चलता है कि 'छायावाद' संज्ञा का प्रचलन 1920 ई. तक हो चुका था। मुकुटधर पाण्डेय ने 1920 ई. में जबलपुर की 'श्री शारदा' पत्रिका में 'हिन्दी में छायावाद' शीर्षक चार निबन्धों की लेखमाला प्रकाशित करवाई थी।"[4] इससे स्पष्ट पता चलता है कि इन निबन्धों से पूर्व छायावाद पर कुछ टीका–टिप्पणी हो चुकी थी। उस युग की प्रतिनिधि

---

[1] डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक हिन्दी काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां ; प्र०सं० 1975, पृ० 11
[2] वही, पृ० 11
[3] वही, पृ० 44
[4] डॉ० नामवर सिंह ; आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां ; नवीन सं० 1999, पृ.13.

पत्रिका **'सरस्वती'** में छायावाद का प्रथम उल्लेख जून 1921 ई. के अंक में मिलता है। **सुशील कुमार ने "हिन्दी में छायावाद"** शीर्षक एक संवादात्मक निबन्ध लिखा।

छायावाद के विषय में विद्वानों में काफी उहापोह रही है। छायावाद क्या है? छायावाद का शाब्दिक अर्थ क्या है? छायावाद की परिभाषा क्या है? छायावाद के लक्षण क्या हैं? विविध विद्वानों ने अपने–अपने दृष्टिकोण एवं परिभाषाएं दी है, जैसे रोमेण्टिसिज्म आध्यात्मिक रहस्यवाद, वायवीय सौन्दर्य की कल्पना, प्रकृति का मानवीयकरण, स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह, अचेतन पर चेतनता का अरोप आदि। **डॉ0 रामविलास शर्मा** का मत है कि 'छाया' शब्द से छायावादी कविता का कोई सम्बन्ध नहीं हैं। उनके अनुसार ;"हिन्दी छायावादी कविता की व्याख्या करने के लिए छाया से लड़ना आवश्यक नहीं । उसकी न्यूनाधिक विशेषताएं वही है जो अन्य भाषाओं की रोमांटिक कविता की है। रहस्यवाद, प्रकृति पूजा, नारी की नवीन प्रतिष्ठा, सांस्कृतिक जागरण नये छन्द ,नये प्रतीक आदि गुण–दोष बनकर अन्य साहित्यों में भी प्रतिष्ठित है।"[1]

"छायावाद कही जाने वाली धारा तथा स्वाभाविक स्वच्छन्दता को लेकर चलती हुई धारा जिसके अन्तर्गत राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन की लालसा व्यक्त करने वाली शाखा भी हम ले सकते हैं। ये धारायें वर्तमान काल में चल रहीं हैं।"[2] इसलिए ***आचार्य* रामचन्द्र शुक्ल** छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की विकसित शैली मानते है। छायावाद के सन्दर्भमें **डॉ0 अजब सिंह** का मत है कि "छायावाद विकासमान आधुनिक संस्कृति के अन्तर्विरोधों का काव्य है, इस अन्तर्विरोध का हेतु परम्परा और आधुनिकता है।"[3]

छायावाद हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में एक आन्दोलन है। जो स्वच्छन्दतावादी चेतना को लिये हुए है, स्वच्छन्दतावादी चेतना कथ्यात्मक स्वरूप और शिल्पगत वैशिष्ट्य में आधुनिकता उभरती है। छायावादी काव्य में आधुनिकता का स्वर प्रचुर मात्रा में मिलता है।

---

[1] रामवीर सिंह (सम्पा0) ; आधुनिक काव्य संग्रह ; द्वितीय सं0 1982, पृ0 12
[2] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 संवत् 2029 वि0, पृ0 447
[3] डॉ0 अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद : छायावाद ; प्र0 सं0 1975, पृ0 92

आधुनिकता छायावाद की भाँति मनुष्य की गति और स्थिति दोनों को लेकर चली। छायावाद की केन्द्रीय भावना मानवतावाद है तो आधुनिकता भी मनुष्य को पृथ्वी पर सब कुछ मानती है। डॉ0 अजब सिंह का कथन है– "छायावाद आन्तरिक अनुभूतियों का काव्य है। छायावाद नूतन सामन्त–विरोधी मानव–मूल्यों की प्रतिष्ठा का काव्य है यह निरन्तर और नवीन प्रयोगशीलता का काव्य है।"[1] आज आधुनिकता भी मनुष्य को नवीन प्रयोगों, विज्ञान एवं तकनीकी विकास औद्योगिक विकास की ओर मनुष्य को निरन्तर ले जा रही है।

वस्तुतः छायावाद नव चेतना की साहित्यिक अभिव्यंजना थी। छायावाद व्यक्तिवादी अनुभूतियों की कविता है "यह व्यक्तिवाद औद्योगिक क्राँति के फलस्वरूप पूँजीवादी समाज का नूतन–उन्मेष है। यह उन्मेष तत्कालीन सामाजिक–बोध के विरोध में नहीं, परन्तु सामन्ती रूढ़ियों के विरोध में है।"[2] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान का अभिमत है–"छायावाद रोमेंटिक कविता का हिन्दी संस्कार होते हुए भी उसकी मात्र अनुकृति नहीं है, यह आधुनिक हिन्दी की एक नवीन तथा ऐतिहासिक आवश्यकता है, नये मूल्यों को अभिव्यक्ति देने का प्रयास है।"[3] अतः यह व्यक्तिवाद, औद्योगिक क्रान्ति, मानव के नवीन उन्मुख भाव, नवीन मूल्य यह सब बिन्दु हमें आाधुनिकता के समक्ष लाकर खड़ा कर देते हैं।

प्रगतिशील साहित्य अंग्रेजी के प्रोग्रसिव लिटरेचर का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी साहित्य में इस शब्द का प्रचार 1935 ई. के आस–पास हुआ जब ई.एम. फार्स्टर के सभापतित्व में पेरिस में **प्रोग्रेसिव राइटर्स एसोसिएशन'** नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का अधिवेशन हुआ। भारत में प्रगतिवाद की शुरूआत 1936 ('प्रगतिशील लेखक संघ) से मानी जाती है। प्रगतिवादी काव्य आधुनिकता के नवयथार्थवादी चिन्तन को लेकर आगे बढ़ता है। प्रगतिवाद में स्वस्थ सामाजिकता, व्यापक भाव भूमि और उच्च विचार के नैरन्तर्य का विकास है। यह कोई स्थिर मत मात्र नहीं, बल्कि यह आधुनिकता की भाँति एक निरन्तर विकासशील

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद : छायावाद ; प्र0सं0 1975. पृ0 93
[2] वही, (भूमिका से)
[3] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिक कविता का मूल्यांकन ; प्र0सं0 1962, पृ. 30.

साहित्य धारा है।

'प्रयोग' शब्द अंग्रेजी कविता में प्रचलित 'एक्सपेरिमेन्ट' के ही वजन पर हिन्दी में चला था लेकिन हिन्दी में प्रयोगवाद की शुरूआत 1943 से 50 तक के आस–पास मानी जाती है। प्रयोगवाद से आधुनिकता का आरम्भ होता है इसे प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया भी कह सकते हैं। प्रयोगवाद का मूलाधार वैयक्तिकता या व्यक्तिवाद है जो छायावादी वैयक्तिकता से भिन्न है। छायावादी वैयक्तिकता में भावुकता प्रधान थी, लेकिन प्रयोगवादी में बौद्धिकता। "प्रयोगवादी काव्य संसार में मनोविश्लेषणवादी एवं भाषा शिल्पगत संक्रान्ति समेटे हुए है, शिल्पगत निखार एवं अस्तित्ववादी दर्शन के रूप में नयी कविता में दिखने लगती है। वस्तुतः नयी कविता में आधुनिककता समस्त यथार्थ पहलूओं के साथ अभिव्यजिंत हुई है। आधुनिकता की नयी चेतना यहाँ गद्यात्मक अभिव्यंजना के रूप में दिखाई पड़ती है। मुक्त छन्द की रचना–धर्मिता भी आधुनिकता की अस्मिता बतायी गई है।'[1] यथार्थवाद के सन्दर्भ में डॉ0 अजब सिंह का विचार है– "यथार्थवादी चिन्तन की रेखाएं आधुनिकता को विस्तार देती है। आलोचनात्मक यथार्थवाद तथा सामाजिक यथार्थवाद के द्वारा आधुनिक कविता विशेष कर प्रगतिवादी, नयी कविता तथा नवगीत में आधुनिकता के कई चरणों को प्रस्तुत करती है।"[2]

आधुनिकतावाद के तहत एक अकविता आन्दोलन भी इस आधुनिक युग में चला। कुछ दिनों तक 'अकविता' पत्रिका भी प्रकाशित हुई, आधुनिकतावाद का प्रभाव बंगला कविता पर भी पड़ा। हिन्दी में इसके प्ररोधा 'राजकमल चौधरी' है; उनके मुक्ति प्रसंग; और 'कंकावती' में वेश्या, बीमार शहर आदि हैं।

इस प्रकार हम निष्कर्षतः कह सकते हैं कि आधुनिकता प्रत्येक युग की अपनी आधुनिकता रही है, लेकिन जितना सजग आज का युग है उतना कोई नहीं रहा। आधुनिकता, आधुनिक युग में नवजागरण, स्वच्छन्दतावाद से लेकर आज प्रयोगवाद नयी

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 118–119
[2] वही पृ0 121

कविता अकविता, नवगीत तथा आज की वर्तमान कविता आदि से होते हुए आज भी अपनी गति में निरन्तर बहती हुई चली जा रही है।

(ख) आधुनिकता–बोध की प्रतिक्रिया : उत्तर आधुनिकता बोध

आधुनिकता एक विचार दृष्टि है जो मध्यकालीन एवं रोमांटिक बोध की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हमारे सामने अस्तित्व में आयी। "डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने कहा– "आधुनिकता बोध मानव की नियति और स्थिति को उजागर करने में उसी तरह है जिस तरह मध्यकालीन या रोमांटिक बोध था और जिनसें यह अलग होने की गवाही देता रहा है और दे रहा है।."[1] 20वीं शताब्दी में 'आधुनिकता' तकनीकी एवं औद्योगिक विकास की संस्कृति के रूप प्रकट हुई। तकनीकी विकास के फलस्वरूप पूँजीवाद का विकास हुआ और जिसने उपभोक्तावादी संस्कृति को भी जन्म दिया। 'पूँजीवाद' एवं 'उपभोक्ता समाज' के बीच खींचाव ने आर्थिक विषमता के प्रति मनुष्य को सचेत कर, उन नवीन सामाजिक व्यवस्थाओं के प्रति सहानुभूति और विश्वास पैदा किया है। यह बात निर्विवाद सत्य है कि "आधुनिकता का जबर्दस्त हमला हमारी संस्कृति पर हुआ है और उसने मनुष्य को नई विचारणा के लिए उकसाया है।"[2] या दूसरे यह भी कहा जा सकता है कि "मध्यकालीनता से बिलगाने वाली मानसिकता के रूप में 'आधुनिकता' मनुष्य के सर्जनात्मक मानस की एक अवश्य भावी नियति है।"[3]

जिस प्रकार मध्यकालीनता व रोमांटिक बोध के विरोध के प्रति आधुनिकता व्यवहृत हुई उसी तरह आधुनिकता की प्रति प्रतिक्रिया के विरोध में उत्तर आधुनिकता उत्पन्न हुई। उत्तर आधुनिक सन्दर्भों का उल्लेख आलोचकों की सजग बौद्धिकता का परिचायक है इधर उत्तर आधुनिकता की चर्चा लगभग दो दशकों सें चल रहीं है।हिन्दी में इस दृष्टिकोण को अपना स्वरूप पाने के लियें कुछ समय लगेगा, वैसे अभी कुछ छुट–पुट प्रतिक्रियाओं एवं अल्प सैद्धान्तिक हस्तक्षेप को छोड़कर बात अभी बहस तथा मंचीय जुमले बाजी तक है।

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 175
[2] डॉ0 गंगा प्रसाद विमल ; आधुनिकता : साहित्य के सन्दर्भ में ; प्र0सं0 1978 (भूमिका से)
[3] वही, (भूमिका से)

सीमित है।अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर उत्तर आधुनिकता क्या है? यह कैसे अस्तित्व में आयी? इसके प्रेरणा स्रोत क्या हैं? इसके लक्षण व विशेषतायें क्या हैं? यह आधुनिकता से कैसे और क्यों भिन्न है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर देना ही उत्तर आधुनिकता के स्वरूप को स्पष्ट करना है।

, उत्तर आधुनिकता मनुष्य समाज की एक सोच अथवा अवधारणा है जो घोर यथार्थवादी है **जॉन मैकगोवन** ने अपनी पुस्तक 'पोस्ट मॉडर्निज्म एण्ड इट्स क्रिटिक्स' में एक जगह लिखा है, कि "उत्तर आधुनिकतावाद एक ऐसी फिसलनदार पदावली है कि हम उसे आसानी से स्थिर नहीं कर सकते।"[1] जॉ फ्रांस्वा लियोंतार की गणना उत्तर आधुनिकता के अग्रणी प्रवर्तकों में की जाती है।1979 में उन्होने **कोयबक** सरकार के लिए एक अकादमिक सूचना रिपोर्ट तैयार की जो बाद में पुस्तक के रूप में प्रकाशित की गईहै।'[2]

आर्नल्ड टोयनबी ने 1920 में पोस्ट माडर्न शब्द का प्रयोग किया था। यह वही समय था जिसमें **आस्वेल्ड स्पेंगलर** की पुस्तक 'दि डिक्लाइन ऑव दि वेस्ट' के दो भाग (1922–23) और टी. एस. इलियट की प्रमुख कविता 'दि वेस्टलैण्ड' (1922) चर्चा का विषय बनीं, और इस प्रकार हुई "पाश्चात्य सभ्यता के पतन और आधुनिकता के अंत की दास्तान जिसमें मनुष्य बौद्धिक विलासिता, सांस्कृतिक संशय और मूल्यों के विघटन के बीच हाई–टेक मल्टी मीडिया फ्यूज़न और आक्रामक भौतिकता के बलबूते पर ज्ञान, प्रगति,मूल्य,सौन्दर्य, सत्ता और मनोरंजन में नया समीकरण स्थापित करने का प्रयास कर रहा है।"[3]

अभी 20वीं शदी समाप्त हुई है और 21वीं शदी सही से शुरू भी नहीं हुई है लेकिन इस शदी में सब कुछ इतनी तेजी के साथ घट रहा है कि सब कुछ पोस्ट होता चला जा रहा है। पोस्ट इण्डस्ट्रियलिज्म, पोस्ट कॉलनियलिज्म, पोस्ट मार्क्सिज्म, पोस्ट हिस्ट्री।

---

[1] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 13
[2] जॉ फ्रास्वा लियोतार ; दि पोस्ट मॉडर्न कन्डीशन–ए रिपोर्ट ऑन नॉलिज, 1984
[3] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, पृ0 30

इसलियें **देवेन्द्र इस्सर** ने कहा –"इस मृत्युयुग में विश्व का इतिहास ऐसे बिन्दु पर ठिठक गया है जहाँ आधुनिकता और मार्क्सवाद अपनी 'महान' उपलब्धियों के तमामतर दावों के बावजूद संदिग्ध, विकृत तथा परास्त होकर अपनी विश्वसनीयता तथा सक्रियता खों चुके हैं और इनके अवशेषों पर उपजे रवैयों को उत्तर आधुनिकतावाद की संज्ञा दी गयी है।"[1]

आधुनिकतावाद की तरह उत्तर आधुनिकता एक गंभीर अवधारणा है जिसकी रूप रेखा को स्पष्ट नहीं किया जा सकता। किन्तु पाश्चात्य विचारकों ने मुख्यतः अमेरिकी विद्वानों ने एक सीमा तक इसे विश्लेषित करने का प्रयास किया है। उत्तर आधुनिकता के सन्दर्भ में हमें यह देखना होगा कि मानवीय समाज, संस्कृति और संवेदना को यह कहाँ और किस ओर ले जा रहे है? और आखिर में हमें यह भी देखना अवश्य है कि इसका प्रभाव तीसरी दुनिया के देशों पर, विकासशील देशों, मुख्यतः भारतवर्ष पर क्या पड़ रहा है। **इसीलिए देवेन्द्र इस्सर** "उत्तर आधुनिकता को मुख्यताः साहित्य और संस्कृति को प्रभावित करने वाली नई सोच के रूप में देखते हैं। उनके सामने दो मुद्दे हैः एक इस नई सोच के आ जाने से साहित्य की स्वायत्तता, भूमिका और भविष्य का क्या होगा? दूसरा यह कि तकनीकीकरण के प्रभाव से बढ़ते जाने की दशा में संस्कृति अपने प्रचलित एवं परम्परागत रूपों को कितना बचा पायेगी।"[2]

आज संसार में जो कुछ घट रहा है और उसे आधुनिकता से इतर समझा जा रहा है तो वह उत्तर आधुनिकत ही है। इस सन्दर्भ में कुछ पश्चिमी विचारकों तथा कुछ भारतीय मनीषियों ने अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है। 1988 में जां फ्रास्वा लियोतार ने **'रिराइटिंग मॉडर्निटी'** में लिखा है कि "उत्तर आधुनिकता एक नया युग नहीं है अपितु वह आधुनिकता के कतिपय तत्वों........ जिन्हें आधुनिकता अपनी विशिष्टाओं में शामिल होने का दावा करती है– को दोबारा लिखा रही है।"[3] इस विषय में देवेन्द्र इस्सर ने अनेक प्रश्न

---

[1] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, (भूमिकासे)
[2] समकालीन भारतीय साहित्य (पत्रिका) ; जुलाई–अगस्त 1999 ; अंक 84, पृ0 200
[3] गगनाञ्चल (त्रिमासिक) ; जनवरी –मार्च 1998, पृ0 156

उठाये हैं ये प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है और सीधे–सीधे उत्तर आधुनिकता के हवाले का पर्दाफ़ाश भी करते हैं। जैसे **देवेन्द्र इस्सर** प्रश्न करते है कि "क्या आधुनिकता जो बुर्जुवा के विरूद्ध विद्रोह के रूप में प्रकट हुई, को **हर्बर्ट मारकूज** के कथनानुसार पूँजीवाद ने अपने साथ मिला लिया है? या यह कि जिन माध्यमों सूचना टेक्नोलॉजी, आनंदलिप्सु उपभोक्तावाद, आक्रामक भौतिकवाद और आर्थिक तथा सांस्कृतिक सार्वभौमिकता के कारण जो परिवर्तन हो रहे हैं, वे आधुनिकता के नये दौर को प्रतिबिंबित करते हैं, जिन्हें उत्तर आधुनिकता नाम दे दिया गया है।"[1] **देवेन्द्र इस्सर** ने इन सवालों के जवाब में भी कई चिन्तकों ने भी विचार प्रस्तुत किये हैं। जैसे '**फ्रेडरिक जेमिसन**'का कथन है कि "उत्तर आधुनिकता की "केननाइज़ेशन" के विरूद्ध विद्रोह के रूप में प्रकट हुई।"[2]

'**पोस्टमॉडनिंज्म और द कल्चरल लाजिक आफ लैटकैपीटलिज्म**' में एक जगह **जेमेसन** कहते हैं कि उत्तर आधुनिकतावाद पूँजीवाद के इसी 'एपोथियोसिस' से शुरू होती है, वह पूजींवाद के उस सर्वव्यापकत्व में निहित है, जिसके तहत पूँजीवाद गैर–पण्यीय क्षेत्रों में भी जा पहुँचा है और हर चीज को पण्य बना डाला है।'[3] इसके पश्चात् उत्तर आधुनिक के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए '**लियोतार**' कहते हैं– "उत्तर आधुनिकतावाद आधुनिकता के भीतर की ही एक प्रवृत्ति है जो किसी चीज पर विलाप नहीं करती है। वह यथार्थ, क्रमबद्धता और समग्रता की अन्विति को इन्कार करती है।"[4]

उत्तर आधुनिकता की सोच के सम्बन्ध में कहा जा सकता है: अब उत्तर आधुनिकतावाद के रूप में नयी सोच व विचारधारा का जो मुहावरा बन रहा है, वह लगभग इतिहास–विरोधी है। वह यथार्थ को उसके अनेक रूपों और शैलियों में भेद किये बिना कला मात्र को घातक समझता है। परम्परा के जिन तत्वों के साथ उत्तर आधुनिकता की संगति बैठाई जा रही है उनकी पहचान व परख अनिवार्य है। वर्तमान समय में उत्तर

---

[1] गगनात्र्चल (त्रिमासिक) ; जनवरी –मार्च 1998, पृ0 156
[2] वही, पृ0 156
[3] सुधीर पचौरी ; उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 15
[4] डॉ0 बच्चन सिंह ; आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द ; द्वितीय सं0 1994, पृ0 28

आधुनिकता को इसलिए और अधिक महत्व दिया जा रहा है कि प्रकृति और मनुष्य के संबन्ध जुड़े, प्रकृति का विवेकहीन दोहन न हो। औद्योगिक करण पर भी शंकायें उठाई जा रही है। स्थानीय समस्याओं को भी उतना ही महत्व दिया जाए जितना विश्वस्तरीय समस्याओ को दिया जाता है।

एक पश्चिमी मार्क्सवादी आलोचक 'ऐन्ड्रियु रास ने अपनी पुस्तक में **"यूनिवर्सल अवैन्डनः दि पालिटिक्स ऑव पोस्टमॉडर्निज्म"** की भूमिका में इस बात को स्पष्ट किया है कि अब हमें चुनावी राजनीति के बजाए सांस्कृतिक राजनीतिक को अधिक महत्व देना चाहिए। उत्तर आधुनिकता की राजनीति को ग्रामची के इस कार्य को सम्पन्न करना चाहिए जिसके कारण राजनीति हमारे समस्त सांस्कृतिक क्रियाकलापों और क्षेत्रों तक व्यापक प्रभाव डाल रही है। एक ओर मार्क्सवादी आलोचक '**क्रिस्टोफर नोरिस**' ने भी उत्तर आधुनिकता तथा उत्तर संरचनावाद का मार्क्सवादी दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया है। यद्यपि नोरिस ने अपनी पुस्तक **"व्हाट इज राग विद पोस्ट माडर्निज्म"** में साम्यवादी समग्रता का पुरजोर समर्थन किया है। लेकिन यह बात साफ है कि वह अविरचना के जिस समग्रता विरोधी रवैये का समर्थन कर रहा है वह उत्तर आधुनिकता के चिन्तन का महत्वपूर्ण तत्व है।

उत्तर आधुनिकता के विषय पश्चिमी विद्वानों के मत जानने के पश्चात् हमें भारतीय मनीषियों के इस नई सोच के विषय में उसके विचारों को जानना आवश्यक है यह बात अलग है कि बहुत से भारतीय विद्वानों को उत्तर आधुनिकतावाद की अवधारण पच नही रही है, इसलिए इसका खुलकर विरोध भी कर रहे हैं। हाँ ये बात अभी सत्य है कि उत्तर आधुनिकता अभी हमारे यहाँ जुमलेबाजी व बहसों तथा वाद–विवाद का विषय बनी हुई है। यह नई सोच अभी तक अपना स्पष्ट स्वरूप निर्धारित नही कर पा रहीं है। उत्तर आधुनिकता सिर्फ नकारात्मक विमर्श नहीं हैं, वह सिर्फ 'हमला' नहीं है, उसमें विविधता को बनाने का रचनात्मक सुझाव भी निहित है। वह पश्चिमी मानवतावाद को निशाना बनाता है। **देवेन्द्र इस्सर**' ने अपनी पुस्तक '**उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नई सोच**' में उत्तर आधुनिकता के सम्बन्ध में अपने विचारों को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है–"इसमें

MAULANA AZAD LIBRARY ACC No. T-5285 Aligarh Muslim University, Aligarh

सांस्कृतिक मार्क्सवाद/भौतिकवाद के साथ-साथ नयी ऐतिहासिकता, नारीवादी तथा संरचनावादी मार्क्सवाद का विकास हुआ और सबसे अधिक दिलचस्प बात यह है कि जो विचारधारा भौतिकवाद पर आधारित रही है उसने सबसे आगे बढ़कर भौतिकता का विरोध किया क्योंकि इससे उपभोक्तावादी प्रवृत्ति पनप रहीं है और जो आक्रामक मूल्यविहीन भौतिकता विकसित हो रही है उसने मानव मूल्यों तथा संवेदनाओं, साहित्य तथा कला का हनन शुरू कर दिया है।"[1]

मेरे विचार से उत्तर आधुनिकता एक तार्किक सोच है, जो साहित्य, संस्कृति, कला एवं परम्परा को नये सिरे से जाँचने एवं परखने तथा इन्हे नये आयाम देने की कोशिश कर रही है। उत्तर आधुनिकता के विषय में परमानंद श्रीवास्तवः ने कहा-"उत्तर आधुनिकता का तो बीजमंत्र ही था, आधुनिकता या इतिहास-बोध का नकार-जो आदिम जादुई और कई तरह के चमत्कारों के लिए प्रलोभन पैदा करता है।"[2] उत्तर आधुनिकता एक अत्याधुनिक प्रत्यय है। नगरों का विस्तार और नागरिक जीवन चर्या इसके बड़े प्रमाण है। यह स्पष्ट है कि आधुनिकता के उदय एवं विकास के बिना उत्तर आधुनिकता का अस्तित्व में आना असंभव है इसलिए आधुनिकता को उत्तर आधुनिकता का आधार मान लिया जाए तो अत्युक्ति नहीं है।

उत्तर आधुनिकता ने जीव, जगत और प्रकृति के मध्य नये संबंधों को तलाशा है:"उत्तर आधुनिकता जीव, जगत प्रकृति और मनुष्य के बीच नयें संबंधों को तलाशा है। यहाँ पूरे दृश्य जगत को एक दूसरे से जुड़ा, परस्पर निर्भर, क्रिया-प्रतिक्रिया में संलग्न मानकर देखा जा रहा है।मनुष्य की प्रतिभा केवल शारीरिक, भौतिक, राजनीतिक किस्म की जरूरतों से न गढ़कर, उसकी अंतश्चेतना, आत्मा जैसी किसी चीज़ संपृक्त मानकर रची जा रही है। इस आत्मिक भूख की अभिव्यक्ति विभिन्न आध्यात्मिकताओं, ईश्वरवादी या

[1] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता : साहित्य संस्कृति की नयी सोच ; प्र०सं० 1996, पृ० 81
[2] इन्द्रप्रस्थ भारती (त्रैमासिक) ; जुलाई-सितम्बर 1991 अंक 3, वर्ष 4, पृ० 43

निरीश्वरवादी लेकिन किन्हीं आस्थाओं से जुड़ी सांस्कृतिक–कलात्मक अभिव्यक्तियों भी देखी जा रहीं है। इसलिये विकेन्द्रिय राज–समाज की, विकेंद्रित अर्थव्यवस्था की, सांस्कृतिक नैतिक वैविध्य की एक रूपता की अपेक्षा बहुलता की चर्चा है *** आधुनिक दृष्टि में जो पक्का निश्चय, निश्चिन्तता हुआ करती थी– कि अमुख चीज़ यही है, और कुछ नही है– वह उत्तर आधुनिकता में आते–आते संदेह, संशय और अनिश्चय के दायरे में चली गयी। *** उत्तर आधुनिकता में मूल्यों की सत्ता डगमगाई है।"[1]

उत्तर आधुनिकतावाद आधुनिकता की धारणा के प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा रहा है,"जिसमें विज्ञान अथवा ज्ञान, बुद्धिवाद, सार्वभौमिकतावाद और मानववाद के अस्वीकार पर जोर है। इसमें कोई शक नहीं कि इतिहास और प्रगति के विषय में ज्ञानोदय के सिद्धान्तों में काफी कुछ ऐसा है, जिसकी नुक्ता चीनी की जा सकती है।"[2] उत्तर आधुनिकता एक तरह से देखा जाये तो परम्रागत संस्कृति का नवीनीकरण भी है और संस्कृति का विस्तार भी।इस युग में आकार संस्कृति का दोहन तो अवश्य हुआ है लेकिन उसे नये आयाम भी प्राप्त हुए हैं। पश्चिम में टेक्नोलॉजी और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने प्रचलित संस्कृति के विरूद्ध एक समानान्तर संस्कृति को जन्म दिया कालांतर में यही संस्कृति उत्तर आधुनिकता की वैचारिक भूमिका बन गयी। उत्तर आधुनिकता बोध ने हर उस चिन्तन और व्यवहार को, जिसे स्वाभाविक सम्पूर्ण, शाश्वत, अन्तिम तथा विश्वव्यापी स्वीकार कर लिया गया था, नकार दिया। "उत्तर आधुनिकतावाद जब कभी दुनिया को देखता भी है,तो विखण्डित और अनियत रूप में।"[3]

समकालीन परिस्थितियों का आंकलन उत्तर आधुनिकता की मुख्य प्रवृत्ति है–"उत्तर आधुनिकतावाद के गहरे संशयवाद और राजनीतिक पराजयवाद ने मिलकर मोहभंग, उदासीनता और निष्क्रियता का ही रास्ता दिखलाता है। आज की पूँजीवादी समाज–व्यवस्था

[1] इन्द्रप्रस्थ भारती (त्रैमासिक) ; जन–मार्च 1991 पृ0 189
[2] कसौटी (आलोचना त्रैमासिक) ; जुलाई–सितम्बर 1999, पृ0 52
[3] वही, पृ0 52

बार–बार राजनीतिक उदासीनता पैदा करती है। गैर–राजनीतिकरण की संस्कृति इजारेदार पूँजीवाद की एक खासियत है।"[1]

उत्तर आधुनिक युग में प्रौद्योगिक प्रक्रियाओं तथा सामाजिक सम्बन्धों में जो महत्वपूर्ण बदलाव आया है जिसे उत्तर आधुनिकता की सोच एवं साहित्य उसे चित्रित करने की कोशिश कर रहा है। आज मीडिया, मासमीडिया, ई–मेल तथा इन्टरनेट मनुष्य की उत्तर आधुनिक सोच के परिणाम हैं मनोरंजन के क्षेत्र में रेडियो, टी. वी., बी.सी. आर., ओडियो कैसेट, सी.डी. प्लेयर आदि के क्षेत्र में काफी विकास कर लिया है अतः यह उत्तर आधुनिक सोच का ही परिणाम है; लेकिन उत्तर आधुनिक धारणा अभी साहित्य का विषय नहीं बन पा रही है। इस सन्दर्भ में **देवेन्द्र इस्सर** का मत है–"सार्वजनिक मीडिया और कम्प्यूटर प्रणाली ने साहित्य, कला संस्कृति को जो चुनौती प्रदान की है उसनें न सिर्फ यथार्थबोध की नयी दुनिया के द्वार खोले, बल्कि सोच एवं संवेदना के संसार को भी विस्तार दिया है।"[2] **डॉ०रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव** ने उत्तर आधुनिकता के सम्बन्ध में अपने विचार निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किये हैः "Past modern-I define past modern as increduality towards metanarratives. The narrative is losing its functions, its great hero, its great dergers, its great voyoges, its great gool." अर्थात् उत्तर आधुनिक– मै उत्तर आधुनिक को कथा परिवर्तन की ओर अविश्वास के साथ परिभाषित करता हूँ; यह अपना महान नायक, अधिक खतनाक, महान जलयात्राऐं तथा अपने लक्ष्य का चरित्र कार्य कर चुकी हैं।"[3]

डॉ० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने लखनऊ विश्वविद्यालय में आयोजित संगोष्ठी में उत्तर आधुनिकता के भविष्य एवं अवैधता के संबन्ध में कहा–"Legitimation results in consesus obtained through discussion as lurgen Hobermas thinks, Past

[1] कसौटी (आलोचना त्रैमासिक) ; जुलाई–सितम्बर 1999, पृ0 60
[2] देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता : साहित्य एवं संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996 (भूमिकासे)
[3] डॉ0 रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव; Excerpts of lecture delivered: National symposiam organises by: The Deptt of Anthropology Lucknow university; 16th –18th march 1990.

modern knowledge it not simply a tool of the authorities, it refines our sensitivity to differences and reinforce our ablity to tolerate the incommensurable. Its principle is not the expert's homology, but the inventors paralogy." अर्थात् वैधीकरण का परिणाम हमारे मष्तिस्क के चेतन में तर्क करने योग्य है। उत्तर आधुनिक ज्ञान साधारणतः यह शक्ति का साधन नहीं है। यह हमारी बुद्धि के अर्न्तद्वन्द्वों को सुधारती है, और हमारी अनियमियतताओं को सहन करने के लिए हमारी योग्यता को सहारा देती है।यह सिद्धान्त एक तरह से दक्ष (निपुण) नहीं है, किन्तु अविष्कारक के न्यायविरूद्ध तर्क है।"[1]

बदलते हुए संदर्भ में उत्तर आधुनिकता को समझने की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है। उत्तर आधुनिकता को लेकर अनेक मत है इसे मूलतः विच्छिन्न स्थिति माना गया है तो दूसरी ओर आधुनिकता का विस्तार भी। यह विवेकशील मत है, आधुनिकता के बिना इसके विस्तार की कल्पना भी नहीं की जा सकती। उत्तर आधुनिकता की कुछ प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए **'अशोक वाजपेयी'** ने लिखा है: "केन्द्र विसरण आदर्शों का अंत, इतिहास का अन्त, विज्ञान पर संशय अथवा विज्ञान की वैज्ञानिकता पर आपत्ति, प्रामाणिकता के स्थान पर आकर्षण संवेष्ठन, आवश्यकता से अतिरिक्त पर बल, क्षण का अमरत्व या अमरत्व की क्षणिकता, उत्सव धार्मिता, रचनात्मकत्व के स्थान पर यथावत यानी 'त्यलक्यल' पर बल और शुद्ध उपयोगितावाद दृष्टिकोण आदि उत्तर आधुनिकतावाद की प्रवृत्तियां हैं।*** उत्तरआधुनिकता ने आदमी को दो नये वर्गों में विभक्त कर दिया है–सूचना सम्पन्न और सूचना विपन्न। उत्तर आधुनिकता नीति से इतर है यानि अमॉरल, वह आदमी को सिर्फ एक

[1] डॉ0 रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव; Excerpts of lecture delivered: National symposiam organises by: The Deptt of Anthropology Lucknow university; 16th –18th march 1990.

संभाव्य उपभोक्ता के रूप में ही परखती है शक्ति के विविध स्रोतों का दोहन उसका लक्ष्य है।"[1]

आधुनिकता में तो केवल इतिहास का विरोध था जिसके सापेक्ष आधुनिकता की अवधारणा खड़ी हुई, लेकिन उत्तर आधुनिकता के आते–आते उसनें इतिहास के अन्त की भी घोषणा कर दी। उत्तर आधुनिकता की एक अन्य प्रवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए 'कैलाश वाजपेयी का विचार है कि:" उत्तर आधुनिकता नैतिक–अनैतिक के चक्करों में न पड़कर सिर्फ उपलब्धि की कायल है, इसीलिए औद्योगिक प्रगति के समानन्तर अपराध उद्योग का भी बोल बाला है, जिसकी गिरफ्त में नेता, अभिनेता, नौकरशाह, व्यापारी, कारीगर और हरकारे भी गये हैं।"[2]

अतः हम निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि उत्तर आधुनिकता कोई एक दिन मे घटी हुई घटना नहीं हैं, वह मनुष्य समाज की चरम सीमा है, जो मानव की प्रगति का ही परिणाम है। उत्तर आधुनिकता के इस दौर में उसने मनुष्य को लगभग पूर्ण रूप से बुद्धि सम्मत बना दिया है लेकिन उसकी चेतना को भी पूरी तरह से झकझोर दिया है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है–"उत्तर आधुनिकता इसी समाजशास्त्रीय हालाझोल का दूसरा नाम है, जिसने व्यक्ति की चेतना को बूरी तरह झकझोर दिया है।"[3]

वैसे यह बात पूर्ण रूप से सत्य है कि उत्तर आधुनिकता पश्चिम से पोषित एक ऐसी अवधारण है, जिसे हमारे यहाँ बड़ी ललक के साथ स्वीकार किया जा रहा है। आधुनिकता की भाँति इसको भी परिभाषा में बांधना कठिन है परन्तु इसके लक्षणों से ही इसे महसूस किया जा रहा है–"उत्तर आधुनिकता में केन्द्रहीनता है जिसके कारण अवस्था उत्पन्न हुई। खंडित मनःस्थितियां है, संस्कृति विहीनता है और सम्बद्धता है अनैतिकता, दायित्वहीनता आदि पूँजीवाद के परिणाम स्वरूप उभरे हैं। उपभोक्तावादी संस्कृति ने मानव की अस्मिता

---

[1] हिन्दुस्तान साप्ताहिक ; 3–9 मई 1992 पृ0 52
[2] वही, पृ0 59
[3] डॉ0 ज्ञानवती अरोरा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम ; प्र0सं0 1994, पृ021

को खो दिया है। उत्तर आधुनिकता युग में हिंसा और आंतक ने मनुष्य की मानसिक शान्ति को तिरस्कृत कर दिया। समाज से आदर्शो, मूल्यो तथा सिद्धान्तों की इति हो गई।"[1] अन्ततः यह कहा जा सकता है कि उत्तर आधुनिकता का आम आदमी से संबन्ध नही है इसीलिये आज बहुत से विद्वान इस अवधारणा को नकार भी रहे हैं। अन्तरराष्ट्रीय ख्याति के इतिहासकार रामशरण शर्मा से जब उत्तर आधुनिकता के बारे में एक इंटरब्यू में पूछा गया तो उन्होंने जबाब दिया' "हम नहीं जानते हैं कि उत्तर आधुनिकता क्या है। आप ही बताइये।"[2] इसी प्रकार जब भारतीय चिन्तन जगत के श्लाका पुरूष रामविलास शर्मा से पूछा गया तो उन्होंने कहा,–"मैं नहीं जानता कि उत्तर आधुनिकता किस चीज का नाम है।"[3]

(ग) आधुनिकता–बोध और उत्तर आधुनिकता–बोध का तुलनात्मक अध्ययन

आधुनिकता एक तार्किक दृष्टि है जो परम्परा एवं मध्यकालीनता से तर्क करके खड़ी हुई।यह मानव समाज की विकासशील दृष्टि है। आधुनिकता कोई खण्ड चेतना नही, वह समग्र एवं पूर्ण होने की चेतना है। इसलिये डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने उसे "प्रक्रिया कहा है और उसके किसी एक दौर पर अँगुली रख यह नहीं कहा जा सकता कि यह आधुनिकता है।"[4] यह अलग बात है कि विद्वानों ने आधुनिकता को कभी धारणा के स्तर पर तो कभी संवेदना के स्तर पर आँकने की कोशिश की जाती रही है।

डॉ0 मदान दूसरी ओर कहते हैं कि 'आधुनिकता एक जीवन बोध है जिसमें प्रश्न चिह्न की निरन्तरता है, मध्यकालीन तथा रोमांटिक बोध दोनों का अस्वीकार है।"[5] यह बात पूर्ण रूप से सत्य है कि आधुनिकता का जीवन बोध के बिना अस्तित्व सम्भव नहीं, बिना समाज और जीवन के आधुनिकता पंगु है। आधुनिकता के इस युग में सबसे अधिक बल बौद्धिकता को मिला अर्थात् यह भी कहा जा सकता है कि आधुनिक युग बौद्धिकता का ही

---

[1] डॉ0 ज्ञानवती अरोरा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम ; प्र0सं0 1994, पृ021
[2] पहल (पत्रिका) ; अप्रैल–जून 1999, अंक 61 पृ0 155
[3] वही, पृ0 155
[4] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 19
[5] वही पृ0 145

परिणाम है। इस काल में मनुष्य अपने ज्ञान–विज्ञान और प्रविधियों के कारण मध्ययुग से अलग हुआ। औद्योगिक विकास एवं नगरीकरण के फलस्वरूप समाज में नवीन आशायें उभरी तथा मनुष्य भविष्य की कामना को लेकर चिन्तित हुआ। आधुनिकता के इस युग में ईश्वर के स्थान पर मनुष्य आ गया। डॉ० अजब सिंह ने कहा–" सांसारिक व्यस्तता में व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व एवं उसकी पहचान खों गयी। इस खोये हुए व्यक्तित्व की खोज की प्रक्रिया को आधुनिकता की संज्ञा से व्यवहृत किया गया।"[1]आधुनिकता की पहचान बताते हुए 'दिनकर जी' का मत है–"औद्योगिकरण आधुनिकता की पहचान है। साक्षरता का सर्वव्यापी प्रसार भी आधुनिकता की सूचना देता है। नगर सभ्यता का प्राधान्य आधुनिकता का गुण है। सीधी–सादी अर्थ–व्यवस्था मध्यकालीनता का लक्षण है। आधुनिक देश वह देश है, जिसकी अर्थ व्यवस्था जटिल और स्वभावतः ही प्रसरणशील हो, जो 'टेक–ऑफ' की स्थिति को पार कर चुकी हो। आधुनिक समाज उन्मुक्त समाज होता है, उन्नति का मार्ग सबके लिए होता है,कुछ खास के लिए नहीं।*** अवकाश की शिकायत हर को हो सकती है।"[2]

आधुनिक ज्ञान विज्ञान ने मनुष्य समाज को काफी हद तक बुद्धिवादी बना दिया जिसका जर्बदस्त हमला हमारी संस्कृति पर हुआ। उसने मनुष्य को नवीन विचारधारा एवं औद्योगिकरण के लिये प्रेरित किया। आधुनिकता अपने समय की जटिल समस्याओं से उत्पन्न होती है। इस सम्बन्ध में 'कमलेश्वर' का मत है:–"आधुनिकता एक ऐसी मानसिक बौद्धिक स्थिति है, जो अपने परिवेश और समाज की गहनतर समस्याओं से उद्भूत होती है और समकालीन जीवन को संस्कार देती है,मुख्य मुख्य मानव मूल्यों में सर्वव्यापी और सार्वजनिक होते हुए भी आधुनिकता का स्वरूप अपनी जातीय विशेषताओं से अलग नहीं होता। जातीय संस्कारों के रहते हुए भी इसमें इतनी उदारता है कि वह विजातीय गुणों को

[1] डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वस्च्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र०सं० 1975, पृ० 8
[2] रामधारी सिंह दिनकर ; आधुनिक बोध ; प्र०सं० 1973, पृ० 10

अपने में समाहित करने की शक्ति रखती है। लेकिन आधुनिकता की इस उदारता का दुरूपयोग या गलत प्रयोग भी हो सकता है।"[1]

आधुनिकता पर संक्षिप्त दृष्टि डालने के पाश्चात् हमें उत्तर आधुनिकता की अवधारणा एवं उसके विमर्श को समझ लेना अति आवश्यक है। वैसे तो हमारे यहाँ अभी आधुनिकता ने ठीक से अपने पैर भी नहीं जमाये थे कि कुछ विद्वानों ने उसकी समाप्ति की घोषणा कर दी। उत्तर आधुनिकता साहित्य में अत्यन्त नवीन अवधारणा है। जो आधुनिकता के विरोध में खड़ी हुई।अपने मूल रूप में उत्तर आधुनिकता पश्चिमी अवधारणा है।इसका प्रवर्तक 'जॉ फ्रांस्वा लियोतार' को माना जाता है। सन् 1979 में 'लियातार' ने कोयवक सरकार के लिए एक "अकादमिक रिपोर्ट"[2] तैयार की जो बाद में पुस्तक के रूप प्रकाशित हुई। आर्नल्ड टोयनबी ने 1920 में 'पोस्ट मार्डन' शब्द का प्रयोग किया था। हमारे यहाँ यह अवधारणा सन् 1975 के आस–पास साहित्य में महसूस की गयी। 'सुधीश पचौरी' के अनुसार," उत्तर आधुनिकता ने जो वर्तमान की समीक्षा प्रस्तुत की वह पश्चिमी ज्ञानोदय के विरूद्ध थी और उसके आधार भूत सूत्रों को प्रश्नांकित करती थी।"[3]

उत्तर आधुनिकता आजकल उर्दू साहित्य में भी खूब धूम मचाये हुए है। उर्दू साहित्य में इसे 'मावादे जदीदियत' के नाम से अभिव्यक्त किया। 'गोपीचन्द नारंग', 'देवेन्द्र इस्सर' व इम्तियाज आदि इसके अग्रणी लेखकों में आते हैं। हिन्दी साहित्य में यह विवाद जोरों पर चल रहा है कि उत्तर आधुनिकता साहित्य का विषय है या नहीं। हिन्दी साहित्य में सुधीश पचौरी, देवेन्द्र इस्सर, अशोक वाजपेयी, कैलाश वाजपेयी आदि उत्तर आधुनिकता पर अपने विचारों को अभिव्यक्ति दे रहें हैं।

---

[1] डॉ0 धनंजय (सम्पा0) कमलेश्वर ; कुछ विचार बिन्दु : समकालीन कहानी: दिशा और दृष्टि ; सं0 1970, पृ0 79
[2] ज्यां फ्रांस्वा लियोतार; दि पोस्ट माडर्न कन्डीशन रिपोर्ट आन नालिज; 1984
[3] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिक साहित्यि विमर्श ; प्र0सं0 1996, पृ0 13,

'मेरी दृष्टि में उत्तर आधुनिकता निरन्तर नये होते चलने की गतिशीलता की चेतना और वृत्ति है। 'जिस प्रकार आधुनिकता एक वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टि है। उसी प्रकार उत्तर आधुनिकता भी आधुनिक युग का तर्क सम्मत प्रत्यय है जो आधुनिकता के विरोध में खड़ी हुई नवीन अवधारणा है। आधुनिकता मध्यकालीन और रोमांटिक दोनों के विरोध में हमारे सामने प्रकट हुई। उसी प्रकार उत्तर आधुनिकता, आधुनिकता के विरोध में प्रकट हुई। मध्यकालीन समाज में ईश्वर था, आधुनिकता के दौर में उसका स्थान मनुष्य ने ले लिया। अब उत्तर आधुनिकता के इस युग में उत्तर आधुनिकता मनुष्य समाज तथा साहित्य को पुर्नमूल्यांकित करने की कोशिश कर रही है, यथार्थ के स्थान पर अतियथार्थ और मानव का स्थान अतिमानव व लघु मानव ने ले लिया है।

उत्तर आधुनिकता वाद के स्रोत के संम्बन्ध में बताते हुए अभय मौर्य ने यह भी कहा है– "The most forceful source form which later modernist and post modernist literacy strands originated has been Russian formalism."[1]

मेरे विचार से 'उत्तर आधुनिकता एक सोच है एक तर्क तथा इतिहास एवं परम्परा से विद्रोह है जो साहित्य संस्कृति कला एवं परम्परा को नये सिरे से जानने परखने तथा उसे नये आयाम देने की कोशिश कर रही है।' इसी तरह का विचार 'देवेन्द्र इस्सर' ने अपने पुस्तक में दिया। इस्सर के मतानुसार "उत्तर आधुनिकता वाद वर्तमान युग की संस्कृति और उसके चिंतन एवं सौन्दर्य शास्त्र को चिह्नित करने वाला एक व्यापक पारिभाषिक शब्द है।"[2]

आधुनिकता की भांति इसके अर्थ भी निरंतर बदल रहे हैं। उत्तर आधुनिकता में भी अंतर्विरोध की कमी नहीं है। वैसे इसके दूरगामी एवं बहुआयामी प्रभावों का अंदाजा इन तत्त्व व तथ्यों से भी लगाया जा सकता है कि जीवन का प्रत्येक पहलू और अभिव्यक्ति इसके दायरे में शामिल है। "उत्तर आधुनिकतावाद को फैशन कहने का मतलब इसे खारिज करना

---

1 **Abhay Mauraya: Excerpts of lecture delivered: National symposium organised by: The Deptt. of Anthropology, Lucknow university 16th –10th march 1990**

2 देवेन्द्र इस्सर ; उत्तर आधुनिकता साहित्य और संस्कृति की नयी सोच ; प्र0सं0 1996, पृ0 29

नहीं है, क्योंकि कम से कम दर्शनशास्त्र या समाजशास्त्र में फैशन कभी एक तुच्छ या आकस्मिक वस्तु नहीं होती है। उत्तर आधुनिकता तो उस मोह भंग को उजागर करती है, जो कि हमारे समय में समाजवाद की अवधारणा की विफलता के बावजूद पैदा हुआ, साथ ही ज्ञानोदय से जगीं उम्मीदों पर पानी फेरने से और नतीजतन व्यवस्था के सामने बुद्धिजीवी के घुटने टेकने से लेकिन यह उससे ज्यादा एक नयी स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया है, उस स्थित के प्रति जो समकालीन पूँजीवाद से पैदा हुई है।"[1] आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकता पर दृष्टिपात करने के बाद अब हमें इसके तुलनात्मक बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक हो गया। ये तुलनात्मक बिन्दु निम्नलिखित है–

1– उत्तर आधुनिकता एक अत्याधुनिक प्रत्यय है। नगरों का विस्तार और नागरिक जीवन चर्या इसके प्रमाण है। यह स्पष्ट है कि आधुनिकता के उदय व विकास के बिना उत्तर आधुनिकता का अस्तित्व में आना असंभव है। इसलिए आधुनिकता को उत्तर आधुनिकता का आधार मान लिया जाए तो समीचीन नहीं होगा।

2– उत्तर आधुनिकता एक तरह से सतत् नये हो जाने की प्रक्रिया है। पुराना पड़ जाना, मृत हो जाना है। मृतावशेषों का छोड़कर उत्तर आधुनिकता निरंतन अपना कलेवर, तकनीकी नये पन के साथ बदलता रहता है।

3– आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता दोनों ही जटिल प्रत्यय है। जिनको शब्दों तथा परिभाषा के दायरे में बाधना कठिन है तथा इसके अस्तित्व को भी खतरा हो सकता है। वैसे उत्तर आधुनिकता और आधुनिकता में कोई खास अन्तर भी नहीं है।अन्तर सिर्फ इतना है कि उत्तर आधुनिकता अतियथार्थवादी है और आधुनिकता से आगे की सोच है।

4– उत्तर आधुनिकता भी उन्हीं बिन्दुओं और तत्वों को उठा रही है जिन्हें आधुकिनता ने उठाया है। अन्तर सिर्फ इतना है कि उत्तर आधुनिकता जहाँ एक ठोस पूँजीवादी व्यवस्था है। वहीं उत्तर आधुनिक मनुष्य कुछ सीमा तक ईश्वर की ओर अग्रसर हुआ

[1] कसौटी (आलोचना त्रैमासिक पत्रिका) ; जुलाई–सितम्बर 1999, पृ0 55

है। क्योंकि आधुनिकता में मनुष्य ने ईश्वर में आस्था एवं विश्वास खो दिया था। वहीं उसने मानव मूल्यों का हनन भी किया, लेकिन उत्तर आधुनिकता उन्हें फिर से जीवित करने की कोशिश कर रही है।

5– उत्तर आधुनिकतावाद,जो उत्तर आधुनिक स्थितियों का सांस्कृतिक तर्क है और अपरिवर्तन संस्कृतियों प्रतिज्ञाओं को समस्या ग्रस्त करता है। "साहित्य के क्षेत्र के लिए एक निर्णायकवाद है, क्योंकि उससे साहित्य और संस्कृति एक बार फिर नये रूप लेते हैं।"[1]

6– जिस प्रकार आधुनिकता सदैव आगे की ओर जाती है उसी प्रकार उत्तर आधुनिकता भी सदैव अपनी स्थिति में गतिशील है। आधुनिकता सदैव 'सिटी लाइफ' की व्याख्या करती है, आधुनिकता की वैचारिकता में यथार्थवाद आ गया। अस्तित्ववाद भी आधुनिकता का ही एक रंग है।

7– 'आचार्य रामचन्द शुक्ल' जिसे लोक मंगल कहते हैं। उसे ही 'राम विलास शर्मा' लोक संस्कृति कहते हैं। और यही लोक संस्कृति उत्तर आधुनिकता है।

8– आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता राष्ट्र के निर्माण में भी सहायक तत्व हैं।

अंततः निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि चिन्तन हमेशा बदलाव की प्रक्रिया में होता है। अतः आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के चिन्तन ने भी समाज में बदलाव की स्थिति पैदा की। अन्तर सिर्फ इतना रहा कि आधुनिकता में ईश्वर के स्थान पर मानव और यथार्थवाद आ गया था वहीं उत्तर आधुनिकतावादी युग में मानव के स्थान के पर अतिमानव व यथार्थ के स्थान पर अतियथार्थ आ गया 'डॉ0 बच्चन सिंह' नें अपनी पुस्तक में लिखा "उत्तर आधुनिकता में कम्प्यूटर युग, दूरसंचार माध्यम, टेक्नोलॉजी के कारण जो नई स्थिति पैदा हुई है' वहीं से उत्तर आधुनिकतावादी चेतना का विकास हुआ है। इसमें तर्क, यथार्थ,

---

[1] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996 (भूमिका से)

इतिहास, रूप सबका नकार है। यह एक अराजकतावादी निहलिस्ट प्रवृत्ति है।"[1]

विश्व के इतिहास में आज ऐसे परिवर्तन हो रहे है कि मनुष्य विस्मित और विभ्रमित रह जाता हैं। आज के इस उत्तर आधुनिकता के दौर में ऐसा महसूस हो रहा है कि हमारा समस्त इतिहास और समाज, हमारा साहित्य और दर्शन, हमारी कला और संस्कृति एवं विश्व दृष्टि हमारे मूल्य, हमारा भीतरी एवं वाह्य परिदृश्य पुरानी सारी संरचनाएं जर्जर हो गई हैं। विचार एवं व्यंजना के नवीन–नवीन वैकल्पिक रूप और माध्यम विकसित हो रहे हैं। यही परिवर्तन ही हमें आधुनिकता से उत्तर आधुनिकता की और चित्रित कर रहे हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि "उत्तर आधुनिकता एक आर्थिक सांस्कृतिक अवस्था है, इसलिए वह 'स्वायत' क्षेत्र ही नहीं बचता जहाँ से कोई गैर उत्तर आधुनिक विमर्श कर सके।"[2]

❋❋❋

---

[1] डॉ0 बच्चन सिंह ; आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द ; द्वितीय सं0 1994, पृ0 28
[2] सुधीश पचौरी ; उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्श ; प्र0सं0 1996 (भूमिका से)

तृतीय अध्याय :

आधुनिकता–बोध के विविध आयाम

(क) मनोवैज्ञानिकता : मनोविश्लेषणवाद

(ख) मार्क्सवादी : समाजवादी यथार्थवादी सन्दर्भ

(ग) अस्तित्ववादी सन्दर्भ

(घ) शैली वैज्ञानिक सन्दर्भ

(ङ) अतिमानववादी : अतिछन्दस सन्दर्भ

तृतीय अध्याय

आधुनिकता–बोध के विविध आयाम

आधुनिक युग में जितने साहित्यिक आन्दोलन हुए हैं, वह सब आधुनिकता के ही अंग हैं। चाहे वह भारतीय नवजागरण हो, स्वच्छन्दतावाद, छायावाद, मार्क्सवाद, मनोविश्लेषणवाद तथा अस्तित्ववाद हो, ये सब आधुनिकता के ही आयाम हैं।

आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि है जो मनुष्य की सोच एवं वृत्ति में वृद्धि एवं परिवर्तन करती है, इसीलिए यह आज भी गतिशील है। आधुनिकता देशकाल बोधक संश्लिष्ट शब्दावली है। वस्तुतः यह मानव प्रगति की सूचक है आज हम आधुनिकता के संदर्भ में जिस युग बोध की बात कर रहे हैं, वह समय की आवाज के साथ–साथ मानव को मानव के रूप में समझने की मांग है। दूसरे वैज्ञानिक दृष्टि से भी मानववाद का ही पक्ष है क्योंकि कोई भी वैज्ञानिक जीवन दृष्टि मानववाद के विरोध में खड़ी नहीं हो सकती आधुनिकता परम्परा का निर्वाह करती है। इसकी मूल चेतना में व्यक्ति केन्द्रित होता है इसीलिए परम्परा गतिशील होती है तथा तर्किक दृष्टि से नित नवीनता की ओर जाने लगती है तब हम उसे आधुनिकता कहते हैं। "आधुनिकता का वास्तविक अर्थ विगत सांस्कृतिक मूल्यों को अपने अन्दर समेट कर मानव की वर्तमान स्थिति और मूल चेतना को स्वीकार करना है आज के संघर्षगामी जीवन की संवेदना कुछ और दूसरे नये ढंग से अनुभव कर रही है।"[1]

यह सत्प्रतिशत सत्य है कि आधुनिकता से हमारी सभ्यता, संस्कृति एंव मानव मूल्यों का काफी ह्रास हुआ ; लेकिन यह भी पूर्णतः सही है कि आधुनिकता ने हमें नवीन विचरणा तथा नये अविष्कारो के प्रति चेतना जागृत की है। "आधुनिकता नये बोध के लिए वैज्ञानिक दृष्टि को भी स्वीकार करके चलती है। यह वैज्ञानिक दृष्टि साहित्य को जिस ओर ले जाने का क्रम उठाती है वह साहित्य की श्रेष्ठ दिशा है आधुनिकता परीक्षण को भी

---

[1] परिशोध (वार्षिक पत्रिका) ; सन् 1981, संयुक्तांक 32–33, पृ0 78

हेय दृष्टि से नहीं देखती है। आज के युग को वैज्ञानिक युगीन दृष्टि की आवश्यकता है और आधुनिकता इसकी पूरक है।'[1]

आधुनिकता तो एक विचार, एक सोच है जो हमें जागरूक बनाती है एक बेहतर दृष्टिकोण है जो नित नयी उमंग हमारे अन्दर विकसित करती है नूतन प्रयोगों, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मैडिकल सांइस तथा तकनीकी की नवीनतम उपलब्धियों से अवगत कराती है और साथ ही हमें जीने के नए तरीके तथा उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है। आधुनिकता के विविध आयामों के अन्तर्गत हम मनोवैज्ञानिकता : मनोविश्लेषणवाद, मार्क्सवादी : समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, शैलीवैज्ञानिक सन्दर्भ तथा अतिमानव: अति छन्दस सन्दर्भ, पर विचार करेगें।

(क) मनोवैज्ञानिकता : मनोविश्लेषणवाद

व्युत्पत्तिपरक दृष्टि से देखने से यह स्पष्ट है कि मनोविज्ञान दो शब्दों के योग से निर्मित हुआ है मन और विज्ञान व्युत्पत्ति के अनुसार मनोविज्ञान का अर्थ मन का विशिष्ट या विधिवत् ज्ञान है। मन शब्द संस्कृत के 'म' धातु से निकला है जिसका अर्थ है 'नापना'। अतः मन ही हमारे सारे ज्ञान एवं अनुभव को मापता है। ग्रीक भाषा में संगृहीत साइकलोजी शब्द का अर्थ तब 'आत्मविज्ञान'[2] था।

मनोविज्ञान जीवन का वह विज्ञान है जिसके द्वारा हम मानव विकास से सम्बद्ध सभी सोपानों का स्पष्ट करना चाहते हैं। मनोविज्ञान आज हमारे सामाने एक स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में है और इसीलिए मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान करने के लिए अनेक प्रकार की पद्धतियों का सहारा लिया जाता है। मनोविज्ञान का क्षेत्र विस्तृत होकर सम्पूर्ण चेतना जगत को अपने अन्दर आत्मसात करने की कौशिश कर रहा है।

मनोविज्ञान को विभिन्न कोशगत अर्थ के आधार पर इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। **'हिन्दी शब्दसागर'** में मनोविज्ञान का अर्थ– "वह शास्त्र जिसमें चित्त की वृत्तियों

---

[1] परिशोध (वार्षिक पत्रिका) ; सन् 1981, संयुक्तांक 32–33, पृ0 79
[2] डॉ0 देवराज और रामानन्द तिवारी ; भारतीय दर्शन शास्त्र का इतिहास ; द्वि0सं0 1950, पृ0 88

का विवेचन किया जाता है वह विज्ञान जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि मनुष्य के चित्त में कौन सी वृत्ति कब क्यों और किस प्रकार उत्पन्न होती है? चित्त की वृत्तियों की मीमांसा करने वाले शास्त्र को मनोविज्ञान कहते है।"[1] अतः मनोविज्ञान मनुष्य की अतृप्त वासनाओं का विज्ञान है जिसे वह कला एवं साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि मनोविज्ञान मन का विज्ञान है, अतः मन सदैव विकल्पात्मक होता है।

मानक हिन्दी कोश के अनुसार मनोविज्ञान का अर्थ–"वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें मनुष्य के मन उसकी विभिन्न अवस्थाओं तथा क्रियाओं पर पड़ने वाले प्रभावों आदि का अध्ययन तथा विवेचन होता है।"[2] हिन्दी विश्व कोश के अन्तर्गत मनोविज्ञान का अर्थ, "मनोविज्ञान अनुभव का विज्ञान है, इसका उद्देश्य चेतनावस्था की प्रक्रिया के तत्त्वों का विश्लेषण, उसके परस्पर सम्बन्धों का स्वरूप तथा उन्हें निर्धारित करने वालों का पता लगाता है।"[3]

अन्ततः मनोविज्ञान के विषय में निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि मनोविज्ञान दर्शन का वह पक्ष है जिसके अन्तर्गत मानवीय चेतना का अध्ययन और मनन किया जाता है जिसका व्यवहारिक लाभ समाज में दृष्टिगोचर होता है।

मनोविज्ञान का अध्ययन पहले दर्शन शास्त्र के अन्तर्गत केवल मन के सन्दर्भ में किया जाता था। क्योंकि मानव मन बहुत ही जटिल केन्द्र है इसके सम्बन्ध में प्राचीन काल से ही मनुष्य दार्शनिक व्याख्यान करता चला आ रहा है। मन कभी स्थिर होता है और अपनी स्थिरता में उसकी विशेषता अभिकल्प कहलाती है, जब वह चंचल होता है तो उसमें विकल्पात्मक क्रियायें चलती दिखाई देती है। श्रीमद् भगवद्गीता में मन अति चंचल, प्रमथन, प्रकृतिवाला, बलवान, दृढ़ एवं वायु के समान गतिशील बतलाया है–

---

[1] श्यामसुन्दर दास (सम्पा0) ; हिन्दी शब्दसागर ; भाग 1, सं0 1965, पृ0 3791
[2] रामचन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; मानक हिन्दी कोश ; चौथा खण्ड ; प्र0सं0 1965, पृ0 293
[3] रामप्रसाद त्रिपाठी (सम्पा0) ; हिन्दी विश्व कोश; नवां खण्ड ; प्र0सं0 1967, पृ0 157

"चंचल हि मनः कृष्णाः प्रमाथि बलवत् दृढ़म्
तस्याह निग्रह मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।"[1]

वेदों में 7000 वर्ष पूर्व अभिकल्पत समाधि की कल्पना की गई है, जिसमें साधक संदेह शंकाओं को अपने-पराये, मित्र-शत्रु, जय-विजय इत्यादि के द्वन्द्वों से मुक्त बताया गया है। वेदों के पश्चात् उपनिषदों में मन का वैज्ञानिक विश्लेषण बहुत ही विशद्ता के साथ मिलता है। इस प्रकार 5 हज़ार से 1000 ई. पूर्व मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के अनेक पहलू दृष्टिगोचर होते है। छान्दोग्य उपनिषद् में मन को ब्रह्मा की संज्ञा दी गयी है।

पाश्चात्य देशों में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के रूप में 5वीं शदी ई. पूर्व से इस सम्बन्ध में चर्चायें मिलती हैं। प्लेटो (427 से 347 ई. पूर्व) ने मन के विचारों को बहुत महत्त्व पूर्ण बताया। प्लेटो के अनुसार "विचार मन के शरीर में रहते थे तथा उनका अलग अस्तित्व समझा जाता था तथा मनुष्य की मृत्यु के बाद विचार शरीर के बहार हो जाते थे।" दूसरे ग्रीक दार्शनिक अरस्तु (384 – 322 ई.पूर्व) जो प्लेटो का शिष्य था। उन्होंने मानस को शरीर का प्रकार्य बताया है। मनुष्य के अनुभवों तथा व्यवहारों को शारीरिक प्रकार्य समझना चाहिए और शरीर पर पड़े हुए वातावरण के द्वारा उत्पन्न प्रभाव ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करने का साधन समझना चाहिए। ज्ञानेन्द्रियाँ इन प्रभावों को ह्रदय तक पहुँचाती हैं और ह्रदय में ही विचार उत्पन्न होते हैं। अरस्तु का यह विचार अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मनोवैज्ञानिक मानवीय क्रियाओं के साथ अटूट सम्बन्ध स्वतः प्रमाणित है। दूसरे शब्दों में अरस्तु ने "मन को चिन्तन मनन करने की शक्ति माना है और उसे आत्मा से परे स्वीकार किया है।"[2]

देकार्ते के अनुसार पशु के व्यवहारों और मनुष्य के व्यवहारों में कुछ मात्रा में यान्त्रिक

[1] श्रीमद् भगवद्गीता ; अध्याय 6/34 ; 32वां संस्करण, संवत् 2050, पृ0 394.
[2] B. Russel; History of western philosophy; P. 192 -193.

समता मिलती है; लेकिन मनुष्य में आत्मा उसके व्यवहार को विशेष रूप से निर्देशित करती है। देकार्ते ने 'मन को प्रकृति से अलग माना और उसका कार्य बौद्धिक क्रिया माना।

देकार्ते ने "अनुभव तथा व्यवहार की व्याख्या ज्ञानेन्द्रियों, स्नायुमण्डल तथा माँसपेशियों आदि के आधार पर की है।"[1] लॉक (1632–1704) ने भी मस्तिष्क को विचारों का स्थान बताया, उसके अनुसार, "विचार अनुभूति द्वारा उत्पन्न होते हैं। पहले संवेदना और अनुचिन्तन की क्रिया होती है तब कुछ विचार उत्तेजक बनते हैं और कुछ सामान्य।"[2]
वर्तमान मनोविज्ञान को वैज्ञानिक रूप प्रदान करने का श्रेय विलियम वुण्ट (1832 –1920) को दिया जाता है। वुण्ट ने चेतना को मनोविज्ञान की विषय वस्तु बताया। उसने चेतना अनुभूतियों का विश्लेषण (संवेदना) प्रतिमूर्ति तथा भावनाओं में किया।

मनोविज्ञान पर सिगमंड फ्रायड (1856 – 1939) के विचारों का महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा फ्रायड मनोवैज्ञानिक चिकित्सक थे। इन्होंने काम–वासना को ही मानव व्यवहार की एक मात्र संचालक शक्ति माना। मानव की समस्त क्रियाओं भावनाओं और विचार श्रृंखलाओं की यही मूल प्रेरक शक्ति है। फ्रायड ने अपने अनुभवों के आधार पर मानसिक रोगों का प्रमुख कारण 'सेक्स' बताया है, और इसका विकास वाल्यकाल से ही माना है। इन्होंने अचेतन (Unconscious) का अन्वेषण किया और उसकी विशेषता पर प्रकाश डाला। व्यक्ति की दमित इच्छाऐं अचेतन में रहती हैं तथा वे स्वप्न तथा अन्य प्रतीकात्मक रूप में प्रकट होती है। फ्रायड के स्वप्न विश्लेषण अचेतन तथा दमन सम्बन्धी विचार आज भी अपना विशेष स्थान रखते हैं। फ्रायड की मुक्ति सहचर्य प्रविधि (Free Association Method) की उपयोगिता स्वतः स्पष्ट है। अचेतन के सम्बन्ध में डॉ0 अजब सिंह का मत है–"अचेतन मानवी प्रकृति की आन्तरिक धारा है, इसलिए अचेतन की शक्ति व्यक्तिगत होते हुए भी वह बाह्यगत और समाजगत होती है।"[3] फ्रायड ने "मन में विचार, अनुभूति और इच्छा के क्रम के

---

[1] डॉ0 कृष्णाकुमार जमुआर ; मनोविज्ञान की रूपरेखा ; प्र0सं0 1973, पृ0 194.
[2] वही पृ0 194.
[3] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 145.

साथ–साथ उसमें अचेतन विचार और अचेतन इच्छाऐं मानी हैं।[1]

फ्रायड का मनोविश्लेषणवाद का सिद्धान्त बहुत प्रसिद्ध है। फ्रायड ने मन के अचेतन अंश को अध्ययन का विषय बनाया। मनोविश्लेषणवाद के अनुसार अचेतन मन में दमित भावों तथा संवेगों को बाहर निकाल देने से रोगी निरोग हो सकता है। इस चिकित्सा प्रणाली का नाम फ्रायड ने मनोविश्लेषण विधि रखा। इस विधि में प्रयुक्त उपायों को मुक्त साहचर्य के नाम से पुकारा गया। मुक्त साहचर्य के द्वारा फ्रायड रोगी के अचेतन मन में व्याप्त दमित भावनाओं को प्रकाश में ले आता था और उसका उपचार हो जाता था। मुक्त साहचर्य द्वारा इन दमित भावों को अचेतन से चेतन में प्रवेश कराकर फ्रायड इन्हें समझ लेता है। फ्रायड के अनुसार, कष्टकर और दुखद स्थितियों को रोगी भूलना चाहता है। भूलने की इस क्रिया को उसने दमन कहा है। जिस प्रक्रिया द्वारा अवांछनीय बातों को चेतन मन में आने से रोका जाता है उसे अवरोध की संज्ञा दी जाती है। फ्रायड यह मानता है कि स्वप्न, विस्मरण, ह्रास, परिहास, कला और धर्म मन की इन्हीं दमित भावनाओं का परिष्कृत रूप है।

फ्रायड मानव मन को स्थूल यन्त्र मानते हैं। उसने मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास में अचेतन प्रक्रियाओं पर अधिक जोर दिया। उसके अनुसार : समस्त मानसिक जीवन अचेतन शक्ति से परिचालित होता है। मनुष्य का अचेतन मन समस्त अतृप्त दमित इच्छाओं और वासनाओं का भण्डार है। मनुष्य की समस्त इच्छाऐं अचेतन में चलीं जाती हैं, और वहां अपने को अभिव्यक्ति करने का अवसर ढूढ़ँ करती हैं। इनका सम्बन्ध इदम से होता है। इदम में व्याप्त विचारों का ज्ञान व्यक्ति को नहीं होता इसका सम्बन्ध व्यक्ति की काम शक्ति से है। यह काम शक्ति मनुष्य की प्रेरक शक्ति है। फ्रायड ने इस काम शक्ति को लिविडो कहा है।

फ्रायड के अनुसार लिविडो शब्द का अर्थ कामुकता अथवा कामेच्छा है। फ्रायड ने

---

[1] Freud, A General Introduction to psycho-Analysis (Hindi edition) 1959, P. 7-8.

इस शब्द का प्रयोग उसके मौलिक अर्थ में करते हुए कहा है कि "लिविडो या राग या कामवृत्ति बिल्कुल क्षुक्षा की तरह हैं।"[1] कामेच्छ ही जीनेच्छ है। व्यक्ति के मन में काम भावना का प्रादुर्भाव जन्म से ही होती है। वह इस भावना की पूर्ति में सुख का अनुभव करता है। यह सुख उसे संयोग व वियोग दोनों अवस्थाओं में प्राप्त होता है। फ्रायड ने "काम के अन्तर्गत उन समस्त व्यवहारों तथा कार्यों की गणना की है। जो सामान्य रूप से प्रेम तथा सुख के द्योतक हैं। फ्रायड व्यक्ति के उन समस्त कार्य कलापों को, जिनसे सुख प्राप्त होता है, कामुक कहता है।"[2] (Freud uses the word 'Sex' in a very general sense. He inclucdes in not only the specifically sexual interests and activities, but the whole love life..........it might almost be said, the whole pleasure life.........of human beings."

मेरे विचार से आधुनिकता की अवधारणा के पीछे भी फ्रायड की लिविडो की धारणा ही कार्य कर रही है, क्योंकि जिस प्रकार लिविडो का अर्थ कामेच्छा या जीनेच्छा है उसी प्रकार आधुनिकता के पीछे कामेच्छा या जीनेच्छा की अवधारणा कार्य कर रही है आधुनिकता की अवधारणा मनुष्य को पूर्णता में देखना है और पूर्णता की ओर जाना अपने भाव, संवेगो, इच्छाओं तथा भावनाओं की तृप्ति है अतः इस दृष्टि से लिविड़ो का सिद्धान्त आधुनिकता को पूर्ण रूप से प्रभावित करता है। लिविडो ही "मानव व्यक्तित्व की प्रेरक शक्ति है।"[3] वस्तुतः "व्यक्तित्व व्यक्ति के रूपों, गुणों, प्रवृत्तियों, सामर्थ्यों, आदि का समन्वित रूप है। वह व्यक्ति और परिवेश की परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया का परिणाम है। वह उसके विशेष लक्षणों का योगमात्र न होकर उसका विशेष संगठन है वह व्यक्ति के व्यवहार का समग्र गुण है। व्यक्तित्व दूसरे पर प्रभाव डालता है।"[4] मानव व्यक्तित्व के तीन तत्त्व हैं – इद, इगो और सुपर इगो ।

---

[1] देवेन्द्र कुमार (अनु0) ; मनोविश्लेषण ; प्र0सं0 जुलाई 1985, पृ0 277.
[2] Heidbeder ; seven psychology's ; Ed.1933, P. 389.
[3] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 147
[4] वही, पृ0 147

इद (Id) –फ्रायड के अनुसार यह मनुष्य की अतृप्त इच्छाओं और दमित अनुभूतियों का भंडार है। इद मनुष्य की प्रेरक शक्ति है। इसका सम्बन्ध अनुवांशिकता से है। यह असंस्कृत विद्रोही मूल प्रवृत्तियों का समुच्चय है। समाज के नियमों का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसका उद्देश्य मानव की प्रकृत कामवासनाओं की तुष्टि करना है ये नैतिक अनैतिक नहीं जानता, यह विवेक रहित अबोध है। इसकी क्रियायें उन्मुख स्वचालित है। डॉ0 अजब सिंह के अनुसार "इद की मूल चेतना इच्छा उत्पन्न करना है, काम भावना को उत्तेजित करना है।'[1]

अहम (Ego)– अहम को इदम् का विकसित रूप माना जाता है। यह बाह्य पर्यावरण से प्रभावित होता है। अहम् चेतन है क्योंकि इसका सम्बन्ध व्यक्ति के वास्तविक जीवन से होता है। अहम् चेतन और अचेतन दोनों में मध्यस्थता का कार्य करता है। क्योंकि फ्रायड पहले इसे चेतना तथा अचेतन मानता था। यह अचेतन मन की अवांछनीय इच्छाओं पर नियन्त्रण रखता है। "चेतन की स्थिति में वह परिवेश के सम्पर्क में रहता है। परिवेश में अहम का सम्पर्क इन्द्रियों के द्वारा होता है और वह परिवेश से प्रभावित होता है, वह मानव के अन्तःमन से भी सम्बद्ध होता है।"[2] फ्रायड का कहना है कि "अहं जगत् में इदं मध्यस्थता करने का, इद द्वारा जगत की मांगो को पूरा करने का पाशविक क्रियाओं द्वारा जगत् तथा इदम की इच्छाओं के अनुकूल करने का प्रयास करता है।"[3]

अहम् व्यक्ति के जन्म के साथ ही विकसित होता रहता है और प्रमुख रूप से व्यक्ति की शिक्षा, नैतिक भावना और आर्दश से जुड़ा रहता है अतः "इदम सुख की खोज में प्रयत्नशील रहता है, अहम व्यक्तित्व का वह भाग है जो बाह्य वास्तविकता से सम्पर्क रखता है यह व्यक्तित्व का केन्द्र है जो इद इच्छाओं और बाह्य जगत् में सम्बन्ध स्थापित करता है। बाह्य वातावरण के फलस्वरूप इदम का अंश अहं के रूप में विकसित होता है।"[4]

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 148.
[2] वही, पृ0 148
[3] Sigmund freud ; The ego and the id ; Ed 1952 ; P.83
[4] डॉ0 अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 148.

अति अहम् (Super ego)–यह मनुष्य को आर्दशमय और नैतिक जीवन बिताने के लिए प्रेरणा देता है। **वर्ड्सवर्थ** के अनुसार, "इदम व्यक्ति को संसारिक सुखों की ओर आकर्षित करता है, यह व्यक्ति की भावना से सम्बन्धित है, परन्तु परम अहम व्यक्ति को आदर्श की ओर उन्मुख करता है।"[1]

("The Id strives blindly for gratification in accordacne with the pleasure principal........' The super ego has precepts and prehibitions ....' " Thou shalt and thou shalt not"............' Which it endeavaurs to enforce upon the Ego)

डॉ० फूलबिहारी शर्मा के अनुसार "परम अहम् का लक्ष्य उन प्रवृत्तियों को नियंत्रित एवं संचालित करना है, जिनकी उन्मुक्त अभिव्यक्ति समाज को खतारा पैदाकर सकती है।"[2] इदम् के मूल में सुख होता है और अहम् के मूल में वास्तविकता या यथार्थ। इसीलिए इदम् और अहम् के संघर्ष में परम अहम् की क्रिया महत्त्वपूर्ण होती है। व्यक्ति की जीवन यात्रा के साथ-साथ इसका विकास भी होता चला जाता है और वह यथार्थोन्मुखी हो जाता है। प्रेम, स्नेह, प्रीति का सम्बन्ध लिविड़ो से है जिसका उद्देश्य व्यक्ति को सुख की अनुभूति करना है। फायड ने जीवन वृत्ति को Eros और मृत्यु वृत्ति को Thantos माना है। जीवन वृत्ति इदं और लिविड़ो से सम्बन्धित है और मृत्युवृत्ति व्यक्ति में ईर्ष्या द्वैष का विकास करती है। जीवनवृत्ति मनुष्य को प्रेम, स्नेह धर्म, कला, साहित्य और संस्कृति से जोड़ती है। लेकिन मृत्युवृत्ति मनुष्य को विनाश की ओर बढ़ाती है।

फ्रायड मन के तीन स्तर मानता है – अचेतन अवचेतन और चेतन। मन का अधिकांश भाग 'अचेतन' है। प्रत्येक व्यक्ति अरूचिकर और कष्टकर प्रसंगो को भूलना चाहता है, क्योंकि इससे अहम् को ठेस लगती है। यही दमन की प्रक्रिया है। दमन के द्वारा ही वे

---

[1] wood worth ; contemporary school of psychology ; Ed 1930, Page 165.
[2] डॉ० फूल बिहारी शर्मा ; समीक्षा और मनोविश्लेषण ; प्र०सं० जून 1985, पृ० 16

सभी स्मृतियाँ अचेतन में चली जाती हैं लेकिन अज्ञात रूप से व्यक्ति इनसे प्रभावित रहता है। "दमित इच्छाऐं सदैव अचेतन में नहीं रहती है बल्कि भेष बदलकर स्वप्नो, मानसिक रोगों, दिन प्रतिदिन की भूलों में व्यक्त होती है।"[1]

'अवचेतन' मन में स्मृतियाँ होती हैं। अवचेतन मन के विचार और स्मृतियाँ आवश्यकतानुसार पुनः स्मरण की जा सकती हैं। अवचेतन के अनुभव चेतन में आने पर ही व्यक्ति को ज्ञान होता है। दूसरे शब्दों में "वह मन जिसके बारे में हम चैतन्य नहीं, किन्तु जो हमारी चेतना में हैं।"[2] 'चेतन' मन व्यक्ति की जागृताव्यस्था है। सचेत होकर किये गये कार्य और व्यवहार का सम्बन्ध चेतन मन से है। चेतना का सम्बन्ध अहम् से है। दार्शनिकों के अनुसार चेतना ही चेतन मन है।

फ्रायड के शिष्यों में अलफ्रेड एडलर प्रमुख सहयोगी हैं। यह फ्रायड के मनोवैज्ञानिक विचारों से पूर्णतः संतुष्ट नहीं थे। बाद में एडलर डॉ0 जानेट (Janet) के 'अपूर्णता के भाव' (Feeling of Inferiority) से बहुत प्रभावित हुए, उन्होंने फ्रायड के विचारों को संकुचित माना और लिविड़ों के अस्तित्व को प्रत्येक अवस्था में अनिवार्य रूप से स्वीकार नहीं किया। अपितु एडलर 'अधिकार भावना' को जीवन की प्रेरक शक्ति के रूप में मानता है।[3]"

एडलर भी दमित भावनाओं को फ्रायड की भाँति अधिक महत्व देता है, किन्तु वह इस बात से पूर्णता सहमत नहीं है कि मनुष्य के अचेतन में दबी हुई सारी की सारी इच्छाएं काममूलक ही हो। एडलर ने "मूल प्रवृत्तियों की अपेक्षा सामाजिक चेतना पर अधिक बल दिया। मानव जीवन में सामाजिक रूचि का विशेष महत्त्व है। इन्होंने चेतन पर बल देते हुए कहा चेतन व्यक्तित्व का आधार बिन्दु एवं केन्द्र है।"[4] जिनके आधार पर वह जीवन को अर्थ प्रदान करता है साथ–साथ उसको दिशा भी दिखलाता है जो नवीन आदर्शों मूल्यों की प्राप्ति के साधनों को निर्मित करता है अतः एडलर के अनुसार व्यक्ति ही प्रमुख है, और

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 150
[2] वही, पृ0 150
[3] डॉ0 फूलविहारी शर्मा ; समीक्षा और मनोविश्लेषण ; प्र0सं0 1985, पृ0 26.
[4] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 151.

इसीलिए उसने अपने सिद्धान्त को "वैयक्तिक मनोविज्ञान" के नाम से उद्‌बोधित किया।वह व्यक्ति के महत्त्व के साथ–साथ अनुवांशिकता तथा पर्यावरण को भी स्वीकार करता था परन्तु व्यक्ति को ही प्रमुख मानता था।"[1] **(Adler strongly emphasizied environmental influences but rejected the idea of an environmentalistic determinism.')** इस प्रकार एडलर व्यक्ति के वाह्य परिवेश के महत्त्व को प्रमुखता देता है। उसका कथन है कि " वाह्य पर्यावरण के कारण व्यक्ति में अनेक परिवर्तनों का समावेश होता है। वाह्य परिस्थितियों का प्रभाव व्यक्ति के आचार–विचार पर पड़ना स्वाभाविक है।"[2]

एडलर के अनुसार व्यक्ति में ऐसी शक्तियाँ हैं, जिनसे वह अपना मनोवैज्ञानिक विकास करता है, प्रत्येक व्यक्ति में एक प्रकार की रचनात्मक शक्ति होती है। इसीलिए एडलर का यह मानना है कि जीव विज्ञान की दृष्टि से अनेक व्यक्ति समान हो सकते हैं लेकिन मनोविज्ञानिक दृष्टि से कोई भी दो व्यक्ति समान नहीं हो सकते।

एडलर व्यक्ति में हीनता ग्रन्थि को प्राथमिकता देता है, ये हीनता की भावना प्रत्येक व्यक्ति में होती है। कुछ व्यक्तियों में शारीरिक हीनता की भानवा दिखाई देती है तो वह इस आभाव की पूर्ति किसी अन्य भाग को विकसित करके कर लेता है जैसे अन्धे व्यक्ति अच्छे गायक हो सकते हैं। दूसरी ओर एडलर मनुष्य की श्रेष्ठ ग्रन्थि को भी मानता है। ये दोनों ग्रन्थियाँ एक दूसरे की पूरक हैं। एडलर व्यक्ति की चेतन तथा अचेतन स्मृतियों का सम्बन्ध व्यक्ति की श्रेष्ठ भावना से मानता है क्योंकि व्यक्तियों का सम्बन्ध ज्ञानेन्द्रियों से होता है।

अतः एडलर की दृष्टि से सामाजिक विकास का बहुत बड़ा महत्त्व है, उसके मतानुसार सामाजिक विकास स्वाभाविक है यदि व्यक्ति के सामाजिक विकास में बहुत सारे बिघ्न आ जाते है तो व्यक्ति कुण्ठित हो जाता है, व्यक्ति का सामाजिक विकास, व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए हितकर है व्यक्ति में प्रगति के भाव का बोध होना अनिवार्य है इसके

---

[1] **Benjamin B. wolman ; contemporary Theories and systenms in psychology , Page 293.**
[2] डॉ० कमला आत्रेय ; आधुनिक मनोविज्ञान और सूरकाव्य ; प्र०सं० अगस्त 1976. पृ० 22

लिए उसे समुचित शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए जिससे वह अपना जीवन लक्ष्य निर्धारित कर सके और अपनी जीवन शैली का विकास समुचित रूप से कर सके। वह कामवृत्ति और मृत्युवृत्ति का प्राथमिकता नहीं देता। वह शिक्षा के समुचित विकास के द्वारा सामाजिक उत्थान को महत्त्वपूर्ण मानता है। पूर्ण रूप से विकसित व्यक्ति ही सम्पूर्ण व्यक्तित्व को निखार सकता है। इसके लिए जीवन लक्ष्य या जीवन शैली अति आवश्यक है इस प्रकार एडलर के 'मनोविज्ञान में आत्मस्थापन की प्रवृत्ति ही प्रमुख है, कामवृत्ति नहीं।'[1] इस प्रकार एडलर के "मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों में भी कहीं न कहीं सामाजिक परिवेश एवं अन्तः मन के संघात से समन्वित व्यक्तित्व ही पूर्ण व्यक्तित्व हो सकता है। इन तत्त्वों के आधार पर यह स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि व्यक्ति का पूरा व्यक्तित्त्व चेतन–अचेतन का समन्वित रूप है।"[2]

युंग – यह भी फ्रायड के सहयोगी थे, लेकिन बाद में सैद्धान्तिक मतभेदों के कारण अलग हो गये। युंग ने 'मन' के स्थान पर 'चित्त' (Tsyche) शब्द का प्रयोग अधिक उपयुक्त माना, क्योंकि मन के अन्तर्गत न केवल चेतना मन का आभास होता है अपितु 'चित्त' शब्द अचेतन मन तथा चेतन मन दोनों का द्योतक है। युंग के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में अपनी जाति धर्म तथा संस्कृति से सम्बन्धित गुण मौजुद होते हैं और ये गुण व्यक्ति को वंश परम्परा से प्राप्त होते हैं। इन जातिगत तथा सांस्कृतिक गुणों का मूल बिम्ब (Archetype) अचेतन मन की स्मृतियों में निहित होता है।

फ्रायड ने जीवन की प्रेरक शक्ति 'काम' को माना है किन्तु युंग इसके घोर विरोधी थे। उन्होंने फ्रायड के लिविड़ों का अर्थ विस्तृत रूप में लिया जिसमें फ्रायड की 'कामवासना' तथा एडलर की 'आत्मस्थापन' दोनों शामिल हैं। युंग के अनुसार "वह उसे जीवन की प्रारम्भिक और सामान्य प्रेरक शक्ति मानते हैं जो मानव के सभी व्यवहारों में व्यक्त होती है। यह शक्ति 'जीवन शक्ति' या 'मनःशक्ति' कही जा सकती है। यह वह मूल शक्ति है जो

[1] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग 1, तृतीय सं0 1985, पृ0 476
[2] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 152.

विकास क्रिया और जनन तीनों लक्ष्यों में अपने को व्यक्त करती है।"[1] युंग ने फ्रायड के अचेतन मन का विस्तार किया, परन्तु युंग ने अचेतन मन के दो भाग माने–

(i) 'वैयक्तिक अचेतन'

(ii) 'सामूहिक अचेतन'।

वैयक्तिक अचेतन में मनुष्य स्वार्थी, क्रूर तथा वासना की इच्छा करता है, उसके मूल में दमित वासनाओं का अपार भण्डार होता है। सामूहिक अचेतन में मनुष्य की दृष्टि सौन्दर्य पर टीकी होती है अर्थात् वह अति अहम् (Super Ego) की ओर प्रवृत होता है तथा गुणों से सम्पन्न होता है। अतः युंग "अचेतन के द्वारा वैयक्तिकता और समाजिकता दोनों तत्त्वों की उपस्थिति मानव व्यक्तित्त्व में स्वीकार करता है।"[2] युंग अपने सैद्धांतिक विश्लेषण के क्रम में स्वप्न तथा प्रतीक की व्याख्या करते समय स्वप्न विश्लेषण एवं सामुहिक अचेतन के रूप में सामाजिक चेतना के घटकों की प्रवृत्तियाँ–**आद्यबिम्ब, प्रतीक, मिथक** एवं फेंटेसी आदि को भी व्याख्यित करते हैं। ये सभी मानव की वृत्तियाँ हैं लेकिन यह सभी घटक सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन मूल्यों को अपने तरीके से प्रस्तुत करते हैं। "आद्यबिम्ब अचेतन मस्तिष्क की उपज है।"[3] ये चेतन मस्तिष्क में स्वप्न एवं फैन्टेसी के माध्यम से उपस्थित होते हैं।

फैन्टेसी मानव मन की काल्पनिक अवस्था है किन्तु यह आत्मिक एवं कामभावना प्रसूत होती है। युंग ने फैन्टेसी को दो भागों में विभाजित किया :–

(i) निष्क्रिय फैन्टेसी (Passive Phantasy)

(ii) सक्रिय फैन्टेसी (Active Phantasy)

फैन्टेसी के सम्बन्ध में मुक्तिबोध ने यह भी स्वीकारा है कि "फैन्टेसी संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदनायें मिली रहती है।"[4]

---

[1] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग 1, तृतीय सं0 1985, पृ0 476.
[2] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 152.
[3] वही, पृ0 153.
[4] मुक्तिबोध ; एक साहित्यिक की डायरी ; तृतीय सं0, 1969, पृ0 19,

युंग ने व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक आधार पर दो भेद किये हैं–एक अन्तर्मुखी (Introvert) दूसरे बहिर्मुखी (Extrovert)। अन्तर्मुखी व्यक्तित्त्व वाले व्यक्ति आदर्शवादी होते हैं वे प्रायः बाह्य जगत की संघर्षात्मक परिस्थितियों से दूर रहते हैं, उनकी रूचि आत्मकेन्द्रित होती है। वे भाव जगत में तल्लीन रहते हैं, इसलिए एकान्तप्रिय अधिक होते हैं। संवेगात्मक दृष्टिकोण से वह अपने संवेगों को व्यक्त नहीं कर पाते।

बहिर्मुखी व्यक्ति व्यवहार कुशल होते हैं, वे अपनी समस्याओं का समाधान वाह्य जगत में अपने कार्यो द्वारा करते हैं, उनकी रूचि अपने आप में नहीं वरन् वाह्य जगत में अधिक हैं, वे अपने संवेगों को दबाते नहीं वरन् स्वतन्त्रता पूर्वक व्यक्त करते हैं। इस प्रकार युंग का मनोवैज्ञानिक सिद्धांत मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त विस्तृत एवं गहन है।

मनोविज्ञान की खोज साहित्य जगत में विस्फोटक सिद्ध हुई, क्योंकि समीक्षा के क्षेत्र में तो इसकी उपलब्धियों ने क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया। साहित्य का आधार अनुभूतिपरक अनुभव और ज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य में की प्रतिक्रियाओं का अनुलेखन है। व्यक्ति के मन पर पड़ने वाले प्रभावों भावात्मक और रचनात्मक सृष्टि के रूप में व्यक्त होते हैं व्यक्ति अपने मानसिक व्यापार, प्रेम, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, करूणा जैसे भावों को बोधात्मक रूप में अभिव्यक्त करता है। 20वीं शताब्दी में मनोविज्ञान का आलोक और साहित्य के लिए उसकी "अन्तः प्रेरणा–साम्यवाद, समाजवाद, पूँजीवाद की प्रतिक्रिया है। इसी पूँजीवाद के साथ–साथ बढ़ती हुई विलासिता के फलस्वरूप शारीरिक गुह्य रोगों एवं मानसिक विकारों की चतुर्दिक व्यापक वृद्धि हुई है।"[1] जब इन मानसिक विकारों की अभिव्यक्ति कवि या साहित्यकार द्वारा होती है तो उसका रूप कलात्मक हो जाता है। इस संसार में नानारूपात्मक सृष्टि की अनेक दृष्टि होती हैं, उनका सुखद और दुःखद प्रभाव कवि को जितना अधिक प्रेरणा देता है, उतना सामान्य को नहीं। साहित्यकार अपने मनोराज्य के अनुसार जो सृष्टि करता है उसका कलात्मक वैभव पूरक हो सकता है, इसीलिए साहित्यकार पूर्व रचित विश्व की अनेक त्रुटि

[1] डॉ0 गणेशदत्त गौड़ ; आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन ; सं0 1965, पृ. 51

को प्रकाश में लाता है और अपनी सृष्टि में वह संशोधन की प्रक्रिया अपनाते हुए उसे 'सत्यम शिवम् सुन्दरम्' का रूप प्रदान करता है।

भारतीय कला और प्रवृत्ति सर्वत्र समन्वयात्मक है भक्ति के ज्ञान, कर्म, उपासना और साहित्य के सत्य, शिव, सुन्दर में एक दूसरे के पूरक हैं। डॉ० गुलाब राय के अनुसार–"सत्यं, शिवं, सुन्दरं का सम्बन्ध क्रमशः ज्ञान, भावना और संकल्प नाम की मनोवृत्तियों तथा ज्ञान मार्ग, भक्ति मार्ग और कर्म मार्ग से है, सत्यं, शिवं, सुन्दर, विज्ञान और धर्म काव्य का परिचायक सूत्र भी है।"[1] इसी आधार पर मनोविज्ञान का साहित्य के साथ अटूट सम्बन्ध सिद्ध होता है। तो दूसरी तरफ "मनोविज्ञान विधायक विज्ञान है नियामक विज्ञान इसका सार भूत अंग है। इसमें तर्क, नीति और सौन्दर्यशास्त्र आते हैं, जिसका सम्बन्ध क्रम से सत्यं, शिवं, सुन्दर जीवन के आदर्शों या प्रतिमानों से हैं। मनोविज्ञान साहित्य की भाँति इन तर्क, नीति, सौन्दर्य जीवन के तीनों आदर्शों को आत्मसात् किये हुए है।"[2]

साहित्य जगत् और यथार्थ जगत् दो प्रकार की सृष्टियाँ हैं। साहित्य जगत् में साहित्यकार को जैसा रूचिकर प्रतीत होता है। वह उसी रूप में इस सृष्टि को ढालने का प्रयत्न करता है। इसका अर्थ है कि साहित्य नितान्तकल्पना प्रधान जगत् नहीं है, उसमें मनोवैज्ञानिक यथार्थ की व्याख्या पाई जाती है। आधुनिक साहित्य में यह विशेषता और भी मुख्य स्वर बन गई है। आज साहित्य में कुरूपतम् यथार्थ को भी प्रस्तुत किया जा रहा है, विशेषकर उपन्यास और कहानी साहित्य में यह प्रवृत्ति प्रमुख है। काव्य में जीवन की व्याख्या अथवा समालोचना उतनी कठोर यथार्थ की अभिव्यक्ति नहीं करती जितना की उपन्यास, कहानी और नाटक साहित्य में। आधुनिक साहित्य का मूल भाव कुण्ठाभाव बन गया है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति में दमित इच्छाऐं दिखाई देती है। एक दूसरे के प्रति आस्था के स्थान पर

---

[1] डॉ० गुलाब राय ; सिद्धान्त और अध्ययन ; प्र०सं० संवत् 1917, पृ० 95.
[2] डॉ० गणेशदत्त गौड़ ; आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन ; सं० 1965, पृ० 55

अनास्था और निष्ठा के स्थान पर विश्वासघात, दया–करूणा के स्थान पर स्वार्थ आत्म केन्द्रित रूप ही परिलक्षित होते हैं।

आधुनिक ज्ञान विज्ञान ने मनुष्य को इतना तर्क सम्मत बना दिया। डॉ0 श्यामसुन्दर दास का कहना है–"मनोविज्ञान में बुद्धि को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है। मानसिक कार्यों में इसकी प्रधानता रहती है। हमारे यहाँ इसे अन्तःकरण की निश्चयात्मिका वृत्ति माना है। इसे हम मन की चेतन शक्ति भी कह सकते हैं। जब हमारा मन बुद्धि द्वारा किसी ज्ञान को प्राप्त कर लेता है। तब उसके सम्बन्ध में अनेक प्रकार के भाव हमारे मन में अभिव्यक्त होते हैं।"[1]

"जीवन में समरसता लाने का प्रयत्न ही मानव जीवन का शाश्वत कर्तव्य है यह अन्विति अनजाने अवचेतन या अचेतन अवस्था में होती रहती है–प्रायः दूसरों के प्रभाववश और इस प्रभाव का प्रमुख स्थान है– कला और साहित्य।"[2]

20वीं शदी के दो विश्वयुद्धों ने मनुष्य को नर कंकाल के रूप में संरक्षण आतंकवाद के रूप में और रचनात्मक कार्यों को हिंसात्मक गति विधियों में भटक गया है। आज मानव जीवन त्रस्त और त्राही–त्राही की दशा में हैं यह मनोवैज्ञानिक यथार्थ देश प्रेम अथवा राष्ट्रीयता को हिंसक प्रवृत्ति प्रधान शासन की भूख के रूप में परिवर्तित करने का ही प्रयास है। अन्तर्राष्ट्रिय प्रेम रखने वाले अमेरिका ने मनुष्य को एक खुंखार पशु के रूप में सैनिक बना दिया। ये कैसा राष्ट्र प्रेम और अन्तर्राष्ट्रिय प्रेम है। जहाँ मानवता रक्तरंजित दिखाई दे रही है।

विश्वयुद्ध ने मानव का मानव के प्रति अविश्वास पैदा कर दिया उसके सामने अस्तित्व का प्रश्न भयानक रूप से आतंकित करने लगा। लाखों व्यक्तियों की हिंसा होने के बाद अस्तित्ववादी दर्शन की प्रासंगिकता सिद्ध हुई। ज्यॉपालसार्त्र का अस्तित्ववादी दर्शन इसी मनोवैज्ञानिक यथार्थ को प्रस्तुत करता है।

[1] डॉ0 श्यामसुन्दर दास ; साहित्यलोचन ; आठवां सं0 संवत् 2005, पृ0 252–253.
[2] डॉ0 नगेन्द्र ; विचार और अनुभूति ; द्वितीय सं0, पृ0 89.

इधर अपने देश में स्वतन्त्रता के पश्चात् मोह भंग की विभीषिका ने नवयुवकों को शासंकित कर दिया। देश में भाई–भतीजावाद सत्ता का मोह और स्वार्थ प्रवृत्ति, भ्रष्टाचार का अनुचित लाभ उठाने और शोषण प्रवृत्ति को बल मिला। साहित्यकार इन मनोवैज्ञानिक सत्ता के प्रति विद्रोह की भावना, नवीन कुरूध पीढ़ी का आक्रोश और हिन्सा की घटनाओं का चित्रण आरम्भ कर दिया। इस मनोवैज्ञानिक कटु यथार्थ ने मानव आस्था की नीवों को हिला दिया। ये अभिव्यक्ति कविता की अपेक्षा कथात्मक साहित्य में प्रमुख स्वर बन गई। जिसकी अनुगूंज स्वातन्त्रोत्तर साहित्य में दूर तक सुनाई देती है।

प्रतिपाद्य रूप से मनोविज्ञान को केवल इसलिए प्रश्रय मिला है कि 20वीं शदी के मध्य दुनिया भर में मानवजाति की सभ्यता संस्कृति और परिस्थितियों को नवीन मोड़ मिला। अतः मनोविज्ञान के उत्तरोत्तर विकास ने मानव जीवन अत्यन्त प्रभावित किया।

(ख) मार्क्सवादी : समाजवादी यथार्थवादी सन्दर्भ

मार्क्सवाद आधुनिक काल में एक महत्त्वपूर्ण खोज है जिसके प्रवर्तन का श्रेय महान चिंतक **कार्लमार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स** को है। वैसे तो मार्क्सवाद का जन्म एक खास परिवेश में हुआ जिसे आधुनिकता का परिवेश कहा जा सकता है। मार्क्सवाद मुख्यतः मनुष्य को अपने दर्शन को विषय मानता है, इसीलिए मार्क्सवादी दर्शन के अनुसार जीवन सतत् गतिशील और परिवर्तनशील है। **डॉ0 अजब सिंह** के अनुसार," मार्क्सवाद मानव को अपने दर्शन का लक्ष्य मानता है। वस्तुतः मानव और उसका विकास मार्क्सवाद की मूल चेतना है। मार्क्सवाद चूंकि मानव और उसके विकास से सम्बन्धित विचार धारा है तो इसका सम्बन्ध मानवीय अनुभूतियों से होने के कारण स्वच्छन्दतावादी चेतना से भी जुड़ता है, क्योंकि स्वच्छन्दतावाद का केन्द्रीय बिन्दु मानवीय जीवन है।"[1] **जयप्रकाश नारायण** मार्क्सवाद के सन्दर्भ में कहते हैं–"मार्क्सवाद समाज का एक विज्ञान है और सामाजिक परिवर्तन की एक पद्धति है, जिसमें सामाजिक क्रान्ति शामिल है।"[2] मार्क्सवाद एक सामाजिक दर्शन है जो

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 75.
[2] जयप्रकाश नारायण ; समाजवाद : सर्वोदय और लोकतंत्र ; प्र0सं0 अक्टूबर 1973, पृ0 48.

व्यवहारिक जीवन को आधार बना कर चलता है। इसीलिए यह हमें मानवीय जीवन, संस्कृति एवं समाज को समझने की नवीन दृष्टि प्रदान करता है। यह सतत् विकास मान विचारधारा एवं वैज्ञानिक दृष्टि है जो व्यक्तिकतावादी दृष्टि का विरोध करता है।

मार्क्सवाद शोषण मुक्त समाज को अपने दर्शन का लक्ष्य मानता है। मार्क्स और ऐंगेल्स ने सर्वहारा आन्दोलन का लक्ष्य निर्धारित करते हुए कहते हैं कि पूँजीपति वर्ग का तख्ता पलटना और उसके स्थान पर सर्वहारा समाज का शासन करते हुए वर्ग संघर्ष पर आधारित पुराने पूँजीपति समाज का उन्मुलन तथा वर्ग विहीन समाज की स्थापना ही मार्क्सवादी आन्दोलन का लक्ष्य है। मार्क्स और ऐंगेल्स ने संसार, समाज और जीवन के प्रति एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण हमारे सामने रखा जिसका लक्ष्य समाज के किसी अंग विशेष का सुधार करना नहीं वरन् मनुष्य के सम्पूर्ण सामाजिक अस्तित्व को ही एक नवीन आयाम देना है।"[1] डॉ० रामविलास शर्मा का मत है–"मानव समाज का विकास एक अन्तर्विरोध का विकास है, शोषक वर्ग के लिए जो प्रगति है, वह शोषित वर्ग के लिए दुर्गति है। संस्कृति का सबसे मूल्यवान तत्व वे हैं जो शोषक वर्ग के हितों का विरोध करतें हैं और शोषित के हितों की रक्षा में सहायक होते हैं।"[2]

मार्क्सवाद का आधार मुख्यता निम्न सिद्धान्तों पर आधारित है–

(i) द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद।

(iii) इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या।

(iv) वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त।

(v) अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त या पूँजीवाद।

मार्क्सवाद के दार्शनिक दृष्टिकोण को द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद भी कहा जाता है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद वह दर्शन है जिसके अनुसार "सृष्टि का मूल सत्य पदार्थ है, किन्तु जो निरन्तर परिवर्तन अवस्था में होने के नाते द्वन्दात्मक प्रणाली से ही जाना जा सकता

[1] डॉ० वीरेन्द्र कुमार ; हिन्दी उपन्यासों में मार्क्सवादी चेतना ; प्र०सं० 1994, पृ01.
[2] डॉ० रामविलास शर्मा ; मार्क्स और पिछड़े हुए समाज ; प्र०सं० 1986, पृ0 43.

है।"[1] मार्क्स के अनुसार विचार नहीं बल्कि भौतिक पदार्थ ही इस जगत का आधार है भौतिक जगत में बदलाव होता रहता है। इसीलिए "द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद हर एक परिवर्तन को द्वन्द्वात्मक दृष्टि से देखता है। द्वन्द्वात्मकता में संघर्ष अनिवार्य है और संघर्ष केवल दो मूल विरोधी शक्तियों में होता है। इसी नाते द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के अनुसार सृष्टि का मूल सत्य परिवर्तन है जो सदैव विरोधी शक्तियों में होता रहता है।"[2] इस सन्दर्भ में राहुल सांकृत्यायन का मत है कि 'विरोधी जब मिलेंगे तो संघर्ष जरूर होगा और संघर्ष नये स्वरूप, नई गति, नई परिस्थिति अर्थात् विकास को जरूर पैदा करेगा।'

मार्क्स ने सामाजिक परिवर्तन के लिए साधन के रूप में मुख्य रूप से व्यक्तियों की सूझ–बूझ, इच्छा और निर्णय शक्ति पर बल दिया। उनके विचार से सामाजिक परिवर्तन तभी होता है। जबकि ऐसे परिवर्तन के लिए वस्तुनिष्ट परिस्थितियाँ परिपक्व रूप में विद्यमान हो। आधुनिक युग में द्वन्द्वावाद को विकसित करने का श्रेय प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक हीगेल को दिया जाता है। और इसी प्रकार भौतिकवाद को यूरोप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय फ्योरबाख को है। हीगेल का द्वन्द्ववाद शीर्षासन कर रहा था, जबकि मार्क्स ने उसे सीधा खड़ा कर दिया। मार्क्स ने फ्योरवाख के भौतिकवाद से आदर्शवाद, धार्मिक और नैतिक आवरण को दूर कर उसके सार तत्त्व को ग्रहण कर उसे वैज्ञानिक ; दार्शनिक सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठित किया। अतः "मार्क्स संसार को बदलने की बात कहते हैं, मानव जीवन को परिवर्तित करने की बात कहते हैं। वह आत्मा को भौतिक जीवन के सम्बन्धों से मुक्त करके परमात्मा में लीन होने को नहीं कहते, वह भौतिक जगत में ही वर्तमान मानव जीवन को परिवर्तित करने की बात कहते हैं।"[3]

मार्क्सवाद भौतिक सत्ता को स्वीकार करता है परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मार्क्सवाद व्यक्ति को महत्त्व नहीं देता। "मार्क्सवाद मानव को अपने दर्शन का केन्द्र मानता

---

[1] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग–1. तृतीय सं0 1985, पृ0 498.
[2] वही, पृ0 498.
[3] डॉ0 रामविलास शर्मा ; मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य ; प्र0सं0 1984, पृ0 136.

है। कारण यह है कि जहाँ यह दावा करता है कि भौतिक शक्तियाँ आदमी को बदल सकती है वहाँ पर यह भी अत्यन्त स्पष्टता से घोषित करता है कि यह मानव ही है जो भौतिक शक्तियों को बदलता है और ऐसा करने के दौरान अपनी भी काया पलट करता है।"[1]

मार्क्सवाद पूँजीवाद का कट्टर विरोध है तथा सर्वहारा वर्ग का सच्चा हितैषी। मार्क्सवाद ने सर्वहारा को संगठित कर उसके ऊपर होने वाले अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाई। दूसरे शब्दों में शोषित पीड़ित और श्रमहारा वर्ग, रक्त, क्रान्ति का आवह्यन करता हुआ शोषकों के विरोध में हथियार उठायें। श्रमहारा समाज को पूँजीपतियों का इसलिये शिकार होना पड़ता है क्योंकि उसके पास शासन के सभी महत्वपूर्ण अंग है जिसका अधिकार वह अनुचित लाभ से जताता है। "नवमार्क्सवादियों के लिए यह मार्क्सवाद से असंगत नहीं है। मार्क्स ने न केवल सार्वभौतिक व्यक्ति की ही नहीं बल्कि पूर्ण मानव की बात कहीं।उसका पूर्णमानव कोई विशेष व्यक्ति नहीं और न ही उनका व्यक्ति श्रम विभाजन द्वारा पंगु बनाया हुआ है तथा ऐसे व्यक्ति ने विकास की क्षमताओं के संदर्भ में अपनी पहचान नहीं खोई।"[2]

पूँजीवाद सांमन्तवाद के प्रति प्रतिक्रिया के फलस्वरूप खड़ा हुआ। अतएव प्रत्येक सामन्तवादी देश में स्वामियों तथा अर्द्धगुलाम किसानों के बीच में संघर्ष चलता रहा। कभी यह संघर्ष व्यक्तिगत होता था तो कभी यह अर्द्धगुलाम किसानों का एक दल अपने स्वामी के विरोध में संघर्ष करता। इस प्रकार 16वीं शताब्दी से ही नया वर्ग जन्म लेने लगा था–**औद्योगिक पूँजीपति वर्ग** और उसके साथ–साथ उसकी 'छाया' भी थी –**औद्योगिक मजदूर वर्ग**। इसके साथ ही गाँव–देहातों में भी पुराने सामान्ती बन्धन टूटने लगे थे। इस तरह पूँजीपति वर्ग सशस्त्र क्रान्ति के द्वारा पुराने सामन्ती शासकों से सत्ता छीन ली। अब समाज पर पूँजीपतियों का अधिकार हो गया। पूँजीवादी समाज ने किसान मजदूरों का

[1] रैल्फ फाल्स ; उपन्यास और लोक जीवन ; तृतीय सं0 दिसम्बर 1980, पृ0 23.
[2] डॉ0 मदन गोपाल गाँधी ; गाँधी और मार्क्स ; प्र0सं0 1982, पृ0 126.

शोषण करना प्रारम्भ कर दिया। मार्क्सवाद जिस समाजवाद की कल्पना करता है, उसकी स्थापना के लिए संघर्ष और क्रान्ति का तात्पर्य ऐसे परिवर्तन से है। जिससे समाज में उथल–पुथल हो जाती है। सामाजिक संघठन बदल जाता है तथा मौलिक नवनिर्माण होता है।

मार्क्सवाद सदैव शोषित एवं पीड़ित वर्ग की वकालत करता है वह हमेशा शोषित समाज के अधिकारों की रक्षा करता है। उन्हें इस व्यवस्था के प्रति संघर्ष के लिए प्रेरित करता है। यही मार्क्सवाद का मूल उत्स है। "मार्क्स 'ऐगेल्स' का सिद्धान्त इस अर्थ में नैतिक और मानवतावादी है कि उसका सारा प्रयत्न और दर्शन सर्वहारा की राजनैतिक सामाजिक मुक्ति के लिए ही है और शोषितों की मुक्ति से अधिक नैतिक कार्य और क्या हो सकता है।"[1] मार्क्सवादी समीक्षा में जीवन तथा समाज के यथार्थ जीवन दर्शन, मूल्य, मानवता आदि को आलोचना का आधार बनाया जाता है। इसीलिए "मार्क्सवाद की प्रचलित जनतन्त्रों में भी प्रासंगिकता अमूल–चूल परिवर्तन की दृष्टि से बनी रहेंगी इसके अतिरिक्त मार्क्सवाद ज्ञान समुच्चय या ज्ञानानुशासन की दृष्टि से प्रासंगिक रहेगा, क्योंकि यह बुद्धि और विज्ञान के आधार पर एक ऐसा विश्व–बोध प्रस्तुत करता है, जो विश्वास या अध्यात्मवाद के सहारे खड़े किये, धर्म दर्शनों और पौराणिक मनोवृत्तियों के विपरीत ब्रह्माण्ड और प्रकृति की विवेक संगत व्याख्या करता है।"[2]

श्रमहारा समाज की सफलता के पश्चात् 20वीं शदी के तीसरे दशक में मार्क्सवादी धारा धीरे–धीरे स्पष्ट गोचर होनें लगीं। मार्क्स का यह विचार भारत के सम्बन्ध में साम्राज्य विरोधी संघर्ष द्वारा ही सर्वहारा क्रान्ति के आधार पर इसकी स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है। सन् 1864 में मार्क्स ने अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संघ की स्थापना की। उन्होंने इस प्रकार जन आन्दोलन को जन्म देते हुए ; वैज्ञानिक समाजवाद का परिष्कृत रूप प्रतिष्ठित किया, उसी की प्रेरणा के फलस्वरूप सन् 1970 में रूस की सफल क्रान्ति के पश्चात् समस्त विश्व में

---

[1] पहल (त्रैमासिक पत्रिका) ; अप्रैल–जून 2000 अंक 64–65, पृ0 33.
[2] वही. पृ0 34.

मार्क्सवाद का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होने लगा। रूस की अभूतपूर्व नयी सामाजिक व्यवस्था के रूप में विश्व के सर्वहारा वर्ग का स्वप्न साकार हुआ, लेनिन उसके जननायक के रूप में आदर्श नेता स्थापित हुआ, लेनिन की मृत्यु के पश्चात् स्टालिन ने (1879–1953) साम्यवादी रूस का नेतृत्व किया। चीने में माउत्सेतुंग ने साम्यवाद क्रान्ति का आव्हान किया और 1949 में उसी के फलस्वरूप जनवादी सरकार स्थापित हुई।

हिन्दी साहित्य में मार्क्सवादी चेतना का वास्तविक स्वरूप नवविकसित साहित्यिक मान्यताओं के सन्दर्भ में ही देखा जा सकता है।हिन्दी काव्य में मार्क्सवादी चेतना का विकास राजनीति के द्वारा शुरू हुआ या यह भी कहा जा सकता है कि हिन्दी काव्य में मार्क्सवादी चेतना का उदय सन् 1918 के बाद माना जाता है। "मार्क्स ने इस बात पर बल दिया था कि कला और साहित्य वर्गों के बीच विचारात्मक संघर्ष में महत्वपूर्ण अस्त्र है। यह शासकों की शक्ति को मजबूत बना सकता है और उसकी जड़ें भी खोद सकते हैं। इसके विपरीत श्रमजीवी जन साधारण की शिक्षा और उसकी चेतना के विकास में योग भी दे सकते हैं।"[1]

मार्क्सवाद का ऐतिहासिक पक्ष मानव इतिहास के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण रखता है। जिसे ऐतिहासिक भौतिकवाद की संज्ञा दी जाती है। यह मानव समाज तथा मानव इतिहास के विकास क्रम तक ही सीमित है, इसके द्वारा यह सिद्ध किया जाता है कि सम्पूर्ण मानव इतिहास असम्बद्ध तथा आकस्मिक घटनाओं का समूह मात्र नहीं है। वरन् उसके पीछे विकास क्रम की एक धारा विद्यमान हैं। मार्क्सवाद का आर्थिक पक्ष वर्तमान पूँजीवाद सामाजिक व्यवस्था के विकास का रहस्योंद्घाटन करता है। वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था शोषण पर आधारित है। पूँजीपति किस प्रकार मजदूरों का शोषण कर रहें हैं ? मार्क्सवाद इसी खाई को पाटना चाहता है। "आधुनिक पूँजीवाद सामन्ती समाज के ध्वंस से पैदा हुआ उसने समाज के वर्ग विरोध को खत्म नहीं किया है उसने पुराने वर्गों के स्थान पर नये वर्ग,

---

[1] डॉ0 कुँवरपाल सिंह ; साहित्य समीक्षा और मार्क्सवाद ; सं0 1992, पृ0 x–xi (भूमिका से)

पीडन के पुराने तरीकों के स्थान पर नये तरीके और संघर्ष के पुराने स्वरूपों की जगह नये स्वरूप खड़े किये हैं।"[1]

"डॉ0 जनेश्वर वर्मा ; ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी काव्य के मार्क्सवादी चेतना' में लिखा है "मार्क्सवाद में जिस नवीन जीवन दर्शन का अविर्भाव हुआ उसका मूलाधार केवल राजनीतिक एवं आर्थिक ही नहीं है ; बल्कि उसका दार्शनिक पक्ष भी है। "मार्क्सवादी दर्शन वह जीवन सूत्र है जो समाज के ऐतिहासिक राजनीतिक और आर्थिक से लेकर सांस्कृतिक और साहित्यिक पक्षों तक में एक ऐसी एक सूत्रता स्थापित कर देता है कि फिर हम उसे एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते। मार्क्सवाद का यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही उसकी सबसे बड़ी शक्ति है।"[2]

मार्क्सवादी दृष्टिकोण समाज में सभी वर्गों को सुखी एवं सम्पन्न देखना चाहता है। इसीलिए वर्ग चेतना का विरोध करता है। "इस नये युग के समस्त आयामों का ज्ञान, इसकी चेतना, इसके प्रदेयों की प्राप्ति के अवरोधक तत्त्वों के प्रति जागरूकता, मानव जीवन के क्षितिज पर उभरने वाले नये आलोक में मानव की उभरती बहुरंगी तस्वीर का समन्वित परिप्रेक्ष्य तथा उसे उपलब्ध करने और इसके अनुसार जीवन को गढ़ने की दृष्टि ही आधुनिक बोध है एवं इस सन्दर्भ में उतरते जीवन के सौन्दर्य का मूल्य बोध ही आधुनिकता बोध है।"[3]

बुर्जुआ वर्ग के मुकाबले आज जितने भी वर्ग खड़े हैं ; उन सब में सर्वहारा ही वास्तव में क्रान्तिकारी वर्ग है। पहले के सारे ऐतिहासिक आन्दोलन अल्पसंख्या के आन्दोलन रहे हैं या उसका सारा लाभ अल्पसंख्यक वर्ग को मिला है। लेकिन सर्वहारा वर्ग का आन्दोलन समस्त मजदूर का, तथा बहुसंख्यक के लाभ के लिए होने वाला आत्मचेतन तथा स्वतन्त्र आन्दोलन है। "जिन हथियारों से पूँजीपति वर्ग सामन्तवाद का अन्त किया था वे ही

---

[1] मार्क्स और ऐंगेल्स ; कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र ; सं0 1930. पृ0 34.
[2] डॉ0 जनेश्वर वर्मा ; हिन्दी काव्य मार्क्सवादी चेतना ; प्र0सं0 1974, पृ0 19.
[3] संस्कृति (पत्रिका) हेमन्त 1990, शक अंक 1, वर्ष 10, पृ0 8.

हथियार आज उसके खिलाफ तन गये हैं लेकिन पूँजीपति वर्ग ने केवल ऐसे हथियार को नहीं गढ़ा है जो उसका अन्त कर देगें, बल्कि उसने ऐसे आदमियों को पैदा कर दिया है। जो इन हथियारों का इस्तेमाल करेंगे। वे ही आज के मजदूर वर्ग सर्वहारा वर्ग के लोग है।"[1] स्टालिन ने लिखा है कि "सर्वहारा एकाधिपत्य एक क्रान्तिकारी शक्ति है जिसका आधार पूँजीपति के विरूद्ध बल का प्रयोग है।"[2]

मार्क्सवाद सर्वहारा वर्ग को स्थापित करके जनवाद को एक ऐसा व्यापक आधार प्रदान करता है जहाँ पर वर्ग को समाप्त करके समाज के व्यक्तियों के लिए शसक्त जनवाद की स्थापना संभव हो। मार्क्सवाद की मान्यता के अनुसार– "सर्वहारा एकाधिपत्य के फलस्वरूप जिस वर्गविहीन समान की स्थापना होगी उसमें प्रत्येक व्यक्ति के जीविकापार्जन का एक ही आधार होगा और वह होगा उसका श्रम।"[3] (......It will result in the appearance of a hamage neous chessless soiety all of whose member derive their incomes form the some source viz their lobour.") अन्त में यही कहा जा सकता है–मार्क्सवाद का मूलाधार मानवता है। इस प्रकार मार्क्सवाद एक नयी वैज्ञानिक और मानववादी जीवन दृष्टि है। जो मनुष्य को सुखान्त सुखाय तथा नवीन विचारणा के लिए प्रेरित करती है। मार्क्सवादी समीक्षक डॉ० कुँवरपाल सिंह के अनुसार, "मार्क्सवाद विचारहीन साहित्य का विरोधी है। वह विचारधारा को कलाकार के लिए जीवन और जगत की व्याख्या का औजार मानता है।विभिन्न विचारधाराओं के आधार पर दार्शनिक और साहित्यकार जीवन और जगत की अलग–अलग व्याख्या करते हैं।"[4]

समाजवादी यथार्थवाद

यह मार्क्सवादी विचार धारा है जो समाज का यथातथ्य परक चित्रण ही नहीं करती

---

[1] मार्क्स और ऐंगेल्स ; कम्युनिष्ट पार्टी का घोषण पत्र ; सं० 1930, पृ० 43.
[2] स्टालिन ; लेनिन के मूल सिद्धान्त ; सं० 1944, पृ० 39.
[3] John strachey ; The theory and practice of socialism; Ed. 1936, P. 405.
[4] डॉ० कुँवरपाल सिंह ; साहित्य समीक्षा और मार्क्सवाद ; सं० 1992 (भूमिका से), पृ० xii.

अपितु अपने केन्द्र में मानव के कल्याण तथा नवीन परिवर्तन एवं विचरणा के लिए भी मनुष्य को प्रेरित करती है। मार्क्सवादी मान्यताओं के अनुसार समाजवादी यथार्थवाद को मूलतः मानवतावादी माना जाता है। जो शोषण पहले नैतिक और कानूनी तौर पर मान्य था, अब उसको मानवता विरोधी, आचार संहिता के इस रुप में स्वीकृति मिल गई। समाजवादी *यथार्थवाद में आचार संहिता का यही मेरूदण्ड है।*

समाजवादी यथार्थवाद को **गोर्की** ने आलोचनात्मक यथार्थवाद के विरोध में सन् 1934 में एक व्यवस्थित सिद्धान्त को गढ़ जो साहित्य में समाजवादी यथार्थवाद के नाम से जाना जाता है। डॉ. **अजबसिंह** के अनुसार, "समाजवादी यथार्थवाद को लेखक संसार के परिवर्तन की सम्पूर्णता में देखता है। समाजवादी यथार्थवाद संघर्ष का परिणाम है।"[1] समाजवादी यथार्थवाद को व्यापक अर्थ मार्क्सवादी दृष्टिकोण से मिला। मार्क्सवादी विचारधारा यथार्थ को एक नवीनता एवं समग्रता में देखने वाली अवधारणा है। मार्क्स की विचारधारा से प्रेरित यथार्थवादी लेखकों को सामाजिक या प्रगतिवादी कहा जाता है। साहित्य में समाजवादी विचारधारा का उदय प्रगतिवाद के रूप में हुआ। "समाजवादी यथार्थवाद 20वीं शताब्दी का नवीन चिन्तन है। मानव कल्याण के लिए एक क्रान्तिकारी विकास है। इसकी मूल चेतना समाज की वास्तविकता का अंकन ही नहीं, प्रत्युत यथार्थ जीवन का समाजवादी दृष्टि से मूल्यांकन भी है।"[2]

समाजवादी यथार्थवाद नवीन विचार एवं नई चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। समाजवादी विचारधारा मानव कल्याण के क्रान्तिकारी विकास को सुनिश्चित करती है। यह शोषितवर्ग की ऐतिहासिक चेतना की कलात्मक अभिव्यक्ति है। **डॉ0 अजब सिंह** का मत है कि "समाजवादी रचनाकार क्रान्ति की ओर संचरण करता है तथा बदलाव की मांग करता है। वस्तुतः वास्तविकता यथार्थवाद में जिसे समाजवादी यथार्थवाद कहा जाता है, उसमें सामाजिक चेतना की मांग है, बदलाव है, क्रान्ति की पहल है तथा नये समाज रचना की

---

[1] **डॉ0 अजबसिंह ; यथार्थवाद** : पुनर्मूल्यांकन ; प्र0सं0 1998, पृ0 33.
[2] **डॉ0 अजबसिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद, प्र0सं0** 1987, पृ0 78.

उद्घोष भी है।"[1]

समाजवादी यथार्थवाद मुख्यतः मानववादी आदर्शों को केन्द्र में रखकर चलता है, क्योंकि जब तक शोषक, मजदूर व सर्वहारा वर्ग को पीड़ित करता रहेगा तब तक सही अर्थों में मानववाद की स्थापना हो ही नहीं सकती। "समाजवादी यथार्थ में लेखक का उद्देश्य समाज की स्थिति का 'यथार्थ' चित्रण करना होता है किन्तु यह चित्रण मात्र फोटोग्राफी न होकर सामाजिक अंतर्विरोध, विषमतापूर्ण स्थितियों तत्कालीन विसंगतियों के साथ राजनीति के मूल्यों को भी अपनी सीमाओं में लेता है वह समाज की विषमताओं और जटिलताओं को भी पकड़ता है जिनके कारण वर्ग संघर्ष जन्म लेता है उसमें सम्पूर्ण समाज का सुख दुःख, निराशा उत्थान पतन रहता है। समाजवादी यथार्थवाद में तथ्य परक चित्रण होता है।"[2]समाजवादी यथार्थवाद कला में संवेगात्मक का यथातथ्य अंकन इसे स्वच्छन्दतावादी चेतना से मिलाता है। गोर्की समाजवादी यथार्थवाद को परिभाषित करते हुए कहते हैं–"समाजवादी यथार्थवाद एक विचार है जो यथार्थवादी और कल्पनाशील है तथा सामाजिक अनुभव के ऊपर आधारित है।"[3] पूँजीवादी नैतिकता का मुख्य सामाजिक लक्ष्य होता था–निजी संपत्ति और शोषण कायम रखना क्योंकि यही पूँजीवाद की आधार शिला है। यहाँ धार्मिक नैतिकता भी इसी धैर्य को सिद्ध करती है। पूँजीवादी नैतिकता धैर्य धारण करने, सन्तोष करने और मूक बने रहने के रूप में मृत्यु के पश्चात् ही दुनिया में स्वर्ग का लोभ देकर जनता को भरमाती है इस प्रकार नैतिक आचरण के पर्दे में धार्मिक एवं नैतिक शोषण की परम्परा शताब्दियों से चलती आ रही है। समाजवादी यथार्थ के अन्तर्गत पूँजीवाद के नाश और समाजवादी समाज की स्थापना के हितों को ही महत्त्व दिया जाता है।

ऐतिहासिक भौतिकवाद के अन्तर्गत मजदूर वर्गों, किसानों को स्वर्ग का लालच देकर धार्मिक शोषण पर बल देता है। पूँजीवादी व्यवस्था ने मनुष्य के महत्त्व को महानता के रूप

---

[1] डॉ० अजबसिंह ; यथार्थवाद : पुनर्मूल्यांकन ; प्र०सं० 1998, पृ० 34.
[2] डॉ० ज्ञानवती अरोड़ा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम ; प्र०सं० 1994, पृ० 140.
[3] A.ovcharenko ; Socialist Realism and Modern Literary Process , Page. 86.

में प्रचारित किया, लेकिन साम्यवादी सामाजिक यथार्थ में मनुष्य के लघुत्व पर अधिक बल दिया अर्थात् मजदूर किसान साहित्य के केन्द्र में लघु व्यक्ति नायक की भूमिका अपनाता है। समाजवादी यथार्थ में मानव चेतना का आधार उसकी सामाजिक आर्थिक स्थिति के अन्तर्गत व्यष्टि की चर्चा करते हुए उस नये सामाजिक मानव को महत्त्व मिला, जिसके अन्दर अनेक नैतिक गुण होते हुए भी दुर्बलताओं का होना स्वाभाविक माना गया है। यही सामाजिक यथार्थ है। मार्क्स के अनुसार वैज्ञानिक यथार्थ है उसने वैज्ञानिक आधार पर पता लगाया कि समाज में परिवर्तन क्यों और भावी परिवर्तन किस दिशा में सम्भव होंगे ? क्योंकि ये परिवर्तन अकस्मात और अकारण नहीं होते उनके पीछे ठोस नियम होते हैं। इन अनुसंधानों के पश्चात् सामाजिक यथार्थ के सन्दर्भ में ऐसे वैज्ञानिक सिद्धान्तों का निरूपण किया जाता है। जो कोरी कल्पनाओं पर आधारित न होकर मानव जाति के वास्तविक अनुभवों पर और वैज्ञानिक नियमों पर आधारित है। समाजवादी यथार्थवाद केवल समाज की गन्दगी भ्रष्टाचार शोषण, अराजकता और अव्यवस्था को ही चित्रित नहीं करता, बल्कि वास्तविकता से संघर्ष करती हुई, नई चेतना को भी चित्रित करता है। इसीलिए समाजवादी यथार्थवाद को लेखकों ने क्रान्तिकारी स्वच्छन्छतावाद या प्रगतिशील स्वच्छन्दतावाद कहा, "समाजवादी यथार्थवाद वस्तुगत यथार्थ को उसकी सारी सजीवता, ईमानदारी से चित्रित करने का आग्रह करता है।"[1] इस विचारधारा का मुख्य उद्देश्य एक नये समाज का गठन था, इसका मुख्य लक्ष्य है समस्त समाज की उन्नति हो, वर्गहीन समाज की स्थापना करने वाली शक्तियों को अधिक बल मिले पूँजीवाद में अनास्था तथा निम्नवर्ग की प्रगति हो। "समाजवादी यथार्थवादी विचारधारा में भविष्य की कल्पना होती है इसमें वस्तुगत यथार्थ की सम्पूर्ण कुरुपताओं के अतिरिक्त उभरने वाली नई जिन्दगी के रचनात्मक प्रारूप की प्रस्तुति है युगीन यथार्थ में जिसकी चेतना बसती है।"[2]

समाजवादी यथार्थवाद कला आन्दोलन के विकास की नवीनतम अवधारणा है। जो

---

[1] डॉ0 अजबसिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 78.
[2] वही, पृ0 80.

पूँजीवादी समाज व्यवस्था की विरुपताओं से आक्रान्त, उसका निर्मम उद्घाटन करने तथा उसे अन्तर्मन से धिक्कारने की दृष्टि असमर्थता के कारण ही जो पूँजीवादी व्यवस्था को ध्वस्त करते हुए एक नये और मंगल की स्थापना के साथ ही एक नये प्रकार की यथार्थ दृष्टि के उपस्थापन की अवश्यकता महसूस की गई। "समाजवादी यथार्थ अतीत के यथार्थवाद की परम्पराओं का अवलम्ब लेता है और आज की परिस्थितियों के अनुरूप उनका संवर्द्धन तथा विकास करता है। समाजवादी यथार्थवाद की कला अपने में पुरानी यथार्थवादी कला के अनुभव को नहीं, अन्य कला प्रवृत्तियों की प्रगतिशील परम्पराओं को भी समाहित करती है।"[1] अतः "मार्क्स की दृष्टि में समाजवाद का मतलब आर्थिक क्षेत्र में उत्पादन के साधनों पर पूरे समाज का स्वामित्व स्थापित होना उत्पादन शक्तियों का तेजी से उन्नति और उत्पादन का एक योजना के अनुसार संगठित किया जाना है।"[2]

इसकी अवधारणा में आशावाद का स्वर निहित है जो पुराने बुर्जुआ व्यक्तिवाद से उत्पन्न निराशावाद से मूलतः भिन्न है। इस विचार धारा ने आज पूर्णरूपेण स्पष्ट कर दिया है कि "पूँजीवाद का आत्मवाद एवं विवेकशून्यता घोर प्रवंचना है इससे यथार्थ एवं मानववाद का अहित होता है।"[3] इसकी मुख्य विशेषता है उसकी लोक मंगलकारी आस्था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जिसे साधनावस्था कहते हैं। समाजवादी समाज उसी स्तर पर स्थिर नहीं रह पाता, जो उसे पूँजीवाद से स्वतः मिल जाता है। वह समाज में उत्पादन को लोगों की कार्य निपुणता तथा सांस्कृतिक विकास को बढ़ाना चाहता है। जिससे समाज में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन स्तर ऊँचा उठ सके। अतः असमानता जो पूँजीवाद में चन्द लोगों की दौलत और अधिकतर लोगों की गरीबी बढ़ाने के लिए हथियार का कार्य करता है, वहीं समाजवादी समाज में पूरे समाज के स्तर को ऊँचा उठाने का साधन बन जाता है। समाजवादी यथार्थवाद के मूल में मार्क्स, ऐंगेल्स तथा लेनिन द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक समाजवाद तथा

---

[1] डॉ0 अजबसिंह ; यथार्थवाद : पुनर्मूल्यांकन ; प्र0सं0 1998, पृ0 40.
[2] ओमप्रकाश सहगल (अनु0) ; मार्क्सवाद क्या है? ; सातवां सं0 1973, पृ0 60.
[3] Georg Lukeas ; Studies in Europen Realism, Ed. 1950, Page 5.

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की वह विकास मूलक धारणा है "जो विरोधी तत्त्वों के बीच चलने वाले चिरंतन संघर्ष की भूमि पर प्रतिक्षण एक नये परिवर्तन की सूचक बनती है और यह परिवर्तन यांत्रिक भौतिकवादियों के मन के विपरीत सदा ही एक गुणात्मक विकास की योजना करता है।"[1]

अन्ततः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि समाजवादी यथार्थपरक दर्शन में अस्पष्टता और स्वप्निलता अथवा कल्पना के लिए कोई स्थान नहीं है। इस यथार्थ में तो कल्पना का निष्कार किया जाता है। और वस्तु सत्य को महत्त्व दिया गया है। प्रगतिवादी साहित्यकारों ने इसे सामाजिक यथार्थ के रूप में जन–जीवन के अनुभवों और सत्यों को वाणी दी है। हिन्दी में रुपाभ, हंस, जागरण, जनशक्ति, नया साहित्य, विप्लव प्रगति आदि पत्र–पत्रिकाओं का प्रभाव भी स्वतः सिद्ध है जिनके माध्यम से दिनकर, नरेन्द्र शर्मा 'अंचल', शिवमंगल सिंह 'सुमन', रामविलास शर्मा, प्रकाशचन्द्र गुप्त, राहुल सांकृत्यायन, रांगेय राघव, शिवदान सिंह चौहान 'यशपाल', डॉ० नामवर सिंह और केदारनाथ कोमल जैसे साहित्यकारों ने सामाजिक यथार्थवाद की हिन्दी साहित्य में रूपरेखा स्थापित की।

सामाजिक यथार्थवाद को प्रस्तुत करने के लिए साहित्यकारों के लिए यह आवश्यक है कि वह जीवन के साथ गहरा तथा सक्रिय सम्पर्क स्थापित करें, केवल उसका तटस्थ एव निर्पेक्ष दृष्टा न बनें रहें। इस यथार्थ चित्रण के लिए साहित्यकार को व्यंग्य मूलक भाषा की रचना करना नितान्त आवश्यक है उसकी शैली में व्यंग्यात्मक प्रधान गुण होता है।

(ग) अस्तित्त्ववादी सन्दर्भ

अस्तित्ववाद पश्चिम की एक महत्त्वपूर्ण चिन्तन धारा है जिसनें भारतीय साहित्य को गम्भीर रूप से प्रभावित किया। वैसे तो मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद दोनों ही आधुनिक साहित्य के नवीन आयाम हैं और दोनों का उदय एक विशेष परिवेश में हुआ जिसे आधुनिकता का परिवेश कहते हैं।

---

[1] डॉ० शिवकुमार मिश्र ; यथार्थवाद ; द्वितीय सं० 1978, पृ० 52.

आधुनिक युग में अस्तित्ववाद एक ऐसा दर्शन है जो मनुष्य के संकट को प्रकट करता हुआ, मानवीय स्थिति की आधुनिक सन्दर्भों में व्याख्या करता है। अस्तित्व और अस्तित्व के संकट की व्याख्याऐं इस दर्शन की मूल विशेषता है। अस्तित्ववादी के लिए मानव संकट से उत्पन्न एकाकीपन, अलगाव, विच्छिन्नता निर्वासन की अनुभूति चयन या वरण की स्वतन्त्रता ऊब, उदासी और अजनबीपन की संवेदना चिन्तन के मूल हैं ये एक ऐसा दर्शन है जिसका जन्म विकास और प्रभाव बहुत तीव्रता से हुआ। अस्तित्ववादी प्रभाव अनेकानेक साहित्यिक और जीवन विषयक आन्दोलनों और दर्शनों पर काफी शसक्त रूप में देखा जा सकता है।

सार्त्र "अस्तित्ववादी दर्शन को सच्चे अर्थों में मानववादी दर्शन कहता है।"[1] मनुष्य सदैव अपने अस्तित्व की चिन्ता में लीन रहता है लेकिन आधुनिक युग में आकर यह साहित्य की विषय बन गया। अस्तित्ववाद मानव को अपने अस्तित्व का बोध करता है जिसके लिए मनुष्य सदैव सजग एवं चिन्तनशील रहता है। "अस्तित्ववाद ने जिस समस्या को सबसे पहले अधिक उभार कर सामने रखा, वह मूल्य की समस्या है, इस दर्शन ने न सिर्फ प्राचीन मूल्यों का उसकी आधार भूत दार्शनिक दृष्टि का विरोध किया वरन् मूल्यों के शोध की एक नई दृष्टि दी।"[2]

हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार,"अस्तित्ववाद यूरोप की एक अपेक्षाकृत आधुनिक तथा साहित्यिक चिन्तन पद्धति है। अस्तित्ववादी विचारधारा का आरम्भ वस्तुतः दर्शन के ही क्षेत्र में हुआ। इस सम्प्रदाय का उद्‌गम स्रोत जर्मन दार्शनिक हसरेल, हेडेगर तथा डेनिश चिन्तक **किर्केगार्द** की विचार पद्धतियों में देखा जा सकता है। अस्तित्ववाद को साहित्यिक ख्याति ज्यॉपाल सार्त्र के माध्यम से सन् 1943 के आस–पास मिली।"[3]

---

[1] डॉ० तारकनाथ वाली ; पाश्चात्य काव्य शास्त्र का इतिहास , प्र०सं० 1974, पृ० 260.
[2] वही, पृ० 265.
[3] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा०) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग 1, तृतीय सं० 1985, पृ० 63.

आज ये दर्शन भले ही अपनी सार्थकता को संकट की स्थिति में महसूस कर रहा हो। लेकिन कला की दृष्टि से उसकी सार्थकता और प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी। डेकार्ट का यह कथन आज भी कितना सार्थक होता है कि "मैं सोचता हूँ अतः मेरा अस्तित्व है।" **किर्केगार्द** को अस्तित्ववाद का प्रवर्तक माना जाता है क्योंकि सबसे पहले उसी ने अस्तित्ववाद की अर्थपूर्ण ध्वनि प्रस्तुत की थी। अस्तित्ववादी दर्शन चिन्तन का वह रास्ता है, जो सम्पूर्ण पर्थिव ज्ञान का उपयोग करता है और उसे इस क्रम में परिवर्धित करता, जिसमें मानव पुनः स्वयं जैसा बन सके। (Philosophy of existence is a way of thinking which uses and transcends all the material Knowledge in order that man may again become himself.")

डॉ0 नगेन्द्र के अनुसार,"अस्तित्व मनुष्य के लिए बाहर के अशुद्ध प्रभावों से सुरक्षित वैयक्तिक अस्तित्व का एक अलग अनुभव–संसार बनाने में विश्वास करता है इन अनुभवों में यंत्रण, संत्रास, अपराध भाव और मृत्युबोध का विशेष स्थान है जो अस्तित्व के रक्षण के लिए व्यक्ति को विशेष सजग दायित्त्वपूर्ण और क्रियाशील रखते है।"[1] अस्तित्ववादी तत्त्व चिन्तन मूलतः वर्ग समाजी है, एक विचारधारा है। दूसरे महायुद्ध से पहले और बाद में इस विचारधारा ने औद्योगिक एवं संस्कृति के विकास के दौरान जिस गहन निराशा, आत्मपीड़न, कुण्ठा, संत्रास और दिशाहीन मानसिकता को जन्म दिया वह आधुनिकतावादी विघटनकारी प्रवृत्ति को बेनकाब करती है। "अस्तित्त्ववादी वस्तुतः धर्मनिरपेक्ष स्तर पर मानव जीवन के लिए चिन्तित है वह जीवन को निरुपाय, अवश तथा निरर्थक समझ कर उसे एक मानवीय अर्थ तथा मूल्य देने की चेष्टा करता है। इसीलिए अस्तित्त्ववादी दृष्टि में प्रत्येक क्षण का अतुलनीय महत्त्व है। किसी भी अतियथार्थ का अस्तित्त्व इस व्यवस्था में स्वीकार्य नहीं। अपनी समग्र अवशता में मनुष्य ही अस्तित्त्ववादी चिन्ता का केन्द्र बिन्दु है।"[2]

---

[1] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; भारतीय साहित्य कोश , प्र0सं0 1981, पृ0 75
[2] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग 1, तृतीय सं0 1985, पृ0 73.

अस्तित्ववादी मनुष्य क्षणवादी है वह प्रत्येक क्षण अपने को पुनर्सजित करता है।वह प्रत्येक क्षण मूल्य बनाता है और यह कार्य बिना किसी बाहरी आधार के होता है।यह दर्शन इस विचारधारा का विरोध करता है कि मानव अस्तित्त्व सप्रयोजन, सार्थक और योजनाबद्ध है। वह उन समस्त परम्परागत तर्क संगत दार्शनिक मतवादों के विरुद्ध है जो विचारों अथवा पदार्थ जगत की तर्क संगत व्याख्या करते हैं और मानवीय सत्ता की समस्या की उपेक्षा करते हैं। इसीलिए अस्तित्ववाद में "आधुनिकता का अर्थ होता है—समग्र अतीत को समझकर वर्तमान या यथार्थ की सार्थकता भविष्य में ढूढ़ सकना।"[1] दूसरों शब्दों मे भी कहा जा सकता है—"अस्तित्त्ववादी दर्शन का मूल उद्देश्य मनुष्य की उदासीनता को दूर कर उसकी आत्मिकता को जाग्रत कर तथा उसे अपने स्व के प्रति चेतन बनाना है।"[2]

आधुनिकता के इस युग में आदर्श का महत्त्व कम हुआ है। मनुष्य से वातावरण अधिक प्रधान हो गया है। आज के बौद्धिक समाज की स्थिति यह है कि जैसे वह परिवेश में मानव और जीवन की खोज कर रहा है।यही तलाश जीवन की सार्थकता है। काफ्का ने जीवन को सार्थकता प्रदान करने का प्रयास किया। इसीलिए यह गतिशील जीवन चिन्तन है अस्तित्त्ववाद की मान्यता है—"मानवता पर आये इस आसन्न संकट के कारण अनिवार्य हो गया है कि मानव को पुनः उसके प्राकृतिक आन्तरिक स्वरूप में ऊर्ध्वमुखी चेतना का आधार प्रदान किया जाए और उसके अस्तित्त्व को आन्तरिक गरिमा का सबल और बौद्धिक सम्बल दिया जाए, जिससे वह सम्पूर्ण मानव बन सके।"[3]

अस्तित्त्ववाद का प्रारम्भ प्रसिद्ध दार्शनिक एवं विचारक सारेन किर्केगार्द से होता है। युद्ध से पूर्व यूरोप की सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति ने उसे अधिक प्रभावित किया। 19वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रान्ति ने पूरे यूरोप की परम्परागत जीवन व्यवस्था को तहस नहस कर दिया था। जिसने मनुष्य की आस्था और सामाजिक विश्वासों को तोड़ दिया। आधुनिक

---

[1] माध्यम (मासिक पत्रिका) ; फरवरी 1966, वर्ष 2, अंक 10, पृ0 23.
[2] योगेन्द्र शाही ; अस्तित्त्ववाद : किर्कगार्द से कामू तक, प्र0सं0 1975, पृ0 2.
[3] डॉ0 श्यामसुन्दर मिश्र ; अस्तित्त्ववाद और द्वितीय समरोत्तर हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1971, पृ0 15.

युग में मनुष्य के उत्तरोत्तर विकास से नवीन चेतना का उदय एवं नये आयाम तो मिले, लेकिन शोषण एवं ह्रास होने लगा, जिससे मनुष्य के अस्तित्त्व को खतरा उत्पन्न हो गया। "अस्तित्त्ववाद अपने विभिन्न रूपों में संकट का ही दर्शन है, क्योंकि इसने मानव जीवन की सफल स्पष्ट अभिव्यक्ति की है। अस्तित्त्ववादी के लिए मानव संकट से उत्पन्न अलगाव अथवा विच्छिन्नता की भावना मूल एवं केन्द्रीय भावना रही है। निर्वासन और विच्छिन्नता की अनुभूति, मनुष्य के सभी तरह के संबन्धों में परिव्याप्त है।"[1]

अस्तित्त्ववादी चिंतको ने आज के आधुनिक जीवन को नये रूप में देखा जिसमें अकेलापन, अजनबीयत, वेदना, असंगति, निरर्थकता ने मनुष्य के जीवन पर प्रश्न चिह्न लगा दिया आधुनिकता के इस दौर में मनुष्य भोगी हुई अनुभूतियों द्वारा जीवन जानने व समझने की कोशिश कर रहा है इसी प्रभाव के कारण आज मनुष्य समाज से कटा हुआ महसूस कर रहा है। "अस्तित्त्ववादी चिन्तन ने आज के जटिल परिवेश में उलझी हुई परिस्थितियों को समझने की शक्ति एवं दिशा प्रदान की है चाहे हमें समाधान न मिले, लेकिन अपनी स्थिति का सही जायजा अवश्य मिल जाता है। जीवन का सहज मार्ग ही अस्तित्त्ववादियों के अनुसार दार्शनिक चिन्तन की अपेक्षा अधिक उचित समझा। चाहे ऐसे व्यक्तियों में भय त्रास, कुण्ठा ही क्यों न हो।"[2]

प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता माजिद हुसैन ने अपने पुस्तक **Evolution of Geographical Thought** में अस्तित्त्ववाद के सन्दर्भ में अपने विचार को इस प्रकार अभिव्यक्ति दी "अस्तित्त्ववाद एक दार्शनिक मत है जो अपनी प्रकृति के लिए खुद उत्तरदायी है। ये व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, व्यक्तिगत निर्णय और व्यक्तिगत वचनबद्धता पर बल देता है ये पूर्णतः वस्तुनिष्ठ परिमाणात्मक निर्धारणात्मक विश्लेषण को चुनौती देने के लिए और यहाँ तक इसे त्याग ने के लिए अस्तित्त्व में आया। ये व्यक्तिगत मूल्य, गुणवत्ता, आत्मनिष्ठता और

---

[1] योगेन्द्र शाही ; अस्तित्त्ववाद : किर्केगार्द से कामू तक , प्र0सं0 1975, पृ0 3.
[2] डॉ. ज्ञानवती अरोरा ; समकालीन हिन्दी कहानी : यथार्थ के विविध आयाम , प्र0सं0 1994, पृ0 41.

Sprituality के सम्बन्धों के लिए उत्तेजित करता है।"[1]

नीत्शे जैसे चिन्तक ने जीवन के नैतिक मानवीय मूल्यों और उसकी अवधारणाओं के आधार पर अस्तित्ववाद के मूल्यवान सिद्धान्तों तथा विचारधारा का पोषण किया, क्योंकि अस्तित्ववाद अपने उन्मेषकाल से ही व्यक्ति की गरिमा और उसके महत्त्व को बनाये रखने पर जोर देता है। यह मानवीय स्थिति के प्रति सन्देश देने वाला दर्शन है। "अस्तित्ववाद एक ऐसी आधुनिक विचारधारा है जो सामूहिकीकरण और मशीनीकरण की शक्तियों के विरूद्ध मनुष्य की महिमा तथा स्वतन्त्रता को पुनः संस्थापित कर मानव जीवन को संभव बनाने का दावा करती है।"[2] दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि "अस्तित्ववाद मूलतः निरर्थक जीवन को मानवीय सार्थकता देना चाहता है। जीवन की विरूपता का बोध अस्तित्ववादी विचारधारा का आरम्भिक बिन्दु है।"[3]

यही कारण है कि यह विचार दर्शन आधुनिक युग का बहुचर्चित और अत्याधिक प्रतिष्ठित दार्शनिक मतवाद बन गया है। विभिन्न अस्तित्ववादियों ने जीवन के प्रति वैयक्तिक दृष्टि की प्रधानता है। 20वीं शताब्दी की दुर्दान्त निर्वैयक्तिक्तात्मक और विघटन कारी प्रवृत्तियाँ व्यक्ति इकाई की सम्भावना और विकास को संयोजित और नियन्त्रित करती है। "अस्तित्त्व की धारणा, आत्मा की धारणाओं का ही अंग है व्यक्ति और समाज का द्वन्द विशिष्ट और सार्वजनीन का विभाजन, प्रमाणिकता का संघर्ष और स्वातंत्र्य का उत्तेजित आग्रह आधुनिक अस्तित्त्व चिन्ता के विभिन्न प्रत्यय है। अस्तित्ववाद आत्मतत्व की खोज का ही एक आयाम है।"[4]

आज के युग में मनुष्य जितना अपने विचारों को वस्तुगत कसौटी पर परखता है वह उतना ही अपने अस्तित्त्व की वास्तविक विशेषताओं से दूर होता चला जाता है। इस बौद्धिकता के युग में मनुष्य चिन्तन की यान्त्रिक और वस्तुगत व्यवस्था ने मनुष्य को पूर्ण

---

[1] Majid Husain ; Evolution of Geographical Thought ; Ed. Ist. Agust 1988. Page 266.
[2] माध्यम (मासिक पत्रिका) ; अप्रैल 1965 ; वर्ष1, अंक 12, पृ0 7.
[3] वही, पृ0 7.
[4] धनंजय वर्मा ; आधुनिकता के बारे में तीन आयाम ; प्र0सं0 1984, पृ0 53.

रूप से झंझोर कर रख दिया है, वह अपने आस–पास के परिवेश को देखकर समझता है कि वह प्रगति कर रहा है पर सत्य तो यह है कि वह अपनी आन्तरिक एवं वाह्य शक्ति का नाश कर रहा है। "इस चिन्तन का आरम्भ व्यक्ति की सत्ता से, चेतना की सत्ता से हुआ, जो एक स्वयं प्रकाश सत्य है।"[1] फ्योरबाख नास्तिक अस्तित्त्ववादी है उसके अनुसार "दैवी शक्ति और कोई नई नहीं स्वयं मानव ही है, यानी शुद्ध मानव, जो व्यक्ति के रूप में मानव की सीमाओं से मुक्त है और जिसे साधारण मानव से भिन्न मानकर आदर दिया जाता है।"[2]

फ्राँस में युद्ध की स्थिति से उबरने के बाद अस्तित्त्ववाद का प्रभाव अधिक फैला। बुद्धिजीवियों का एक वर्ग पूँजीवाद के संकट से ऊबरने के लिये एक ही रास्ता देखता है–"व्यापक सामाजिक परिवर्तन द्वारा ही एक नई व्यवस्था कायम हो। दूसरा दल कहता है–इस तरह के परिवर्तन से कुछ न होगा, असली चीज है,निरर्थक संसार में अपना उद्देश्य स्वयं निश्चित करना। सन् 1946 में सार्त्र ने एक भाषण दिया "अस्तित्त्ववाद मानववाद है।" इसमें उन्होंने उन लोगों को उत्तर दिया जो अस्तित्त्ववाद को मानवता का विरोधी मानते थे।"[3]

अस्तित्त्ववाद के आस्तिक और नास्तिक दो संप्रदाय है। कार्ल यास्पर्स और गेबियल मार्शल आदि को ईश्वरवादी या आस्तिक अस्तित्त्ववादी कहा जाता है। ईश्वरवादी अस्तित्त्ववादियों की बुनियादी स्थिति थी और उनका सार चिन्तन ईश्वर से जुड़ा हुआ है। इसीलिए वह रास्ते में भटकते नहीं, अर्थात् इन अस्तित्त्ववादियों का विचार है कि मनुष्य को जब जब अपने अस्तित्त्व का खतरा पैदा हुआ है। तब–तब उसने धर्म की ओर दृष्टि लगा दी अर्थात् उसने अपने जीवन की सार्थकता, अस्मिता एवं अस्तित्त्व का धर्म के माध्यम से सृजित करने का प्रयास किया। इस दृष्टि से भक्तिकालीन साहित्य सर्वोपरि है जिसका आधार

---

[1] संस्कृति (त्रैमासिक पत्रिका) ; हेमंत 1890 शक, वर्ष 10, अंक 1, पृ0 9.
[2] योगेन्द्र शाही ; अस्तित्त्ववाद : किर्केगार्द से कामू तक ; प्र0सं0 1975, पृ0 17.
[3] डॉ0 रामविलास शर्मा ; अस्तित्त्ववाद और नई कविता ; प्र0सं0 1978, पृ0 94.

धार्मिक तथा जीवन को सार्थकता देना है। "मनुष्य की बुद्धि इतनी अक्रान्त है कि वह कोई भी निश्चय नहीं कर सकती इसीलिए एक मात्र रास्ता यही है कि मनुष्य अपने आपको ईश्वर के हवाले कर दे।"[1]

अस्तित्त्ववादियों में दूसरा वर्ग नास्तिकवादियों का है। जिन्होंने ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार कर मनुष्य को ही सर्वोपरि माना इसके अन्तर्गत-हेडगर, किर्केगार्ड, कामू , नीत्शे, फ्योरवाख आदि आते है। नास्तिकवादी विचारक धर्म को मनुष्य के अस्तित्त्व निर्माण में बाधा मानते हैं इन विचारकों पर मार्क्सवादियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। मार्क्स ने धर्म को मनुष्य जीवन की अफीम कहा है। फ्योरवाख ने मानव को ईश्वर के भ्रम जाल से मुक्त करके उसे उसकी सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान कर सच्चा मानव बनाने का प्रयास किया। उसने ईश्वर के स्थान पर मनुष्य को ही मनुष्य का ईश्वर माना।"[2] सारेन किर्केगार्ड ने घोषित किया "मानव का अस्तित्त्व एक अनुभव है या क्रमिक तथा निश्चित भाविता या विकास की प्रक्रिया है।"[3]

ज्यॉपाल सार्त्र का कहना है कि मनुष्य जब से पैदा होता है तब से वह तुरन्त मानवीयता को प्राप्त नहीं करता, वह मानवीयता को अर्जित करता है। स्वतन्त्र इच्छा से उद्देश्य निश्चित करके, मानवीयता नाम की कोई ईश्वर निर्मित वस्तु नहीं है। ईश्वर विहीन संसार में मनुष्य अपनी मानवीयता को गढ़ता है वह अपना उद्देश्य निश्चित करता है, तब वह उसके द्वारा अपना ही हित नहीं करता वरन् उद्देश्य का निश्चय मानव मात्र के लिए हितकर होता है।"[4] अतः मनुष्य के अस्तित्त्व का विकास उसके बौद्धिक विकास की प्रक्रिया मात्र से होता है। आधुनिक कविता बौद्धिकतावादी कविता है, उसने मनुष्य को अस्तित्त्व निर्माण एवं खोज के लिए विचलित किया।

---

[1] संस्कृति (त्रैमासिक पत्रिका) ; हेमंत 1890 शक वर्ष10, अंक 1, पृ0 10.
[2] योगेन्द्र शाही ; अस्तित्त्ववाद : किर्केगार्ड से कामू तक ; प्र0सं0 1975, पृ0 17.
[3] वही, पृ0 41.
[4] डॉ0 रामविलास शर्मा ; अस्तित्त्ववाद और नई कविता ; प्र0सं0 1978, पृ0 94-95.

हिन्दी में अस्तित्त्ववाद एक अराजकतावादी धारा है। यह अराजकता समाज में मनुष्यों की संगठन बद्ध, सामुहिक कार्यवाही का विरोध है। हिन्दी में अस्तित्त्ववाद की शुरूआत न तो उसके सर्जनात्मक साहित्य के माध्यम से हुई और न ही इसलिए हुई कि उसका दार्शनिक पक्ष भारतीयता के अनुकूल था। अस्तित्त्ववाद से हिन्दी का परिचय स्वतन्त्रता के बाद विशेषता नई कविता के उद्भव के बाद हुआ।

19वीं शताब्दी में मानव जीवन पर विज्ञान एवं सामाजिक सिद्धान्तों का व्यापक प्रभाव पड़ा और मनुष्यों की स्वतन्त्रता उपेक्षित होने लगी। प्रतिक्रिया स्वरूप एक ऐसे जीवन दर्शन का विकास हुआ, जो व्यक्ति को उसकी वैयक्तिकता एवं स्वतन्त्रता को अधिक महत्त्व प्रदान करता है।यही जीवन दर्शन अस्तित्त्ववाद कहा जाता है। हिन्दी कविता में अस्तित्त्ववाद प्रवृत्तियों की सफल अभिव्यक्ति प्रयोगवादी एवं नई कविता के कवियों ने की है। इनमें सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय', गजाननमाधव मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, कुँवरनारायण, शकुन्तला माथुर, भरतभूषण, डॉ0 नामवर सिंह, डॉ0 रामविलास शर्मा, अशोक वाजपेयी एवं केदारनाथ कोमल आदि प्रमुख हैं।

मुक्तिबोध की कविता **अन्धेरे में** का विश्लेषण करते हुए डॉ0 नामवर सिंह ने लिखा है कि "इस कविता में **मैं** दो व्यक्ति चरित्र में विभाजित है। एक नाटकीय कौशल मात्र नहीं है बल्कि इसका आधार 'आत्मनिर्वासन' है। **अन्धेरे में** कविता की अन्तिम पंक्तियाँ उस अस्मिता या **आइडेंटिटी** की खोज की ओर संकेत करती है जो आधुनिक मानव की सबसे ज्वलन्त समस्या है।"[1]

---

[1] डॉ0 रामविलास शर्मा ; अस्तित्त्ववाद और नई कविता , प्र0सं0 1978, पृ0 98

डॉ0 नामवर सिंह की दृष्टि में अस्तित्त्ववाद एक निश्चित जीवन दृष्टि है। भाव जगत के कुछ क्रिया कलापों की रूढ़ियों से उसका सम्बन्ध नहीं है। यह जानना आवश्यक है कि अस्तित्त्ववादी जीवन दृष्टि उतनी निश्चित नहीं है जितनी लोग समझते है।"[1]

आधुनिक हिन्दी कवियों में **अज्ञेय** भी अस्तित्त्ववादियों की श्रेणी में आते है। उनकी कविता **आसाध्यवीणा** अस्तित्त्ववाद की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कविता है। इस कविता का नायक **प्रियबंद** मेरी दृष्टि से वीणा के माध्यम से मानव जीवन के अस्तित्त्व एवं अपने जीवन को साधने की कोशिश कर रहा है। "रोमांटिक काव्य की व्यक्तिवादी प्रवृत्ति क्रमशः विकृत होती हुई। अब अस्तित्त्ववाद के रुप में प्रकट हुई है चरम व्यक्तिवाद को वह सामाजिक दर्शन का रूप देकर प्रस्तुत करती है। रोमैंटिक कवि रूढ़ियों को तोड़कर नये सौन्दर्यबोध और नवीन सामाजिक मूल्यों की ओर बढ़े है। अस्तित्त्ववाद ने सौन्दर्य बोध और मानव मूल्यों की अस्वीकृति को ही एक रूढ़ि का रूप दे दिया।"[2]

आधुनिक हिन्दी कविता में कविवर **केदारनाथ कोमल** का काव्य भी अस्तित्त्ववाद की दृष्टि से बहुत ही उत्तम है। उनके काव्य संग्रह **चौराहे पर, कोहरे से निकलते हुए, अन्धे सूरज का सफर, एक समंदर : मेरे अन्दर** आदि संग्रहों में अस्तित्ववादी विचारधारा की गूँज स्पष्ट सुनाई पड़ती है।

अतः निष्कर्ष रूप में अस्तित्त्ववाद आज के आधुनिकता के युग में मनुष्य की खोई हुई अभिव्यक्ति एवं अस्मिता को नवीन आयाम देना चाहता है इस आधुनिकता के दौर में मनुष्य जिन कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा है। यह दर्शन उसे इन परिस्थितियों से उबारने की कोशिश कर रहा है। अतः "अस्तित्त्ववादी दर्शन दार्शनिक रूप से मनुष्य को इस रूप में समझने का प्रयास करता है जैसे वह वास्तविक रूप में है, जैसा की अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक स्थिति में वह कोई अनुभव करता है।"[3]

---

[1] डॉ0 रामविलास शर्मा ; अस्तित्त्ववाद और नई कविता , प्र0सं0 1978, पृ0 178.
[2] वही, पृ0 117.
[3] डॉ0 प्रभाकर माचवे (अनु0) ; अस्तित्त्ववाद : पक्ष और विपक्ष ; सं0 1973, पृ0 97.

अतः अतर्विरोध, दबाव, तनाव, भय आध्यात्मिकता, व्यक्तित्व का ह्रास ये सभी तत्त्व अस्तित्ववादी चिन्तन की प्रमुख विशेषताऐं हैं जिन्हे आधुनिकता के अन्तर्गत देखा जा सकता है।

(घ) शैली वैज्ञानिक सन्दर्भ

शैली अंग्रेजी के **स्टाइल** शब्द का रूपान्तर है। "स्टाइल शब्द भारोपीय परिवार की भाषाओं में अपने मूल में काफी पूराना है। अवेस्ता में **स्तएर** (Staera=पर्वत–शीर्ष) ग्रीक में **स्ताइलोस** (Stylos=स्तम्भ) तथा लैटिन में **स्ताइलुस** आदि रूपों में मिलता है।"[1] 17वीं शताब्दी तक पश्चिम में इस शब्द का प्रयोग काव्य की भूमिका पर हुआ करता था और इसकी व्याप्ति सीमित थी। प्रायः आलोचक महाकाव्य की शैली या शब्द योजना, दुखान्त नाटक की शैली और शब्द योजन, सुखान्त नाटक की शैली और शब्द योजना पर ही विचार करते थे। अतः शैली शब्द वस्तुगत ही हुआ करता था और भाषागत योजना तक सीमित था। आज शैली का अर्थ –"न केवल शब्द और भाषा रचना तक, बल्कि कवि और लेखकों की उस समस्त रचना पद्धति और रचना साधनों तक विस्तृत हो गई है, जिनसे काव्य के बाह्य अवयवों या रूप पक्ष का निर्माण होता है।"[2] आज शैली शब्द का प्रयोग करते हैं तो उसका अभिप्राय केवल शब्द और भाषा योजना तक ही सीमित नहीं रहता अपितु उसकी सारी रूपगत प्रवृत्तियाँ उसमें समाहित हो जाती हैं। इसके द्वारा हम कवि की वैयक्तिक प्रवृत्तियों तथा कला योजनाओं तक का आंकलन कर सकते हैं। "आज शैली शब्द का प्रयोग कला और शिल्प के समस्त उपकरणों की अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है, यद्यपि मूलतः शैली कवि या लेखक की शाब्दिक अभिव्यंजना के विवेचना का ही आशय रखता रहा है।"[3]

पश्चिम में शैली पर विचार–कलावादी और मूल्यवादी दो दृष्टियों से हुआ। कलावादियों विचारकों ने शैली को अधिक महत्व दिया। वे काव्य तथा शैली की एकात्मकता और

---

[1] डॉ0 भोलानाथ तिवारी ; शैली विज्ञान , प्र0सं0 1977, पृ0 9.
[2] आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ; रीति और शैली ; प्र0सं0 1979, पृ0 163.
[3] वही, पृ0 163.

अभिन्नता की भूमि पर चले। इन कलावादियों में वाल्टरपेटर, क्लाइववेल रोजरफ्राइ, क्लीलरकोच आदि हैं– "इन्होंने कला के वस्तु पक्ष जैसी किसी पृथक वस्तु को स्वीकार ही नहीं किया है। उनकी दृष्टि में शैली ही काव्य है।"[1] रस्किन तथा कारलाइल मूल्यवादी विचारक हैं। फ्रेंच लेखक ब्यूफो का कथन है, "शैली स्वयं मनुष्य ही है; अर्थात् शैली मनुष्य के व्यक्तित्व की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति या फलाश्रुति है।"[2] शोपिनहोर ने शैली को "मन की वाह्य आकृति"[3] कहा है। गेटे ने विषय वस्तु के प्रसंग में शैली की व्याख्या करते हुए कहा है, "शैली रचना का वह उच्च और सक्रिय सिद्धान्त है जिसके द्वारा लेखक अपने विषय की गहराई में उतर कर विषय के अंतस का उद्घाटन करता है। (Style as a haghar and Active Principal of compasition by which the writer Penetrates and reveads the inner from of his subject.) प्लेटो के अनुसार, "जब विचार को रूप दे दिया जाता है तो शैली का जन्म होता है।" स्वीफ्ट (Swift) के अनुसार, "सही शब्दों को सही स्थान पर रखना ही शैली है।" ("Proper words in Proper Places") चेस्टरफील्ड का कथन है, "शैली विचारों का पोशाक है।" ("Style is the dress of thoght") न्यूमेन के अनुसार, "शैली भाषा के माध्यम से सोचना है।"(Style is thinking out into language). क्रोंचे ने अपने एस्थेटिक्स नामक ग्रन्थ में शैली शब्द का निर्देश दो अर्थों में दिया है– (1) मनोमय अर्थ में– जहाँ उसे अभिव्यंजना कहा गया है और (2) काव्य के वाङ्मय स्वरूप में जिसे वे काव्य का व्यवहारिक पक्ष मानते हैं। अतः क्रोंचे की विशेषता "वस्तु एवं रूप में तादात्म्य स्थापना करने में है। शैली उस तादात्मय स्थापना का साधन मात्र है; वह साधन भी काव्य के तात्विक स्तर पर नहीं, बल्कि उसके अभिव्यक्त स्वरूप पर कार्यान्वित होता है।"[4]

शैली के सन्दर्भ में पाश्चात्य विद्वानों के मतो पर विचार करने के पश्चात् अब इसके कोशगत अर्थ एवं भारतीय मनीषियों के विचारों पर विचार कर लेना आवश्यक है। भारतीय

---

[1] आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ; रीति और शैली ; प्र०सं० 1979, पृ० 164.
[2] डॉ० नगेन्द्र ; शैली विज्ञान; प्र०सं० 1976, पृ० 9.
[3] वही, पृ० 9.
[4] वही, पृ० 165.

सन्दर्भ में शैली शब्द संस्कृत भाषा के 'शील' शब्द का बहुव्यवहृत रूप है जो 'स्वभाव' के अधिक निकट है। आचार्य दण्डी ने काव्य मार्ग को 'प्रतिकवि' स्थिति कहा है। आचार्य कुन्तक ने कवि स्वभाव को रचना शैली का प्रेरक तत्त्व माना है। आचार्य वामन ने रीतिरात्मा काव्यस्य अर्थात् वामन ने शैली न कहकर रीति कहा है। वह रीति को ही काव्य की आत्मा मानते हैं। रीति और शैली अर्थ की दृष्टि से बहुत समीप माने जाते हैं, और कभी–कभी इनका प्रयोग पर्यायवाची रूप में होता है। किन्तु दोनों में अन्तर है। 'रीति' एक विशेष सम्प्रदाय है। जिसमें रीति को काव्य की आत्मा कहा गया है। रीति के अन्तर्गत रस, गुण, अलंकार और उक्ति जन्य कौशल का भी समाहार किया जाता है।

शैली के कोशगत अर्थ– **मानक हिन्दी कोश** में शैली का अर्थ, "ढंग, तरीका अथवा साहित्य में बोल या लिखकर विचार प्रकट करने का वह विशिष्ट ढंग जिस पर वक्ता या उस काल, समाज आदि की छाप होती है।"[1] जैसे भारतेन्दु शैली, द्विवेदीयुगीन शैली, प्रगीत शैली, निबन्ध शैली आदि। **हिन्दी शब्दसागर** में शैली का अर्थ– "परिपाटी, चाल, रीति, प्रथा, *लिखने का ढंग, वाक्य रचना का प्रकार या विचारों एवं भावों को अभिव्यक्ति करने की रीति* या कौशल"[2] को शैली कहते हैं। अतः शैली काव्य कला का एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा कवि व लेखक अपने काव्य की इमारत अपनी शैली की बुनियाद पर खड़ी करता है।

हिन्दी साहित्य में शैली पर विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने ढ़ंग से विचार किया है। वैसे शैली का अर्थ –जो कार्य किसी खास ढंग से किया जाये उसी को शैली कहते हैं। **डॉ० शिवदान सिंह चौहान** के अनुसार, "साहित्य शैली का अर्थ लेखन द्वारा इस प्रकार शब्द चयन और वाक्य विन्यास का ढंग है जो उसके विचारों को सशक्त अभिव्यक्ति दे सके। जो *लेखक जितना अधिक से अधिक मार्मिक और प्रभावोत्पादक रूप में अपने मन्तव्य को* अभिव्यक्ति देता है। उसकी शैली को उतना ही अच्छा और श्रेष्ठ कहा जा सकता है।"[3] डॉ०

---

[1] रामचन्द्र वर्मा (सम्पा0), मानक हिन्दी कोश ; पांचवा खण्ड, प्र0सं0 1966, पृ0 173.
[2] श्यामसुन्दर दास, (सम्पा0), हिन्दी शब्दसागर, नवां भाग, सं0 1972, पृ0 4792
[3] डॉ0 शिवदान सिंह ; आलोचना के मान ; सं0 1958, पृ0 153.

सत्यदेव चौधरी के अनुसार, शैली शब्द से हमारा तात्पर्य है, "कवि का रचना प्रकार जो कि उसके द्वारा प्रयुक्त होता है, पदों एवं वाक्यों के माध्यम से अथवा कहिए भाषा के माध्यम से प्रकट होता है।"[1]

डॉ0 नगेन्द्र ने शैली के सन्दर्भ में अपने विचारों को इस प्रकार प्रकट किया है, "शैली ही काव्य का प्राण तत्त्व है। इस तथ्य को निभ्रति प्रतिपादन किया है, भारतीय आचार्य वामन ने 'रीतिरात्मा काव्यस्य' यहाँ शैली शब्द सौन्दर्य का काव्य गुण का वाचक है।"[2] डॉ0 विद्यानिवास मिश्र अपनी पुस्तक 'रीतिविज्ञान' में कहते हैं – "शैली शब्द का प्रयोग प्राचीन भारतीय वाङ्मय में साहित्येतर विद्याओं के सन्दर्भ में प्रादेशिक विशेषताओं को जतलाने के लिए है या किसी व्यक्ति की साहित्यिक अभिव्यक्ति की विशेषताओं को जताने के लिए आधुनिक समीक्षा के साहित्य में हुआ है।"[3]

विस्तृत रूप मे, "शैली भाषिक अभिव्यक्ति का वह विशिष्ट ढंग है जो प्रयोक्ता के व्यक्तित्व तथा विषय से सम्बद्ध होता है तथा जो विचलन चयन, सुसंयोजन, समानान्तरता एवं अप्रस्तुत विधान आदि सामान्य अभिव्यक्ति के लिए असुलभ उपकरणों पर आधृत होता है।"[4] दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि "शैली मनुष्य के व्यक्तित्व के अनुरूप ही होती है और किसी के व्यक्तित्व और उसके मनोविज्ञान तथा उसकी चिन्तन पद्धति का भी घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। पंत की शैली उनके कोमल मन के सर्वथा अनुरूप थी। इसी प्रकार 'निराला' की उदात्तता काफी स्थानों पर पथरीली, किन्तु व्यंजक और महाप्राणता युक्त शैली उनके व्यक्तित्व और मनोविज्ञान से काफी सम्बद्ध है।"[5]

---

[1] डॉ0 सत्यदेव चौधरी ; भारतीय शैलीविज्ञान ; प्र0सं0 1983, पृ0 20.
[2] डॉ0 नगेन्द्र ; शैलीविज्ञान ; प्र0सं0 1976, पृ0 9–10
[3] डॉ0 विद्यानिवास मिश्र ; रीतिविज्ञान ; प्र0सं0 1973, पृ0 14.
[4] डॉ0 भोलानाथ तिवारी ; शैलीविज्ञान ; प्र0सं0 1977, पृ0 21.
[5] वही, पृ0 26.

इस प्रकार शैली कवि की अपनी अभिव्यक्ति है जिसके द्वारा वह अपनी भावनाओं को स्वच्छन्द ढंग से अभिव्यक्त करता है। तथा साथ ही शैली कवि की कृति की श्रेष्ठता का आधार भी होती है। किसी भी साहित्यकार व कवि की शैली उसके व्यक्तित्व का निर्माण व बोध कराती है।

आधुनिक सन्दर्भ में शैली के विकास एवं परिवर्तन का मूल्यांकन करने के लिए हमें आदिकाल से लेकर आज तक शैली के विकास को देखना है क्योंकि आदिकाल से लेकर आज तक कवियों व साहित्यकारों तथा समाज में मानव जीवन के बोध के साथ–साथ उसकी लेखन शैली व रहन–सहन की शैली में व्यापक परिवर्तन हुआ।

आदिकालीन कवियों का मूल धेय दरवार में स्थान पाना, यश पाना, धनोपार्जन तथा अपनी इच्छा पूर्ति हेतु राजा की प्रशंसा करना, उनके यशगान मे काव्य पाठ करना एवं सुन्दरियों के रूप वर्णन द्वारा शासक का मन प्रसन्न करना। धेय की पूर्ति हेतु उन्होंने अधिकांशतः अलंकारिक कथानक रूढ़ि, कवि समय, आदि से सम्पन्न शैली का प्रयोग किया। इस काल के अधिकतर कवियों ने वीरगात्मक शैली या श्रृंगारपरक शैली में ही अपने काव्य की रचना की। जन सामान्य को इस युग में कोई स्थान प्राप्त न हो ऐसा नहीं है, उन्हें जन सामान्य की भावनाओं का पूरी तरह बोध था किन्तु वे अपने लेखन शैली के लिए स्वच्छन्द नहीं थे।

भक्तिकालीन साहित्य विशेषता मुगल शासन काल में लिखा गया। तत्कालीन साहित्य में कवि ईश्वर के प्रति पूर्णतः समर्पित भाव रखता था। उसका प्रेम, स्नेह समस्त विचार एवं भाव उसी परमसत्ता से जुड़ते हैं। परिणामतः भक्तिकालीन साहित्य भक्ति रस से सिक्त होने के कारण दार्शनिक, आध्यात्मिक परक शैली में है। भक्तिकालीन कवियों ने स्वच्छन्द रूप से अरबी, फारसी, संस्कृत तथा आंचलिक भाषा का प्रयोग करते हुए सहज सरल शैली में साहित्य की रचना की।

रीतिकालीन कवियों ने संस्कृत काव्यशास्त्रीय शैली में अपने काव्य का सृजन किया। इस युग के कवियों ने नारी सौन्दर्य व उसके नखशिख वर्णन को अधिक महत्त्व दिया।

रीतिकालीन कवियों की शैली अंलकारिक एवं चमत्कार प्रधान रही है। इन कवियों ने रस, बिम्ब, प्रतीक, मिथक तथा पारिभाषिक शब्दावली का खुलकर प्रयोग किया। रीतिकाल में शैली की दृष्टि से रीतिबद्ध, रीतिमुक्त, रीतिसिद्ध तीनों धाराओं का अधिक महत्त्व है। इस काल में धनानन्द, आलम, बोधा आदि कवियों ने अपने काव्य में स्वच्छन्द शैली को अपनाया।

आधुनिक युग में आकर मनुष्यों के रहन–सहन, सोच, अनुभूति में परिवर्तन के साथ–साथ कविता के कथ्य शिल्प व शैली में परिवर्तन होना स्वभाविक ही है। आधुनिक युग में आकर कवि व साहित्यकारों की दृष्टि समाज के उपेक्षित वर्ग की ओर गई उसने समाज के उपेक्षित वर्ग को अपनी कविता का विषय बनाया। "लेखक के विश्व बोध और जीवन दृष्टिकोण के अनुसार रोमाण्टिक यथार्थवादी, प्रकृतिवादी, प्रगतिशील या व्यक्तिवादी सभी प्रकार की प्रवृत्तियाँ व्यक्त हुई है और लेखकों के व्यक्तित्व के अनुसार उनकी अपनी शैली भी भिन्न है।" [1]

शैली पूर्णतः अनुभूतिपरक होती है साहित्यकार को जिस प्रकार की अनुभूति होगी उसकी शैली भी उसी प्रकार की होगी। यदि कवि सुख के क्षणों में अपनी काव्य रचना करता है तो उसकी शैली उदात्त व प्रवाहमान होगी और यदि कवि दुःख के क्षणों में अपने काव्य का सृजन करता है तो उसकी शैली में भी स्पष्ट रूप से दुःख की अनुभूति होगी।

हिन्दी कविता के आधुनिक युग का प्रथमोत्थान 'भारतेन्दु' से प्रारम्भ होता है। इस युग में खड़ीबोली का अत्यधिक प्रयोग हुआ। अतः भाषा के परिवर्तन के साथ–साथ कवियों की शैली में भी परिवर्तन होना स्वभाविक है। इन कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से समाज में स्वतन्त्रता की चेतना जागृत की, इसलिए इनकी शैली औदात्तपूर्ण है। डॉ० निर्मला जैन का कथन है, "शैली की दृष्टि से प्रत्येक काव्य रूप के लिए केवल एक नियम अनिवार्य

---

[1] डॉ० शिवदान सिंह चौहान ; आलोचना के मान ; सं० 1958, पृ० 152

है और वह है विषय और अभिव्यक्ति की परस्पर अनुकूलता।"[1] अतः शैली कविता का वाह्य रूप है। शैली के अन्तर्गत कवि अपने भावों को अपनी इच्छानुसार अभिव्यक्त करता है। इसलिए यह भी कहा जा सकता है कि शैली की उत्कृष्टा में ही काव्य की उत्कृष्टता निहित है। इस प्रकार शैली के विभिन्न प्रकार हैं–

(i) इतिवृत्तात्मक शैली

(ii) प्रगीतात्मक शैली।

(iii) चमत्कार प्रधान अभिव्यंजना शैली।

(iv) विचारात्मक या विश्लेषणात्मक शैली।

(v) सुक्ति शैली आदि।

हिन्दी गद्य शैली के विकास में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का विशेष योगदान रहा है। उन्होंने तत्कालीन लेखकों की रचना शैली की आलोचना आरम्भ की। इसी के साथ–साथ भाषा के व्याकरणगत दोषों की ओर भी साहित्यकारों का ध्यान आकृष्ट किया।

भाषा शैली की दृष्टि से छायावादी काव्य अपने आप में प्रमुख स्थान रखता है। विषय बोध के साथ–साथ शैली की दृष्टि से भी उत्कृष्ट है। छायावाद की भाषा में चित्रात्मकता, लाक्षणिकता प्रतीकात्मकता तथा संगीतात्मकता आदि के गुणों से युक्त है चित्रात्मक शैली की दृष्टि से 'महाप्राण निराला' की 'तोड़ती पत्थर' उत्कृष्ट उदाहरण इस कविता में कवि का ध्यान उपेक्षित वर्ग की ओर गया है तो दूसरी ओर हथौड़े की चोट कवि हृदय तथा विसंगति पूर्ण समाज पर चोट है–

"गुरू हथौड़ा हाथ,
करती बार–बार प्रहार
सामने तरू मालिका अट्टालिका, प्राकार।"[2]

[1] डॉ0 निर्मला जैन ; आधुनिक हिन्दी काव्य : रूप और संरचना ; प्र0सं0 1984. पृ0 195
[2] डॉ0 रामविलास शर्मा (सम्पा0) ; राग–विराग ; द्वितीय सं0 1979, पृ0 131.

डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने छायावादी काव्य के मूल में "सामाजिक, राजनीतिक, परिस्थितियों की विषमता पाश्चात्य रोमाण्टिक तथा बंगला के भाव प्रधान कवियों की कृतियों प्रभाव व्यक्ति चिन्तन तथा सौन्दर्यवादी जीवनदृष्टि का क्रमिक विकास"[1] को निर्णायक शक्तियों तथा प्रेरक विचार धाराओं के रूप में माना है। छायावादी चार आधार स्तम्भ कवियों में प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा छायावाद के उज्जवल नक्षत्र हैं। ये चारो ही अपनी–अपनी नवीन भाषाभिव्यंजना, नवीन विचार प्रणाली, नवीन भाषा शैली तथा नवीन कौशल के कारण शीर्ष स्थान पाने के अधिकारी है। लेकिन प्रगतिवाद, प्रयोगवाद नयी कविता तथा आज की हिन्दी कविता, इन गुणों से सम्पन्न नहीं हैं उसकी शैली गद्यात्मक तथा सपाटबयानी की है। किन्तु समकालीन कविता में भावों की मार्मिकता एवं जीवन संघर्ष के भाव अवश्य छिपे हुए हैं।

शिल्प की दृष्टि से मुक्त छन्द भाषा का परिष्कार आदि की गणना भी निराला काव्य की उपलब्धियों में होती है। "निराला के काव्य में अनेक स्वर है, विविध शैलियाँ हैं, विभिन्न रूप है जो उनके व्यापक व्यक्तित्व की देन है। इसीलिए निराला के काव्य का वस्तुपक्ष तथा शिल्पपक्ष की उलब्धियों तथा सीमाओं का मूल्यांकन उनके व्यक्तित्व से पृथक नहीं किया जा सकता।"[2] छायावाद की भाषा को समझने के लिए 'निराला' ने लिखा है ; "हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि भाषा मुश्किल लिखी जाए, न ही उसका प्रभाव भावों के अनुरूप ही रहना चाहिए। आप निकली हुई और गढ़ी हुई भाषा छिपती नहीं, भावानु सारणी भाषा कुछ मुश्किल होने पर भी समझने में आ सकती है।"[3]

साहित्य सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति न होकर व्यक्ति चेतना की अभिव्यक्ति मात्र हो गया है। इस विचारधारा के मानने वालों का कहना है कि विषय, भाषा और शैली की दृष्टि से समकालीन साहित्य इतना रूढ़ और अवरूद्ध हो गया है कि उसके माध्यम से

---

1 डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिक कविता का मूल्यांकन ; प्र0सं0 मार्च 1962, पृ0 26
2 वही, पृ0 290.
3 डॉ0 कृष्णलाल ; तार सप्तक के कवि : काव्य शिल्प के मान ; प्र0सं0 1979, पृ0 54–55.

मनुष्यों की नवीन अनुभूतियों और भावनाओं को व्यक्त नहीं किया जा सकता। इसीलिए भाषा और शैली को नया रूप देना, नयी शब्दावली, नये प्रतीक, बिम्ब व छन्दो का प्रयोग करना ही काव्य रचना का प्रमुख उद्देश्य एवं लक्ष्य घोषित कर दिया गया है। "जहाँ जीवन का दृष्टिकोण ही बदल गया है, वहाँ अवश्य ही हमें नये मानदण्डों को ही लेना होगा, उसके बिना तो आज का मूल्यांकन नहीं हो सकता।"[1]

स्वच्छन्दतावादी कविता विषय एवं व्यक्ति प्रधान बन गई है। कवियों ने अपने काव्य में स्वच्छन्द शैली को अपना कर काव्य में लघुमानव एवं उसके परिवेश को प्रस्तुत किया। "स्वच्छन्दतावादी कविता की भाषा शैली व्यक्ति प्रधान ही होती है,उसमें किसी प्रकार के अलंकार, रीति, वृत्ति आदि के नियमों का निर्जीव रूप में पालन नहीं किया जाता। कवि की भावना अनायास ही अनुकूल शब्दावली में ढल जाती है। इस प्रकार कवि की अनुभूति की तीव्रता ही उसकी शैली के स्वरूप को निर्धारित करता है।"[2]

प्रगतिशील युग में सामाजिक विकास, उद्योग व उन्नति के विकास के साथ–साथ कवि बौद्धिकतावादी हुआ, उसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण जिसका आग्रह हमें आधुनिक युग में आकर मिलता है। जिसका प्रभाव स्पष्टतः आज की कविता पर पड़ रहा है। जिसके कारण उसकी शैली में भी वैज्ञानिक दृष्टि एवं शब्दावली की स्पष्ट छाप झलकती है, "जीवन की आबाध गति और मानव सामर्थ्य के समवेत अस्तित्व द्वारा ही आधुनिकता मनुष्य को मनुष्य रूप में ही स्वीकार करने की प्रेरणा देती है।वह यथार्थ की तथा कथित कटुता और उसकी उग्रता को सौन्दर्य दृष्टि से देखने की प्रेरणा भी देती है। यही प्रवृत्ति ही हमें जीवन को समग्रता के सौन्दर्य में देख पाने की क्षमता प्रदान करती है।"[3]

सन् 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ के घोषणा पत्र में 'प्रेमचन्द' की यह घोषणा काफी महत्त्वपूर्ण थी, "भारतीय समाज में काफी परिवर्तन हो रहें हैं। पुरानें विचारों और

---

[1] डॉ0 रांगेय राघव ; आधुनिक हिन्दी कविता में विषय और शैली ; प्र0सं0 1962, पृ0 302
[2] डॉ0 अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद :छायावाद ; प्र0सं0 1975, पृ0 34.
[3] डॉ0 लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नयी कविता के प्रतिमान ; सं0 श्रावण 2014, पृ0 256.

विश्वासों की जड़ें हिलती जा रही है और नये समाज का जन्म हो रहा है भारतीय लेखकों का धर्म है कि वे भारतीय जीवन में पैदा होने वाली क्रान्ति को शब्द और रूप दे और राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर चलाने में सहायक हो।"[1]

"नयी कविता ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए उन प्रतीकों बिम्बो, और साधनों को लिया जो यथार्थ जीवन से उपजे है। जिनका सीधा सम्बन्ध वैयक्तिक भाव स्तर से है जो प्रत्येक क्षण हमें सार्थक अस्तित्व के साथ हमें आन्दोलित करता रहता है।"[2] अतः वस्तु और शिल्प की दृष्टि से नयी कविता अन्तः सम्बन्धित है। पुरानी और रूढ़ शिल्प दृष्टि को इसमें नकारा गया है। आधुनिक दृष्टि से पुराने रूढ़ उपमान और प्रतीकों का मेल नहीं बैठता। यह बात 'अज्ञेय' की कविता 'कलगी बाजरे की' से स्पष्ट हो जाती है–

"अगर मैं तुमको
लहलाती साँझ के नभ की अकेली तारिका,
अब नहीं कहता..........
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है
बल्कि केवल यही, यह उपमान मैले हो गये हैं,
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छुट जाता है।"[3]

तार सप्तक से हिन्दी में काव्य भाषा शैली तथा शिल्प को आधुनिक युग के वस्तुगत आधार पर नये सिरे से व्याख्यायित किया गया। अज्ञेय ने अपना अलग ही स्वर बनाएं रखा। तीसरे सप्तक के अन्तर्गत केदारनाथ सिंह ने घोषणा के स्वर में कहा,"कविता में मैं सबसे अधिक ध्यान देता हूँ उसके बिम्ब विधान पर। बिम्ब विधान का जितना सम्बन्ध काव्य के विषयवस्तु पक्ष से होता है। उतना ही उसके स्वरूप से होता है। विषय को वह मूर्त और

---

[1] डॉ0 कृष्णलाल ; तार सप्तक के कवि : काव्य शिल्प के मान ; प्र0सं0 1979, पृ0 59.
[2] डॉ0 लक्ष्मीकान्त वर्मा ; नयी कविता के प्रतिमान ; सं0 1 श्रावण 2014, पृ0 3–4.
[3] अज्ञेय ; सदानीरा (सम्पूर्ण कविताएं) ; भाग 1 ; प्र0सं0 1986, पृ0 240.

ग्राह्य बनाता है, और उसके स्वरूप को संक्षिप्त और दीप्त।"[1] ये सारी चीजें कवि की शैली पर निर्भर करती है, यदि उसकी शैली उदात्त है तो उसके काव्य में भी उदात्तता आना निश्चित है।

नयी कविता के युग में नवीन वैज्ञानिक अविष्कार, औद्योगिकरण की फैलती प्रक्रिया तथा राष्ट्रीयवाद ने सामाजिक मूल्य, नवीन जीवन दृष्टिकोण के साथ–साथ मनुष्यों की कल्पनायें दमित और कुण्ठित भावनाएं हैं, जिसके कारण आधुनिक युग का साधारण मनुष्य यौन वर्जनाओं का पुंज बन गया है। उसकी सौन्दर्य चेतना भी इससे आक्रान्त हुई है तथा कवि के उपमान आदि सब यौन प्रतीकार्थ रखते हैं।

"मैं तो डूब गया था स्वयं शून्य में
वीणा के माध्यम से अपने को मैंने
सब कुछ सौंप दिया–
सुना आपने जो वह मेरा नहीं
न वीणा का था।"[2] (असाध्यवीणा से)

मुक्तिबोध ने जिस मानसिक बेचैनी तथा संघर्ष को अपने में देखा है, वह वास्तव में कलाकार का प्रमुख अन्तद्वन्द्व होता है मुक्तिबोध के समस्त काव्य में मूल्यों के मूल में यह संघर्ष किसी न किसी रूप में अवश्य उपस्थित रहता है–

"समस्या तक
मेरे सभ्य नगरो और ग्रामों में
सभी मानव
सुखी सुन्दर व शोषण मुक्त कब होगें।"[3]

---

[1] डॉ0 नामवर सिंह ; कविता के नये प्रतिमान ; तृतीय सं0 1982 ; पृ0 112.
[2] अज्ञेय ; सदानीरा (सम्पूर्ण कविताएं) ; भाग 2 ; प्र0सं0 1986, पृ0 108.
[3] डॉ0 नेमिचन्द जैन (सम्पा0) ; मुक्तिबोध रचनावली ; प्र0सं0 1980, पृ0 264.

आज की वर्तमान कविता की यथार्थदृष्टि लघुता और लघुमानव के इस वास्तविक स्थितियों के सन्दर्भ में ग्रहण करती है। इन स्थितियों को कवि अपनी शैली के द्वारा समाज के सामने प्रस्तुत करता है। "समकालीन कविता का आग्रह शिल्प पक्ष की सारल्यता का रहा है। शिल्प के आधार पर समकालीन कविता जीवन के अधिक निकट आ गई है। समकालीनता ने अपनी भाषा और काव्य भाषा के अन्तराल को समाप्त कर दिया है। सपाटबयानी को भी इसमें प्रमुखता मिली है।"[1] सपाटबयानी के माध्यम से कवि ने अत्यन्त सरल शब्दों में अपने भावों को शब्द बद्ध किया। अतः काव्य की भाषा गद्यात्मक अधिक हो गई अर्थात् बोलचाल की तरह ही कथ्य को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया। कवि 'तरूण' ने अपनी सपाटबयानी द्वारा अपने कथ्य को अधिक प्रभावात्मक बनया है–

"मेरी सासों में, गीले थूहरों की बाड़ में लगाई गई
आग का दमघोट धुआँ यों भर दिया गया–
जैसे भीम काय ट्रक के टायर में
पेट्रोल पम्प की फ्री मशीन हवाबर्स्ट होने के बिन्दु तक"[2]

आज की कविता में चित्रात्मकता, बिम्बात्मकता का विशेष आग्रह है, क्योंकि यहाँ कवि बिम्बों के माध्यमों से काव्य की वर्ण्य वस्तु को मूर्त रूप देता है।वही उसे भावपूर्ण बनाकर सहृदय के अधिक समीप प्रतिष्ठित कर देता है, यह परिवर्तन आज इतना स्पष्ट है कि **'अशोक वाजपेयी'** भी इस लक्षित करते हुए कहते हैं, "नयी कविता बिम्ब केन्द्रित रही है और अक्सर कवियों में बिम्ब का ऐसा घटाटोप तैयार हुआ कि सातवें दशक तक आते–आते कई कवियों को यह महसूस हुआ कि कविता को बिम्बों से मुक्त करके ही उसे जीवन्त और प्रासंगिक रखा जा सकता है उनके सामने बिम्ब प्रधान कविता कुछ शक की चीज बन गई है और सपाटबयानी की तरफ कई कवि झुके और उसे विश्वसनीय माना जाने लगा।"[3]

---

[1] डॉ0 सन्तोष कुमार तिवारी (सम्पा0) ; कवि 'तरूण' का काव्य संवेदना और शिल्प ; प्र0सं0 अप्रैल 1990, पृ0 121.
[2] डॉ0 विजेन्द्र 'स्नातक', रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' (सम्पा0) ; 'तरूण'काव्य ग्रन्थावली ; प्र0सं0 1989, पृ0 11.
[3] डॉ0 नामवर सिंह ; कविता के नये प्रतिमान ; तृतीय सं0 1982, पृ0 120–121.

कविवर केदारनाथ 'कोमल' ने आधुनिक कविता की शैली एवं शिल्प के धरातल पर उठती इस आवाज को पहचाना और तदनुरूप अपने काव्य की अभिव्यक्ति की। शैली की दृष्टि से उनके (कोहरे से निकलते हुए, चौराहे पर, अन्धे सूरज का सफर, मेरे शब्द : मेरे लहु, शब्द नाच, एक समन्दर : मेरे अन्दर, आदि) काव्य संग्रह महत्वपूर्ण हैं–

"झोंपड़ियों फुटपाथों गलियारों में
रोते जलते कुढ़ते सबाल !
कहीं !अनजाने मोड़ पर अचानक
लहराते / सपनों के समान।"[1]

कवि कोमल ने जीवन की विसंगतियों पर व्यंग्य करते हुये कहा–

"जिन्दगी से भीख माँगी थी
फूल तो क्या
दो कांटे भी न मिले
एक बेनाम सा दर्द
दे दिया और कहा
यही सब कुछ है"[2]

भावबोध की नवीनता के साथ समकालीन सन्दर्भ में भाषागत नवीनता भी स्वभाविक है। आधुनिक कविता में भाषा की कृत्रिमता जटिलता को समकालीन काव्य में कहीं भी स्थान नहीं है। कवि केदारनाथ कोमल की भाषा में कृत्रिमता नहीं है। भाषा सर्वत्र भावानुरूप है। "आम आदमी की भाषा में उसकी अपनी बात कहने में सिद्धस्त कोमल समकालीन सामाजिक विसंगतियों और विद्रूपताओं को अज्ञात अन्धगह्वारों से निकलकर कविता के कालजयी आलोक वृत्त के बीच खींच कर खड़ा कर देने का साहस भी करते हैं।"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) ; प्र०सं० 1975, पृ० 15.
[2] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह) ; प्र०सं० 1968, पृ० 37.
[3] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरे लहू (काव्य संग्रह) ; प्र०सं० 1983 (कवर पृष्ठ से).

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि विगत कई दशकों में काव्य साधना में कविता की भाषा शैली में जो विकासोन्मुख परिवर्तन हुए हैं, उन पर दृष्टिपात करना भी आवश्यक है। आधुनिक कविता में कवि बिम्बों प्रतीकों एवं भाषा शैली के प्रति काफी सजग है। ये बिम्ब प्रतीक सहज मानव जीवन से तथा भाषा शैली तो आधुनिकता से लैस है और दूसरी ओर सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति भी सशक्त है।

किसी भी कवि की शैली उसके आस–पास के परिवेश से पूर्णतः प्रभावित होती है। यह कवि की अभिव्यक्ति का माध्यम भी होती है, तथा साथ ही अनुभूति जन्य भी होती है। आज के युग में मनुष्य कुण्ठा, संत्रास एवं अजनबीयत में जी रहा है। इसीलिए आज के अधिकतर कवियों के काव्यों में दुःख व कुण्ठा की महक स्पष्ट दिखाई देती है। लेकिन कवि साथ ही इसके माध्यम से जीवन की विद्रूपताओं को दूर करके जीवन को नवीन आयाम देना चाहता है। यह प्रयास कवि अपनी शैली के माध्यम से करता है। डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त के शब्दों में,"कभी उसके काव्य में युग जीवन की विसंगतियों और विद्रूपताओं के विरूद्ध आक्रोश सुनाई देता है। तो कभी पूर्ण विध्वंस के लिए वह आतुर दिखाई देता है पर उस विध्वंस पर, जीवन के जड़ खण्डरों पर चिता की राख पर वह नवीन जीवन की रचना करना चाहता है। नये मानव व शैली को जन्म लेते देखना चाहता है।"[1]

(ड़) अतिमानववादी : अतिछन्दस सन्दर्भ

भक्ति का आधुनिक सन्दर्भ अतिमानववादी दर्शन है। आज के इस वैज्ञानिक एवं भौतिकवादी युग में मनुष्य अवाध गति से बहता चला जा रहा है। किन्तु वह पूर्णरूप से अपनी धार्मिक वृत्ति से छुटकारा नहीं पा रहा है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति, ऋषि, मुनियों की संस्कृति रही है। इसीलिए यहाँ के धार्मिक ग्रंथो में अतिमानव की ध्वनि स्पष्ट रूप से सुनी देती है। गीता में 'अवतारवाद' की अवधारण अतिमानव का ही स्वरूप है।

---

[1] डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त ; कवि 'तरूण' दृष्टि और सृष्टि ; पृ0 121.

महर्षि श्री अरविन्द का कथन है कि "विकास की यह प्रक्रिया निरन्तर आगे बढ़ती जा रही है और विकास क्रम में चेतना की एक स्थिति अवश्य आयेगी, जिसे मानस कहते है। इस उदात्त भावभूमि तक पहुँच जाने पर एक नव्य चेतना का उदय होगा।"[1] चेतना की अतिमानववाद की स्थिति को प्राप्त करना मनुष्य के लिए कठिन कार्य है। अतिमानस की परिकल्पना अतिमानववाद के ही अधिकार की वस्तु है। जब मनुष्य इस स्तर को प्राप्त कर लेता है तो उसका ज्ञान या प्रकाश ही रह जाता है। जहाँ पहुंचकर उसे परम आनन्द का सुख प्राप्त होता है। अतः अतिमानव का अर्थ उस मनुष्य से है जो पूर्णतः सर्वगुण सम्पन्न, कल्याणकारी भावना एवं देवगुणो से ओत–प्रोत हो। '**महर्षि श्री अरविन्द**' के अनुसार, "अतिमानस सत्य चेतना है, सत्य स्वयं उसके अधिकार में है और वह अपनी निजी शक्ति सामर्थ्य के द्वारा उसे चरितार्थ करता है।"[2] **डॉ0 अजब सिंह** का विचार है, "अखण्ड मानव अपने विकास क्रम में दिव्य चेतना के क्रमिक रूप में मानववाद, नवमानववाद, एवं अतिमानववादी रूप ही अतिच्छन्दसमय है। उसकी प्राप्ति ही जीवन की सार्थकता है। यही मानव का पुरूषार्थ है।"[3]

'**मानक हिन्दी कोश**' के अनुसार,"अतिमानव ऐसा कल्पित और आदर्श मनुष्य, जिसमें साधारण मनुष्य की अपेक्षा बहुत अधिक आलौकिक गुण तथा शक्तियाँ हो।"[4] **हिन्दी शब्द सागर**' में अतिमानववादी दृष्टि को इस प्रकार उद्घाटित किया है, "अतिमानव अलौकिक शक्ति तथा गुणों से सम्पन्न मनुष्य"[5] को कहा जाता है। आज की इस विषम परिस्थितियों में जब विश्वमानवता, अशान्त होती जा रही है, अतिच्छन्दा ही, आध्यात्मिकता, भगवद चिन्तन ही उसके लिए कल्याणकारी मार्ग है। पावन तीर्थराज प्रयाग में 1989 महाकुम्भ के अवसर पर **ब्रह्मर्षि योगराज श्री देवरहा बाबा** ने झूंसी मचान से कहा था–"देश देशान्तर में जो राग–द्वेष वैर विरोध फैला हुआ है– उसका एकमात्र कारण है कि लोग ईश्वर को भूल गये हैं। ईश्वर

---

1 डॉ0 अजब सिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति ; प्र0सं0 1997, पृ0 4
2 चन्द्रदीप त्रिपाठी (अनु0) श्री अरविन्द के पत्र ;खण्ड 16, भाग 1, प्र0सं0 1974, पृ0 18
3 डॉ0 अजब सिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति ; प्र0सं0 1997, पृ0 5
4 रामचन्द्र वर्मा ; (सम्पा0)मानक हिन्दी कोश ; प्रथम खण्ड, पृ0 62
5 श्यामसुन्दर (सम्पा0) ; हिन्दी शब्द सागर ; भाग 1, सं0 1965, पृ0 146

के चिन्तन, मनन, भजन एवं कीर्तन से ही देश–विदेश में शान्ति का साम्राज्य लाया जा सकता है। ईश्वर को मन में बसाओ, इसी में कल्याण है।"[1] इसी से विश्वमानवता की रक्षा हो सकती है। अतः यही परमानन्द की धारा विश्वमानवता के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। **गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर** का यह कथन आज कितना प्रासंगिक है– *"नया प्रभात इसी प्राच्य क्षितिज से उदित होगा और तब अपराजेय मनुष्य समस्त बाधायें पार कर अपनी खोई हुई विरासत को फिर से प्राप्त कर लेगा।"*[2]

अतिमानस की यह कल्पना आज इस आराजकता के युग में विश्व को जिस ओर ले जाने का मार्ग प्रसस्त करती है उसे श्री अरविन्द ने अतिमानस का नाम दिया है। **श्री अरविन्द** का विश्वास है कि, "जिस प्रकार जड़ से जीवन और जीवन से मानस की उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार मानव से अतिमानस का विकास होना चाहिए।"[3]

छायावादोत्तर नवस्वच्छन्दतावाद–नवछायावादी रचना शिल्पी **पंत** ने अपनी लोक चेतना एवं दार्शनिक चेतना से समन्वित अखण्ड मानववाद महाकाव्य **लोकायतन** में उद्‌घोषित किया :

चेतना का नव उन्मेष
मिटा सकता भव का तम त्रास।

यह चेतना निश्चित ही चिन्मयता का द्योतक है यह चिन्मयता भौतिकता से समन्वित होकर युगल रूप में अपनी प्रस्तुति आधुनिक समकालीन संसार के लिए दे सकेगा। आज विश्वमानवता संक्रान्ति की स्थितियों से गुजर रही है। मनुष्य संत्रास एवं कुण्ठागस्त है, अखण्ड मानववादी चेतना के महाकाव्य **कामायनी** में **जयशंकर प्रसाद** ने कहा है और यही जीवन और जगत का अतिच्छन्दस प्रभाव है :

---

[1] डॉ0 अजबसिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति ; प्र0सं0 1997, पृ0 8
[2] वही, पृ0 8
[3] डॉ0 रामधारी सिंह 'दिनकर'' ; संस्कृति के चार अध्याय ; पंचम सं0 अगस्त 1970, पृ0 619.

औरों को हँसते देखो, मनु,
हंसो और सुख पाओ।
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओ ।।

ब्रह्मर्षि योगिराज श्री देवरहा बाबा का **सर्वात्म दर्शन** ही आज विश्वमानवता एवं सृष्टि के समस्त जीवों के लिए मंगलमय है। कल्याणकारी है, अतिच्छन्दा है। "मानव अपनी पूर्णतम अभिव्यक्ति के क्रम में मानववाद नवमानववाद एवं अतिमानववाद ही होता है।"[1]

आधुनिकता बोध में परम्परा एवं मध्ययुगीन आध्यात्मिकता का विरोध था, लेकिन आज उत्तर आधुनिकता–बोध में परम्परा एवं समकालीन आध्यात्मिकता की वापसी हो रही है। समकालीन सन्दर्भों में परम्परागत जीवन मूल्यों को आत्मसात् करते जा रहे हैं। डॉ० नामवर सिंह ने 21 नवम्बर 1991 में **अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय** में अपने व्याख्यान में "आध्यात्मिकता को उदार दृष्टि है एवं भौतिकता संकीर्ण दृष्टि होती है।"[2] **श्री अरविन्द** ने अपने साहित्य एवं दर्शन में अतिमानव की कल्पना की है, लेकिन उसका अतिमानस योग साधना से संन्वित एवं ऋत चित्त की भावना को लिए हुए है। "अतिमानस प्रत्यक्ष रूप से चित् है–अव्यवहित सहजात और स्वयं स्फूर्त ज्ञान की दिव्य शक्ति है, एक विज्ञानमय विचार है जो सभी सत्यों को प्रकाशमान रूप में धारण करता है और ज्ञान से अज्ञात तक पहुँचने के लिए अज्ञान शक्ति रूप में मन की भाँति संकेतों तथा तर्क श्रृंखला आदि सोपानों पर निर्भर नहीं करता।"[3]

अतिमानव की अवधारणा पूर्ण रूप से आध्यात्मिकता से प्रेरित है। इस विचार दर्शन में मनुष्यों को अखण्ड रूप में चित्रित किया जाता है। वह संसार के समस्त बन्धनों से मुक्त एवं सर्वगुण सम्पन्न होता है अर्थात् पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँचकर अतिमानस या अतिछन्दस

[1] डॉ० अजबसिंह ; यथार्थवाद : पुनर्मूल्यांकन ; प्र०सं० 1998, पृ० 68.
[2] डॉ० अजबसिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति ; प्र०सं० 1997, पृ० 10.
[3] जगन्नाथ वेदालंकार (अनु०) ; योग समन्वय (उत्तरार्द्ध) खण्ड 4 ; प्र०सं० 1969, पृ० 912.

रूप धारण कर लेता है उत्तर आधुनिकता के युग में जहाँ मनुष्य पूर्ण रूप से स्वतन्त्र एक अतिबौद्धिक तथा नवमानव के आसन पर विद्यमान हो गया है तो उसकी मानसिकता भी आध्यात्मिकता व अतिच्छन्दस की स्थितियों से विश्व स्तर पर आध्यात्मिकता की सर्जना और आलोचना के क्रम को स्वीकृति देती है, "अतिमानस मनुष्य का पूर्ण प्रकाशित रूप है इस स्थिति में वह सारी अज्ञानता से दूर होता है यदि मनुष्य चाहे तो वह अतिमानस में प्रवेश कर अज्ञानता से बच सकता है।"[1]

हिन्दी साहित्य में भक्तिकालीन कवियो में सूर, तुलसी तथा कबीर आदि ने भी अपने–अपने अराध्य देवों को अतिमानस रूप में प्रस्तुत किया गया है। सूर के कृष्ण सांसारिक लीलाओं में लीन रहते हैं गोपियों से प्रेम करते हैं किन्तु उनका दूसरा पक्ष अतिमानस का है वे सदैव मनुष्यों का कल्याण करते हैं। तुलसीदास के राम भी पूर्ण रूप से मर्यादा पुरूषोत्तम हैं जो कि अतिमानव का दूसरा रूप है। अतिमानस एक उदात्त भावभूमि पर पहुँच कर एक नवीन चेतना, एक नया परिज्ञान एवं बोध विकसित कर लेता है। अतिमानस की सार्थकता यह होगी कि मनुष्य सोचने में गलती नहीं करेगा, प्रत्युत कहना चहिए कि उसका प्रत्येक ज्ञान प्रत्यक्ष रूप ले लेगा, जिसमें मन को भूलने का अवसर नही मिलेगा। श्री अरविंद कहते है कि "व्यक्तियों में सर्वथा नवीन चेतना का संचार करो, उनके अस्तित्व के समग्र रूप को बदलो जिससे पृथ्वी पर नये जीवन का समारंभ हो।"[2] दूसरी ओर श्री अरविंद कहते है– "अतिमानस विश्वाधार और विश्व विकासक ब्रह्म का वृहत आत्म प्रसरण है महाभाव के द्वारा वह सत् और आनन्द के त्रिक्तत्त्व को उनकी अविभाज्य एकता में से विकसित करता है वह उसमें भेद करता है किन्तु विभाजन नही।"[3]

अतिमानव का लक्ष्य है कि मानव सत्ता को मन की साधारण चेतना से उठाकर आत्मा की चेतना में उठाकर ले जाए। "अतिमानस आत्मा को अपना, अपने सम्पूर्ण विश्व का

---

1 डॉ0 रामधारी सिंह 'दिनकर'' ; संस्कृति के चार अध्याय ; पंचम सं0 अगस्त 1970, पृ0 625.
2 वही, पृ0 620.
3 श्यामसुन्दर झुनझुनवाला (अनु0) ; दिव्य जीवन ; खण्ड 7. प्र0सं0 1970, पृ0 150.

तथा उन सब चीजों का जो इस विश्व में उसकी रचनाएँ एवं आत्म आकृतियाँ है, वास्तविक ज्ञान है, क्योंकि उसे उन सब का अन्तरतम एवं समग्रज्ञान है।" [1]

अतिमानव की अवधारणा को इस्लाम धर्म में भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है इस्लाम धर्म के **प्रर्वतक हजरत मुहम्मद साहब** भी एक दिव्य पुरूष है जिन्होंने मानव को उसके कर्म एवं कल्याणकारी भावना के लिए प्रेरित किया। इसीलिए पवित्र ग्रंथ कुराने करीम की आज्ञा है कि अपने भीतर उन गुणों का विकास करो जो ईश्वरीय है। "अखण्ड मानव अपने विकास क्रम में दिव्य चेतना के क्रमिक रूप में मानववाद, नवमानववाद एवं अतिमानव रूप में इस भौतिक जगत में उपलब्ध होता है। इसका अतिमानववादी रूप ही अतिच्छन्दसमय है। इसकी प्राप्ति ही जीवन की सार्थकता है यही मानव का पुरूषार्थ है।"[2]

अतिमानव को त्रिकाल दृष्टि प्राप्त होती है वह तीनों कालों को एक अविभाज्य गति के रूप में देखता है आज संसार को अतिमानव एवं अखण्ड महायोग साधना की आवश्यकता है इस सन्दर्भ में **ब्रह्मार्षि योगिराज देवराहा बाबा** का 'सर्वात्मदर्शन' ही अतिच्छन्दस है।'[3] अतिमानव का मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण चेतना को परिवर्तित एवं रूपान्तरित कर मनुष्य को विकास के उच्चतम शिखर तक ले जाना है किन्तु उसका यह उच्चतम शिखर तक पहुँचना सृष्टात्मक एवं रचनात्मक दृष्टि रखता है क्योंकि "अतिमानस या ऋत चित ही विश्वसत्ता का यथार्थ सृष्टात्मक अभिकर्ता है।"[4]

आधुनिक साहित्य एवं स्वच्छन्दतावाद के प्रथित विद्वान, डॉ० अजब सिंह ने **ब्रह्मर्षि श्री देवराहा बाबा** के सर्वात्मदर्शन, चिन्तन एवं कल्याणकारी भावना को देखते हुए उन्हें अतिमानव पुरूष के समक्ष खड़ा कर दिया है। "**ब्रह्मर्षि** योगिराज देवराहा **बाबा** का

---

[1] जगन्नाथ वेदालंकार (अनु0) ; योग समन्वय (उत्तरार्द्ध) खण्ड 4, प्र0सं0 1969, पृ0 912.
[2] डॉ0 अजब सिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति, प्र0सं0 1997, पृ0 5
[3] डॉ0 अजबसिंह ; यथार्थवाद : पुनर्मल्यांकन, प्र0सं0 1998, पृ0 82
[4] श्यामसुन्दर झुनझुनवाला (अनु0) दिव्य जीवन ; खण्ड 7, प्र0सं0 1970. पृ0 204.

'सर्वात्मदर्शन' ही आज विश्व मानवता एवं सृष्टि के समस्त जीवों के लिए मंगलमय है, कल्याणकारी है, अतिच्छन्दस है यह परम आनन्द है।"[1]

उर्दू एवं फारसी के मशहूर शायर **अल्लाहमा इकबाल** ने भी अपने साहित्य में अतिमानव की कल्पना की है –

"खुदी को कर बलुन्द इतना कि हर तदवीर से पहले
खुदा बन्दे से खुद पूछे, बता तेरी रज़ा क्या है?

अल्लाहमा इकबाल के अनुसार, "जो औरो से अनुठा और भिन्न होगा, यही व्यक्तित्व का गुण है, किन्तु विश्व ब्रह्माण्ड में सबसे अनुठा व्यक्तित्व ईश्वर का है, अतएव सबसे बड़ा व्यक्ति भी वही होगा, जो ईश्वर से अधिक होगा, उसे इकबाल अतिमानव कहते है।"[2]

भारतीय सन्दर्भ में अतिमानव की अवधारणा पर विचार करने के पश्चात हमें अब पाश्चात्य सन्दर्भ में इस दृष्टि पर विचार कर लेना चाहिए पाश्चात्य दर्शन में इस मत के प्रवर्तक नीत्शे माने जाते हैं। नीत्शे का कथन है– "ईश्वर मर गया।" क्योंकि नीत्शे ईश्वर को महत्त्व नही देता, है अर्थात् मनुष्य को ही ईश्वर का रूप मानता है उसका मनुष्य पूर्णता से युक्त है। अतएव सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति है इस प्रकार आधुनिकता भी मनुष्य को उसकी पूर्णता में देखना चाहती है। इसलिए अतिमानव या अतिच्छन्दस की अवधारणा आधुनिकता व उत्तर आधुनिकता का एक नवीन आयाम एवं विचार दर्शन है।

नीत्शे अतिमानववादी कल्पना से आधुनिक युग में ह्रास हुए मानव मूल्यों को पुनः स्थापित करना चाहता था, वह मनुष्य के अस्तित्त्व एवं उसकी कल्याणकारी भावना को भी जीवित रखना चाहता था। "अतिमानव से उन्हें एक ऐसा रूप मिला जिसकी अपने–अपने ढंग से व्याख्या करके संशयवाद और निरीश्वरवाद को ठोस रूप मिला। उदारतावाद अथवा समाजवादी स्वतंत्र विचारकों के आन्दोलनों को भी आधार मिला।"[3]

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; चेतना शिक्षा एवं संस्कृति ; प्र0सं0 1997, पृ0 12
[2] रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पंचम सं0 अगस्त 1970, पृ0 625
[3] योगेन्द्रशाही ; अस्तित्ववाद : किर्केगार्द से कामू तक ; प्र0सं0 1975, पृ0 93

आज का युग अतिबौद्धिकता का युग है। मनुष्य नवमानव से निकलकर अतिमानव के शिखर तक पहुँच गया है। आज के इस वैज्ञानिक एवं औद्योगिक, तकनीकी युग में मनुष्य इतनी प्रगति की है कि आज उसके समक्ष ईश्वर का अस्तित्व नाम मात्र का रह गया है वह स्वयं को ही सर्वोपरि मानने लगा है। कहना का तात्पर्य यह है कि आधुनिकता के युग में मनुष्य अपनी समस्त संकीर्णताओं से उठकर अतिमानव के क्षितिज पर पूरी तरह छा गया है। "अतिमानव स्पष्ट रूप से नीत्शे द्वारा इस त्रुटि का निराकरण करने का प्रयास है चेतन रूप में अचेतन रूप से इस बात की खोज करने के लिए अगले कदम का पूर्वानुमान कर लेता है कि मनुष्य का और कैसे विकास हो सकता है, परन्तु अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अतिमानव के दिव्य दर्शन से अति प्राचीन आदर्श पुनः स्थापित हो जाता है।"[1]

मनुष्य के रूप में ईश्वर की संस्तुति गोर्की का प्रतिपाद्य है। आज की कविता बौद्धिकता की जमीन से उठकर समस्त आध्यात्म की अभिव्यंजना करती है। स्वच्छन्दतावादी कविता भी इसी समग्रता का एक अंश है। "आध्यात्मिक भूमि से विश्वमानवतावादी चिन्तन का सन्देश देता है और उनके अतिमानव का विस्तृत आयाम विश्व की कल्याणकारी भावना से पूर्णतः संकल्पित है। यही कल्याणी भावना आध्यात्मिकता का स्रोत है।"[2]

आज के इस भौतिकवादी चेतना सम्पन्न युग में मानववादी या अतिमानववादी चेतना में जीवन दर्शन की प्रस्तुति भी होती है यही सब भारतीय दर्शन की मूल चेतना का विस्तार है।" आज आधुनिकता में भी हम देखते है कि वह भक्ति चेतना को परिपूर्णता में रेखांकित करती है यह मानववादी चेतना प्रगतिवादी, प्रयोगवादी कवियों की मानववादी चेतना ही नहीं, बल्कि अखण्ड मानव, नवमानव एवं अतिमानववादी चेतना की एक मंजुसा भी है।"[3]

---

[1] डॉ० प्रभाकर माचवे (अनु०) अस्तित्ववाद : पक्ष और विपक्ष, सं० 1973, पृ० 32
[2] डॉ० अजब सिंह ; यथार्थवादी : पुर्नमूल्यांकन प्र०सं० 1998 पृ० VIII
[3] डॉ० अजब सिंह ; चेतना, शिक्षा एवं संस्कृति,प्र०सं० 1997, पृ० 101

चतुर्थ अध्याय :

आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता-बोध के विविध चरण

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता–बोध के विविध चरण

आधुनिक युग का उदय भारतेन्दु के जन्म (1850) से माना जाता है। तो यह भी स्वाभाविक ही है कि आधुनिक युग का आरम्भ भी हम भारतेन्दु युग से ही मानेंगे, लेकिन हम आधुनिक कविता के चरणों में जाने से पूर्व हम यह देखना चाहेगें कि आधुनिकता का आरम्भ कहां से माना जा सकता है। वैसे तो प्रत्येक युग एवं कवि व साहित्यकार अपने समय का आधुनिक होता है। उसकी आधुनिकता की पहचान वर्तमान समय में उसकी प्रासांगिकता से की जा सकती है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान "आधुनिकता की शुरूआत निराला की कविता कुकुरमुत्ता से मानते है।"[1]

वैसे तो आधुनिकता के बिन्दुओं को आदिकाल में अमीर खुसरो, कल्लोल तथा अब्दुल रहमान आदि की रचनाओं में खोजा जा सकता है। आदिकाल में कल्लोल का ढोला मारू रा दूहा, अब्दुल रहमान का संदेरा शसक, तथा अमीर खुसरो की मुखरियां स्वच्छन्द धारा की श्रेष्ठ रचनायें हैं–"ढोला मारू रा दूहा तथा संदेश रासक दोनों ही रचनाओं में प्रेम की मार्मिक संवेदनाओं की निश्छल अभिव्यक्ति है। कवि काव्यशास्त्र या समाज के नियमों से बंधे नहीं प्रतीत होते हैं।"[2] अमीर खुसरो ने अपनी मुकरियों व खड़ीबोली को साहित्य में प्रतिष्ठित कर, अपने आधुनिक होने का परिचय दिया। भक्तिकालीन कवियों में कबीर तथा जायसी की रचनाओं में भी आधुनिकता के बिन्दुओं को देखा जा सकता है। भक्तिकाल में लौकिक प्रेम सम्बन्धी काव्य में स्वच्छन्द धारा के दर्शन होते हैं। कबीर ऐसे समय हुए जब समाज में चारों तरफ जात–पात, ऊँच–नीच, बाह्य आडम्बर, अन्धविश्वास आदि का ताण्डव था। इस समय कबीर ने समाज की चिन्ता किये बिना समाज की इन बुराईयों पर जमकर स्वच्छन्द भाव से लिखा तथा उन्होंने तत्कालीन धर्म के मसीहा बने पण्डितों व मुल्लाओं की कटु आलोचना की अर्थात् कवि समाज को इन बुराईयों के प्रति जागृत कर उन्हें संकीर्णताओं से निकालना चाहते थे। इसीलिये कबीर को समाज सुधारक व क्रान्तिकारी कहा

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र0सं0 1973, पृ0 12.
[2] डॉ0 मनोहरलाल गौड़ ; धनानन्द और स्वच्छन्द काव्य धारा ; प्र0सं0 संवत 2015 वि0, पृ0 226.

जाता है। आज आधुनिकता भी समाज में मनुष्य को संकीर्णताओं के प्रति सचेत कर उसके 'स्व' को जीवित रखना चाहती है। अतः आधुनिकता हमें नवीन विचरणा के लिये उकसाती है। जायसी के पदमावत में भी आधुनिकता के तत्त्वों को वह पहचाना जा सकता है। पदमावत रचना का उद्देश्य लौकिक प्रेम के माध्यम से प्रेम के विश्वव्यापी, उदात्त और आध्यात्मिकता की कोटि तक पहुँचे हुए रूप की परोक्ष अनुभूति का आभास देकर मानव मात्र को मोक्ष की प्राप्ति कराना माना जा सकता है।"[1]

आधुनिकता का उद्देश्य मनुष्य को मनुष्य रूप में देखना है, या दूसरे अर्थ में आधुनिकता मनुष्य को पूर्णता में देखना चाहती है। गिरिजाकुमार माथुर ने आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि "नव मानव की खोज"[2] का नाम आधुनिकता है। पदमावत में जो प्रतीक प्रस्तुत किये गये हैं वे इसी आधुनिकता की ओर संकेत करते हैं। अतः "व्यवहारिक और साहित्यिक दृष्टि से इसका उद्देश्य मानवता की स्थापना, प्रेम, उदारता, त्याग और सहिष्णुता को उदात्त व्यापक भूमिका पर करके, व्यापक उदार मानवता का प्रसार और मानव हृदय का विस्तार और परिष्कार है।"[3]

पूर्व स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के अन्तर्गत हमें रीतिकालीन, रीतिमुक्त धारा के कवियों घनानंद, आलम, बोधा, ठाकुर आदि को स्वच्छन्द काव्य धारा के अन्तर्गत रख सकते हैं, क्योंकि कवियों ने अपने काव्य का सृजन एक बँधी–बधायी परिपाटी पर नहीं किया। स्वच्छन्द कवि अपने मनोवेगों के प्रभाव में बहकर अपने काव्य की रचना करता है। वह काव्यशास्त्र के नियमों से मुक्त रहता है। घनानन्द को स्वच्छन्द काव्य धारा में इसलिये रखा जाता है कि उन्होंने तत्कालीन काव्य सृजन की परिपाटी को तोड़ा। उस समय कवियों का उद्देश्य केवल अपने आचार्यत्व एवं पाण्डित्य का प्रदर्शन करना, नखशिख वर्णन करना आदि था। घनानन्द के काव्य में प्रेम की व्यंजना महती है उन्हें प्रेम का पीर भी कहा जाता है। आलम के काव्य में पारिवारिक और उन्मुक्त दोनों तरह का प्रेम देखने को मिलता है। "माधवानल काम कंदला की कथा को अपने काव्य का विषय बनाकर कवि ने अपने स्वच्छन्द

---

[1] डॉ0 जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ; जायसी के पदमावत का मूल्यांकन ; प्र0सं0 1972, (भूमिका से)
[2] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान (सम्पा0) ; कविता और कविता ; प्र0सं0 1967, पृ0 9.
[3] डॉ0 जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ; जायसी के पदमावत का मूल्यांकन ; प्र0सं0 1972, (भूमिका से)

होने का प्रमाण दिया है। कला निष्णात का नर्तकी के साथ प्रेम होना सामाजिक स्वच्छन्दता का प्रतीक है ऐसा ही प्रयोग कवि ने अपने जीवन में किया।"[1]

आदिकालीन, भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन स्वच्छन्दता के तत्त्व आज के स्वच्छन्दतावादी काव्य से भिन्न है, क्योंकि उनमें तत्कालीन बोध देखा जा सकता है। लेकिन आज के आधुनिक युग में स्वच्छन्दतावादी तत्त्वों में आधुनिकता का बोध अधिक तीव्र है क्योंकि उस पर आज के बौद्धिक, अतिबौद्धिक समाज का प्रभाव, विज्ञान तथा टैक्नोलॉजी का अधिक प्रभाव है। इसीलिए आज की कविता वैज्ञानिक प्रभाव से नहीं बच पायी।

आधुनिक कविता का सूत्रपात्र मध्यकालीन बोध के विरोध में हुआ। इसके मूल में आधुनिकता की प्रक्रिया है। आधुनिकता की चुनौती को हर कवि अपने परिवेश में स्वीकार करता है। आधुनिक कविता आदिकालीन, भक्तिकालीन तथा रीतिकालीन कविता से अलग होने का दावा करती है और यह दावा इसलिये भी करती है कि इन तीनों कालों की रचनाओं में मध्यकालीन बोध है,जो आज के आधुनिक बोध से बिल्कुल भिन्न हैं। अतः आधुनिक कविता के मूल्यांकन की समस्या भी तब ही आती है। जब इसके बोध में बदलाव आने लगता है।

आधुनिक कविता अपने प्रारम्भ बिन्दु से लेकर आज तक अपने विविध चरणों से गुजर चुकी है। आधुनिक कविता में आधुनिकता के इन्हीं चरणों का अध्ययन इस अध्याय में अपेक्षित हैं। ये चरण हैं– नवजागरण, स्वच्छन्दतावाद, छायावाद, छायावादोत्तर, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नयी कविता नवगीत, अकविता, सहज कविता तथा आज की वर्तमान कविता से होती हुई आज भी अपनी स्थिति में विकासमान है तथा आज यह कविता उत्तर आधुनिक होने की गवाही दे रही है। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने इन्हीं आधुनिकता के सोपानों की ओर संकेत करते हुए लिखा, "उत्तर छायावादी कविता में जब कभी इस प्रक्रिया में गतिरोध आया तब कविता को या तो नये वाद से पुकारा गया है। इसमें एक ही प्रक्रिया है, चुनौती आधुनिकता की है। यह भले ही छायावाद हो, प्रगतिवाद हो, नवस्वच्छन्दतावाद हो, या नवयथार्थवाद हो या अकविता। वाद तथा विवाद और भी हैं जैसे प्रपद्यवाद, हालावाद,

---

[1] डॉ० मनोहरलाल गौड़ ; घनानन्द और स्वच्छन्द काव्य धारा ; प्र०सं० संवत् 2015 वि०, पृ० 275.

अभिनव कविता, गीतिकाव्य तथा नवगीत आदि इस तरह आधुनिकता की प्रक्रिया अब तक जारी है।"[1] आधुनिक कविता में आधुनिकता की शुरूआत नवजागरण से की जा सकती है। जिस तरह नवजागरण से समाज में जागृति लाई जाती है। उसी तरह आधुनिकता भी मनुष्य को नवीन विचरणा के लिये उकसाती है। इसमें समस्त समाज का बोध होता है।

नवजागरण –हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग से नवजागरण का प्रारम्भ माना जाता है यद्यपि ऐसा नहीं है कि भारतेन्दु युग में केवल साहित्य में ही केवल नवजागरण हुआ, बल्कि इस युग के समाज में नवीन चेतना के भाव भी फूटे। हिन्दी में नवजागरण यूरोपीय रैनेसां के स्थान पर प्रयुक्त होता है। रैनेसां का अर्थ पुर्नजन्म होता है। "अतावली भाषा में रैनेसां को कला एवं ज्ञान का **रिनेसिमेन्ट** कहा गया है।"[2]

यूरोप में 14वीं शदी से नवजागरण का प्रारम्भ माना जाता है। इस युग में नये–नये अविष्कार हुए तथा धर्म व दर्शन का नया संस्करण किया गया, कला एवं ज्ञान विज्ञान की नवीन साधना का समारम्भ हुआ, राजनीति तथा समाज व्यवस्था में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। नवजागरण पर दृष्टि डालते हुए **जे0ए0 साइमंड्स** को यह स्पष्ट कर देना अवश्य प्रतीत होता है, "रैनेसां न तो मात्र आधुनिक युग का अरूणोदय है न अतीत की वापसी, न उच्च क्लासिकी ज्ञान की सुरक्षा का प्रयास, न सामंती व्यवस्था के विरूद्ध नयी शासन व्यवस्था की माँग और न ही अभूतपूर्व अविष्कारों की खोज।"[3] **डॉ0 बच्चन सिंह** नवजागरण पर विचार करते हुए कहते हैं कि,"पश्चिमी नवजागरण अपने को मध्यकालीन चेतना से, चर्च के चुंगल से मुक्त करता है। जब कि भारतीय नवजागरण अतीत से जुड़ा है उससे बहुत कुछ ग्रहण करके चलता है, सच तो यह है कि अपने यहाँ अतीत वर्तमान और भविष्य को विभाजन नहीं है।"[4] **हिन्दी साहित्य कोश** में,"नवजागरण युग में पश्चिमी यूरोप मध्ययुगीनता के बन्धनों से मुक्त हो वैयक्तिक चेतना विकसित करने लग गया था व्यक्ति–स्वातत्र्य की प्रतिष्ठा हुई और चर्च का प्रभाव घटा। मनुष्य की दृष्टि, जो मध्ययुग में सदा परलोक पर

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान (सम्पा0) ; कविता और कविता ; प्र0सं0 1967, पृ0 3.
[2] Encyclopedia America ; Ed. 1966. Vol. 23. Page 367.
[3] J.A. Symounds ; A Short History of Reanaissonee in Italy ; Ed. 1893, Page 3.
[4] डॉ0 बच्चन सिंह ; हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास ; प्र0सं0 1996, पृ0 304.

टिकी रहती थी, अब इस लोक में संचरण करने लगी। परलोक के ऊपर इहलोक की प्रतिष्ठा हुई। ऐहिक मूल्यों का मान बढ़ा।"[1]

भारतीय नवजागरण का इतिहास हमारे यहाँ 19वीं शदी से आरम्भ होता है। इसके लिए हिन्दी में पुनर्जागरण, पुनरूत्थान, नवोत्थान, नवयुग तथा नवजीवन आदि नाम प्रयुक्त हो रहें हैं। अतः भारतीय नवजागरण का मूल्यांकन करने के लिए ऐसा करना सही प्रतीत होता है। 19वीं शदी के राष्ट्रीय जागरण को 'नवजागरण' कहा गया। इसका अर्थ यह भी है कि इससे पूर्व भारतीय समाज में इस तरह की जागृति देखने को नहीं मिलती। सोये हुए राष्ट्र के जनजीवन में नवीन चेतना और ज्ञान का संचार करने वाले आलोक को नवजागरण कहा गया अर्थात् नवजागरण सुषुप्तावस्था से निकलने और अपने देश की खोई हुई पहचान को अपने सम्पूर्ण विवेक के साथ एक नई पहचान देने की स्थिति है।

भारतीय नवजागरण की गति एवं दिशा को समझने के लिए अतीत की सांस्कृतिक विपुलता को जान लेना अत्यन्त आवश्यक है। अतीत के जीवन मूल्य सदैव विलोपित नहीं होते बल्कि नवीन जीवन दृष्टि एवं मूल्यों का अवश्य ही निर्माण करते हैं। समाज को नियन्तित एवं विकासोन्मुखी बनाने में समाज की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। नवजागरण भी नये सामाजिक मूल्यों के अन्वेषण और जीवन रोधी मूल्यों को संशोधित करने मे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस सन्दर्भ में **सैय्यद जाफ़र रजा जैदी** का विचार है, "नवजागरण देश के अतीत पर गर्व करता है और उसकी ऊर्जा से देश के वर्तमान को सवाँरने का प्रयास करता है। जबकि पुनरूत्थानवाद देश के अतीत को आदर्श मानता है और उसको वर्तमान में रूपायित करने का प्रयत्न करता है। नवजागरण किसी जाति विशेष, धर्म विशेष अथवा सम्प्रदाय विशेष की आवश्यकता विशेष न होकर सम्पूर्ण देशवासियों की जरूरत होती है।"[2]

---

[1] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य कोश ; भाग 1, तृतीय सं0 1985, पृ0 313.

[2] डॉ0 अजब सिंह (सम्पा0) ; अभिनव भारती : हिन्दी शोध एवं समीक्षा (वार्षिक पत्रिका) ; संयुक्तांक वर्ष 1996–99, पृ0 62.

जहाँ तक भारतीय नवजागरण का प्रश्न है उस पर केवल पाश्चात्य औद्योगिक सभ्यता का प्रभाव नहीं अपितु इसके मूल में भारतीय सांस्कृतिक जागरण भी है। सन् 1857 की क्रान्ति भारतीय जनमानस तथा सामाजिक जीवन में बदलाव एवं परतन्त्रता के बन्धनों से मुक्ति के लिए था। अतः "नवजागरण जनमानस के विवेक को स्पर्श करता है, आन्दोलित करता है और उसे बौद्धिक चिन्तन के लिए प्रेरित करता है।"[1]

19वीं शदी के अन्त में ही नहीं अपितु सारे संसार में (समाज, साहित्य, संस्कृति एवं राजनीति) बहुत सारे परिवर्तन देखने को मिलते हैं अपनी मान्यताओं के प्रचार–प्रसार के लिए **राजाराम मोहन राय** ने 1828 में ब्रह्मसमाज की स्थापना की। **ब्रह्मसमाज** सर्वथा एक नवीन विचारधारा को प्रश्रय देकर एक विशाल मानववाद को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। आज आधुनिकता इसी मानवतावाद को प्रतिष्ठित करने में प्रयत्नशील है। **स्वामी दयानन्द सरस्वती** ने 1875 में **आर्य समाज** तथा श्रीमती **एनी बेसेन्ट** ने 1882 में **थियोसोफिकल सोसायटी** की स्थापना की। इन सब सम्प्रदायों को मूल उद्देश्य समाज से विकृतियों को दूर कर मानववाद तथा आदर्श समाज की स्थापना करना था।

बौद्धिक जागरण आधुनिकता की मांग है इस बौद्धिकवादी अथवा नवजागरण के युग में जहाँ समाज में इतने परिवर्तन हो रहे हों, तो आधुनिक कविता उससे प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकती है। **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** जो भारतीय समाज के पुरस्कर्ता एवं संदेश वाहक माने जाते हैं उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से जागृति लाने की चेष्ठा की अर्थात उन्होंने भारतीयों के मन मस्तिष्क से संकीर्णताओं के जालों को साफ किया, तथा समाज में स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये मंत्र फूँका । इसमें उनकी पत्रिका 'कवि वचन सुधा', 'हरिचन्द्र मैगजीन' तथा बालाबोधनी इसके अतिरिक्त उनकी काव्य कृतियाँ 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है', 'अन्धेर नगरी', 'वैदिक हिंसा–हिंसा न भवति' आदि का विशेष योगदान रहा है। **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी** ने **सरस्वती** पत्रिका एवं अपनी काव्य कृतियों के माध्यम से समाज में जागृति पैदा की तथा खड़ीबोली को साहित्य में प्रतिष्ठित करने में योगदान दिया।

---

[1] डॉ0 अजब सिंह (सम्पा0) ; अभिनव भारती : हिन्दी शोध एवं समीक्षा (वार्षिक पत्रिका) ; संयुक्तांक वर्ष 1996–99, पृ0 62.

इनके अतिरिक्त माखनलाल चतुर्वेदी, मैथलीशरण गुप्त तथा बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि ने साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज का मार्ग दर्शन किया। अतः नवजागरण भी आधुनिक युग में आधुनिकता का ही चरण है।

स्वच्छन्दतावाद–आधुनिकता मध्यकालीन भावबोध के विरोध में खड़ी हुई। जिस पाश्चात्य काव्य धारा ने हमारी काव्यधारा को नया मोड़ दिया। उसका नाम रोमांटिसिज्म है। श्रीधर पाठक ही इस स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा के अग्रदूत थे। उन्हीं के योग से इस आन्दोलन को बल मिला। बाद में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, बदरीनाथ भट्ट, हरिऔध और मैथिलीशरण गुप्त ने काव्य की इस स्वच्छन्द धारा को गति दी। डॉ0 अजबसिंह का मत है, "स्वच्छन्दतावाद एक कलात्मक आन्दोलन है, क्रान्ति है, परम्परा एवं रूढ़ियों के प्रति विद्रोह है तथा जीवन के प्रति विशेष प्रकार का रूझान है।"[1] यह वह विचारधारा है जिसने दो महायुद्धों के बीच के समय की हिन्दी कविता को सर्वाधिक प्रभावित किया। "स्वच्छन्दतावादी कविता में लोक जीवन तथा काव्य मिलकर एक हो जाते हैं। इसमें लोकधुन होती है। इसके कथ्य में संस्कृति प्रधान होती है।"[2]

आधुनिक काव्य धारा रोमानी है, जिससे स्वतन्त्रता की इच्छा, बन्धनों से मुक्ति, विद्रोह तथा नूतन अभिव्यंजना प्रणाली के दर्शन होते हैं, इसमें भावनाओं व संवेदनाओं की तीव्रता, प्रकृति प्रेम, जिज्ञासा व विस्मय का भाव सौन्दर्यवाद, मानववाद आदि अनेक प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। डॉ0 देवराज उपाध्याय का कथन है, "19वीं शताब्दी के आरम्भ में अंग्रेजी कवियों में एक अद्भुत उन्मुक्त भावधारा प्रबल होकर प्रकट हुई। इसमें परिपाटी विहित और परम्परामुक्त रस दृष्टि के स्थान पर कवि की आत्मानुभूति आवेग धारा और कल्पना का प्राधान्य था। इस विशिष्ट दृष्टि भंगी की प्रधानता को ध्यान में रखकर कुछ विद्वानों ने हिन्दी में इसे 'स्वच्छन्दतावाद' कहा है।"[3]

अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी की रूपरेखा के संघटन में वर्ड्सवर्थ की लिरिकल बेलेड्स

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 1.
[2] वही, पृ0 2.
[3] डॉ0 देवराज उपाध्याय ; रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र ; सं0 1951, पृ0 1 (भूमिका से)

की भूमिक, कॉलरिज की लिटरेरिया वायोग्राफिया शैली की दि डिफेन्स ऑफ पोइट्री ने जो मिलकर कार्य किया, वही पल्लव की भूमिका ने हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा के समर्थन में किया। "स्वच्छन्दतावाद नवयुग की समग्र प्रेरणाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला काव्य स्वरूप है जिसमें परम्परागत काव्य धारा और काव्योपकरणों के विरूद्ध विद्रोही उपकरणों की प्रधानता है। नई भावसृष्टि और नये अलंकरण हैं, बहिर्मुखता के स्थान पर अन्तर्मुखी प्रयाण है, प्रकृति का निसर्गजात आकर्षण है, पदावली में संगीत है। छायावाद काव्य में भी ये तत्त्व हैं।"[1]

स्वच्छन्दतावादी काव्य में मानवीय जीवन के अनेक नवीन पक्षों को उजागर किया, जिसमें साहित्य तथा मानवीय जीवन मूल्यों में नवीन परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए। यहीं से आधुनिकता के बिन्दु उभरने लगते हैं। "स्वच्छन्दतावादी में व्यक्तिवादी जीवन दृष्टि होते हुए भी स्वच्छन्दतावाद में सामाजिक भावना, सामाजिक यथार्थ की स्वीकृति तथा वैज्ञानिक जीवन चेतना के अनेक विकसित पहलू दिखाई देते हैं।"[2] आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी भी स्वच्छन्दतावादी काव्य के संदर्भ में कुछ इसी प्रकार विचार व्यक्त करते हैं, "नये काव्य में नये जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा और स्वातन्त्र प्रयोग की प्रवृत्ति थी। यह मौलिक स्वतन्त्रता का प्रतिफलन है, जिसके मूल में जनतान्त्रिक भावनायें हैं। नवीन काव्य में तथ्यों की मान्यता एवं नये नियमों के निर्धारण के लिये प्रयत्न हुआ छन्दों की भूमिका में भी नये काव्य में अनेक परिवर्तन हुए।"[3]

अतः स्वच्छन्दतावादी प्रतिक्रिया ने हमें साहित्यिक विचारधारा विषयक संकुचितता से मुक्त कर दिया। डॉ0 अजबसिंह का इस सन्दर्भ में कथन हैं,"ऐतिहासिक दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी धारा रोमांस के निकट है, जिसका प्रयास आदर्श दुनिया को बनाये रखना एवं विरोधाभास की घुस–पैठ को समाप्त कर देना भी है जिसमें यथार्थ व्यंग का अतिक्रमण

---

1 डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी ; आधुनिक काव्य : रचना और विचार ; द्वितीय सं0 1963, पृ0 35.
2 डॉ0 योगेश्वरी शास्त्री ; नन्ददुलारे वाजपेयी : स्वच्छन्दतावादी आलोचना के संदर्भ में ; प्र0सं0 1987, पृ0 76.
3 आ0 नन्ददुलारे वाजपेयी ; आधुनिक काव्य : रचना और विचार ; द्वितीय सं0 1963, पृ0 37.

न हो, वही स्वच्छन्दतावादी विचारधारा है।"[1] हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद और छायावाद दो सामान्तर धाराएँ चली, कभी–कभी तो विद्वानों ने इन्हें एक मान लिया लेकिन दोनों में अन्तर है। वस्तुतः छायावादी काव्य हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य है। इसमें नूतन भावभूमि और नवीन अभिव्यंजना पद्धति के दर्शन हमें इस काव्य में होते हैं। मानव जीवन की गतिशीलता में पूर्ण आस्था स्वच्छन्दतावादी काव्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। "जिस कविता के अन्दर समस्त शास्त्रीय परम्पराओं का तिरस्कार हो, स्थूलता के प्रति सुक्ष्मता का विद्रोह हो, एक अनन्त अभिलाषा एवं जिज्ञासा का भाव हो, दम घुटा देने वाली परिस्थितियों को बदल देने की कामना हो, भावी श्रेष्ठतर जीवन को प्राप्त करने की कल्पना हो, निरन्तर बढ़ते रहने की इच्छा हो, ससीमता को असीमता में बदल देने की चाह हो तथा अपनी वैयक्तिक अनुभूति को निस्संकोच व्यक्त कर देने की शक्ति हो, वह स्वच्छन्दतावादी कविता को छोड़कर और कुछ हो ही नहीं सकती।"[2]

स्वच्छन्दतावादी चिन्तन धारा ने मानववादी दृष्टिकोण को विकसित किया। जिस पर द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। अतः स्वच्छन्दतावाद ने जिस मानववादी दृष्टिकोण को साहित्य में स्थापित किया, आज वही मानववादी दृष्टिकोण आधुनिकता का केन्द्र बिन्दु है। डॉ0 देवराज उपाध्याय की पुस्तक 'रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र' की भूमिका में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वच्छन्दतावाद के सन्दर्भ में लिखते हैं–"रोमाण्टिक साहित्य वस्तुतः जीवन के उस आवेगमय पहलू पर जोर देने के कारण अपना यह रूप धारण कर सका। जो कल्पना प्रवण अन्तर्दृष्टि द्वारा चालित किंवा प्रेरित होता है और स्वयं भी इस प्रकार की अन्तर्दृष्टि को चालित और प्रेरित करता है।"[3]

इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद आधुनिकता की भाँति ही एक विचारधारा है। विज्ञान ने हमारे नैतिक मूल्यों में भी परिवर्तन किया। आधुनिकता इन्हीं नैतिक मूल्यों की ओर ध्यान आकर्षित करती है, "आधुनिक कविता मूलतः स्वच्छन्दतावादी काव्य परम्परा का अनुसरण कर रही है। अनुभूति की ईमानदारी स्वच्छन्दतावादी कविता की मूल चेतना है। आधुनिक कविता

---

[1] डॉ0 अजबसिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 198.
[2] डॉ0 त्रिभुवन सिंह ; आधुनिक हिन्दी काव्य की स्वच्छन्द धारा ; तृतीय सं0 1973, पृ0 81–82.
[3] डॉ0 देवराज उपाध्याय ; रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र ; सं0 1951, पृ0 1.

और आधुनिकता में अनुभूति की ईमानदारी की अभिव्यंजना कवियों की विशेष पहचान है।"[1] **डॉ0 योगेन्द्र शाही** का स्वच्छन्दतावाद के सन्दर्भ में मानना है, "स्वच्छन्दतावाद में यूगीन मानव चेतना को प्रकाशित करने की पूर्ण क्षमता है और वह व्यक्त भी हुई है। स्वच्छन्दतावाद एक ऐसा साहित्यिक आन्दोलन है, जिसने नये विज्ञान की यथार्थवादी मान्यताओं को आत्मासात् करते हुए उसे मानववादी रूप दिया है।"[2] डॉ0 देवराज उपाध्याय ने 'रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र' नामक पुस्तक में स्वच्छन्दतावादी सिद्धान्तों को विश्लेषित किया है। इस पुस्तक की भूमिका में **आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी** ने रोमाण्टिसिज्म का बहुत सुन्दर विवेचन किया है–"वे स्वच्छन्दतावादी साहित्य को मानसिक गठन मानते हैं।"[3]

आयार्य नन्ददुलारे वाजपेयी छायावादी काव्य की तीन अवस्थायें मानते हैं–

1. सृष्टि के प्रति विस्मय का भाव
2. मानसिक शान्ति की आकुलता का आभाव
3. प्रेम के प्रकाश की प्राप्ति

ये तीन अवस्थायें, जो छायावाद की चरम परिणत हैं। स्वच्छन्दतावादी काव्य की मूल प्रेरक शक्ति है। आज की कविता का धरातल मनोवैज्ञानिक है जो उसे स्वच्छन्दतावादी बनाने में सहायता करता है–"आधुनिक कविता और कला घोर व्यक्तिवादी बन गयी है। आज सभी कवि या लेखक एक ही विचारधारा के नहीं हैं। इनमें कुछ गतिशील कवि या लेखक भी हुए हैं, जिन्होंने सामाजिक क्रान्ति और परिवर्तन का सन्देश दिया है। वस्तुतः यह संदेश भी कल्पनात्मक एवं भावात्मक है, जो स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण का परिचायक है।"[4] स्वच्छन्दतावादी काव्य का सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक पक्ष डॉ0 नगेन्द्र ने प्रस्तुत किया– "आज का कवि आधुनिक कविता में वैयक्तिकता व आत्मपरकता, जीवन का वैयक्तिक निरीक्षण तथा विज्ञान की अभ्यासजन्य भूमिका–इन तीनों की समन्वित चेतना की अभिव्यंजना में नवीनता एवं मौलिकता को लिये हुए है। फलतः नवीनता व मौलिकता की समृद्धि के लिए

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 23.
[2] डॉ0 योगेश्वरी शाही ; नन्ददुलारे वाजपेयी : स्वच्छन्दतावादी आलोचना के संदर्भ में ; प्र0सं0 1987, पृ0 31.
[3] डॉ0 देवराज उपाध्याय ; रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र ; सं0 1951, पृ0 2.
[4] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 24.

कवि सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना से बिम्ब, प्रतीक, फैन्टेसी, आयरनी एवं मिथकीय चेतना के प्रस्तुतीकरण में स्वच्छन्द धरातल का निर्माण करता है।[1]"

आधुनिकता स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्ति मानववाद को अपने केन्द्र का मूल बिन्दु स्वीकार करती है। मानववादी विचारधारा चिन्तन जगत की श्रेष्ठतम उपलब्धि है। हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद के प्रवर्तक **श्रीधर पाठक** हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भी इन्हीं को मानते हैं। **रामनरेश त्रिपाठी** भी स्वच्छन्दतावादी कवियों में अग्रणी हैं। इनके **मिलन, पथिक** तथा स्वप्न खण्डकाव्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। भारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावादी युग का प्रारम्भ सन् 1920 के आस-पास माना जाता है। यह वह युग था जब काव्य में प्रसाद, पंत, निराला तथा महादेवी वर्मा का आगमन हो चुका था। इसमें कुछ विद्वान स्वच्छन्दतावाद को छायावाद समझने की भूल करते हैं। पंत के ज्योत्सना (नाटक), पल्लव, गुन्जन, तथा ग्राम्य (काव्यों), में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। 'निराला' की 'जूही की कली' (कविता) अनामिका, गीतिका, राम की शक्ति पूजा (कविता) आदि में स्वच्छन्दतावाद का आबाध रूप मिलता है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद आधुनिक कविता का एक चरण है। वस्तुतः "रोमाण्टिक साहित्य इसी प्रकार के कवि चित्त के के चित्त के आन्तरिक सौन्दर्य के आदर्श और बाहरी जगत के एकदम भिन्न परिस्थितियों के संघर्ष का परिणाम है। इसी सघर्ष में विद्रोह का स्वर भी है। परन्तु असली और प्रधान स्वर रचनात्मक है। वह कुछ नया करने का प्रयत्न है जो कुछ नया देखने की तीव्र आकांक्षा से उत्प्रेरित है और वाह्य असुन्दरता को बदलने के उद्देश्य परिचालित है। इस भाव धारा में स्नान करके पुरातन से भी नया रूप ले लिया है।"[2]

---

[1] डॉ० अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र०सं० 1987,पृ० 25.
[2] डॉ० देवराज उपाध्याय ; रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र ; सं० 1951, पृ० 5-6.

छायावाद– आधुनिक हिन्दी कविता मे छायावाद का आरम्भ 1920 के आस–पास माना जाता है। छायावाद विशेष रूप से हिन्दी साहित्य की 'रोमाण्टिक' उत्थान की काव्य धारा है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि "स्वच्छन्दतावाद की उस सामान्य भाव धारा की विशेष अभिव्यक्ति का नाम हिन्दी साहित्य में छायावाद पड़ा।"[1] मुकुटधर पाण्डे ने 1920 में श्रीशारदा पत्रिका (जबलपुर से) में 'हिन्दी में छायावाद' शीर्षक के चार निबन्धों की लेखमाला प्रकाशित करवाई तथा उस युग की प्रतिनिधि पत्रिका सरस्वती में छायावाद का प्रथम उल्लेख जून 1921 के अंक में मिलता है। कहीं सुशील कुमार ने हिन्दी में छायावाद शीर्षक एक संवादात्मक निबन्ध लिखा।

"छायावाद आधुनिक कविता की उस धारा का नाम है, जो 1918 के आस–पास द्विवेदी युगीन नीरस, उपदेशात्मक इतिवृत्तात्मक, स्थूल और आदर्शवादी काव्य धारा के बीच से प्रमुखतः रीतिकालीन काव्य वृत्तियों के विद्रोह के रूप में प्रवाहित हुई। यह नयी काव्य धारा अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों तथा बंगला कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की काव्यधारा के ढंग की या उससे प्रवाहित थी।"[2] 20वीं शताब्दी के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। इसका असर आधुनिक हिन्दी साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक था। सामन्तशाही व्यवस्था समाप्त हुई और उसके स्थान पर पूँजीवादी व्यवस्था का विकास हुआ। "पूँजीवादी व्यवस्था के माध्यम से व्यक्तिवादी चेतना फैली। छायावाद में वैयक्तिक बोध की अभिव्यंजना और सामाजिक बदलाव की अभिव्यक्ति है। छायावादी काव्य की चेतना केवल द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया नहीं है, वरन् तत्कालीन परिस्थितियों के फलस्वरूप वैयक्तिक चेतना की काव्यमयी अभिव्यक्ति है। छायावाद भारतीय परिवेश और जीवन से उपजने वाला काव्यान्दोलन है और इसकी संरचना में इसी देश की नूतन राजनीतिक एवं सांस्कृतिक नवजागरण की महत्वपूर्ण भूमिका है।"[3] वस्तुतः छायावादी काव्य हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य है नूतन भावभूमि और नवीन अभिव्यंजना पद्धति के दर्शन इस काव्य में होते हैं। "छायावाद साम्राज्य विरोधी चेतना के

---

[1] डॉ० नामवर सिंह ; आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ ; नवीन सं० 1999, पृ० 13.
[2] डॉ० धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा०) ; हिन्दी साहित्य कोश ; तृतीय सं० 1985, पृ० 251.
[3] डॉ० अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद : छायावाद ; प्र०सं० 1975, पृ० 9.

निखार की कविता है। इतिहास के प्रति छायावादी कवियों का दृष्टिकोण स्वाधीनता आन्दोलन की राजनीतिक प्रेरणा से ही निर्धारित होता है, बल्कि वह सामाजिक क्रान्ति से भी प्रभावित होता है। इस काव्य प्रवाह में भारतीय सामाजिक क्रान्ति की आकांक्षा की अभिव्यंजना है। इसमें वर्णगत उत्पीड़न का विरोध, शुद्र और नारी की समानता का समर्थक, धार्मिक अंधविश्वासों और रूढ़ियों का विध्वसंक काव्य है। स्वभावतः छायावाद जीवन की स्वीकृति का काव्य है।"[1]

छायावाद विकासमान आधुनिक भारतीय संस्कृति के अन्तर्विरोधों का काव्य है। इस अन्तर्विरोध का हेतु परम्परा और आधुनिकता का द्वन्द्व है। डॉ० नामवर सिंह का छायावाद के सन्दर्भ में मत है-"छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता है और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से। इस जागरण में जिस तरह क्रमशः विकास होता गया है, इसकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति भी विकसित होती गई। इसके फलस्वरूप 'छायावाद' संज्ञा का भी अर्थ विस्तार होता गया।"[2] छायावादी कविता व्यक्तिवादी कविता है जिसका प्रारम्भ व्यक्ति के महत्त्व को स्वीकार करना है। छायवादी युग भारत के लिए अस्मिता की खोज का युग था। जो शोषक समाज अपने को भाग्य का मात्र खिलौना समझता था, उस समाज में छायवादी काव्य के माध्यम से जागृति जागृत की गई। अब साहित्य के केन्द्र में निम्न वर्ग भी आने लगा।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार छायावाद का सामान्यतः अर्थ हुआ, प्रस्तुत के स्थान पर उसकी व्यंजना करने वाली छाया के रूप में अप्रस्तुत का कथन।"[3] इस तरह शुक्लजी छायावाद को मात्र अभिव्यंजना की शैली मानते हैं। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने छायावादी काव्य का तटस्थ और निष्पक्ष सौन्दर्य उद्घाटन किया, उसकी परिभाषा देते हुए उन्होंने कहा है, "मानव अथवा प्रकृति के सुक्ष्म किन्तु व्यक्त सौन्दर्य में आध्यात्मिक छाया का भाव मेरे विचार से छायावाद की सर्वमान्य परिभाषा हो सकती है।"[4] छायावादी काव्य को

---

[1] डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र०सं० 1975, पृ० 92.
[2] डॉ० नामवर सिंह ; छायावाद ; नवीन सं० 1995, पृ० 17.
[3] आ० रामचन्द्र शुक्ल ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; आठवां सं०, पृ० 669.
[4] आ० नन्ददुलारे वाजपेयी ; हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी ; सं० 1962, पृ० 156.

वाजपेयी जी ने वस्तुनिष्ठ होने के साथ ही संघर्ष मूलक जीवंत प्रेरणाओं से अनुप्रेरित माना है। यह मानवीय भूमिका का काव्य है जिसमें रागात्मक प्रवृत्ति है, जीवन के प्रति निषेधात्मक दृष्टि नहीं। इसमें आध्यात्मिक पक्ष की प्रेरणा धार्मिक न होकर मानवीय और सांस्कृतिक है। उनके अनुसार छायावादी काव्य में राष्ट्रीय विचारधारा, मानववाद स्वातंत्रता की लालसा, नवीन युग चेतना के साथ सांस्कृतिक पीठिका आदि दृष्टव्य है।

छायावादी युग की काव्यधारा में विविधता के बीच एक सामान्य एकता–स्वातन्त्र्य प्रेम के दर्शन होते हैं। यह उसी मुक्ति कर्म का परिणाम है, "छायावादी युग की कविता पुनरूत्थान युग की ही कविता का सहज विकास है। जो रीतिकाल की स्थूल ऐन्द्रियता, संकुचित दृष्टिकोण और काव्य रूढ़ियों के बन्धन तथा पांडित्य प्रदर्शन के विरोध में खडी हुई थी।"[1] छायावाद का मूल दर्शन सर्वात्मवाद है। छायावाद ने इसके दो मूल तत्त्वों को सौन्दर्य और प्रेम के रूप में ग्रहण किया है, भावना के क्षेत्र में जो सौन्दर्य है, वहीं चिन्तन और विचार के क्षेत्र में सत्य है।

व्यक्तिवाद छायावाद की प्रवृत्ति है। डॉ0 नगेन्द्र "छायावाद की कविता प्रधानतः श्रृंगारिक है, क्योंकि उसका जन्म हुआ है– व्यक्तिगत कुण्ठाओं से और व्यक्तिगत कुण्ठाऐं प्रायः काम के चारों ओर केन्द्रित रहती है जिस समय छायावाद का जन्म हुआ उस समय स्वच्छन्द विचारों के आदान से स्वतन्त्र प्रेम के प्रति समाज में आकर्षक बढ़ रहा था।"[2]

छायावाद का दूसरा अर्थ रहस्यवाद के सन्दर्भ में लिया जाता है जहाँ उसका सम्बन्ध काव्य वस्तु से होता है। इसीलिए रहस्यवाद को छायावाद का पर्याय मानते हुए उसे मूलतः पाश्चात्य मिस्टिसिज्म से सम्बन्ध मानना। आचार्य शुक्ल ने इसे 'रहस्यवाद' के अर्थ में ग्रहण किया। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, "नयी छायावादी काव्यधारा का भी एक आध्यात्मिक पक्ष है, परन्तु उसकी मुख्य प्रेरणा धार्मिक न होकर मानवीय और सांस्कृतिक है उसे हम बींसवीं शताब्दी की वैज्ञानिक और भौतिक प्रगति की प्रतिक्रिया भी कह सकते हैं।...... आधुनिक परिवर्तनशील समाज व्यवस्था और विचार जगत में छायवाद भारतीय आध्यात्मिकता की,

---

1 डॉ0 शम्भुनाथ सिंह ; छायावाद युग ; सं0 1962, पृ0 57.
2 डॉ0 नगेन्द्र ; आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ ; तृतीय सं0 1966, पृ0 16.

नवीन परिस्थिति के अनुरूप स्थापना करता है।"[1] अतः छायावाद मानव के नूतन उन्मुक्त भावलोक का काव्य है।

रहस्यवाद हिन्दी छायावादी कविता की एक विशिष्ट प्रवृत्ति है। छायावाद को रहस्यवाद का पर्याय मानना या रहस्यवाद को छायावाद का पर्याय मान लेना भ्रान्तितपूर्ण है। छायावाद में अन्तर्मुक्त होने पर भी उसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है। महादेवी वर्मा ने यामा काव्य संग्रह की भूमिका में छायावाद और रहस्यवाद में मनुष्य के हृदय और प्रकृति के उस सम्बन्ध में प्राण डाले हैं–"मानव हृदय की सारी प्यास बुझ न सकी, क्योंकि मानवीय सम्बन्धों में जब तक अनुराग–जनित आत्म विसर्जन का भाव नहीं धुल जाता तब तक वे सरस नहीं हो पाते, जब तक यह मधुरता सीमातीत नहीं हो जाती तब तक हृदय का अभाव नहीं दूर होता। इसी से इस अनेक रूपता के कारण पर एक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोप कर उसके निकट आत्म निवेदन करना इस काव्य (छायावाद) का दूसरा सोपान बना जिसे रहस्यमय रूप के कारण ही रहस्यवाद नाम दिया गया।"[2] अतः निस्संदेह छायावाद आन्तरिक अनुभूतियों का काव्य है लेकिन सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश के प्रति उसमें जैसी सजगता है, वैसी पूर्ववर्ती एवं परवर्ती काव्य में कम है। छायावादी काव्य में मानवीय संदेश, सौम्य और परिष्कृत भावों की उदात्त दृष्टि पर ध्यान दिया जाता है। इसमें नव निर्माण की अभिलाषा, विद्रोह चेतना, प्रकृति सौन्दर्य आशा और आस्था के स्वर इस काव्य की अप्रतिमनिधि है।

हिन्दी कविता में छायावाद के आधार स्तम्भ कवि 'जयशंकर प्रसाद', 'सुमित्रा नन्दन पंत', 'सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', तथा महादेवी वर्मा हैं। यह कवि पुरानी काव्य रूढ़ियों को तोड़कर, नये जीवन सत्य को वाणी दे रहे थे। छायावादी कविता का सर्वप्रथम स्वर 'प्रसाद' की 'झरना' में देखा जा सकता है। 'कामायनी' छायावादी काव्य का सर्वोच्च शिखर है। 'पंत' की 'पल्लव' को तो छायावाद का घोषणा पत्र माना जाता है। सन् 1929 में 'निराला' का 'परिमल' प्रकाशित हुआ, जिसमें 'जुही की कली', 'पंचवटी', तथा 'जागृति में मुक्ति' आदि

[1] आ0 नन्ददुलारे वाजपेयी ; आधुनिक साहित्य ; तृतीय सं0 संवत् 2018 वि0 , पृ0 351.
[2] महादेवी वर्मा ; यामा (काव्य संग्रह) ; तृतीय सं0 संवत् 2008, पृ0 8.

कवितायें हैं जिनमें छायावादी प्रवृत्तियों के साथ–साथ आधुनिकता के अंकुर भी देखें जा सकते हैं। महादेवी वर्मा छायावादी काव्य की महत्त्व की पूर्ण कड़ी है यद्यपि उनके काव्य में वेदना और निराशा की प्रधानता है। यही वेदना और निराशा भी आधुनिकता का परिणाम है।

अब प्रश्न यह है कि आधुनिक कविता में आधुनिकता की शुरूआत कहाँ से मानी जाए तो डॉ० इन्द्रनाथ मदान इसकी शुरूआत निराला की लम्बी कविता कुकुरमुत्ता से मानते हैं।"[1] इसीलिये शायद इसे आधुनिकता का दस्तावेज घोषित किया जाने लगा। कुकुरमुत्ता में आधुनिकता का बोध हरी घास पर क्षण भर में आधुनिकता की संवेदना से भिन्न है और अंधेरे मे आधुनिकता का स्वीकार अंधा–युग में आधुनिकता के स्वीकार–अस्वीकार से भिन्न है। आधुनिकता कभी परम्परा से कट जाने की गवाही देती है,विगत से नाता तोड़ने में झलकती है, तो कभी इसे नये धरातल पर जुड़ने की, विगत और अगत को मिथक के माध्यम से समकालीनता के स्तर पर जोड़ा भी गया है।"[2] छायावादी काव्य में परम्परावादी दृष्टि के स्थान पर नवीन रसज्ञता, नवीन शिल्प दृष्टि और नवीन जीवन मूल्यों का सृजना किया, जो आधुनिकता के पद चिन्ह है। छायावाद में आधुनिकता का बोध नामवर सिंह के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है–"छायावादी कवि ने नैतिकता की पुरानी रूढ़ियों को तोड़कर उसने मानव विवेक पर आधरित प्रेम सम्बन्धी नैतिक मूल्यों की स्थापना की, सूखे सुधारवाद की जगह छायावाद ने रागात्मक आत्म संस्कार का बीजोरोपण किया, मध्यवर्ग को व्यावसायिक प्रयोगशीलता तथा अत्यन्त उपयोगितावादी दृष्टिकोण से मुक्त कर आदर्शवाद के उच्च आकाश में विचरण करने की प्रेरणा दी।"[3] निराला की कविता कुकुरमुत्ता को आधुनिकता की दो दृष्टियों–समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा गया है। इसमें पहली दृष्टि डॉ० रामविलास शर्मा की है और दूसरी दृष्टि डॉ० इन्द्रनाथ मदान तथा दूधनाथ सिंह की है, "कुकुरमुत्ता में गुलाब को कोसा गया है और कुकुरमुत्ता को पोसा गया है, लेकिन इसके साथ ही इसका मजाक भी उड़ाया गया है। यह उपहास 'विसंगति' का

---

[1] डॉ० इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र०सं० 1973, पृ० 12.
[2] वही, पृ० 12.
[3] डॉ० नामवर सिंह ; आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ ; नवीन सं० 1999, पृ० 34.

बोध कराने लगता है जिसमें आधुनिकता उजागर होने लगती है।"[1] विसंगति के स्तर पर जो छायावादी विरोध है वह आधुनिकता के बोध को लिए हुए है।

आधुनिकता की चुनौती का परिणाम जो तोड़ती पत्थर और भिक्षुक की छायावादी करूणा और संवेदना के विरूद्ध है। इसमें विसंगति का बोध अस्तित्व को लिए हुए है। कुकुरमुत्ता के अतिरिक्त निराला की रानी और कानी, खजोरहा, प्रेम संगीत तथा पकोड़ी आदि का मिज़ाज और अन्दाज भी छायावादी कविता के स्वभाव और शैली के विरोध में है। "इस कविता में रामांटिक बोध के नये चरण और आधुनिकता की बीच तनाव की स्थिति है। यह शायद हिन्दी कविता में आधुनिकता के पहले दौर को सुचित करता है।"[2]

इस प्रकार तत्कालीन जीवन की व्यक्ति चेतना को उभार कर छायावाद ने आधुनिकता को एक महत्त्वपूर्ण आयाम दिया। "छायावाद व्यक्ति चेतना का काव्य होते हुए भी राष्ट्रीय चेतना के परिवेश से निर्मित है, इसीलिए वह एक ओर व्यक्तिगत जीवन की सुखात्मक–दुखात्मक नियति का भावुकतामय निवृत्ति तो करनी ही है, साथ ही सामाजिक जीवन की भी नियति की भावुकतामय अभिव्यक्ति और मूल्यों की खोज कराता है। 'तुलसीदास', 'कामायानी', 'राम की शक्ति की पूजा', 'परिवर्तन', 'सरोज स्मृति', आदि लम्बी कविताओं में व्यक्तिगत और सामाजिक राष्ट्रीय नियति का भावुक पर मार्मिक उद्‌घाटन है।"[3] अतः छायावाद व्यक्ति चेतना महत्त्व की स्वीकृति का काव्य है जो मध्यकालीन सामन्ती समाज, सभ्यता तथा रूढ़ परम्पराओं के विरोध में खड़ा हुआ। यह विरोध ही छायावाद को आधुनिकता के निकट ले जाता है। अतः छायावाद आधुनिकता का ही एक चरण है।

छायावादोत्तर हिन्दी कविता में देश एक विशेष वातावरण से गुजर रहा था। राजनीतिक एवं आर्थिक आन्दोलन इतने उग्र थे कि सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं से अपने को अलग रखना असम्भव था। सामाजिक क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन की आकांक्षा उत्पन्न हुई। "ऐसी स्थिति में एक तरफ युद्धों और आकाल की भयावहता ने इस जीवन की विषमताओं को लक्ष्य किया, व्यक्ति के अस्तित्व–प्रयत्नों को तोड़ा और सतही

---

[1] डॉ० इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिकता और हिन्दी साहित्य ; प्र०सं० 1973, पृ० 13.
[2] वही, पृ० 17.
[3] संस्कृति (त्रैमासिक पत्रिका) ; हेमन्त 1890 शक, अंक 1, वर्ष 10, पृ० 17.

जीवन मूल्यों – भोग, कुंठा, अहं, काम की तरफ जीवन धारा गतिशील की तो दूसरी तरफ व्यापक सामाजिक चेतना ने जीवन की निस्संग उमंग को प्रकट करते हुए आदमी में जीवन और मुक्ति की चेतना प्रकट की। परन्तु आर्थिक–धुरी की केन्द्रीयता ने भोग, कुण्ठा नियतिवाद को बढ़ावा दिया।"[1]

इस युग में कोरे अराजकतावादी प्रलय आह्वानों से अलग, सर्जना की। सजग भावना से उदबुद्ध होकर काव्य रचना होने लगी। छायावादोत्तर कवियों में विद्रोह और सामाजिक रूढियों को तोड़ फैकनें की क्षमता थी। इन कवियों को विवश होकर सामाजिक जन जीवन की भूमि पर पैर रखना पड़ा। इस तरह कवि आदर्शवाद से हटकर सामाजिक यथार्थ की ओर बढ़े। वे आधुनिक जीवन की अशान्ति और असन्तोष के मूल में आर्थिक विषमता देखते हैं। इस युग की कविता में वैयक्तिक जीवन की असफलताओं और आभावों से उत्पन्न गहरी निराशा, वेदना और मृत्यु कामना की अभिव्यक्ति है। बच्चन,' नरेन्द्र, भगवतीचरण वर्मा और अंचल की कविताओं में यह एकाकीपन, निराशा, और वेदना बहुत अधिक है। उनका जीवन समाज से संघर्ष करता हुआ दिखाई पड़ता है।

नरेन्द्र शर्मा की इन पंक्तियों में विफल प्रेम का एक स्पष्ट चित्र है–

"आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे ?
आज से दो प्रेम योगी वियोगी ही रहेंगे।
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे ?"[2]

हरिबंशराय बच्चन की मधुशाला, मधुवाला और मधुकलश में भी अधिक देर तक भ्रमपूर्ण आनन्द नहीं मिलता। कवि में वेदना का पुट इतना अधिक है कि वह जीवन से निराश हो गया। किन्तु इस निराशावादी और फक्कड़पन की स्थिति में रहने तथा प्रेमी प्रेमिका की भावनाओं की अभिव्यंजना से ही समस्या का समाधान सम्भव नहीं है इसीलिए कवियों ने अपने काव्य में स्वाधीनता की भावना को उत्कृष्ट अभिव्यक्ति प्रदान की। इन कवियों में मुख्य रूप से रामधारी सिंह 'दिनकर', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी

[1] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 142.
[2] नरेन्द्र शर्मा ; आधुनिक कवि ; द्वितीय सं0 जनवरी 1967, पृ0 19.

चौहान, सोहनलाल द्विवेदी तथा माखनलाल चतुर्वेदी प्रमुख हैं। "ऐतिहासिक दर्शन की दृष्टि से इन कवियों का बोध उतना सुलझा, स्पष्ट तथा व्यापक न रहा हो, पर पूँजीवादी–साम्राज्यवादी संस्कृति के विरूद्ध तथा जनजीवन की विषमताओं आर्थिक कठिनाईयों तथा वर्ग संघर्ष के पक्ष में उन्होंने अनेक रूपों से अपनी सशक्त सहानुभूति तथा संवेदना की सफल अभिव्यक्ति की है।"[1] 'सोहनलाल द्विवेदी' व 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' राष्ट्रीय क्रान्ति के प्रबल समर्थक थे। वे दासता से मुक्ति चाहते थे। इसीलिए 'नवीन' ने क्रान्ति की ज्वाला जलाकर अपना सब कुछ न्यौछावर करने की बात कहीं –

"कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं जिससे उथल–पुथल मच जाये।"[2]

उत्तर छायावादी कविता उसी तरह आदर्श के प्रति यथार्थ का विद्रोह है, भावुकता के प्रति बौद्धिकता की प्रतिक्रिया है, सुक्ष्मता के स्थान पर गहनता की स्थापना है, उदात्ता के स्थान पर वास्तविकता के प्रति मोह है, शाश्वत की जगह क्षण की महत्ता है, अलौकिकता के स्थान पर लौकिकता के प्रति आग्रह है। इसी समय गाँधीवाद, मार्क्सवाद तथा फ्रायदवाद की विचारधाराओं से कवि–मानस को उद्वेलित किया। मध्यवर्गीय समाज की चेतना इन विचारधाराओं के सम्मिश्रण के धरातल पर उभरने लगी थी। 'दिनकर', 'बच्चन', 'भगवतीचरण वर्मा', 'अंचल' तथा नरेन्द्र आदि कवियों ने नूतन चेतना के विभिन्न आयामों से युक्त होकर भारतीय जीवन की रागिनी के आयामों से युक्त होकर भारतीय जीवन के रागिनी के चित्रण का प्रयत्न किया है। "छायावाद के मूल में जो व्यक्तित्ववाद था वह अधिक वेग एवं विश्वास के साथ इस काल के प्रगीतकाव्य में व्यंजित होने लगा, जिसे प्रगतिवादी आलोचक व्यक्तिवाद की संज्ञा देकर ह्रासशील कहना उचित समझते हैं। इन कवियों का अदम्य व्यक्तिवाद एक ओर आर्थिक कुंठाओं से और दूसरी ओर काम वर्जनाओं से मुक्ति पाने के लिये मार्क्सवाद तथा फ्रायडवाद से प्रेरणा ग्रहण करता है।"[3] वस्तु छायावादोत्तर काव्य साहित्य में एक नवीन चेतना को लेकर प्रकट हुआ जिसनें साहित्य एवं समाज को आधुनिक

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 144.
[2] बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ; हम विषपायी जनम के ; सं0 1964, पृ0 429.
[3] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 146.

संदर्भों में व्यंजित किया। अतः यह काव्य आधुनिकता के प्रमुख बिन्दु के रूप में उभर कर सामने आया।

प्रगतिवाद– प्रगतिवादी काव्य की संज्ञा उस काव्य को प्रदान की गई जो छायावाद की समाप्ति के बाद 1936 के आस–पास साहित्य में जो नई धारा देखने को मिली उसे गतिवाद कहा गया। प्रगतिवाद पूँजीवाद की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न नयी वैचारिक धारा है जो साम्यवाद का पोषक है। प्रगतिवाद साहित्य में समाजवादी यथार्थवाद को लेकर उपस्थिति होता है। यह यही समाजवादी यथार्थवादी मार्क्सवादी दृष्टि है। 'डॉ0 नामवर सिंह' के अनुसार, "छायावाद के गर्भ से सन् 1930 के आस–पास नवीन सामाजिक चेतना से युक्त जिस साहित्य–धारा का जन्म हुआ उसे सन् 1936 में प्रगतिशील साहित्य अथवा प्रगतिवाद की संज्ञा दी गई।"[1]

प्रगति अंग्रेजी के प्रोग्रेस का रूपान्तर है। जिसका अर्थ होता है– आगे बढ़ना, उन्नति करना, ऐसा परिवर्तन लाना जो किसी वस्तु गुण या परिणाम में वृद्धि ला सके। इसीलिये **आधुनिक कवि** की भूमिका में पंत ने लिखा–"छायावाद इसलिये अधिक नहीं रहा कि उसके पास भविष्य के लिए उपयोगी नवीन आदर्शों का प्रकाश, नवीन भावना का सौन्दर्य बोध और नवीन विचारों का रस नहीं था। वह काव्य न रहकर अलंकृत संगीत बन गया।"[2] प्रगतिशील साहित्य अंग्रेजी के 'प्रोगेसिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी में इस शब्द का प्रचार 1935 के आस–पास हुआ। जब ई0एम0 फार्स्टर के सभापतित्त्व में पेरिस में **प्रोगेसिव राइटर्स एसोशियेशन** नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। इन 1935 में डॉ0 मूल्कराज आनन्द तथा सज्जाद जहीर ने भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना की। इसका पहला अधिवेशन लखनऊ में प्रेमचन्द के सभापतित्त्व में हुआ। तथा दूसरा रवीन्द्रनाथ ठाकुर के सभापतित्त्व में कलकत्ता में हुआ।

कोई भी युग अथवा आन्दोलन अपने से पूर्व युग या आन्दोलन का पूरी तरह से विद्रोह करके खड़ा नहीं होता, अपितु उससे कुछ न कुछ ग्रहण करके अवश्य करके चलता

---
[1] डॉ0 नामवर सिंह ; आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ ; नवीन सं0 1999, पृ0 59.
[2] सुमित्रानन्दन 'पंत' ; आधुनिक कवि ; दसवॉं सं0 5100 (भूमिका से), पृ0 11.

है, तो प्रगतिवादी काव्य के लक्षण तो हमें छायावादी युग में पंत की युगवाणी और ग्राम्य में देखने को मिल जाते हैं। प्रगतिवाद अपने मूल में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को लेकर चल रहा है।"[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान "प्रगतिवाद का प्रेरणा स्रोत मार्क्सवादी जीवन दर्शन को मानते हैं इसीलिये प्रगतिवाद को मार्क्सवाद का साहित्यिक संस्करण भी माना जा सकता है।"[2] अतः प्रगतिवादी काव्य प्रगतिशील समाज के सुख–दुख की अभिव्यक्ति को अधिक महत्त्व प्रदान करता है। वह व्यक्तिगत सुख–दुख की अभिव्यक्ति नहीं करता। "प्रगतिवादी धारा में वस्तुतः अभिव्यंजित जीवन दर्शन साम्यवादी है। यही साम्यवाद कविता में प्रगतिवाद बन गया। यह आध्यात्मवाद का विरोधी है और इसकी सबसे बड़ी देन ईश्वर धर्म एवं नियति आदि के जंजाल से मुक्त सामाजिक चेतना है।"[3] प्रगतिववाद का मूल बिन्दु मानववादी दृष्टिकोण है। यह उसके अपने समय के कुंठित, निराश, असहाय एवं यौन वर्जनाओं में निहित वर्ग समाज को अभिव्यक्ति प्रदान की। "प्रगतिवादी कविता इस कारण सही और सच्ची मानववादी कविता है कि वह मनुष्य के सचेतन व्यक्तित्व को प्रधानता देती है।"[4] कुल मिलकर प्रगतिवाद व्यापक मानवता से प्रेरित ऐसा साहित्य है जिसमें जनजीवन के यथार्थ का चित्रण करते हुए मानव और समाज के कल्याण और विकास की आकांक्षा व्यक्त की गई है।

प्रगतिवाद ने सामान्तवाद और पूँजीवाद की विभिषिकाओं को कुचलकर सर्वहारा समाज का वर्चस्व स्थापित करना चाहा, जिससे समाज को एक नवीन दिशा मिली। प्रगतिवाद ने सौन्दर्य बोध को नये दृष्टिकोण से देखा। वह वर्तमान जनजीवन में सौन्दर्य खोजता है। इस युग में आकर कविता तथा जीवन को यथार्थ के धरातल पर देखा तथा परखा जाने लगा। "आधुनिक प्रगतिशील हिन्दी कविता भारतीय जनता की श्रेष्ठतम सांस्कृतिक विरासत से स्वतन्त्रता, उज्जवल भविष्य, शान्ति एवं लोकतंत्र के लिए संघर्ष से और व्यक्तिवाद, नैतिक पतन के विचारों तथा व्यक्तित्व के अमानवीकरण के भावों से भरपूर साहित्य द्वारा अपनाई गई प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों के विरूद्ध चल रहे सतत् संघर्ष से दृढ़

[1] डॉ0 नगेन्द्र ; आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ ; तृतीय सं0 अगस्त 1966, पृ0 107.
[2] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आधुनिक कविता का मूल्यांकन , प्र0सं0 1962, पृ0 58.
[3] डॉ0 अजब सिंह ;आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र0सं0 1975, पृ0 168.
[4] वही, पृ0 171.

सम्बद्ध रही है और वह भारतीय समाज के समस्त आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर रही है।"[1]

इस प्रकार 'पंत' की 'युगवाणी', 'ग्राम्य' तथा 'युगान्त' आदि काव्य संग्रहों में उनकी नयी शैली की कविताऐं आयी। 'निराला' ने भी प्रगतिवाद को काफी शक्ति प्रदान की। उनकी 'भिखारी', 'बादलराग' आदि इसी शैली की कविताऐं हैं। जब प्रगतिवादी आन्दोलन ने जोर पकड़ा तो उन्होंने 'कुकुरमुत्ता', 'नये पत्ते' जैसी तीखे व्यंग्य परक कविताऐं लिखीं। इनके अतिरिक्त प्रगतिवादी कवियों की श्रेणी में –रांगेय राघव, नागार्जुन, शिवमंगल सिंह 'सुमन', 'केदारनाथ अग्रवाल', डॉ० रामविलास शर्मा, शमशेर बहादुर सिंह, मुक्तिबोध, भवानी प्रसाद मिश्र तथा नरेन्द्र शर्मा आदि कवि उल्लेखनीय है इस प्रकार प्रगतिवादी काव्य अपने अन्दर आधुनिकता का एक चरण समेटे हुए है।

प्रयोगवाद– सन् 1943 के आस–पास प्रगतिवाद की समाप्ति के पश्चात् हिन्दी साहित्य में एक नवीन आन्दोलन सामने आया, जिसे प्रयोगवाद नाम दिया गया। वैसे इसका प्रारम्भ 'तारसप्तक' (1943) से माना जाता है। प्रयोग शब्द अंग्रेजी के 'एक्सपेरिमेन्ट' के वजन पर हिन्दी में चला। इस शब्द का असली सम्बन्ध विज्ञान की अन्वेषण कार्य विधि से माना जाता है। प्रयोग जीवन को उदात्त भावनाओं के विकास का समर्थक तथा सहायक होता है। जीवन निरन्तर विकासमान रहता है। देश स्थिति और यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में इस विकास को समझने तथा उसे अधिक गतिशील बनाने की प्रक्रिया को ही प्रयोग कहते हैं, "सम्पूर्ण जीवन बड़ी तेजी के साथ बदल रहा है। मशीनी सभ्यता और संस्कृति में पल्लवित होने वाला समाज अपने पूर्व समाज से सर्वथा भिन्न था। प्रगतिवाद तक आते–आते युग का दृष्टिकोण यथार्थ मूलक मात्र हो सका, वैज्ञानिक नहीं। निस्सन्देह आज के वैज्ञानिक युग में पूरा ताना–बाना उलट–पलट गया है। मानवीय सम्बन्ध, मानवीय मूल्य पहले की अपेक्षा अधिक जटिल, संकुल और अस्त–व्यस्त है। आर्थिक कठिनाइयाँ, राजनीतिक संघर्ष और वैज्ञानिक

[1] डॉ० ई० चेलिशेव ; सुमित्रानन्दन पंत : आधुनिक हिन्दी कविता में परम्परा और नवीनता , प्र०सं० 1970, पृ० 18.

अविष्कार आज समाज को बड़ी तेजी के साथ बदलते जा रहे हैं।"[1]

प्रयोगवादी कविता में ह्रासोन्मुख मध्यमवर्गीय समाज के जीवन का चित्र है। प्रयोगवादी कवि जन जीवन के अंकन के चक्कर में न पड़कर, अपने जीवन की भोगी हुई वेदना को व्यक्त करना पसन्द करता है। इस दृष्टि से प्रयोगवादी काव्य एवं कवि यथार्थवादी है। वे भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता को स्वीकारते हैं। ये मध्यवर्गीय जीवन की समस्त जड़ता, कुण्ठा, अनास्था, पराजय तथा मानसिक संघर्ष के सत्य को बड़ी बौद्धिकता के साथ उद्घाटित करता है। इसीलिए "प्रयोगवाद बौद्धिकता के स्तर को स्वीकार करके चलता है कि अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए माध्यम की उपयोगिता है, न कि माध्यम की सीमाओं के अनुसार अभिव्यक्ति की काट–छाँट की। अनुभूतियों के स्तर पर प्रयोगवाद यह स्वीकार करता है कि कोई भी अनुभूति अपने क्षण में उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी समूचे जीवन में मुक्त विस्तार में।"[2]

आधुनिकता अपना मार्ग ढुढ़ रही थी वह पुराने संस्कारों और मूल्यों के कारण वह अवरूद्ध हो जाती है। कवि का आन्तरिक द्वन्द्व आधुनिकता के चेहरे को साफ–साफ उभरने नहीं देता। अज्ञेय ने इस प्रयोग धर्मिता से जोड़कर एक नवीन आयाम दिया। अज्ञेय ने 'तारसप्तक' के कवियों को 'राहों का अन्वेषी' कहा। अतः राहों का अन्वेषी होना काव्य के प्रति प्रयोगवादी दृष्टिकोण रखना है। 'तारसप्तक' के ये सभी कवि जो कविता नयी राहों तथा नयी काव्य रीतियों के अन्वेषण के पक्षधर है। अतः 'अज्ञेय' के इस कथन के आधार पर 'तारसप्तक' के कृतित्त्व को आलोचकों ने प्रयोगवाद की संज्ञा दी। "प्रयोगवादी कविता ने परम्पराओं की पगडंडी को छोड़ दिया। इस काव्यधारा की सलिलता में जीवन का यथार्थ प्रवाहित होने लगा।.............प्रयोगवादी काव्यधारा में नूतन संस्कार नये यथार्थ से ग्रहण किये गये हैं, और यह नया यथार्थ ही नया सत्य है।"[3] डॉ० नरेन्द्र मोहन का मानना है कि "प्रगतिवादी कवियों ने अपने प्रयोगों द्वारा पुरानी काव्य रीतियों और रूढ़ियों को तोड़कर नयी और अनजानी राहों पर चलने के खतरे उठाये थे और कविता के स्तर पर प्रयोग की

---

[1] धीरेन्द्र वर्मा (सम्पा०) ; हिन्दी साहित्य कोश ; तृतीय सं० 1985, भाग 1, पृ० 409.
[2] वही, पृ० 410.
[3] *डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र०सं० 1975, पृ० 182.*

सार्थकता और औचित्य प्रमाणित करने की कोशिश की थी। इस कोशिश में वह सर्वत्र सफल रहें हो ऐसी बात नहीं। उनके प्रयोग कहीं–कहीं नितान्त वैयक्तिक, अनर्गल और हास्यापद प्रतीत होते हैं, पर उनकी प्रयोगशील वृत्ति ने आधुनिकता बोध की भूमिका निर्मित करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया, इसमें सन्देह नहीं।"[1]

प्रयोगवादियों में नएपन का इतना मोह प्रबल था कि उन्होंने शब्द, पद, वाक्य, छन्द, बिम्ब, उपमान, विचार तथा मनः दशाओं के क्षेत्र आदि में नये–नये प्रयोग किये। प्रयोगवादी कवियों में–**नेमिचन्द्र जैन, मुक्तिबोध, भरतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे** तथा **गिरिजा कुमार माथुर** आदि हैं। प्रयोगवादी कविता ने लघुमानव और उसकी समस्त हीनता तथा महत्त्व को प्रस्तुत करके प्रयोगवादी कविता के प्रति सहानुभूतिपरक दृष्टि से सोचने के लिए नया मार्ग प्रसस्त किया। मानव अपनी सभी दुर्बलताओं, हीनताओं, लघुताओं और महत्ताओं के बीच यथार्थ है। अतः यथार्थ मानव की सृष्टि के लिए उसके जटिल परिवेश को अंकित करना प्रयोगवादी कवि का धर्म है। अतः प्रयोगवादी काव्य भी आधुनिकता का ही एक रंग है।

नयी कविता– सन् 1950 के बाद नयी कविता का प्रारम्भ माना जा सकता है। कई विचारक प्रयोगवाद और नयी कविता में किसी प्रकार का अन्तर मानने के पक्ष में नहीं है अर्थात नयी कविता को प्रयोगवाद का पर्याय मानते हैं। मेरे विचार से ऐसा अनुचित है। यह मान लेना अधिक तर्क संगत है कि नयी कविता का सम्बन्ध भाव एवं विचार उसी परिवेश की उपज हैं जिन्हें प्रयोगवाद ने निर्मित किया। अतः नयी कविता के उद्‌भव और विकास में प्रयोगवाद के तत्त्वों को खोजा जा सकता है, लेकिन नयी कविता को प्रयोगवाद का 'फालोऑन' नहीं कहा जा सकता।

वैसे तो छायावाद के बाद आधुनिक कविता की भाव एवं विचार भूमि में इतने अधिक परिवर्तन आये कि कविता नित नया रूप धारण करने लगी। अतः इसे नये–नये नामों से पुकारा जाने लगा। **गिरिजाकुमार माथुर** इस अस्वीकृति का नया उन्मेश कहते हैं। **अज्ञेय** इसे पहले **प्रयोगशील** कविता का नाम देते हैं और बाद में नयी कविता का नाम देते हैं। नवीन कवि इसे **प्रपद्यवाद** की संज्ञा देते हैं, प्रारम्भ में कवि इसे **अभिनव कविता** के नाम से

---

[1] डॉ0 नरेन्द्र मोहन ; आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ ; प्र0सं0 1973, पृ0 30.

पुकारना चाहते थे, **लक्ष्मीकान्त वर्मा** इसे ताजा **कविता** कहना भला समझते हैं, जगदीश गुप्त इसे **नयी कविता** कहकर संतोष पा लेते हैं, इसका नवीनतम नाम **अकविता** है यह अस्वीकृति का नया उन्मेष न होकर, अस्वीकृति की अस्वीकृति है, एक निरन्तर प्रक्रिया का परिणाम है। जिसके मूल में आधुनिकता है।"[1]

नये पत्ते (1953), **नयी कविता** (1954) और **निकष** (1955) आदि पत्रिकाओं के प्रकाशन से नयी काव्य प्रवृत्ति में आन्दोलनात्मक त्वरा आई और इसकी वैचारिक पीठिका बनी। नयी कविता युगीन चेतना और नयी सौन्दर्याभिरूचि को कविता में व्यापकता के साथ लेकर प्रकट हुई। नयी कविता में केवल दृष्टिकोण, विषयवस्तु, रचना विधान और शिल्प की नवीनता ही नहीं, अपितु "वह नये मानव मूल्यों की खोज और उनकी स्थापना दृष्टि से भी नितान्त नवीन दिशापन्थों का सन्धान करती है और उन पर अग्रसर होने के लिए सचेष्ट रहती है।"[2]

नयी कविता किसी प्रतिक्रिया से नयी उपजी है, वह आधुनिक मानव की सहज परिणति है। बौद्धिकता का परिणाम है। नयी कविता ने व्यक्ति के 'स्व' और उसके अस्तित्व बोध के सवाल को आम–आदमी की संवेदना के स्तर पर आँकने की कोशिश की। इस दृष्टि को **लघुमानववादी** कह सकते हैं। इसमें सामान्य मनुष्य के भोगे हुए यथार्थ को प्रतिष्ठित कर, जीवन की साधारणता को महत्त्व दिया गया। **लक्ष्मीकान्त वर्मा** की **अतुकान्त कविता** में **लघुमानव** की व्याख्या की। "नये कवि ने काव्य सम्बन्धी सैद्धान्तिक रूढियों को तोड़कर कविता को नये रूप में परिकल्पित किया। यह आधुनिकता की व्यापक चेतना और नये सौन्दर्य बोध के प्रसार का परिणाम था।"[3]

नयी कविता विघटन और पराजय से युक्त मानव को उसकी अस्मिता और स्वत्व की पहचान कराती है। **मुक्तिबोध** की कविताओं का स्वर बदला हुआ है। इनकी संवेदनाऐं जीवन के यथार्थ को अपनाये हुए हैं। इनके अनुसार व्यक्ति का विघटन पूँजीवाद की देन है।

---

[1] डॉ0 इन्द्रनाथ मदान (सम्पा0) ; कविता और कविता ; प्र0सं0 1967, पृ0 18.
[2] डॉ0 रवीन्द्र 'भ्रमर' ; समकालीन हिन्दी कविता ; प्र0सं0 1972, पृ0 31.
[3] डॉ0 नरेन्द्र मोहन ; आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ ; प्र0सं0 1973, पृ0 37.

जिसने जीवन के संतुलन को असंतुलित कर दिया। मुक्तिबोध की अधिकांश कवितायें मनुष्य की अस्मिता एवं उसके अस्तित्व की खोज में भटक रही है। **ब्रह्मराक्षस** तथा **अंधेरे में** आदि कविताओं में जीवन दृष्टि आधुनिकता की चनौती को स्वीकार करने के लिए व्याकुल। यह व्याकुलता आज के कुण्ठित एवं त्रस्त मानव की है जो अपनी अस्मिता की खोज में भटक रहा है। नयी कविता के अन्य कवि-गिरिजाकुमार माथुर, शमशेर बहादुर सिंह, कुँवरनारायण, धर्मवीर भारती, प्रभाकर माचवे, विजयदेव नारायण साही, भवानी प्रसाद मिश्र, नागार्जुन, केदारनाथ सिंह तथा केदारनाथ अग्रवाल आदि की कविताओं में यह चुनौती देखने को मिल सकती है। इन सभी कवियों ने समाज के उपेक्षित वर्ग को अभिव्यक्ति दी है।

नयी कविता अतिबौद्धिकवादी होने के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक भी हो गयी है, इसलिए उसके कथ्य और शिल्प में परिवर्तन होना स्वाभाविक है, "हिन्दी की नई कविता या आज की अन्य भंगिमा की कविताओं में भाषा, छन्द, मिथक, बिम्ब, प्रतीक, प्रगीत एवं रूप की अभिव्यक्ति नये रूपों में होती है।"[1] अतः नयी कविता की भावभूमि के केन्द्र में वह मनुष्य है जो युग जनित कुण्ठाओं और वर्जनाओं को कुचलता हुआ, सामाजिक यथार्थ से जूझता हुआ, मानवता के नवीन आयामों को विकसित कर रहा है।"नयी कविता में समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद एवं भारतीय परम्परागत आधुनिकता के क्रम में नवरहस्यवादी चिन्तन बिन्दुओं के रूप में कवियों का रचना संसार अपना विस्तार रखता है। वस्तुतः नयी कविता में आधुनिकता के इन त्रिकोणात्मक रूपों की प्रस्तुति हुयी है।"[2]

नवगीत-हिन्दी गीतकाव्य की परम्परा का इतिहास काफी पुराना है गीतकाव्य का प्रारम्भ जयदेव से माना जाता है। आदि ग्रन्थों में **जयदेव और रामानन्द** के गीतों को सर्वाधिक प्राचीन माना जाता है। सन्त काव्य की अधिकांश रचनाऐं इसी कोटि की हैं। गीत काव्य के विकसित रूप को प्रगीत कहा जाता है, जो गीतिकाव्य का ही अंग है। इस तरह आदिम सभ्यता के युग से लेकर अब तक विकास के विभिन्न सोपानों को पार करता हुआ,

---

[1] डॉ० अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र०सं० 1987, पृ० 65.
[2] वही, पृ० 46.

गीतिकाव्य एक ऐसे हर बिन्दु पर पहुँच गया है जहाँ उसकी अपनी पहचान खो गयी है। "साहित्यिक गीत–यह गीतिकाव्य का एक सोपान है। वर्तमान समय में गीतिकाव्य की अनेक उपविधायें हैं। जैसे प्रगीत (टेक–विहीन लघु काव्य) गीत (टेक युक्त चरणबद्ध रचना), सॉनेट, गज़ल, छन्दमुक्त लघु कवितायें जिनके लिए 'नई कविता' संज्ञा रूढ़ हो गयी है।"[1]

आधुनिक युग के छायावादी युग में गीत परम्परा का आबाध गति से विकास होता गया। निराला की जुही की कली, बादल राग, संध्या सुन्दरी आदि प्रसाद की कामायनी के अनेक अंश स्वतन्त्र गीत काव्य हैं, और प्रेम पथिक का कथात्मक गीतवेश है। स्वच्छन्दतावादी कवियों में–बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', बच्चन, भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा, अंचल आदि व्यक्तिवादी स्वच्छन्दतावाद के कवियों ने जिन गीतों एवं प्रगीतों की रचना की। वे नितान्त वैयक्तिक अभिधात्मक, वर्णनात्मक तथा गम्भीर्यविहीन होने के कारण छायावादी गीतों और प्रगीतों की तुलना में महत्त्वहीन हैं। "प्रगतिवादी कवियों ने भी गीतों की रचना की जो शिल्प की दृष्टि से पारम्परिक ही थी, किन्तु उसका कथ्य सामाजवादी यथार्थवाद अथवा मार्क्सवादी सिद्धान्तों से प्रभावित था।"[2]

नवगीत आन्दोलन का समुचित विकास 1950 के बाद नयी कविता के सामान्तर हुआ। दूसरे शब्दों में प्रयोगवाद और नई कविता के समानान्तर एक नई गीतधारा अपना पथ सवाँर रही थी। नवगीत की संज्ञा सबसे पहले सम्भतः सन् 1958 में प्रयुक्त हुई जब मुज़फ्फरपुर (विहार) से विभिन्न गीतकारों की गीत रचनाओं का संग्रह, गीतांगिनी नाम से प्रकाशित हुआ। "नवगीत नयी अनुभूतियों की प्रक्रिया में संचयित मार्मिक समग्रता का आत्मियता पूर्ण स्वीकार होगा, जिसमें अभिव्यक्ति के आधुनिक निकायों का उपयोग और नवीन प्रविधियों का संतुलन होगा।"[3] वाराणसी की वासन्ती (मासिक पत्रिका) ने नये गीत : नये स्वर नामक लेख माला का आयोजन 1961–62 में किया, जिसके अन्तर्गत गिरिजाकुमार माथुर, डॉ0 शम्भुनाथ सिंह, त्रिलोचन शास्त्री, डॉ0 रामदरश मिश्र, डॉ0 केदारनाथ सिंह तथा डॉ0 रवीन्द्र भ्रमर के लेखों को प्रकाशित किया। "नवगीत विधा में ही कवि अपने मन की भावनाओं

[1] डॉ0 शम्भूनाथ सिंह (सम्पा0) ; नवगीत दशक ; प्र0सं0 1983, भाग 2, पृ0 9
[2] वही, पृ0 11.
[3] डॉ0 रवीन्द्र 'भ्रमर' ; समकालीन हिन्दी कविता ; प्र0सं0 1972, पृ0 84.

सुख–दुखात्मक अनुभूतियों, वैयक्तिक जीवन की विविध दशाओं आदि का प्रकाशन स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकता है।"[1]

नवगीत आधुनिकतावादी कविता है, किन्तु यह आधुनिकता को सार्वभौम और सार्वकालिक नहीं, बल्कि देशकाल सापेक्ष मानती है। नवगीत इस अर्थ में भारतीय कविता है क्योंकि वह पूरी तरह से अपने देश की जमीन और यहाँ के जनसामान्य से जुड़ी है। अस्तु "नये गीतों में नयी कविता के मुक्तछन्द के अतिरिक्त उनकी अन्य रूपगत प्रवृत्तियों को प्रतिफलित होते देखा जा सकता है। नये गीतों के सामाजिक परिवेश तथा यथार्थवादी स्वर को अनेक रचनाओं के माध्यम से सिद्ध किया जा सकता है। आज का नया गीत नयी कविता के कवि की भाँति अपने युग धर्म का निर्वाह कर रहा है वह अपनी गीत दृष्टि के द्वारा युग की संघर्ष भावना तथा उसके भीतर से उभरते हुए नये मनुष्य की प्रतिष्ठा का प्रयास है।"[2] नयी कविता के अन्तर्गत आने वाले गीतकाव्य का कथ्य एवं शिल्प भी पूरी तरह बदल गया। अज्ञेय ने इसे नयी कविता का गीत कहा और बाद में गीत की इसी धारा का नवविकसित रूप नवगीत नाम से पुकारा गया।

नयी कविता की तरफ से नवगीत पर यह आरोप लगाये गये कि नवगीतों के सीमित परिधानों में युग जीवन के संघर्ष तथा बदलती हुई मानवीय वृत्तियों एवं मानवमूल्यों को व्याख्यायित नहीं किया जा सकता। अतः नये गीतों ने जहाँ तक मानवीय मूल्यों एवं गीत की परिभाषा को बदलने की कोशिश की है, तो यह सिद्ध कर दिया है, "गीत तो एक सहज एवं लोकप्रिय काव्य रूप मात्र है, इस विधा के माध्यम से कैसी भी विषय वस्तु को सहृदय जनों को प्रेषित किया जा सकता है। सामाजिक यथार्थ हो अथवा कोई नया मूल्य सब की अभिव्यक्ति गीतों के रूप में की जा सकती है।"[3]

आधुनिकता और वैज्ञानिकता के नाम पर कुछ लोगों ने इसका विरोध करने की कोशिश की लेकिन नवगीत रचना का सूत्रपात आधुनिक रूचि एवं वैज्ञानिक दृष्टि वाले कवियों ने ही किया। "नवगीत की सम्पृक्ति आज रूमानी नहीं है, वह पारस्परिक है, यानी

[1] डॉ0 शम्भूनाथ सिंह (सम्पा0) ; नवगीत दशक ; प्र0सं0 1983, भाग 2, पृ0 11.
[2] डॉ0 रवीन्द्र भ्रमर ; समकालीन हिन्दी कविता ; प्र0सं0 1972, पृ0 77.
[3] वही, पृ0 76.

एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को जोड़े रखने वाली सम्पृक्ति है। उसके भीतर आज भावुकता के क्षणों वाली रागात्मकता नहीं है, एक तटस्थ रागात्मकता है।"[1]

नवगीत नये भावबोध और ताजे शिल्प शैली की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, नवगीत में भाषा की नवीनता सांकेतिकता तथा प्रगीतात्मकता इसकी पहचान है। नवगीत नगरीय जीवन के साथ-साथ लोक जीवन को भी गहराई से पकड़े हुए है। अतः इसमें लोक संस्कृति की गन्ध भी आती है, इसीलिए नवगीत वह कविता है, जो अपने अन्दर आज का सम्पूर्ण जीवन समाहित किये हुए है। अस्तु 'नवगीत' नयी कविता के आगे की विधा है। जो नवीन आयामों के द्वार खोलती है यह आज के युग की महत्वपूर्ण उपलब्धि बन गयी है। अतः आधुनिकता का विकसित बिन्दु है।

अकविता- सन् 1960 के बाद नई कविता की धारा अपने मार्ग से हठ के दिखाई दी। 1960 के बाद जो कविता ने नया मोड़ लिया उसे अकविता नाम दिया गया। सन् 1965 के आस-पास दिल्ली से अकविता नामक लघु पत्रिका प्रकाशित हुई। साठोत्तरी कविता में अकविता का आन्दोलन सुनियोजित ढंग से चलाया गया। "परम्परा के विरोध और पृथक मार्ग के अन्वेषण का आग्रह इसमें प्रचुर मात्रा में था।"[2] अकविता के कवियों ने आधुनिकता को मात्र फैशन चमत्कार और यौनाचार के रूप में ग्रहण किया। डॉ० कुमार विमल के अनुसार, "प्रवेश के प्रति निष्क्रिय होकर अकविता का कवि एक गैर जिम्मेदार आदमी हो जाता है।"[3]

साठोत्तरी कविता में जो स्वर बदला वह नयी कविता में बीज रूप में पहले से मौजूद था क्योंकि नयी कविता में कुण्ठा, संत्रास, असन्तोष तथा विद्रोह आदि सब उपस्थित हैं, लेकिन अकविता में असन्तोष, अस्वीकार, विद्रोह और यौनाचार का स्वर साफ तौर पर दिखायी देने लगा। अकविता में चमत्कार को पहला साधन बनाया। इसमें मूल भाव की सक्षिप्तता और सपाटबयानी का स्वर स्पष्ट परिलक्षित होता है। "अकविता वाले कवि संवेग

---

[1] डॉ० जगदीश गुप्त ; नयी कविता स्वरूप और सम्भावना ; प्र०सं० 1969, पृ० 239
[2] डॉ० रवीन्द्र भ्रमर ; समकालीन हिन्दी कविता ; प्र०सं० 1972, पृ० 124.
[3] डॉ० जगदीश गुप्त व विजयदेव नारायण साही (सम्पा०) ; नई कविता ; सं० 1966-67, अंक 8, पृ० 274.

और संचेतना को, नवविकसित सत्य को, सहज तरीके से व्यक्त करने की कोशिश करते हैं। वे अव्यवस्था, विसंगति, मूल्यहीनता, विरोधाभास और आदर्शों के अकाल से आन्दोलित नहीं होते। दूसरी प्रक्रिया विद्रोह की हुई। विद्रोह की दो प्रवृत्तियाँ होती हैं– अस्वीकृति या ध्वंस तथा रचना।"[1]

गिरिजाकुमार माथुर की कविता घोंघा अकविता के कारण विचारणीय हैं–

"यह एक घोंघा
कभी–कभी पानी के ऊपर
आ जाता है
x x x
कितना अच्छा है घोंघा
जिसे लोग कहते हैं !" (अकविता –1)

अकवितावादी कवियों में शकुन्तला माथुर, उन्मेष, रवीन्द्रनाथ त्यागी, मुद्राराक्षस, जगदीश चतुर्वेदी आदि प्रमुख हैं। अकविता का कवि उक्त मनःस्थिति को अपने आन्तरिक विध्वन्स की संज्ञा देता है, और वाह्य स्तर पर भी स्थापित मूल्यों के विध्वंस की बात सोचता है। अकविता में कुछ ऐसा भी लिखा गया जिसमें स्वस्थ मन की अभिव्यक्ति कहा जा सकता है। अकविता के कवि के भाव एवं अनुभूति इतने गहन होते हैं कि जनसामान्य उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। अकविता पूर्णतः घोर यथार्थवादी है, क्योंकि आज वह समाज के निम्न वर्ग से जुड़े रहने का प्रयास कर रही है।

सारांश यह है कि अस्वीकृति के नवोन्मेष की यह काव्यधारा अकविता नाम ग्रहण करके सचमुच अकविता बन जाने के खतरे तक पहुँच पायी। सन् 1970 के अन्त तक पहुँचकर ऐसा जान पड़ता है कि परम्पराओं की अस्वीकृति के नाम पर विकृति एवं मूल्यगत विरोध के नाम पर निरर्थक विध्वंस का प्रचार करने वाले काव्यान्दोलनों का युग जैसे समाप्त हो गया। अकविता के लगभग रूप से सहज कविता भी अपनी मंजिल पहुँचकर समाप्त हो गयी।

---

[1] डॉ० नगेन्द्र (सम्पा०) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं० 1987, पृ० 656.

सहज कविता की विज्ञप्ति मार्च 1967 में प्रकाशित हुई। सहज कविता नये सिरे से कविता की खोज करनी चाहती है। "सहज कविता ने जटिल आरोपित अनुभूति और कृत्रिम अभिव्यक्ति के विरोध में, अनुभूति और अभिव्यक्ति की यथा सम्भव सहजता का पक्ष प्रस्तुत किया। सहज कविता क्षुब्ध युवा लेखन अथवा विद्रोही लेखन के एण्टीक्लाइमेक्स के रूप में सामने आई।"[1] पद्माधर त्रिपाठी ने "सहज कविता को एक अपेक्षित महत्वपूर्ण अपवाद बताते हुए उसके माध्यम से मानवीय बोध की ईमानदारी तीव्रतम अभिव्यक्ति पर बल दिया।"[2]

सहज कविता सन्तुष्ट मन की स्थिति से जुड़ने का प्रयत्न करती है। आजकल हमारा जीवन सहज नहीं रह गया है। अतः ऐसी अवस्था में सहज कविता अन्धेरे में हाथपांव मारने के बराबर है। आचार्य हजारी द्विवेदी ने 'सहज कविता' के सम्बन्ध में अपना अभिमत देते हुए लिखा है– "काव्य रचना कठिन कर्म है। अनुभूति और सहजता के बिना सिद्धी प्राप्त नहीं होती। कृत्रिम आरोपित अनुभूति रचना के स्तर पर प्रायः गुढ़ वाग्जाल के रूप में प्रतिफलित होती है, और तब काव्य का मूल उद्देश्य ही खण्डित हो जाता है।"[3]

आज की वर्तमान कविता–जीवनोन्मुख धारा का अगला पड़ाव है बल्कि यह कविता आज के जीवन की अनुभवजन्य विषम संवेदनाऐं और बोध हैं। यह कविता तर्क विवेक के साथ–साथ वैज्ञानिक हो गयी है। "यह अनुभव और बोध आन्दोलन से नहीं सत्य से प्रेरित होकर, आज की विषम स्थितियों की प्रतीति, अस्वीकृति और विद्रोह सब को आवश्यकता अनुसार समेटे हुए है।"[4] कविता बिम्ब, प्रतीकों एवं अलंकरण के चमत्कार में कविता अन्तर्मुखी एवं निस्पन्द होती जा रही थी। वर्तमान कवियों ने इस ठहराव को तोड़ा और कविता को पुनः जीवन के करीब लाकर खड़ा कर दिया आज के वर्तमान कविता का कवि वर्तमान के समस्याओं को उजागर करता है तथा उनसे संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। वर्तमान की कविता छन्दात्मक, लयात्मक और संगीतात्मक में होकर गद्यात्मक भाषा में लिखी जा रही है।

---

[1] डॉ0 रवीन्द्र भ्रमर ; समकालीन हिन्दी कविता ; प्र0सं0 1972, पृ0 127.
[2] वही, पृ0 127.
[3] वही, पृ0 128.
[4] डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0) ; हिन्दी साहित्य का इतिहास ; सं0 1987, पृ0 656.

आधुनिकता के इस युग में कविता भी बौद्धिकतावादी हो गयी है। वैज्ञानिकता के इस दौर में कविता विज्ञान के प्रभाव से नहीं बच पाई। वर्तमान कविता का कवि भावों एवं अनुभूतियों को इतनी तेजी के साथ प्रस्तुत करता है कि कब पाठक के मन मस्तिष्क पर अंकित हो जाती हैं, पता ही नहीं चलता। आज की कविता का कवि वादों एवं मन्चों के घेरे में न फंसकर स्वच्छन्द रूप से कविता का सृजन कर रहा है। इस कविता के मूल में आज का कुंठित त्रस्त व्यथित एवं वह निम्न वर्ग है जो सदैव साहित्य में उपेक्षित रहा। वर्तमान का कवि भाषा, बिम्ब, प्रतीक तथा अलंकरण के लोभ में न फंसकर केवल सामाजिक समस्याओं को ही अभिव्यंजना देता है। वर्तमान कविता के क्षेत्र में नयी कविता के कवि भी हैं। इनमें–धूमिल, पद्माधर त्रिपाठी, ऋतुराज, चन्द्रकांत देवताले, लीलाधर जगुड़ी, विष्णुचन्द्र शर्मा, विजेन्द्र, अशोक वाजपेयी तथा अरूण कमल आदि हैं।

कविता आदिकाल से लेकर आज तक निरन्तर परिवर्तनशील है, लेकिन आधुनिक युग में आकर कविता में बड़ी तेजी से परिवर्तन हुए, जिससे सामान्य जन भी अनभिज्ञ नहीं रहा। छायावाद के बाद तो कविता अपने नित नये रूप बदलती रही और नित नये नामों से पुकारे जाने लगी। इसका एक कारण यह भी है कि कविता आत्मा की अभिव्यक्ति है। या दूसरे शब्दों में कविता चित्तवृत्तियों का इतिहास है। तो सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ कवि की सोच में परिवर्तन होना भी स्वाभाविक है। आज कविता अपने विभिन्न सोपानों से गुजरकर अतिबौद्धिकता एवं आधुनिकता के दौर से गुजर कर उत्तर आधुनिक होने की गवाही दे रही है। अतः यही आधुनिकता के प्रमुख चरण हैं।

पंचम अध्याय :

केदारनाथ 'कोमल' का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

पंचम अध्याय

केदारनाथ 'कोमल' का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

साहित्य वस्तुतः रचियता के अनुभव का प्रतिफलन है और साहित्यकार किसी न किसी परिवेश में ही सांस लेता है। उसका यह परिवेश उसे कुछ अनुभव प्रदान करता है। इसका प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर आवश्यक रुप से पड़ता है। रचना के निर्माण में रचनाकार के व्यक्तित्व का महत्व बहुत अधिक होता है। उसका अपनापन रचना को एक विशिष्ट रुप देता है। "रचनाकार के व्यक्तित्व के बिना रचना या तो दुराव, क्षतिपूर्ति, अहम की उदात्तता, पलायन, गोपन,विलाप, आत्मरति या अनुवर्तन होती है। वह सृजन नहीं होती। सृजन का अर्थ ही है कि वह निरन्तर मानवीय विकास के साथ जुड़कर उसकी सम्भावना को रुपायित करें।"[1]

रचनाकार का व्यक्तित्व तो कहीं भी गौण नहीं होता परन्तु यह सिद्ध अवश्य हो जाता है कि रचना उसके परिवेश से निर्मित है कहने का तात्पर्य यह है कि "कृति के पीछे उसके कर्ता का व्यक्तित्व रहता है, लेकिन साथ ही यह भी पूरे आग्रह के साथ कहा जा सकता है कि कर्ता के व्यक्तित्व के पीछे उसका देश काल विद्यमान रहता है"[2]। व्यक्तित्व और रचना एक दूसरे सें पूर्ण रुप से जुड़े हुए हैं। रचनाकार के व्यक्तित्व के बिना जीवन्त साहित्य की सृष्टि असम्भव है रचना के सामाजिक आयामों के साथ–साथ रचनाकार का व्यक्तित्व समाहित होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि कवि का व्यक्तित्व उसके काव्य के द्वारा और काव्य का वैशिष्ट्य कवि की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति के द्वारा जाना जाता है किसी भी की अच्छी तरह परख करने के लियें, उसके कवि मर्म को पहचानना आवश्यक है। कवि या मनुष्य की पहचान या रचना संसार से होती है या फिर उसके व्यक्तित्व से होता है।

---

[1] डा0 कमला प्रसाद ; रचना और आलोचना की द्वन्द्वान्तकता! ; पृ0 48
[2] डॉ0 नगेन्द्र ; साहित्य का समाज शास्त्र ; पृ0 12

केदार नाथ कोमल का जन्म पंजाब के मालेर कोटला में 17 फरवरी सन् 1931 को हुआ। आपके पिता का नाम छज्जूराम व माता का नाम पूनम देवी था। कोमल जी अपने माता–पिता की अन्तिम सन्तान हैं, इनके माता–पिता दोनों अशिक्षित थे, पिता लोहे का व्यवसाय कर अपनी जीविकोपार्जन करते थे। इनकी माता बहुत सरल एवं कोमल स्वभाव की थीं। कवि का जन्म व्यवसाय वैश्य परिवार में हुआ। माता की सौम्यता एवं सरलता दोनों ही कवि केदार नाथ कोमल को धरोहर के रुप में मिले है। कवि केदार नाथ कोमल अपने उपनाम के अनुसार ही इतने सरल व कोमल विचार के हैं जिससे उनके पूरे व्यक्तित्व की तस्वीर प्रत्येक मनुष्य के हृदय में उतर जाती है।

कवि केदार नाथ कोमल को पिता का प्यार अधिक समय तक नहीं मिल सका अर्थात् कोमल जी के बचपन में ही उनके पिता का हाथ उनके सर से उठ गया। जिससे उनकी देख–रेख अच्छी तरह से नहीं हो सकी। दूसरी मुसीबत का पहाड़ कोमल जी पर उस वक्त टूटा जब उनकी माता उनसे हमेशा के लिए नाता तोड़ कर इस संसार से चल बसी। इतनी कठिनाई व अपत्तियों के बाद भी कोमल जी ने अपना धैर्य नहीं खोया और वह अपने व्यक्तित्व व अस्तित्व को बनाने के लिए संघर्ष करने लगे। कोमल जी का मानना है कि, "परिवार में सबसे छोटा होना जहाँ सुखदायी होता है वहीं दूसरी ओर छोटा होना अभिशाप भी माना है, क्योंकि छोटा होने पर परिवार के सभी लोगों का स्नेह प्राप्त होता है लेकिन जब माता–पिता का साया न रहे तो उस समय छोटा होना अत्यन्त कष्टप्रद प्रतीत होता है। केदार नाथ कोमल के पाँच बड़े भाई और एक बड़ी बहन थी जिनके नाम इस प्रकार हैं– श्री अमरनाथ, श्री जगन्नाथ, श्री रामनाथ, श्री श्यामनाथ और श्री प्रेमनाथ तथा बहन गौरा देवी। कवि के भाई जो सबसे बड़े थे उनका देहान्त हो गया है। और सभी इस लोक का सुख भोग रहे हैं, पॉच भाई व एक बहन के प्यार में पले अन्तिम अनुज कवि कोमल जी हैं। बहन गौरा देवी अब स्वर्गवासी हैं।

केदार नाथ कोमल के कथनानुसार,"कभी सोचता हूँ तो हैरान होता हूँ एक जिद थी जो प्रेरित करती रही, वरना उन दिनों पढ़ाई गुरु शिष्य परम्परा से जुड़ी थी। घर के साथ,

कसबें में, सड़क के किनारे, बहती नाली के पास, टाट की बोरी के टुकड़ों पर बैठकर अक्षर ज्ञान मिला। गुरु थे ताया जी कुन्दन लाल वर्मा, जो अब स्वर्गीय हैं और जीवनभर अविवाहित भी रहे।"[1]

केदार नाथ कोमल की असल प्रारम्भिक शिक्षा बल्लभ जैन स्कूल मालेर कोटला में हुई, प्रतिभा सम्पन्न बालक ने स्टेट मिडिल स्कूल मालेर कोटला में छठवीं से आठवीं तक की शिक्षा प्राप्त की। छठी तक उर्दू भाषा पढ़ी। आठवीं कक्षा में प्रथम श्रेणी में सफलता प्राप्त कर तीसरा उच्च स्थान प्राप्त किया। कवि कोमल जी को अपने जीवन में कई बार धन के अभाव में व बटवारे के समय अपनी पढाई छोड़नी पड़ी। कोमल जी को एक बार पढ़ाई देश के बटवारें के समय छोड़नी पड़ी, क्योंकि मालेर कोटला मुसमानों की रियासत थी, इसलियें हिन्दुओं को वहाँ से जाना पड़ा। 1949 में मैट्रिक विज्ञान परीक्षा फारसी व हिन्दी विषयों के साथ उच्च द्वितीय श्रेणी में प्राप्त की। धन के अभाव की वजह से केदार नाथ कोमल जी को बहुत मेहनत करनी पड़ी, इसलिए उन्होंने स्नातक की परीक्षा व्यक्तिगत रुप से पास की। इसके अतिरिक्त स्नातकोत्तर की
शिक्षा प्राप्त करते समय कोमल जी को ट्यूशन भी करने पड़े। इसके बावजूद कवि ने अपना धैर्य नहीं छोड़ा और अपना अध्ययन जारी रखा।

कोमल जी ने मुझे अपनी शिक्षा–दीक्षा के बारे में बताया कि 'धन के अभाव के कारण मुझे (केदार नाथ कोमल) अनेक बार समस्यायें बराबर घेरती रहीं, मैट्रिक तक पहुँचते–पहुँचते मुझे कई बार अपनी आर्थिक परिस्थितियों के कारण अनेक बार पढाई बीच में ही छोड़नी पड़ी।' कोमल जी के इस कथन से स्पष्ट है कि कवि का जीवन कितना विपन्नताओं से भरा हुआ है। आर्थिक परिस्थितियों व अन्य समस्याओं से शिक्षा में आई रुकावटों ने कवि के व्यक्तित्व और जीवन को कंचन की तरह सोना बना दिया।[2]

---

[1] उनके द्वारा लिखे पत्र दिनाँक 18/6/99 के सन्दर्भ में
[2] केदार नाथ कोमल से बातचीत, उनके निवास पर दिनाँक 15/9/98

केदार नाथ कोमल ने जीवन में इतने अधिक अभाव व समस्यायें होने के पश्चात् भी शिक्षा नहीं छोड़ी, और आज भी अपनी शिक्षा एवं रचनाकर्म से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बना रहे हैं। कोमल जी सदा अन्याय के प्रति सजग रहें। अल्पायु से ही कोमल जी में निर्भीकता, संघर्ष और अन्याय के प्रति लड़ने की आपार शक्ति थी। कवि ने इस तरह की एक घटना को अपने एक पत्र में लिखा–" जब स्टेट स्कूल में आठवीं में पढ़ता था तब हेडमास्टर ने अपनी मनमानी करके एक पार्ट टाइम अध्यापक प0 सुर्यदेव हंस को नौकरी से निकाल दिया गया, जो हिन्दी के अध्यापक थे। प्राचार्य स्वयं अध्यापकों के वेतन हड़पने लगे थे केदार नाथ कोमल नेअपने अन्य साथियों के साथ मिलकर प्राचार्य को धमकी दी कि हम लोग परीक्षा नहीं होने देंगे, बाद में अध्यापक को नौकरी पर रख लिया गया।'

केदार नाथ कोमल जी की शिक्षा इतने अभावों और संघर्ष में चली कि दो बार स्कूल छोड़ना पड़ा एक बार तो फीस नहीं थी, पार्ट टाइम काम करके चलता रहा। फीस आधी मुआफ बाद में पूरी मुआफ हो गई। कोमल जी बचपन से ही मेधावी विद्यार्थी तो थे। इसके पश्चात् वे धीरे–धीरे आगे बढ़ते गये। कवि ने शिक्षा को सहज ही प्राप्त नहीं किया अपितु अति कड़े संघर्ष के द्वारा ही शिक्षा प्राप्त की। शिक्षा के मध्य ही से कवि का संघर्ष मयी व्यक्तित्व सहज ही उजागर नहीं हुआ, बल्कि कवि कोमल अभावों के पहाड़ों से घबरायें नहीं बल्कि एक शिल्पकार के भांति अपने को तराश कर अपने व्यक्तित्व का निर्माण एवं ज्ञान प्राप्त करते रहे।

केदार नाथ कोमल का विवाह 8 मार्च सन् 1961 को कमला देवी के साथ लगभग 30 वर्ष की उम्र में सम्पन्न हुआ। कमला देवी मैट्रिक तक पढ़ी हुई है। तथा हिन्दी में प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण हैं। विवाह से पूर्व स्कूल में अध्यापन का कार्य कर चुकी हैं। श्रीमती कोमल स्वभाव से बहुत ही नर्म एवं सरल स्वभाव की हैं। जो अपने सहज स्नेह से किसी का भी मन मोह लेती हैं। श्रीमती कमला देवी से कोमल जी को बहुत ही नेक, लायक, ईमानदार एवं आज्ञाकारी दो पुत्र रत्न के रुप में प्राप्त हुए हैं। जिनका नाम रवीन्द्र

बंसल और अरबिन्द बंसल है। रवीन्द्र अभियन्ता हैं, और अरबिन्द बी0 फार्मा करके पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की। आज कल Rambaxy में वैज्ञानिक हैं।

केदार नाथ कोमल से बातचीत करते समय उन्होने मुझे अपने पारिवारिक जीवन के बारे में बताया कि "मैं अपनी पत्नी और सुयोग्य पुत्रों को प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य मानता हूँ कमला जी जैसी कोमल जी सरल स्वभाव, मृदु भाषणी कर्तव्य निष्ठ पत्नी एवं आदर देने वाले रवीन्द्र और अरविन्द को प्राप्त कर मेरा जीवन धन्य हो गया।"[1] इस कथन से स्पष्ट होता है कि कवि केदार नाथ कोमल अपने पारिवारिक जीवन एवं अपनी योग्य संतान से बहुत खुश हैं।

केदार नाथ कोमल का परिवार बहुत छोटा है जिससे उनकी जीवन संगिनी एवं दो पुत्र व उनके बच्चे हैं। कोमल जी विष्वविद्यालय अनुदान आयोग में रह चुके हैं आज कल सेवा निवृत होकर कालका जी प्लैट्स, नई दिल्ली जैसे महानगर में रह रहें हैं।कवि कोमल अपनी लघु आय से युक्त होते हुए, आज अपना जीवन बहुत सहजता के साथ बिता रहें हैं।अनेक विपत्तियों एवं समस्याओं के पश्चात् भी कवि ने अपना धैर्य नहीं खोया। कवि का पारिवारिक संसार अत्यन्त शान्त, सहज और आनन्दमयी फुलवारी की तरह है।

कवि का जीवन बचपन से ही धनाभाव व अन्य समस्याओं में बीता। इसलिए वह विद्यार्थी जीवन में ही अपनी नौकरी के लिए सचेष्ट रहे। केदार नाथ कोमल को दसवीं कक्षा पास करते ही 1949 में शिमला में नौकरी मिली। कोमल जी को स्नातकोत्तर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त केन्द्रीय सरकार के वित्त मंत्रालय में नौकरी मिल गई,तथा दस वर्ष तक केन्द्रीय सरकार के वित्तमंत्रालय में कार्य करते रहे। इसके उपरान्त विश्वविद्यालय अनुदान आयोग में कार्यरत हो गये, वहाँ पर विभिन्न पदों पर रह कर अनुदाय आयोग की सेवा करते रहे। इसके पश्चात् अनुदान आयोग में अवर सचिव के पद पर कार्य किया। 28 फरवरी 1989 को अपने पद के कार्य भार से मुक्त हो गये।

---

1 केदार नाथ कोमल से बात चीत उनके निवास दिनांक 15/9/98.

निष्कर्षतः हम यह कह सकते है कि किसी के व्यक्तित्व को देखने के लिए उसके वातावरण को देखना चाहिए, क्योंकि वातावरण ही व्यक्तित्व का निर्माण करता है। कवि केदार नाथ कोमल का बचपन अत्यन्त कष्टमय रहा, धन के अभाव में उन्होनें बहुत सी परेशानियां उठायी, लेकिन कवि ने अपना संघर्ष नहीं छोड़ा वह बराबर इन समस्याओं से जुझते रहे और संघर्ष करते रहे। इस संघर्ष ने उनके व्यक्तित्व को कंचन की तहर निखार कर सोना बना दिया ।इससे यह स्पष्ट होता है कि संघर्ष ही जीवन है। आर्थिक संकट के संदर्भ में उन्होंने मुझे एक पत्र में लिखा, "आर्थिक संकट गरीबों का गहना है। धैर्य मत छोड़ो किसी भी कीमत पर, संकट गरीबों की पूंजी है।"[1] मेरे साथ (कवि) आर्थिक संकट बचपन से रहा है बल्कि पैदा होने से पहले से रहा। अब भी है। 40 साल नौकरी के बाद भी, पेंशन में ही गुजारा चलाने का प्रयास जारी है और रहेगा।

आज अवकाश ग्रहण करने के पश्चात कवि कोमल जी का अधिकतर समय साहित्य सृजन और साहित्य चिन्तन में व्यतीत होता है। आज के आधुनिक जीवन की सभी विषमताओं आदि को कोमल जी अपनी साहित्यिक दृष्टि से देखते हैं। कवि कोमल के विचार, सोच व भाव इतने सहज हैं कि उनसे कोई भी एक बार मिलने के पश्चात् उनके भावों की सहजता व कोमलता पर मोहित हो जाता है। कवि कोमल सादा जीवन उच्च विचार जैसे कथन पर विश्वास रखते हैं तथा साथ ही उसे अपनायें हुए भी हैं। आज कवि कोमल ने साहित्य सृजन और साहित्य चिन्तन को ही अपनी दिनचर्या बनाया है। हिन्दी साहित्य की अमूल निधि एवं आज की वर्तमान कविता के प्रमुख हस्ताक्षर कविवर केदार नाथ 'कोमल' दिनांक 25 अगस्त 1999 को हिन्दी प्रेमियों को रोता बिलखता छोड़कर इस संसार से चले गये।

***

1 उनके द्वारा लिखे पत्र दिनांक 18/6/99 के संदर्भ में

षष्ठ अध्याय :

केदारनाथ 'कोमल' के काव्य रचना संसार का सामान्य परिचय

षष्ठ अध्याय

कविवर केदारनाथ 'कोमल' के काव्य संसार का समान्य परिचय

साहित्य और उसकी सृजनशीलता के विविध रूप साहित्यकार की अनुभूति की नयी प्रेरणा को उजागर करने में सक्षम होता है। काव्य सृजन के प्रेरक तत्व के रूप में कवि की समकालीन परिस्थितियाँ अनुभूति भाव एवं उसका आत्मसंघर्ष में सब मिलकर काव्य का सृजन करते हैं। 'डॉ0 नामवर सिंह' ने अपनी पुस्तक **"कविता के नये प्रतिमान"** में लिखा है–*"कवि कर्म शास्त्र निरूपित कुछ गिने–चुने स्थायी या संचारी भावों को उद्धृत करना नहीं, बल्कि नई वास्तविकता से उत्पन्न होने वाली वृत्तियों को उजागर करता है।"*[1]

समकालीन कविता में केदारनाथ 'कोमल' मील के पत्थर है। कवि ने समकालीन कविता के स्वरूप को पूर्ण रूप से अपने में समाहित करने की कोषिष की है। कवि का रचनासंसार आधुनिक हिन्दी साहित्य की उपलब्ध काव्य सृष्टि है जो अपने परिवेश में साधारण मनुष्य की मनोदषा को समाहित किये हुये है। किसी भी रचनाकार की पहचान व परख के लिए, उसके काव्य मर्म को पहचानना अत्यन्त आवश्यक है, कोई भी रचनाकार अपने रचना संसार के माध्यम से ही पहचाना जाता है, इससे अलग उसकी कोई पहचान नहीं होती।

केदारनाथ 'कोमल' को प्रारम्भिक साहित्यिक प्रेरणा अपने जीवन की परिस्थितियों से ही, प्राप्त हुई। कवि केदारनाथ 'कोमल' अपने समय के काव्य मर्मी एवं काव्य धार्मिता के पुजारी है। इनकी बचपन से ही साहित्य के प्रति गहरी रूचि थी । कवि केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं में बौद्धिकता, मुक्तछन्द आदि श्रेष्ठ तत्व मौजूद हैं। कवि ने अपनी कविताओं में वैयक्तिक अनुभूतियों को नया स्वरूप प्रदान किया है। कवि की कविताओं में व्यंग्य का पुट भी विद्यमान है, लोगों के अंध विष्वासों रूढ़ियों आदि पर कवि ने करारे प्रहार किये हैं। कवि ने अपने काव्य में मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाया है। कवि 'कोमल' के काव्य की

---

1. डॉ0 नामवर सिंह ; कविता के नये प्रतिमान तृतीय ; सं0, 1982, पृ0 25

एक ओर अन्य विशेषता है कि उन्होंने परम्परागत छन्दों और तुकान्त की जड़ों को उखाड़कर नवीनता की ओर अग्रसर हुए हैं। समकालीन कविता में केदारनाथ 'कोमल' का महत्वपूर्ण स्थान है, कवि का रचना संसार आधुनिक हिन्दी साहित्य की अमूल सृष्टि एवं निधि है। आधुनिक हिन्दी कविता में केदारनाथ 'कोमल' अति श्रेष्ठ हैं।

कवि कोमल को साहित्य के प्रति रूचि शुरू से ही रही है। उनके अनुसार उन्होंने अपनी पहली कविता जब लिखी थी। जब वे छठी या सातवीं के छात्र थे। यह कविता क्या थी इसकी याद अब उन्हें भी नहीं है। दसवीं तक पहुँचते–पहुँचते आपने बहुत–सी कवितायें लिखीं। लेकिन सन् 1968 से जो लेखन और प्रकाशन का सिलशिला शुरू हुआ वह आज तक जारी है। कवि 'कोमल' ने अपने मौलिक साहित्य, बाल साहित्य के अतिरिक्त बहुत सी रचनाओं का सफल अनुवाद भी किया है। केदारनाथ 'कोमल' का काव्य संसार इस प्रकार है–

मौलिक काव्य कृतियां :

1. चैराहे पर – 1968
2. कोहरे से निकलते हुए –1975
3. सूरज के आस–पास – 1978
4. मेरे शब्दः मेरा लहु–1983
5. अन्धे सूरज का सफर – 1986
6. रेत पर लकीरें – 1988 (पुरस्कृत)
7. पतझड़ के हस्ताक्षर – 1991
8. सुगंध–1992
9. परम्परा की पदचाप – 1995
10. एक समंदर : मेरे अन्दर – 1998
11. शब्द नाथ 1999.

बाल साहित्य

गति :– 1. हम सूरज के बच्चे 1981 (पुरस्कृत)

2. हम भारत के सूरज

3. आशा की कहानी (पुरस्कृतः हिन्दी अकादमी, दिल्ली)

4. हर दिन नया

5. 3 बाल गीत (संग्रह प्रकाशय)

6. नन्ने मुन्ने गीत (उर्दू में) 1998.

कहानीः– 1. अनोखा न्याय

2. रोचक कहानियाँ

3. देशी–विदेशी लोक कथाएं

4. आखरी सबक (उर्दू में) 1998

कवि केदारनाथ 'कोमल' ने मौलिक एवं बाल साहित्य के अतिरिक्त अनेक भारतीय एवं विदेशी विद्वानों की रचनाओं के अनुवाद भी किये हैं जो इस प्रकार हैं–

अनुदित साहित्यः

1. खूटियों पर टँगे लोग –(सर्वेश्वर दयाल सक्सेना) हिन्दी से उर्दू में
2. मोरो वाला बाग – (अनिता देसाई) – अग्रेजी से उर्दू में
3. चौथे की प्रतिक्षा – (हरभजन सिंह) – पंजाबी से हिन्दी में
4. छाया मत छूनामन – (हिमांशु जोशी) – हिन्दी से अंग्रेजी में

इनके अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी रचनाकारों की रचनाओं का अनुवाद किया है।

कवि केदारनाथ 'कोमल' ने अब तक 600 से अधिक कविताऐं, लेख तथा आलोचना अनेक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन से भी कवि कोमल जी कवितायें एवं लेख प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त स्कूलों एवं विश्वविद्यालयों के पाठ्य क्रम में पढाई जाती हैं। **कवि केदारनाथ 'कोमल'** की काव्य व्यंजना

इतना सशक्त, रोचक एवं साधारण मनुष्य के मन को स्पर्श करने वाली है। इनकी कविताओं के अन्य भाषाओं में अनुवाद भी हुए हैं तथा कवि के कुछ अनुवाद पर पुरूस्कार की मिल चुका है जो निम्नलिखित है–

1. **अजनवी**– इस कविता का स्वयं कवि द्वारा उर्दू में अनुवाद प्रस्तुत किया गया। जिसे उत्तर प्रदेश उर्दू अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।
2. **कविता कुसुमालु**– डॉ0 एस. ए. एस. एन. वर्मा द्वारा तेलगू में अनुवाद।
3. **सूयन्तेमक्कल**– सुश्री टी. ए. पुनम्मा द्वारा मलयालम में अनुवाद।
4. **सुर्यनसुत्ता**– सूरज के आस–पास कविता संग्रह का कन्नड़ में अनुवाद डॉ0 टी. जी. प्रभाकर प्रेमी द्वारा किया गया ।
5. **सफर**– डॉ0 चमनलाल एवं कवि द्वारा पंजाबी में अनुवाद ।

चुनी हुई कविताओं का –रूसी, असमिया, नेपाली, उड़िया, मराठी, बंगला, कोंकणीं, अंग्रेजी आदि अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

आधुनिक कविता में कवि केदारनाथ 'कोमल' ने अपने कविता संग्रहों के माध्यम से आधुनिक भाव बोध को प्रस्तुत किया है। कवि कोमलजी आज के मनुष्य और उसके आधुनिक जीवन की संघर्षमयी अभिव्यक्ति को अपने काव्य में बड़े ही सुन्दर ढंग से संजोया है। कवि ने गद्य तथा पद्य में छोटे–छोटे बच्चों के लिए कविताएं एवं कहानियों की रचना करके बच्चों के चंचल मन को मोह लिया है, इसके अतिरिक्त जन भावनाओं का अपने काव्य में बड़ा ही दुर्लभ भावपरक चित्रण किया है। कवि का काव्य बहुत ही सहज जीवन्त प्रेरणादायक एवं मन को प्रफुल्लित करने वाला काव्य है। उनके काव्य संग्रहों का परिचय इस प्रकार है–

1. चौराहे पर

कवि केदारनाथ 'कोमल' का यह प्रथम काव्य संग्रह है जो सन् 1968 में समकालीन प्रकाशन वाराणसी से प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह में 37 कवितायें हैं जो जनसामान्य को ऐसे चौराहे पर लाकर खड़ा करती हैं जहाँ से वह अपने लक्ष्य की ओर जा सके। इन

कविताओं की भाषा इतनी सरल तथा भाव इतने अधिक गहन हैं कि पाठक पर पूरी तरह छा जाते हैं इनमें कुछ कवितायें तो बहुत छोटी हैं, जो बड़ी अटपटी सी महसूस होती हैं, लेकिन भाव एवं सवेदना की दृष्टि से बहुत ही मार्मिक हैं इन कविताओं में कवि ने आधुनिक मनुष्य के जीवन के संघर्षो और समस्याओं को इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि पाठक के मन पर गहन प्रभाव छोड़ती हैं आचार्य हजारी प्रसाद 'द्विवेदी' ने इस काव्य संग्रह की भूमिका में कहा है' "कवि ने उपदेश या भाषण का रास्ता कहीं नही अपनाया है। कवि ने जीवन को गहराई से पकड़ना और उसे जड़ता से मुक्त कर चैतन्य की ओर ले जाना ही कवि का लक्ष्य प्रतीत होता है। वह पाठकों को ऐसे भावात्मक चौराहे पर लाकर खड़ा करते हैं, जहाँ से अपने गन्तव्य लक्ष्य और मार्ग का निर्माण स्वयं कर सकें।"[1]

कवि केदारनाथ 'कोमल' ने अपने इस कविता संग्रह में मानव जीवन की खोई हुई मर्यादा, कुण्ठा संत्रास तथा मनुष्य के संघर्षशील जीवन की बड़े ही सुन्दर शब्दों में यथार्थपरक अभिव्यक्ति की है। ज्ञान पीठ पुरस्कार से सम्मानित कवि शंकर कुरूप ने 'चौराहे पर' काव्य संग्रह के सन्दर्भ में कोमलजी को अपने पत्र में लिखा– "you were good enough to present me with a copy of your book **CHAURAHE PER** a collection poems in Hindi. I found it things of beauty and so with be a joy forever the book is very Interesting though perhaps I would have appreciated it better if I know Hindi more thoroughly".[2]

कोहरे से निकलते हुए

कवि केदारनाथ 'कोमल' का यह दूसरा काव्य संग्रह है जो पाण्डुलिपि प्रकाशन दिल्ली से सन् 1975 को प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह में 53 कविताएं हैं यदि वास्तव में

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहें पर (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र०स० 1968
[2] शंकरकुरूप द्वारा केदारनाथ कोमल को लिखा पत्र दिनांक 9 अगस्त 1968।

इसे देखा जाये तो यह एक प्रगतिशील रचना है। कोहरा जटिलताओं तथा प्रगतिवादी चेतना नें रूकावट का प्रतीक है आज के मनुष्य का जीवन जटिलताओं तथा समस्याओं रूपी कोहरे में इतना उलझ गया है कि कभी–कभी तो उसे स्वयं को बोध भी नही हो पाता। इन सभी प्रकार की समस्याओं तथा जटिलताओं से निकलने के लिये आज का जनमानस प्रयत्नशील है।

इस कविता संग्रह में कवि की कवितायें जहाँ जीवन की अनुभूति बन कर फुटती है वहीं वह सभी कष्टों से मुक्त होकर सरलता को अपना लेती है इस संग्रह की भूमिका में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है– "कविता कवि की निसर्गजन्य अभिव्यक्ति है वह कभी मस्ती का आलम लिये होती है तो कभी विषाद–निमग्न अनुभूतियां। कभी उसमें सुरा के जाम छलकते हैं तो कभी हलाहल।"[1]

यह काव्य संग्रह समकालीन समाज पर करारा व्यंग्य है जो कवि कोमल को और अधिक महान बना देता है। **'कोहरे से निकलते हुए'** काव्य संकलन में कवि जिन्दगी को चौराहे पर नहीं भटकने दे रहा है अतः उससे निकलने का प्रयास कर रहा है कवि इस काव्य में देश की दुर्व्यवस्था, राजनीतिक वातावरण तथा अन्य जठिलताओं और उच्च वर्गीय लोगों की धन के प्रति लोलुप्ता का जो कोहरा उनके मन–मस्तिष्क में जो छाया हुआ हैं। कवि उससे मुक्ति दिलाना चाहता है। यही कवि और इस काव्य संग्रह प्रथम और अन्तिम उद्देश्य प्रतीत होता है।

'सूरज के आस–पास'

यह काव्य संग्रह सन् 1978 में मिलिन्द प्रकाशन, हैदराबाद से प्रकाशित है। इस काव्य संग्रह में 71 कवितायें संकलित हैं। ये कविताऐं मानवीय अनुभूति तथा जीवन के विविध आयामों को अपने अन्दर समाहित किये हुए हैं। कहीं–कहीं कवि ने प्रकृति का भी

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र0सं0 1975.

मानवीयकरण करते हुए उसे बड़े ही सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त किया है। कवि 'कोमल' ने यहाँ पर यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया हैं, वह यथार्थ के इतने समीप हैं कि उनकी दृष्टि से समाज का कोई भी पहलू नहीं बचा है। यह समकालीन मनुष्य की भावनाओं से प्रेरित संघर्षशील काव्य है इस काव्य संग्रह के अन्तर्गत कवि ने अपनी पीडामयी अनुभूति तथा संघर्ष को दर्शाया है, क्योंकि यह उक्ति हमारे समक्ष हमेशा दोहराई जाती है कि 'सघर्ष ही जीवन है' कवि का पूरा जीवन पीड़ा तथा संघर्षो में गुजरा है कवि 'कोमल' ने स्वयं विष का गरल पीकर समकालीन मनुष्यों की अनुभूतियों का अपने काव्य के माध्यम से अमृतपान कराया है।

कवि कोमल जी ने इस काव्य के शुरू में कुछ पंक्तियां लिखी है–"संसार के उन लोगों के नाम जो सूरज की तलाष में तम पी रहें है।" इन पंक्तियों के माध्यम से कवि का उद्देश्य स्पष्ट हों जाता है। यहाँ पर सूरज आशा का प्रतीक है और तम निराशा का। अर्थात् कवि ने उन लोगों को उठाने की कोशिश की है जो जीवन से खिन्न और दुखी हैं, तथा संघर्ष करते–करते थक चुके हैं। उन लोगों को आशा की किरण दिखाकर प्रेरित किया है जो अपनी मंजिल के बिल्कुल आस–पास पहुँच चुके हैं। कवि ने इस कविता संग्रह की कविताओं के माध्यम से व्यक्ति को उसके व्यक्तित्व की पहचान करायी है। इस प्रकार यह भावनात्मक मानवतावादी काव्य भी है।

मेरे शब्दः मेरा लहू

कोमल जी का यह सग्रह नटराज पब्लिशिंग हाउस, करनाल (हरियाणा) से सन् 1983 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में 34 कवितायें हैं। कवि की पीड़ा लहू बनकर फूटी है,जिसे शब्दों के माध्यम से वाणी दी गई है। कवि अपने स्वाभिमान के माध्यम से आम आदमी के स्वाभिमान को जागृत करना चाहता है। यहाँ तक पहुँचते–पहुँचते कवि की यात्रा जीवन के विविध मोड़ों से गुजरती है। कवि ने 'सदियों पहले', 'सलीबपर', 'पर्त दर पर्त', 'पहाड़ सा दर्द', 'तूफानःकुछ नोट्स', 'जलता सत्य', 'जिन्दगी', 'रक्त स्नात मिट्टी', 'अपमान के जाम', 'दीवारें' आदि कविताओं के माध्यम से वर्तमान समाज का जो चित्र

प्रस्तुत किया है। उससे कवि की अनुभूति तथा अभिव्यक्ति कौशल का परिचय तो मिलता है तथा साथ ही समाज में व्याप्त दु:ख दर्द से मनुष्य को मुक्त करने की भी कोशिश की गई है।

कवि कोमल की कवितायें किसी न किसी स्तर पर आम से जुड़े रहने का प्रयास करती रही हैं। 'आम आदमी की भाषा में उसकी बात कहने में सिद्धहस्त केदारनाथ कोमल समकालीन सामाजिक, विसंगतियों और विद्रूपताओं को अज्ञात अन्धकार से निकाल कर कविता के कालजयी आलोकवृत के बीच खड़ा कर देने का साहस भी रखते है।'[1]

'बस', 'जर्रा', 'आप', 'सबके पास' आदि कविताओं के माध्यम से कवि ने अपनी पीड़ा को व्यंजना दी है, तथा इसके साथ–साथ समाज की खोखली रूढ़ियों, अन्धविश्वासों को भी कवि ने उठाकर समाज के सामने रख दिया है। **'रक्तस्नात मिट्टी'** कविता के माध्यम सें ब्रिटिश सरकार की बरबरतापूर्ण शासन प्रणाली को उजागर किया तो दूसरी ओर भगत सिंह के माध्यम सें देश भक्ति की भावना को भी उभारा है कुल मिलाकर यह काव्य संग्रह देश भक्ति से पूर्ण, राजनीतिक वातावरण, सामाजिक बंधनों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों तथा जन सामान्य की पीड़ा को उजागर करने वाला काव्य है।

डॉ0 त्रिभुवन सिंह के शब्दों में,"इस संग्रह की कवितायें कथ्य के स्तर पर वर्तमान जीवन के अनुभवों को अपने अन्दर समाहित कियें हुए हैं, किन्तु सर्जक रचनाकार ने उनकी जटिलताओं को अपने शिल्प और भाषा के कौशल से उनके अनुभूति पक्ष को बिना कमजोर बनायें ही सहज संप्रेषणीय बना दिया है, यह इस संग्रह का सबसे सुन्दर पक्ष है।[2]

इस संग्रह पर आकाशवाणी दिल्ली से प्रसारित वार्ता में रणवीर 'रांगा' ने अपना अभिमत इस प्रकार व्यक्त किया "कोमल जी की कविताओं की यह विशेषता है कि वह पाठक को चौकायें बिना धीरे–धीरे उसके मन और मस्तिष्क पर छा जाती हैं, और उसे ऐसा

---

[1] केदार नाथ कोमल ; मेरे शब्द मेरा लहू (काव्य संग्रह के कवर पृष्ठ से), प्र0सं0 1983
[2] नगरी प्रचारिणी पत्रिका ; संवत 2041 वि0 वर्ष 89, अंक 2, प्र0सं0 2,

प्रतीत होता है कि कवि उसी के दुःख दर्द को उसके संघर्ष भरे जीवन की कटुता–कुंठा को वाणी दे रहा है इससे मुख्य कारण यह है कि वागजाल से दूर रहकर आम आदमी के रोजमर्रा के जीवन की गहरी अनुभूति को सहज और सरल अभिव्यक्ति देना ही कवि का मुख्य लक्ष्य है। आम बोलचाल की भाषा में बड़ी से बड़ी और गहरी से गहरी बात कह सकने में समर्थ हैं।

अन्धे सूरज का सफर– इस काव्य संग्रह में प्रथम चार संग्रहों की चुनिन्दा कवितायें संकलित हैं। कवि केदारनाथ 'कोमल' की यह बहुत ही महत्वपूर्ण काव्य कृति है, इसमें 85 कवितायें संकलित हैं। यह काव्य संग्रह भाषा विभाग पंजाब के सहयोग से, पराग प्रकाशन 'दिल्ली से सन् 1986 में प्रकाशित हुआ। कवि कोमल का यह काव्य संग्रह भाषा की दृष्टि से तो सरल है ही, लेकिन भाव की दृष्टि से भी बहुत गहन है। कवि कोमल की रंगारंग मार्मिक कवितायें जहाँ दिल को छूती हैं तो वही दिमाग को सोचने पर विवश भी करती हैं।

इस काव्य की कविताओं में आज के मनुष्य के मन–मस्तिष्क में उठने वाली विविध जिज्ञासाओं को दिखाया गया है तथा वही दूसरी ओर समाज में बनते हुए वैचारिक संघर्षो को भावनात्मक धरातल पर प्रस्तुत किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि आस्था और विश्वास के सूरज पर चढ़कर अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सफर पर निकल पड़ा है।

'अन्धे सूरज की सफर की कविताऐं आम आदमी की रोज़मर्रा की जिन्दगी में आने वाली विसंगतियों को उभारती है। इस काव्य संग्रह में जहाँ कवि ने परम्परागत रूपों, बिम्बों, प्रतीकों का प्रयोग किया है, वहीं कवि ने कुछ नये बिम्बों प्रतीकों को भी स्थान दिया है। अतः यह काव्य संग्रह कवि की प्रखर उपलब्धि है।

रेत पर लकीरें

कवि कोमल जी का यह काव्य संग्रह सन् 1988 में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 11 कवितायें हैं। 'रेत पर लकीरें काव्य संग्रह की कवितायें सरलता, सहजता सादगी एवं सच्चाई की मुँह बोलती तस्वीरें हैं। ये कवितायें बेलौस गहरी मानवीय पीड़ा से

उपजी हैं, बड़ी से बड़ी बात को बहुत सहज ढंग से कम से कम शब्दों में बाधनें की कौशिश की है।

इस संग्रह की कवितायें आज के समाज की सामाजिक दशा, राजनीति तथा आर्थिक छटपटाहट, निराशा एवं बौखलाहट भरे माहौल में अपनी अलग पहचान रखती हैं। 'रेत पर लकीरें' काव्य संग्रह के माध्यम से कवि ने बहुत मार्मिक भावाभियक्ति प्रस्तुत की है, जिस प्रकार बच्चे खेल–खेल में रेत पर लकीरें खीचतें है लेकिन उनके लिए इन लकीरों का कोई महत्व नहीं होता है, उसी प्रकार आज के इस अंधें आधुनिक समाज में भावनाओं तथा व्यक्ति का कोई महत्व नहीं रहा। आधुनिक मनुष्य का व्यक्तित्व उसी प्रकार मिट चुका है जिस प्रकार रेत पर खींची गई लकीरें एक हवा के हल्के से झोके के साथ मिट जाती है।

इस काव्य संग्रह में कवि का मूल उद्देश्य समाज मे रह रहें मनुष्य के व्यक्तित्व व अस्तित्व का बोध कराना है। 'रेत पर लकीरें' की कविताऐं एक शान्त मगर सच्चें दर्द का अहसास कराने वाली कविताऐं हैं। छोटे आकार की कविताओं के लिए भाषा की समाहार शक्ति की बात 'आचार्य शुक्ल' ने की थी; 'कोमल जी' के पास वह है और वे बखूबी जानते हैं कि आधुनिक भाव बोध की परिधि के भीतर उसका अधिकतम उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है।[1] कवि का यह काव्य पुरस्कृत काव्य है।

पतझड़ के हस्ताक्षर

सन् 1991 में महाशक्ति साहित्य मन्दिर, वाराणसी से प्रकाशित हुआ इस संग्रह में लघु कविताऐं हैं। इसकी कविताओं को चार खण्डों में बाँटा गया है–

क) हसों की अभी.........।

ख) अंधेरे–अंधेरे के दरम्यान।

ग) लोग मौजुद हैं........।

घ) शायद यही होगा।

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र0सं0 1988

केदार नाथ कोमल ने स्वयं इस संग्रह की भूमिका 'शायद हम' नाम से लिखी, उसमें उन्होने कहा–" विज्ञान एवं प्रविधि की विस्फोटक प्रगति से जीवन की नस–नस में हलचल मच गई है....। मनुष्य–मनुष्य नही रहा। वह मशीन बनता जा रहा है। चारों ओर प्रदुषण मन में प्रदुषण आदर्शों के टूटते आईने ....।"[1]

आज के आधुनिक तथा वैज्ञानिक प्रगति के समाज में मनुष्य ने जितनी प्रगति की है। वह उससे इतना खुश नहीं जितना की वह दु:खी और टूट चुका है वर्तमान का मनुष्य अपने को उसी तरह महसूस कर रहा है जिस तरह से पतझड़ के मौसम में सभी पत्ते झड़ जाते हैं उसी तरह वह मशीनी युग में अपने को कटा–कटा महसूस कर रहा है।" इस काव्य संग्रह की कवितायें 'बदलते, टूटते, पिघलते, मानव मूल्यों की झलक है।"[2]

कवि कोमल मानव जीवन की गरिमा को बनाये रखने वाले कवि हैं 'उनकी कविताऐं सच्चे और उदार अर्थों में मानव को मानव बनाने की शक्ति रखती हैं उनकी कविताऐं जीवन की परछाई नहीं बल्कि उनकी कविताऐं दसों दिशाओं में देखती हैं, और मन की गहराई में उतर जाती हैं। उनकी सरलता, सादगी, सौन्दर्य में डूबी कवितायें पाठक के मन को बाँध लेती हैं।"[3]

सुगन्ध

कवि कोमल का आठवां लम्बी कविताओं का संग्रह है यह सन् 1992 में आन्तर भारतीय प्रकाशन, औराद, शहाजनौ से प्रकाशित हुआ। समकालीन कविता में प्रेम का स्वर लुप्त हो रहा है। तो कविता और उसके भविष्य को लेकर चिन्तित होना स्वभाविक ही है। ऐसे में केदार नाथ कोमल का अपनी कविताओं में प्रेम को लेकर उपस्थित होना सुखद अनुभूति कराता है। उनकी रचनायें आश्वस्त कराती हैं कि कविता में प्रेम जैसी सुकोमल

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र०सं० 1991
[2] वही, (भूमिका से)
[3] केदारनाथ कोमल ; पतझर के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र०सं० 1991 (मुख्य पृष्ठ से)

भावना अभी जीवित है और यह तय है कि जब तक यह शाश्वत मानवीय तत्त्व कविता में है, तब तक उसके भविष्य को लेकर चिंतित होने की कोई आवश्यकता नही है।'[1]

कवि कोमल के काव्य संकलनों में जो जीवन के प्रति आस्था–विश्वास,उमंग तथा प्रेरणा जो देखने को मिलती है वह प्रायः यहाँ भी मौजुद है। साराशतः यह कहा जा सकता है कवि कोमल का काव्य मानवीय चेतना और प्रेरणा का काव्य है; जो अपने लक्ष्य की ओर जाने का बोध कराता है।

परम्परा की पदचाप

कवि केदारनाथ कोमल की यह महत्वपूर्ण काव्य संग्रह है जो सन् 1995 में प्रकाशित हुआ। इस कृति में कवि ने आदिकाल के **अमीर खुसरो** भक्तिकाल के सूरदास, **तुलसीदास**, **कबीरदास** तथा गुरूनानकदेव आदि को और छायावाद में निराला, दिनकर, **महादेवी**, तथा आधुनिक काल में **मुक्तिबोध**, केदारनाथ सिंह, **शमशेर बहादुर** सिंह, नागार्जुन तथा **अशोक वाजपेयी** को लिया है इसके अतिरिक्त उर्दू, कन्नड़ तथा पंजाबी कवियों पर भी कवि ने अपने भावों को अभिव्यक्त किया है। यह काव्य कृति एक तरह से कवि की संगम रचना मानी जा सकती है।

एक समन्दर : मेरे अन्दर

यह कवि कोमल का प्रौढ़ काव्य है सन् 1998 में प्रकाशित कवि की यह प्रबन्ध काव्य रचना है, क्योंकि इसमें संकलित विभिन्न मुक्तकों में एक ही विषय 'सागर' का वर्णन है। सागर के सम्बन्ध में भावों का इतना विस्तार, कल्पनाओं की इतनी उड़ानें, चिन्तन की इतनी गहराई किसी अन्य काव्य में दिखाई नही पड़ती । प्रकृति प्रेमी कवि वाह्य प्रकृति को अन्तःप्रकृति बनाकर उस महासागर में भावों के भव्य रत्न हमें प्रदान करते हैं।'[2] मेरे विचार से 'एक समंदर : मेरे अन्दर' काव्य में कवि ने सागर को सम्बोधित करके अपने भावों को व्यक्त किया है और यह सागर कुछ ओर नही, बल्कि उसका अपना 'व्यथित मन' है।

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (भमिका से), प्र0सं0 1992,
[2] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर (भूमिका से), प्र0सं0 1998, पृ0 7,

आज के इस भौतिकवादी युग में प्रत्येक व्यक्ति अपने अन्दर एक समुंद्र को लिए हुए हैं, चाहें यह समुद्र उसकी पीड़ा का हो, भावों का हो, चाहे उसके आस्था एवं विश्वास का हो। कवि कोमल दर्द के कवि हैं, उनका समग्र काव्य समकालीन समाज की पीड़ा को लिए हुए हैं। सागर तट पर बैठ कर वह पूछते हैं–'सागर में सागर से बड़ा दर्द कैसे सहूँ ? उनके हृदय में दु:ख का सागर है। वे सागर का एक ज़र्रा हैं, पर अन्त में सागर बन जाते हैं।"[1]

शब्द–नाच

काव्य संग्रह 1999 में अनुभव प्रकाशन साहिबाबाद (गाजियाबाद) से प्रकाशित कवि कोमल का अन्तिम काव्य संग्रह है। इस संग्रह की कवितायें कथ्य के स्तर पर वर्तमान जीवन के अनुभवों को अपने अन्दर समाहित किये हुए हैं। कवि कोमल के समस्त संग्रहों में मानवतावादी दृष्टिकोण सामने आता है तथा मनुष्य जीवन की विषमतायें, उसकी पीड़ा, दशा, देश की आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों पर कोमलजी ने करारा व्यंग किया है।

शब्द नाच काव्य संग्रह को कवि कोमल ने चार भागों में विभाजित किया है–'देवता की आँख'', अंबर–सी पेशानी', 'दर्द युगों पुराना' और बूँद–बूँद। कमलेश्वर इस संग्रह की भूमिका में लिखतें हैं–शब्द–नाच की कविताओं में सृजनात्मक प्रौढ़ता ने सहज और स्वाभाविक ढ़ंग से आकार लिया है, साथ ही नयें अंदाज और ढब के साथ उन्हें फिर से नया बना दिया है।'[2]

इस संग्रह की समस्त कविताओं की सहजता और सरलता भी मनुष्य को अन्दर तक झकझोर कर रख देती है। कवि ने इस संग्रह में समकालीन परिवेश, राजनीतिक, आर्थिक रूप से पीड़ित से पीड़ित समाज को अभिव्यक्ति दी है। 'कमलेश्वर' इस काव्य संग्रह की भूमिका में लिखते हैं–"इंसानी जिन्दगी की विसंगतियों को कवि एक अलग फार्म और भाषा

---

[1] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर (भूमिका से), प्र0सं0 1998, पृ0 7
[2] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र0सं0 1999

में अभिव्यक्त करता है जो बिना किसी वाद और बिना किसी नारेबाजी के मनुष्य के दर्द और पीड़ा को स्वर देता है।"[1]

'देवता की आँख' कविता खण्ड में कवि कोमल ने समकालीन परिस्थितियों, मनुष्यों की पीड़ा एवं उसकी दयनीय स्थिति को चित्रित किया है, तथा मौजुदा तंत्र पर व्यंग किया है। **'देवता की आँख'** खण्ड में कवि की मानवतावादी विराट दृष्टि भी प्रकट हुई है।

"अंधे बहरे गूंगे की
अर्थ भरी वाणी हूँ
थककर जो नही थकता
पानी की रवानी हूँ।"

यहाँ कवि कोमल मौजुदा तंत्र पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि आज का आधुनिक समाज में मानवता अंधी, गूंगी तथा बहरी हो गई है। मनुष्यों के साथ इतना कुछ होने बाद भी वह नही थकता। वह अपने आस्था एवं विश्वास के साथ पानी की तरह बह रहा है। आगे इस कविता खण्ड में कवि मनुष्य की स्थिति पर व्यंग्य करते हुए कहता हैं–

भूली सी पहचान हूँ
भटका सा इन्सान हूँ
धूल भरी आँधी में
जोगी का ध्यान हूँ।

कवि मनुष्य की सामाजिक स्थिति पर दृष्टि डालते हुए कहता है कि आधुनिक युग में मनुष्य भटक गया है, और वह अपनी पहचान व अस्तित्व को जोगी के ध्यान की तरह

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र0सं0 1999

तलाश रहा है। आज की इस लुटी–पिटी मानवता का मनुष्य खुद ही तमाशायी है और खुद ही तमाशा है।

'अबर सी पेशानी' कविता खण्ड में **कवि केदारनाथ 'कोमल'** ने सामाजिक विषमताओं जैसे–धार्मिक वैमनस्य, आतंक आदि के प्रति विरोध प्रकट किया है तथा साथ ही इसके प्रति संघर्ष करने के लिए प्रेरित भी करता है। कवि मनुष्यों की स्वार्थ परकता एवं निर्दयता पर व्यंग्य करते हुए कहता है–

"राम के नाम पर/ लूट है ये जिन्दगी
धर्म के नाम पर / फूट है ये जिन्दगी।"

वर्तमान युग में मनुष्य सब कुछ स्वयं को ही समझ रहा है। इस पर व्यंग्य करते हुए **कवि कोमल** कहते हैं कि–

"भगवान की जरूरत नहीं
हर आदमी भगवान है।"

इस संग्रह में **कवि केदारनाथ 'कोमल'** ने उन लोगों को भी आड़े हाथों लिया है; जो देश के साथ तथा धर्म–कर्म के नाम पर लोगों को लड़ा रहें हैं–

चाकू, छुरिया, बम,बन्दूक
घायल हीर, चिल्लाए 'बुल्ला'
धर्म नहीं, कर्म नहीं
नाचे नंगा खुल्लम–खुल्ला।"

'दर्द युगों पुराना' कविता खण्ड में कवि ने मौजुदा समाज तंत्र की कटुताएँ और विभीषिकाओं को मानवीय संवेदनाओं से जोड़कर गीतों को एक नई विश्वसनीय भंगिमा प्रदान की है।

हम भारत के सूरज

यह कोमल जी का देश भक्तिपरक बाल साहित्य है।'हम भारत के सूरज' के द्वारा कोमल जी ने बच्चों में देश भक्ति की भावना को पैदा करना चाहते है, क्योंकि आज के बच्चे ही कल के भविष्य है उनमें देश पर मर मिटने की प्रेरणा होना अनिवार्य है। यह संग्रह बिहार शिक्षा मंत्रालय द्वारा 'जनप्रिय प्रकाशन' से सन् 1988 में प्रकाशित हुआ।

आशा की कहानी

यह हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा पुरस्कृत बाल साहित्य संग्रह है। इस सग्रह में 21 कविताएं बच्चों के मन में आशा की ज्योति जलाने में सक्षम हैं क्योंकि जब तक हमारे अन्दर आशा और विश्वास पैदा नहीं होगा तब तक हम बड़े से बड़ा व छोटे से छोटा कार्य नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त कवि की अन्य बाल साहित्य कृतियाँ भी हैं– 'हर दिन नया', '3 बाल गीत', नन्ने–मुन्ने गीत (उर्दू) में प्रकाशित हो चुके हैं।

अनोखा न्याय

यह बाल कहानी संग्रह है यह 'अम्बर प्रकाशन' नई दिल्ली से सन् 1981 में प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह में लेखक ने विदेशी कथाओं तथा लोक कथाओं को अपने साहित्य का विषय बनाया है। ये कथाऐं बाल मन को नवीन गति प्रदान करती है। बच्चों में कुछ नवीन जानने की इच्छा होती है, जो इन कथाओं के माध्यम से हुई है। विदेशी लोक कथाओं पर आधारित यह काव्य शिल्प एवं भाषा की दृष्टि से भी अनूठा है।

रोचक ऐतिहासिक कहानियाँ

यह केदारनाथ 'कोमल' का छोटी–छोटी बाल कहानियों का संग्रह है। यह कहानी संग्रह 'सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय' भारत सरकार द्वारा प्रकाशित है। इसके अब तक तीन संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। प्रथम व द्वितीय जुलाई 1986 व नवम्बर 1989 में तथा तृतीय संस्करण मार्च 1995 में प्रकाशित हो चुका है। इसमें 10 कहानियाँ संग्रहित है। इन सभी कहानियों में भारत का शौर्य और वीरता का इतिहास है। यह कहानी संग्रह देश की एकता

और अखण्डता को मजबूत करने तथा बच्चों में राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करने में सक्ष्म है। इसमें कथाकार ने भारतीय संस्कृति का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है।

निष्कर्षतः समकालीन कविता में केदारनाथ 'कोमल' का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वह अहिन्दी भाषी होते हुए भी हिन्दी साहित्य की कई दशको से सेवा कर रहें हैं। कवि कोमल का बचपन अभावों तथा पीड़ा में गुजरा। इसीलियें उनके काव्य में दर्द का होना स्वाभाविक है। उनकी काव्यानुभूति इतनी गहरी है कि उन्होनें आज की जनसामान्य की पीड़ा को अपने काव्य में समाहित किया है कवि की कविता आज की वैचारिकता की दृष्टि से बदलते मूल्यों को भी लिए हुए है। कवि की भाषा तथा भावाव्यक्ति इतनी सरल और सहज है कि आम–आदमी के ह्रदय में आसानी से उतर जाती है, या यूँ कहियें कि कवि ने समकालीन परिवेश का यथार्थवादी चित्रण किया। जहाँ कवि एक ओर अपने काव्य में दुःख–दर्द, कुण्ठा तथा निराशा को लिए हुए हैं वहीं दूसरी ओर अपने काव्य साहित्य के माध्यम से मनुष्य को आस्था और विश्वास के साथ संघर्ष करने की प्रेरणा देते हैं।

किसी भी साहित्यकार को युगीन परिस्थितियाँ अवश्य प्रभावित करती हैं तो फिर कवि कोमल का रचना संसार इन परिस्थितियों से विलग कैसे हो सकता है? कवि कोमल में समाज की विषमताओ के प्रति गहरा आक्रोश व क्षोभ विद्यमान है। वह समाज के राजनीतिक वातावरण के प्रति अत्यन्त दुःखी व चिंतित हैं, जिसकी वज़ह से आज हमारा देश विकास नहीं कर रहा है। आपकी कविताओं में व्यंग्य, मानवीय चेतना को जागृत कर संघर्ष तथा सामाजिक विषमताओं के प्रति आक्रोश एवं तमाम मनोभावों को अपनी कविताओं में व्यंजना दी है।

कवि कोमल बाल साहित्यकार के रूप में उभर कर सामने आएं है। आपकी बाल सुलभ कहानियाँ और कविताऐं बच्चों के हृदय को सम्मोहित कर लेती हैं। वैसे तो कवि ने गद्य के क्षेत्र में अधिक नहीं लिखा, लेकिन जितना भी लिखा है वह अत्यन्त प्रौढ़ व श्रेष्ठ है।

अन्ततः यह कहना समीचीन नहीं होगा कि केदारनाथ **'कोमल'** के साहित्य का मूल उत्स आम–आदमी की ज़िन्दगी को पीड़ा मुक्त, सामाजिक रूढ़ियों तथा जीवन की विषमताओं से मुक्ति दिलाना है। यही कवि के काव्य का मुख्य प्रतिपाद्य है।

❋ ❋ ❋

सप्तम अध्याय :

आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन

(क) भावगत वैशिष्ट्य

(ख) शिल्पगत वैशिष्ट्य

सप्तम अध्याय

आधुनिकता–बोध की दृष्टि से केदारनाथ 'कोमल' की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन

कविवर केदार नाथ 'कोमल' आधुनिक समकालीन हिन्दी कविता के अत्यन्त लोक प्रिय कवि हैं। कविवर केदार नाथ 'कोमल' आधुनिक हिन्दी कविता के मील के पत्थर हैं। उनकी काव्य यात्रा इतनी जीवन्त एवं सशक्त है कि कब आम–आदमी के मन मस्तिष्क पर अंकित हो जाती है पता ही नहीं चलता है। कवि केदार नाथ 'कोमल' ने आधुनिक कविता अथवा समकालीन कविता को नया रूप प्रदान किया है। इसका स्पष्टीकरण 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है– कि "'कोमल' की नये ढंग की कविताओं में बड़ी मार्मिक संवेदनाएं है।"द्विवेदी जी के इस कथन से कवि की कविताओ का स्वरूप स्वयं स्पष्ट हो जाता है। कोमल जी की कविताऐं आधुनिकता बोध के सभी आयामों, दिशाओं तथा विशेषताओं को उजागर करती हैं। प्रस्तुत अध्याय में आधुनिकता की दृष्टि से केदारनाथ कोमल की कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत है ।

चौराहे पर

यह कवि केदार नाथ 'कोमल' का प्रथम काव्य संग्रह है। इस संकलन में आधुनिक जीवन के संघर्ष और कठिनाईयों की गहरी संवेदना उभर कर सामने आयी है। कवि कोमल की 'चौराहे पर' संकलित कविताओं में उनकी जीवन–यात्रा जो आधुनिकता, मौलिकता, युग सापेक्षता के अनुरूप हैं, जो जीवन की सच्चाई, ईमानदारी, आत्मविश्वास और लोगों के भोगे हुए जीवन का सहज योग बनकर कवि को आस्थावान और चेतनावान बनाती हैं। यह कवि केदार नाथ 'कोमल' का पहला संकलन होते हुए भी प्रौढ़ता और प्रांजल्यता से परिपूर्ण हैं।

चौराहे पर – कोमल जी की यह कविता मानववाद से प्रेरित है। यही मानववादी दृष्टिकोण मनुष्य को आधुनिकता–बोध से जोड़ती है। यहाँ कवि ने आधुनिक मनुष्य की भटकी हुई मानवीयता को भी चित्रित किया है :–

'जिन्दगी का आईना / चटख गया है
आस्था का उजाला / भटक गया है।

x x x

आशा पूछती है निराशा से
अब किधर का इरादा है?'[1]

इस कविता में कवि ने मनुष्य जीवन की खण्डित होती तस्वीर तथा उसके आस्था, विश्वास टूटते हुए देखा है। जीवन जो दर्पण के समान था जिस पर प्रतिबिम्बित होती छवि में आत्मीयता और स्पष्टवादिता थीं, वह आज खण्डित हो गई है। जीवन के विश्वास रूपी दर्पण पर दरारें पड़ गई हैं। आस्था का शुभ, अमलिन प्रकाश टूटती आस्था और खण्डित होते तिमिर की गलियों में भटक गया है,परन्तु आज भी उसके भीतर के विश्वास का प्रकाश, प्रकाशमान है, वह बराबर नये संकल्पों को लेकर प्रश्न कर रहा है। वह निराशा के आवरण से निकलकर आशा के किस पथ पर बढ़ चलूँ अपनी सम्पूर्ण चेतना और संकल्प के साथ। वर्तमान में खण्डित होती मानवता, विचलित होती आस्था से उद्देलित कवि का ह्रदय नये मार्ग की तलाश मे भटक रहा है। अतः आधुनिकता विघटन का नाम नहीं सम्पूर्णता एवं संश्लिषता का नाम है।

लोग – 'शीर्षक' कविता कोमल की यथार्थवादी कविता है। आज मनुष्य आधुनिकता की अँधी दौड़ में प्रत्येक मनुष्य दौड़ रहा है, और इस दौड़ में हर इंसान अकेला पड़ गया है। कवि इसी भावना अभिव्यक्ति करते हुए कवि कहता है कि –

'भीड़ की तनहाई में डूबे हुए
जिन्दगी की बेवफाई से ऊबे हुए लोग।
आहों की धुंध में भटके हुए
आँख में आँसू की तरह अटके हुए लोग।

[1] केदारनाथ कोमल : चौराहे पर (कविता संग्रह) प्र0 सं0 1968, पृ0 11

दु:खों की आग में सुलगते हुए
वक्त की भट्टी में
इस्पात की तरह पिघलते हुए लोग।[1]

इस कविता के अन्तर्गत कवि ने मनुष्य के संत्रास एवं कुण्ठापूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति की है। इस कविता का मूल उद्देश्य मनुष्य की समाज में भयभीत और दु:ख पूर्ण स्थिति को पूर्ण रूप से उजागर करना है। वह अपनी इच्छा पूर्ति के लिए इधर–उधर भटक रहा है, लेकिन इसकी पूर्ति न होने के कारण वह समाज में तनहाई और ऊबन महसूस कर रहा है। आधुनिकता के इस माहौल मे वह सारी सीमाऐं लांघ चुका है। आज का मनुष्य संघर्ष करते हुए भटक रहा है। यही भटकाव आधुनिकता की पहचान है।

माहौल – यह कविता घोर यथार्थवादी है कवि ने इस कविता में यथार्थ का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। वैसे यह कविता दफ्तरों में काम करने वालों की जिन्दगी पर लिखी गई है। मानव जीवन की रिक्तता और आर्थिक समस्या की कशमकश को यह कविता उजागर करने में पूर्ण रूप से सक्ष्म है। यहां कवि ने स्वयं को समय का धाव माना है समय की गलियों में भटकता कवि उसी माहौल में सुबह से शाम तक रहने का आदी हो गया है। इन नाकामियों से निकलकर अपने विचारों की दुनियाँ में खोये रहना अर्थात यथार्थ से दूर भाग कर सुखमय स्वप्नों में खोये रहना अच्छा लगता है–

'सुबह दस से/शाम साढ़े पांच बजे तक
घुटे–घुटे माहौल में रहना,
दुनियाँ भर की बातें करके भी/मन की मन में रखना।'[2]

यदि आधुनिकता की दृष्टि से देखा जाए तो दफ्तरों में नौकरी करने वालों की जिन्दगी स्थिर होती है।वह उसी माहौल में रह–रह कर धुटन महसूस करने लगता है।

---

[1] केदारनाथ कोमल: चौराहे पर, (कविता संग्रह) पृ0 12
[2] वही, पृ0 13

दीवारें – शीर्षक कविता में कवि ने आधुनिक समाज का बहुत ही यथार्थपरक चित्र प्रस्तुत किया है। आज मनुष्य ने अपने चारों ओर दीवारें खड़ी कर रखी हैं। ये दीवारें नाम की दीवारें, काम की दीवारें, जाति की दीवारें, धर्म की दीवारें और भाषा की दीवारें। आधुनिक वर्तमान मनुष्य का जीवन इतना इन से घिर गया है कि ये उसके मार्ग साधक न होकर बाधक हों गई हैं, जिससें उसकी गति रूक सी गई है। आधुनिकता इसका विरोध करती है, क्योंकि आधुनिकता की स्थिति गतिमान है कवि इस सब पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि–

'दीवारें/आगे/ पीछे/ दायें/ बायें/ दीवारें
दीवारों के पीछे दीवारें/ दीवारों के पीछे, पीछे, पीछे
और, और, और......./दीवारें, दीवारें, दीवारें
किसें पुकारे?/कब तक पुकारें ?'[1]

संकल्प – इस कविता में कवि ने आज के जीवन का चित्रण प्रस्तुत किया है। संकल्प कविता में मानव जीवन की वास्तविकता को उजागर किया गया है। यहाँ कवि ने जिन बिन्दुओं को उठाया है ; उनमें आज के जीवन की स्थितियों का आकलन, व्यंग्य तथा युग सत्य आदि को दर्शाया है–

'यहाँ कोई किसी का नहीं/सच्चाई के पुजारी सभी हैं
लेकिन सब के सिर पर / झूठ की गोल गिल्टी उभरी है।'[2]

इस कविता से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिकता की पहचान अजनबीयत में छुपी है क्योंकि आज के इस आधुनिक प्रगतिशील समाज में कोई किसी को नहीं पहचानता। सच्चाई के तो सभी पुजारी है, लेकिन सभी लोग झूठ का सहारा लेकर आगे बढ़ रहें हैं, अर्थात् सभी मानव मूल्यों का हनन कर रहें हैं।

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह), पृ0 17
[2] वही, पृ0 25

अंत में कवि ने इस कविता के माध्यम से आज के समाज का यथार्थ चित्रण करके समाज पर करारा व्यंग्य किया है। आज मनुष्य ने ईमानदारी को कहीं किसी गुमनाम लॉकर में बंद कर दिया तथा मनुष्य ने धर्म, कर्म और ईश्वर को भुला कर अपने स्वार्थ सिद्ध करने में लगा हुआ है यह बात इन पंक्तियों से व्यक्त हो जाती है–

'उस सच्चाई को इन्सान ने/बंद करके लॉकर में
धर्म को भुला दिया/और भगवान को अधमुआ करके
खण्डहरों में सुला दिया।'[1]

देश– कवि केदार नाथ कोमल **देश** कविता में अपना राष्ट्र प्रेम, देश भक्ति भावना तथा देश के प्रति अपनी आस्था और विश्वास को प्रकट किया है, वहीं दूसरी ओर आज के भारत की स्थिति का भी आंकलन किया है। आज के नेता जो इस देश के शुभचिन्तक होने का ढोंग करते हैं। देश को कंगाल और बरवादी के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया। यह देश अब लंगड़ा ही नहीं मँहगाई, भ्रष्टाचार और चोर बाजारी आदि बीमारियों से युक्त है कवि स्वतन्त्र भारत की विद्रुपता को उजागर करने में पूर्ण सक्षम है अतः यह देश बैसाखियों पर चल रहा है :–

'अधेरी, पथरीली, नुकीली पगडंडियों पर
चलता, गिरता, संभलता, उठता, बढ़ता हुआ देश
x x x x
महँगाई चोर बजारी अवसरवादिता/ भ्रष्टाचार की बीमारी में
तड़फता, हाँफता, काँपता जलता बुझता/पिघलता हुआ देश।'[2]

बेनाम सा दर्द– कवि कोमल ने इस कविता के माध्यम से आधुनिक समाज का बड़ा ही युग सापेक्ष तथा व्यंग्यपूर्ण व्यंजना प्रस्तुत की है। यह कविता आधुनिकता की एक बिशेषता

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह) पृ0 26,
[2] वही, पृ0 35–36

अजनबीयत को अपने अन्दर समेटे हुए है ; क्योंकि आधुनिक मनुष्य अपनी जिन्दगी को फूल की तरह महकाना चाहता है, लेकिन उसे इस विकास की दौड़ में काटों के समान अर्थात् दुःखपूर्ण जीवन ही मिलता है, कविता की इन पंक्तियों से ये बात स्पष्ट हो जाती है–

' जिन्दगी से भीख माँगी थी/ फूल तो क्या
दो कांटे भी न मिले / एक बेनाम सा दर्द
दे दिया और कहा / 'यही सब कुछ है।'[1]

राही– कोमल अपनी कविताओं में यथार्थ और युग सत्य को लेकर समकालीन समाज की वकालत करते हैं। यह कविता मनुष्य के भटकाव और जीवन की पूर्णताः को प्राप्त करने की ओर संकेत करती है। जीवन को पूर्णता में देखना कविता की आधुनिकता है इसीलिए कोमल जी अनजानी मंजिल को पाने के लिए गुमनाम गलियों में भटकतें हुए आम–आदमी के सुखमय जीवन की तलाश में निकलते हुए कहा है–

'समय की गुमनाम गलियों में भटकता
एक राही हूँ
x x x x
चल रहा हूँ कि मानव को/मंजिल मिल जाय।
जल रहा हूँ कि धरती का अँधरा / धुल जाए।'[2]

एक अनुभूति – एक अनुभूति कविता में कोमल जी ने समाज का जीता–जागता चित्र प्रस्तुत किया है, क्योंकि वर्तमान युग में मनुष्य जिस घुटन व धुन्ध भरे माहौल से गुजर रहा है उसकी आँखों से केवल बदहवासी और बेबसी ही झलकती है। वह अपने हृदय में एक गुमनाम उदासी संजोय बैठा है। उसकी आस्था का तारा जगमगाता है, लेकिन वह भी इस अन्धकारपूर्ण वातावरण में लुप्त हो जाता है कवि की 'एक **अनुभूति**' कविता समाज की इसी भावना को व्यंजना देती है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह), पृ0 37
[2] वही, पृ0 39

'निगाहों में बद हवासी
क्षितिज के आर–पार गुमनाम उदासी
दिल जोर से धड़का
और धड़क कर रह गया,
एक जगमगाता तारा।
टूट कर लकीर बनाता हुआ
अंधेरे में गुम हो गया।'[1]

आधुनिकता के इस युग में जहाँ मनुष्य समय के हाथ का खिलौना है, उसके मस्तिष्क में हर समय एक भयानक तूफान उठता रहता है। इस आधुनिक समाज में सभी मानव मूल्यों का ह्रास हो चुका है। कवि के सामने समाज की एक गन्दी भद्दी छाया उभर रही है। कवि के समक्ष अब शब्दों का भी कोई अर्थ नहीं रहा। वह केवल धब्बे मात्र बन कर रह गये हैं–

'दिमाग में भयानक/तुफान का शोर
जैसे धरती के अन्तिम छोर तक
मर गयी हो भोर !
संगीतमय नब्ज लड़खड़ाने लगी । होश पर
एक घिनौनी छाया/घिर आयी,
शब्द बेजान,/निरर्थक धब्बे हो गये।[2]

सर्दी की भोर–कवि कोमल की यह प्रतीकात्मक कविता है। भटकती धुंध–आधुनिकता के प्रति अन्धा विद्रोह है। ठिठुरती सड़कें–अकेलेपन का अहसास। काँपतें पेड़– अजनबीपन। ऊँघते मकान संत्रास। इस दृष्टि से यह कविता अपने में आधुनिकता के प्रत्येक तत्त्व को

1 केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह), पृ0 41
2 वही, पृ0 41

समेटे हुए है। इतना होने पर भी आज का मनुष्य संघर्ष कर रहा है। उसे अपने में पूर्ण आस्था एवं विश्वास है और वह इस समाज के साथ जुड़े रहने की पूरी कोशिश कर रहा है।

" बाँहे फैलाये रेल की पटरियाँ
उजड़ी पगडंडियों
सब जम गयी हैं
कलम की नोक पर !
कितना बोझ उठायेगी कमर?
जाने कब निकलेगा सूरज!"[1]

इस कविता में कवि ने सामाजिक यथार्थवाद, व्यंग्य तथा रोमांटिक आयरनी को प्रस्तुत किया है। आधुनिकता के इस दौर में समाज के अन्दर से इन्सानियत लगभग समाप्त हो चुकी है, प्रत्येक मनुष्य अपने लिए जी रहा है, कोई किसी की मदद करने को तैयार नही है। निम्न लिखित पंक्तियों से यह बात और साफ तौर पर स्पष्ट होती है :–

"चीथड़ों में दुबका मजदूर का बच्चा
उठते ही मांगेगा बासी रोटी का टुकड़ा ।
कौन देगा रोटी उसे/भूखों के देश में ?"[2]

जिन्दगी – कवि कोमल की यह कविता मनुष्य के संघर्षशील जीवन को प्रस्तुत करती है। इस कविता में कवि ने मनुष्य की जिन्दगी को निम्नलिखित उपमानों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। कवि इस कविता के माध्यम से यह प्रस्तुत करने की कोशिश कर रहा है कि आज के मनुष्य की जिन्दगी केवल खोखली शान बन कर रह गई है। आज सारे मानव मूल्य खत्म

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह), पृ0 47
[2] वही, पृ0 47

हो चुके हैं, मनुष्य मनुष्यता से गिर चुका है। यह कविता आज के आधुनिक समाज के यथार्थवादी चित्र को प्रस्तुत करने में पूरी तरह से समर्थ है–

"जिन्दगी / किसी गीत की
उखड़ी–उखड़ी तान है!
दम्भ के
आभूषणों से सजी
खोखली शान है।"[1]

घर में इन्कलाब– कवि "घर में इन्कलाब" कविता के माध्यम से परम्परागत रूढ़ियों तथा समाज में व्याप्त अनेक बुराईयों के प्रति विद्रोह की बात करता है। वैसे इस कविता में परम्परा और आधुनिकता के बीच समन्वय है। तथा दूसरी ओर कवि भविष्य की ओर भी उन्मुख है। कवि का यह इन्कलाब क्राँति को द्ययोतक है क्राँति से समाज में परिवर्तन आता है और यह परिवर्तन ही आधुनिकता का प्रतीक है, लेकिन कवि यह जानना चाहता है कि यह इन्कलाब कब आयेगा–

"बेटे से अक्सर सवाल किया है मैंने
'इन्कलाब का क्या मतलब है ?
कहाँ से सीखा यह नारा ?
क्या स्कूल में यही पढ़ाया जाता है ?
क्या सचमुच इन्कलाब आयेगा ?
आयेगा तो कब आयेगा ?"[2]

कविता में कवि समाज पर व्यंग्य करता है कि आज धर्म, दर्शन, ईमान तथा आस्था

---

[1] केदारनाथ कोमल , चौराहे पर (काव्य संग्रह), पृ0 54
[2] वही, पृ0 61

और विश्वास सभी खो चुके हैं। नीत्शे ने कहा है– "ईश्वर मर चुका है।" नीत्शे के कथन का तात्पर्य यह है कि आज मनुष्य के लिए ईश्वर का महत्त्व समाप्त हो चुका है तथा सभी मानव मूल्य भी खत्म हो चुके हैं। यहाँ कवि भी यही कह रहा है कि भगवान् खो गया है, निम्नलिखित पंक्तियों से यह बात स्पष्ट होती है–

"बीस साल / हाँ बीस साल में
धर्म, दर्शन, ज्ञान, ईमान / आस्था, विश्वास
यहाँ तक कि भगवान भी / खो गया है।"[1]

कविता के अन्त में कवि युग सत्य की बात करता है, तथा युग धर्म की व्याख्या करता है। अन्त में कवि इन्कलाब को केवल मात्र एक खोखला नारा समझता है, आज के नेता तथा अन्य लोग केवल उसका उच्चारण करते हैं, उसका अर्थ ग्रहण नहीं कर रहे हैं। इसलिए कवि 'सत्यमेव जयते' की बात करता है और कहता है कि सत्य की विजय होती है–

"तुम भी तो 'सत्यमेंव जयते' के/नारे लगाते हो!
लेकिन बच्चा सुबह शाम/इन्कलाबका ही नारा लगाता है,
'सत्यमेव जयते' का गीत/ क्यों नहीं गाता है ।।"[2]

कवि कोमल की **'चौराहे पर'** संकलित कविताओं में उसकी जीवन यात्रा जो आधुनिकता, मौलिकता, युग सापेक्षता के अनुरूप जीवन की सच्चाई, ईमानदारी, आत्मविश्वास और लोगों के भोगे हुए जीवन का सहज योग बनकर कवि को आस्थावान और चेतनावान बनाती है।

कोहरे से निकलते हुए–

केदारनाथ 'कोमल' का दूसरा संग्रह 'कोहरे से निकलते हुए' है इसमें 53 कविताऐं संकलित हैं। इसमें कवि ने सामाजिक वैषम्य, जीवनगत वैषम्य आदि को आधुनिक भावबोध

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह), पृ0 62
[2] वही, पृ0 62

के धरातल पर चित्रित किया है। इस संग्रह की कविताओं के माध्यम से कवि ने जीवन को सार्थक एवं गतिशील दिशा देने का प्रयत्न किया है। केदारनाथ कोमल एक प्रगतिशील कवि हैं। **'कोहरे से निकलते हुए'** की कविताओं में जीवन की जटिलता के अन्दर से कवि की अनुभूति की प्रखरता निखरती दिखायी देती है। इस संग्रह में निजी अनुभूति की सहजता सबकी अनुभूति की धारा बनकर अति संवेदनामयी बनती है, जैसे–

'सबकी भूख /भूख है उनकी
सबकी प्यास /प्यास है उनकी'[1]

इस प्रकार की कविताओं को देखते हुए डॉ0 श्याम सिंह "शशि" ने लिखा है– "कविता कवि की निसर्गजन्य अभिव्यक्ति है। वह कभी मस्ती का आलम लिए होती है तो कभी विषाद–निमग्न अनुभूतियाँ। कभी उसमें सुरा के जाम छलकते हैं तो कभी हलाहल।"[2]

'कोहरे से निकलते हुए' काव्य संग्रह की मूल अभिव्यक्ति में शहरी वातावरण, विज्ञान व सामाजिक दायित्व को लेकर उठने वाली विविध सम्भावनाओं को उजागर किया गया है। वर्तमान समय में विज्ञान के अनवरत विकास में मनुष्यों की क्या स्थिति है वह हमारे समाने है। विज्ञान मानव को उत्थान की ओर ले जाते हुए अपने अभिव्यक्त रूप के भी दर्शन कराता है। आज के युग में विज्ञान के प्रभाव के कारण मानव मानवीयता को छोड़कर केवल औपचारिकताओं को निभाता सा प्रतीत हो रहा है। यही कोहरे से निकलते हुए संग्रह की अधिकांश कविताओं का स्वर है। महानगरीय कवि कोमल मठों और मंचों से दूर केवल दर्द के पिटारे हैं वह दर्द कवि का व्यक्तिगत न होकर जनमानस का दर्द है। यही कवि का प्रतिपाद्य है। कवि की अनुभूतियाँ काफी व्यापक गहरी हैं, महानगर की विसंगतियों, खोखलापन और मानवीय आस्थाओं की सारी विद्रूपताओं को कोमल ने समेटने की चेष्टा की है। आज यह स्थिति उत्पन्न हो गयी है कि जगह–जगह उत्पीड़ित, शोषक आम आदमी की

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1975 पृ0 2
[2] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हूए– एक समीक्षा (लेख) प्र0 सं0 1975 पृ0 1

जिन्दगी को पीड़ा दे रहे हैं

"दंगा – फसाद / कभी झगड़ा
कभी मन मुटाव तगड़ा / कभी युद्ध
कभी महायुद्ध / कभी विश्वयुद्ध
फिर भी शब्दों के प्रति / कभी नही हुआ चाव।"[1]

दर्द जवां है– यह कविता आम आदमी में आने वाली कठिनाईयों को उजागर करती है। आज के युग में मानव की जिन्दगी संत्रासमयी हो गयी है। आज के इस विज्ञान व औद्योगिक युग में मनुष्यों के जीवन में सागर की तरह हलचल उठ रही हैं, यह हलचल हमें प्रगति व विकास की ओर अग्रसर करती है–

'दबी–दबी सी / आग सुलगती
सासों में /सागर–सी हलचल
प्यार का जाने / चांद कहां है।'[2]

पत्थर की मूर्ति– कवि कोमल की यह कविता निराशा, कुंठा एवं आस्थाहीनता को अपने अन्दर समाहित किये हुए है, क्योंकि कवि कोमल की कविताऐं विषय प्रधान न होकर व्यक्ति प्रधान अधिक है। "स्वच्छन्दतावादी कविता विषय प्रधान न होकर व्यक्ति प्रधान होती है। व्यक्तिगत भावना का उफान अपनी अभिव्यक्ति के लिए किसी प्रकार के बाह्य–अलंकरण की अपेक्षा नहीं रखता है।"[3] इसलिए कोमल स्वच्छन्दतावादी कवि हैं–

पत्थर की मूर्ति टूट गई
सुनते –सुनते / मेरी दुआ !
नस–नस में झिलमिल तारे थे / होश आया तो जाना
जिन्दगी ही नहीं /हम भी हैं अपने से खफा !'[4]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1975, पृ0 13–14
[2] वही,पृ0 16
[3] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां, प्र0सं0 1975, पृ0 34
[4] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 17

दूसरी ओर यह कविता मानवीय पीड़ा, अकेलापन गुनाह दफ़न है अर्थात् सामाजिक बुराईयों और युग बोध को अपने अन्दर समेटे हुए है–

मै हूँ और आकाश का सूनापन है
इन नयनों में युग–भर का
गुनाह दफ़न है
मैं जिन्दा हूँ कब किसने कहा !
मैने जो चाहा !'[1]

भाग्य की आंधी– यह कविता रोमांटिकबोध, महानगरबोध, व्यस्तता, अलगाववाद तथा आधुनिकता बोध को लिए हुए है, भाग्य–आध्यात्मिकता की ओर संकेत कर रहा है–

'भाग्य की आंधी में
खो गई /सपनों की झांजन !/नगर की
निर्जीव नजरों में /खो बैठे / अपनापन !'[2]

कवि कोमल अपनी कविताओं में काव्य भाषा के प्रति पूर्ण सजग हैं। आम कविता में छंद, लय, स्वर, संगीतात्मक आदि सभी तत्त्व होते हैं। लेकिन आज की कविता इन सब बन्धनों से मुक्त है उसमें केवल शब्दों का ही महत्त्व है–

छंद की रूनझुन / स्वर की खुशबू
लय का नर्तन /ताल का जादू
बिखरे हैं / शब्दों के ऑल पिन !'[3]

सपने–यह कविता स्वच्छन्दतावादी तथा नवस्वच्छन्दतावादी भावबोध को उभारती है। स्वच्छन्दतावाद कल्पना है और यही कल्पना सपना है। जब यह यथार्थ से जोड़ दिया जाता है तो नवस्वच्छन्दता हो जाता है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 17
[2] वही पृ0 18
[3] वही, पृ0 18

'कुछ सपने / बचपन की रंगीनियों में भटक गये:
कुछ सपने / लड़कपन में नादान नयनों में / चटक गयें !
कुछ सपने / सपनों की डाल से झर गये:
कुछ सपने / यथार्थ के चौराहे पर मर गये !'[1]

स्वच्छन्दता जब कल्पना के धरातल से उठ कर यथार्थ तथा सामाजिक धरातल पर आ जाता है। अर्थात् सभी की कल्पना अपनी, सभी का दु:ख अपना हो जाता है अतः कवि समष्टि की बात करता है तब वह नवस्वच्छन्दतावादी हो जाता है। अतः इस कविता के अन्त में कवि समष्टि की बात करता है। अतीत सामाजिकता के साथ अपनापन नहीं है समष्टि में अपनेपन का बोध होने लगता है,

'कुछ सपने / सपनों की भीड़ में खो गये:
दूसरों के कुछ सपने
मेरे हो गये
और मेरे सपने
पराये हो गये !
x x x x
अब / सबके सपने मेरे है:
जिधर देखता हूँ
जगमगाते सवेरे हैं !'[2]

कोमल की इस कविता की तुलना अज्ञेय की कविता 'सपने का सच' से की जा सकती है–

'पर सपने की सच को / किसे दिखाऊँ

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) , पृ0 19
[2] वही,पृ0 20

जिस से वह सुन्दर हो
और उसे कर सकूँ/प्यार ?'[1] ('सपने का सच' कविता से)

प्यार– इस कविता में कवि ने अपनी नवस्वच्छन्दतावादी दृष्टि को उभारा है। यह एक व्यंग्यात्मक कविता है। सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ प्यार ने भी सांप का रूप धारण कर लिया है अर्थात् उसमें भी अब छल, कपट, धोखा आदि का पुट समाहित हो गया है। कोमल जी की इस कविता की तुलना हम अज्ञेय की कविता 'सांप की प्रति' से कर सकते है–

"अब जमाने के साथ / प्यार भी
बदल गया है/ और उसने सांप का
रूप धारण कर लिया है
इसलिए/प्यार से डर !'[2]
सांप ! तुम सभ्य तो नहीं,
नगर में बसना
भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूँ–(उत्तर दोगे?)
तब कैसे सीखा डँसना
विष कहाँ से पाया?[3]

(अज्ञेय–'सांप के प्रति' कविता से)

तेरा ख्याल – यह नवस्वच्छन्दतावादी कविता है, क्योंकि कवि कल्पना का सहारा लेकर अपनी प्रेयसी के सम्बन्ध में अतीत प्रेम की बातें करता है प्रेयसी के साथ बीते हुये प्यार के वह क्षण फूलों की खुशबू के समान कोमल व आत्मिक अथवा चांदनी के समान सुखदायी

[1] सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय' ; सदानीरा ; प्र0सं0 1986, भाग–1 पृ0 308
[2] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 21
[3] सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन, अज्ञेय ; सदानीरा ; प्र0 सं0 1986, भाग–1 पृ0 269

होते हैं–

तेरा ख्याल /जैसे फूलों की खुशबू में डूबा
चांदनी का बदन ![1]

अंत में कवि प्रगतिशील व विकासशील समाज की ओर संकेत करता है। जैसे कस्तुरी की सुगंध में हिरन झूमता हुआ इधर–उधर दौड़ता फिरता है अतः यह प्रगतिशीलता है और दीप–मन में एक आस्था है अतः यहाँ कवि कोमल विकासशील समाज की बात करते हैं–

तेरा ख्याल/कस्तुरी की सुगंध में
झूमता–लहकता –बहकता
जंगली हिरन!
x x x
तेरा ख्याल/जैसे दीप–मन में
आस्था भरी जलन ![2]

कवि कोमल की इस कविता की तुलना कबीरदास की इस साखी से की जा सकती है–

"कस्तूरी कुण्डलि बसै, मृग ढूढ़े वन माही।
ऐसे घटि–घटि राम हैं, दुनिया देखे नाहीं।।1।।"[3]

एक प्याला चाय –'कोहरे से निकलते हुए' काव्य में संकलित यह कविता अपने में सामाजिक यथार्थ, तथा व्यंग्यात्मक शैली में लिखी गयी है। साहित्य में कविताओं के नाम पर केवल तुकबन्दी , जिनमें मूलभाव ही तिरोहित हो गया है तथा नारी चित्रण के नाम पर आज की नारी की धुंधली व अश्लील तस्वीर प्रस्तुत की जा रही है इसके अतिरिक्त कवि सामाजिक सम्बन्धों में विखराव तथा भिखारी के रूप में दिशाओं का मानवीकरण भी किया है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 22
[2] वही,पृ0 22
[3] डॉ0 श्याम सुन्दरदास (सम्पा0) कवीर ग्रन्थावली, 15 वां सं0 संवत् 2041 वि., पृ0 64

'पटरी पर
फटरी चादर ओढ़े लेटी
भिखारी सी दिशायें
अकविता के जंगल में तड़पती
अंधनंगी औरत !'[1]

युग सत्य, सामाजिक यथार्थ के सम्बन्ध में कवि बहुत ही व्यंग्यपरक शैली में कहता है कि आज लगभग सारे ही आदर्श छुट चुके हैं। न आज कोई रघुपति है न राघव। चारो तरफ पाकेटमारी व चोरी बाजारी का बाजार गर्म है। यहाँ कवि जनसंख्या विस्फोट की ओर भी संकेत करते हैं जिसके कारण दो जून की रोटी जुटाना मुश्किल है। इसलिये कवि कहता है–

'रेडियों से/लड़खड़ाते आर्दश–सा
हांफता भजन–
रघुपति राघव राजा राम
(न रघुपति न राघव
पाकेटमारों की बस्ती में
राजा का क्या काम
भूखे पेट को
राम से क्या काम!) [2]

अंधेरे की आहट– यह कविता प्रगतिशील मानववादी और मार्क्सवादी चेतना का प्रतिबिम्ब उजागर करती है। यहाँ कवि सभी की पीड़ा अपनी समझकर अथवा अपनी पीड़ा को सभी का दुःख मानकर समष्टि की बात कर रहा है। आज जो इस समाज में मनुष्य का अस्तित्व खो चुका है कवि उसी की तलाश में फिरता हुआ अस्तित्त्ववादी चेतना की ओर अग्रसर है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 29
[2] वही, पृ0 29–30

आ ओ! / नगे–भूखे–प्यासो!
तुम भी, तुम भी, तुम भी
सब आओ / सब आओं!

x x x

गाओ कि हमारा अस्तित्व
अस्तित्व नहीं / अंधेरे की आहट है!'[1]

अजनबीपन की आग – कवि कोमल की इस कविता में आधुनिकता का स्वर–मुखरित हुआ है क्योंकि अजनबीयत आधुनिकता का महत्त्वपूर्ण बिन्दु है। आज के इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य केवल अपने तक सीमित रह गया है। इसीलिए वह अपने चारो तरफ अजनबीपन एवं ऊबन महसूस कर रहा है–

"चारों ओर फैली है / अजनबीपन की
सर्द आग! / आस–पास
जाने–पहचाने चेहरों को
अनुभव की सुई से
कुरेद–कुरेदकर देखा है
वे निर्जीव पत्थर–से भी
गए–गुजरे हैं / इस अंधे सफर में
बिखर गया घाव–कलियों का पराग!"[2]

जहर की तलाश– यह स्वच्छन्दतावादी कविता है। यहाँ कवि ने व्यक्ति पीड़ा का अनुभव किया, आज मनुष्य कुण्ठित एवं त्रस्त है समाज में प्रत्येक व्यक्ति उदास व बदहवास है लेकिन मनुष्य फिर भी रहा है अभी उसकी आस्था एवं विश्वास समाप्त नहीं हुआ है यही सोच कर वह प्रगति की ओर उन्मुख हो रहा है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 36
[2] वही, पृ0 43

'नजर–नजर उदाह है
आदमी–आदमी बदहवास है
जहर की तलाश है!

x x x

सोच की चादर फेंक ज़रा
तू अपने आपको गले लगा
तू प्रगति है, बढ़ता जा !'[1]

तटस्थ– कवि कोमल की यह कविता नवस्वच्छन्दतावाद बोध से सिक्त है। यहाँ कवि समाज के प्रति विद्रोह करता है। कवि एकता, शान्ति, भेदभाव, ऊँच–नीच आदि के नारे जो केवल उच्चारण मात्र रह गयें है, उन पर व्यंग्य करता है। दूसरी कवि ने बेरोजगारी व साम्प्रदायिकता की समस्या को भी उठाया है–

'तुम जो रोज–रोज सभ्यता के
गीत गाते हो
क्या तो जानते हो
कि भूखे आदमी और भूखे पशु में
कोई अन्तर नहीं रह जाता !

x x x

हरिजन और सुर्यवंशी के शरीर में
एक ही खून चमकता है !'[2]

आज के आधुनिक समाज में कवि ने पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने वालों पर व्यंग्य बरसाये हैं। जिसके कारण हमारे ईमान, धर्म व संस्कृति नष्ट व भ्रष्ट हो रही है। इसी संन्दर्भ में कवि कहता है कि –

---

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 46–48
[2] वही, पृ0 51

'तुम जो धर्म–ईमान का वास्ता देते हो
तुम जानते हो/कि धर्म कब का बिक चुका है।'

x x x x

तुम जो महान संस्कृति को ढोल पीटते हो
तुम जानते हो/कि बहरे सुन नहीं सकते !'[1]

शायद कोई नही– 'कोहरे से निकलते हुए' काव्य संग्रह में संकलित यथार्थ की भावभूमि पर रचित एक लम्बी कविता है। इस कविता के माध्यम से कवि समाज में व्याप्त बेचैनी, औद्योगिक परिणाम, वर्तमान की गंदी राजनीति, युद्ध, संकट आदि को लिए हुए है,

'बड़े–बड़े जलसे
बड़े–बड़े जुलूस
बड़ी–बड़ी भीड़े
बड़े–बड़े भाषण
मगर नतीजा वही
ढाक के तीन पात'[2]

कोहरे से निकलते हुए – कवि कोमल की यह कविता प्रतीकात्मक है। कोहरा असफलता, निराशा, कुण्ठा व अकेलेपन का प्रतीक है। यहाँ कवि ने समाज की दयनीय स्थिति को उठाया है। लेखक यहाँ यह स्पष्ट कहना चाहता है कि कर्म से ही जीवन की सारी बुराईयों, निराशा आदि अर्थात् कोहरे रूपी अन्धेरे को दूर किया जा सकता है। इस कविता में कवि की अनुभूतियाँ काफी व्यापक, गहरी है, महानगर की विसंगतियों और खोखलापन और मानवीय आस्थाओं की सारी विद्रूपताओं को कोमल ने समेटने की चेष्टा की है। आज यह स्थिति उत्पन्न हो गई है कि जगह–जगह उत्पीड़न, शोषक आम–आदमी को पीड़ा दे रहा है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 52
[2] वही, पृ0 57

'काम नही मिलता, तो न मिले
भाग्य का फूल नहीं खिलता तो न खिले।
बेकार तुम हथेली की बेजान लकीरों में /उलझे हो
ये लकीरे गूंगी है, बहरी है,
कुछ भी तो नहीं बोलेंगी ![1]

सन्नाटे का समन्दर – 'कोहरे से निकलते हूए' काव्य संग्रह की यह कविता मानवीय चेतना एवं सवेदना को यथार्थपरक दृष्टि से आंकलन करती है। इस कविता में कवि ने युग सापेक्षता के साथ रोमांटिक आयरनी का बड़ा सार्थक प्रयोग किया है। रोमांटिक आयरनी संदर्भ में डॉ0 अजब सिंह ने लिखा है–"रोमांटिक आयरनी में सर्जनात्मक 'स्व' न तो एकीभूत है। और न स्थिर है, बल्कि यह स्वयं को सर्जन करने की प्रक्रिया है। रोमांटिक आयरनी का कवि अपने को स्वयं दावा करता है कि वह क्रॉंतिकारी स्वतंत्रता समय की मांग की शक्ति की चेतना है।"[2] इस भाव को कवि निम्न पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करता है–

"झूठ, छल–कपट का तमाशा/सत्य–अहिंसा के नाम पर
किस अदा से होता है !
आशा के ढोल पीटकर/मासूमियत का खून होता है।"[3]

दूसरी ओर यह कविता समकालीन समाज, प्रेम तथा समष्टि पीड़ा से ओत–प्रोत है। इसी कारण इस कविता को नवस्वच्छन्दतावादी कविता के सन्दर्भ में भी व्याख्यित कर सकते हैं। आज का मनुष्य इस अंधी आधुनिकता के समाज में अपने को अपमानित महसूस कर रहा है। लेकिन वह अपने आस्था और विश्वास के साथ इस अन्धकार से निकलने की कोशिश कर रहा है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 65
[2] अभिनव भारती (वार्षिक पत्रिका), सन 1983–84, पृ0 119
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 74

"अधरों पर अपमानित/ज्ञान लिए गाता हूँ !
सूरज के जगमग सागर से/चंदा की चमचम चांदनी से
तम के एक तड़पते बिन्दु पर/लौट–लौट आता हूँ !
आधरों पर अपमानित/ज्ञान लिए गाता हूँ !"[1]

"कोहरे से निकलते हुए" काव्य संग्रह के सम्बन्ध में निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कवि की जिन्दगी चौराहे पर नहीं भटकती है, अपितु देश की दयनीयता, उच्चवर्गीय लोगों की धन लोलुपता आदि के कोहरे से आदमी को मुक्ति दिलाना है। इस सन्दर्भ में कवि **केदारनाथ कोमल** कहते हैं कि व्यक्ति को निरन्तर कर्म करते रहना चाहिए, कर्म के द्वारा ही मनुष्य असफलताओं पर विजय प्राप्त करता है। गरीब, मजदूर, शोषित पीड़ित आदि की शक्ति से कोहरे को दूर किया जा सकता है। यहीं इस काव्य संग्रह का मुख्य प्रतिपाद्य रहा है।

सूरज के आस–पास

सूरज के आस–पास **केदारनाथ कोमल** की छोटी–बड़ी 72 कविताओं का संग्रह है। इस संग्रह की अधिकांश कविताएं सूरज से संम्बन्धित हैं। यह सूरज कवि की आस्था एवं विश्वास का प्रतीक है। कवि ने सूरज के माध्यम से आधुनिक समाज के मनुष्य के व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से उजागर करने की कोशिश की है। **केदारनाथ कोमल** ने अपने इस काव्य संग्रह में छोटी–छोटी कविताओं के माध्यम से मनुष्य की भावनाओं एवं उसके दर्द को अभिव्यक्ति दी है। इस संग्रह की कविताएं यथार्थवाद, रोमांटिक, स्वच्छन्दतावाद एवं नवस्वच्छन्दतावादी चेतना को अपने में वसीभूत किये हुए हैं।

"स्वच्छन्दतावादी काव्य की अनेक प्रवृत्तियां बतायी गयी है,जैसे कल्पना अनुभूति, व्यक्तिवाद, मानववाद, प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति प्रेम, विषाद और असन्तोष, विद्रोह और नवीनता,

[1] केदारनाथ कोमल ,कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह), पृ0 75

अतीत प्रेम, मिथक, बिम्ब, प्रतीक योजना मानवीकरण आदि।"[1] अतः उपर्युक्त सभी प्रवृत्तियां केदारनाथ कोमल के काव्य में मौजुद हैं उनका तीसरा काव्य संग्रह सूरज के आस–पास इसका साक्षात् प्रमाण है।

कवि को यह काव्य संग्रह नवस्वच्छन्दतावादी चेतना को लेकर आता है डॉ0 अजब सिंह ने स्वच्छन्दतावादी कवि के सन्दर्भ में लिखा–"नवस्वच्छन्दतावाद में कवि जीवन से पलायन और सुदूर कल्पना लोक के परिभ्रमण को अस्वीकार करता है किन्तु यहाँ उसकी अपनी दृष्टि वर्तमान की अनुभूतियों पर अवश्य केन्द्रित रहती है जिसे वह रोमांटिक आयरनी द्वारा अभिव्यक्त करता है।"[2] अतः हम कवि केदारनाथ कोमल व उनके काव्य को नवस्वच्छन्दतावादी कवि व नवस्वच्छन्दतावादी काव्य के अन्तर्गत रख सकते हैं। इसी दृष्टि से उनके काव्य संग्रह आलोचनात्मक अध्ययन आपेक्षित है–

मौत– कोमल जी की कविता नवस्वच्छन्दतावादी चेतना को अभिव्यक्ति दे रही है, मनुष्य स्वस्थ जीवन के आभाव में वह व्यक्तिवादी अनुभव निराशा क्षण मृत्यु की छाया नियति बोध में लिपटा हुआ है। कवि अपनी पीड़ा, असफलता, उदासी व निराशा को झेलता हुआ जीवन को विफल और आधारहीन समझने लगा है–

"जी भर के मारो, लताड़ो, उजाड़ो
बीज की अनुभूति की
अनुभुति के दिल में
मेरा दिल है/मेरा मरना
बहुत मुश्किल है।"[3]

सूरज–किरणों की तरह – इस कविता में कवि कोमल की अभिव्यक्ति बहुत गहरी है कवि सूरज की किरणों की भांति फैलकर सारे संसार के तम को दूर करना चाहता है। अर्थात्

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां प्र0सं0 1975 पृ0 11
[2] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद, प्र0सं0 1987, पृ0 88
[3] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1978, पृ0 1

सभी की पीड़ा को समाप्त करके उन्हें सफलता का मार्ग दिखाना चाहता है। डॉ0 अजब सिंह इस संदर्भ में लिखते है–"नवस्वच्छन्दतावादी कविता व्यष्टि के साथ समष्टि की समस्याओं को भी व्याख्यापित करती है, वस्तुतः व्यक्ति मन के साथ–साथ वाह्य स्थितियों एवं समसामयिक समस्याओं का बखान भी करती है।"[1] अतः कवि कोमल भी इस कविता में समष्टि की समस्या को उठाया है। कविता की पंक्तियां दृष्टव्य है–

"रोना चाहता हूँ
न रूकने वाली बरसात की तरह
और समन्दर की तरह
सारी पृथ्वी को बाँहों में
बाध लेना चाहता हूँ !"[2]

सूरज– प्रस्तुत कविता अस्तित्ववाद एवं मार्क्सवादी चेतना को लेकर कवि ने प्रस्तुत की है। मार्क्सवाद मानव को अपने दर्शन का केन्द्र मानता है। वस्तुतः मानव और उसका विकास मार्क्सवाद की मूल चेतना है। कवि सूरज को सफलता का प्रतीक मानता है वह नित्य उदित होकर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। उसी तरह मनुष्य को हर समस्या का अन्त करके सफलताओं की ओर बढ़ते रहना चाहिए–

"नित नया रूप लेकर आता है !
उम्मीद की रोशनी की खूशबु
कण–कण में विखराता है !"[3]

राही–यही कविता प्रगतिशील चेतना का भाव लिए हुए है। यहाँ कवि अपने माध्यम से मनुष्य की अस्मिता की खोज में भटक रहा है। इसीलिए वह निरंतर चल रहा है कि शायद वह

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद, प्र0सं0 1987 पृ0 57
[2] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1978 पृ0 3
[3] वही, पृ0 8

अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके। **कवि कोमल** की इस कविता की तुलना **मुक्तिबोध** की कविता **'अन्धेरे में'** कविता से की जा सकती है:–

"समय की गुमनाम
गलियों में भटका राही हूँ !
चल रहा हूँ कि मानव को /मंजिल मिल जाए
जल रहा हूँ कि धरती का /तम धुल जाये !"[1]
जिन्दगी के ....
कमरों में अँधेरे /लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार !"[2] (**'अन्धेरे में'** कविता से)

आस्था–कवि कोमल द्वारा रचित "आस्था" कविता व्यक्तिवादी बोध का स्वर लेकर प्रस्फुटित हुई, क्योंकि **कोमल** जी समाज की समस्त पीड़ा को महसूस कर रहें हैं। मानवतावादी कलाकार सदैव अकेला ही एक योद्धा के रूप में समाज के बन्धनों से मुक्ति पाने के लिए जुझता दिखाई पड़ता है, इसलिए कवि अपने को भूलकर समाज की विसंगतियों के प्रति विद्रोह व क्रॉंति का स्वर अपनाते हैं। इस सन्दर्भ में कविता की पंक्तियाँ निम्नलिखित है–

"भूल गया हूँ /अपने को इसलिए कि
समय के हृदय का/घाव हूँ !
प्रत्येक तम का/मुस्करा के
जी बहलाता हूँ: इसलिए कि
मानव आस्था का/चाव हूँ !"[3]

अन्तिम छोर तक–कवि केदारनाथ कोमल मानवतावादी भावना के कवि हैं इसलिए उनके काव्य में मानवीय चेनता का उत्कृष्ट संगम है। **'अन्तिम छोर तक'** कविता इस तथ्य का

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1978, पृ0 10
[2] नेमिचन्द्र जैन (सम्पा0) ; मुक्तिबोध रचनावली, प्र0सं0 1980, भाग–2, पृ0 350
[3] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह), पृ0 17

उपयुक्त प्रमाण है। कवि इस कविता में तपते रेगिस्तान' की बात करता है यह तपता रेगिस्तान–आज का विसंगतियों से भरा समाज है जिससे मुक्ति दिलाने के लिए लेखक सावन की घटा बन जाना चाहता है। यहाँ कवि यथार्थ का बहुत ही उपयुक्त चित्रण करता है और जब यह व्यष्टि पीड़ा समष्टि पीड़ा बन जाती है, तो उसमें नवस्वच्छन्दतावाद का बोध स्वयं फुटने लगता है–

"जी होता है
मेहनती हाथों की नस–नस में
विश्वास का सूरज बन जाऊँ :
जीवन के अन्तिम छोर तक /उजियारा फैलाऊँ !"[1]

बसंत– कवि ने इस कविता में बसंत का प्रकृति चित्रण मानवीय ढंग से किया। बसंत, मानवीय चेतना, अनुभूति एवं लोकतांत्रिक चेतना का प्रतीक है। बसंत के आगमन से चारो तरफ हरियाली व खुशहाली फैल जाती है। यही चेतना एवं प्रगतिशीलता का प्रतीक है–

"बसंत नई उमंगों का कसमसाना है
बसंत अपने ही प्यार का दीवाना है !
बसंत अपने को भूलकर याद करना है
बसंत प्यार के फूलों की झोली भरना है !"[2]

मशाल– कवि ने इस कविता में विद्रोह का स्वर अपनाया है, वे देशवासियों के मन में समाज की बुराईयों के प्रति आन्दोलन की सच्ची भावना जगाना चाहते हैं। मशाल कविता में कवि ने अपने आपको जीवन की मशाल स्वीकारा है ,इस कविता के द्वारा वे समाज में विश्वास जगाना चाहते हैं यही इस कविता का मूल प्रतिपाद्य है–

"दिमाग गगन है/मै हाँफते–काँपते–टूटते–बिखरते
समय के साथ हूँ /मै निराशा की आस हूँ

[1] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह), पृ0 21
[2] वही, पृ0 24

जीता-जागता विश्वास हूँ/मैं......... मैं हूँ
जीवन की मशाल हूँ !!"[1]

भीख-"सूरज के आस-पास" काव्य में संकलित यह स्वच्छन्दतावादी कविता है क्योंकि इसके मूल में विद्रोह एवं नवीनता दोनों की भावना प्रधान है। संसारिक व्यस्तता में मनुष्य की अपनी पहचान खो चुकी है।आज उसका जीवन सुखमय होने के बजाय दुःखमय प्रतीत होने लगा है। कवि कोमल की यह कविता मानवीय भावबोध की अभिव्यक्ति तो करती है लेकिन समाज पर एक बड़ा व्यंग्य भी है। **डॉ० अजब सिंह** ने इसे आधुनिकता के संदर्भ में व्यक्त किया है-**"सांसारिक व्यस्तता में व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व एवं पहचान खो चुकी है इस खोये हुए व्यक्तित्व की खोज प्रक्रिया की संज्ञा आधुनिकता है।"[2] इसी संदर्भ में कवि कोमल** ने भी कहा है :-

"जीवन से भीख मांगी थी
फूल तो क्या /दो कांटे भी न मिले :
एक बेनाम सा दर्द /दे दिया और कहा-
'यही सब कुछ है !"[3]

कफन-इस कविता में कवि समकालीन परिस्थितियों को उजागर करते हुए वर्तमान समाज पर व्यंग्य करते हैं, यह कविता युग सत्य के वर्गीय मानव समाज की मानसिकता को भी हमारे समाने प्रस्तुत करती है। आज समाज में प्यार के नाम पर मनुष्य के साथ जो छल, कपट, धोखा हो रहा है उससे मनुष्य कुण्ठित, व्याकुल, अलगाव की स्थिति महसूस कर रहा है इसी स्थिति को कोमल उजागर करते हुए लिखते है-

"मत हसों की
कफन ओढ़ लिया है

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस-पास (काव्य संग्रह), पृ० 25
[2] डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, प्र०सं० 1975, पृ० 8
[3] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस-पास (काव्य संग्रह), पृ० 36

सपनों ने :/प्यार के नाम पर
क्यों नहीं किया /अपनों ने !"[1]

कवि कोमल की दृष्टि में हसंना भी जीवन की विवशता है जनमानस को आन्दोलित करने वाला प्रेम का भाव जीवन की जटिलताओं में इतना उलझ जाता है कि वह अपने स्वरूप का अंकलन ही नहीं कर पाता, निराशा मयी जीवन मनुष्य को आगे बढ़ने नहीं देता। आधुनिक जीवन में प्रेम केवल दिखावा मात्र ही रह गया है। आर्थिक विपन्नता ने मानव को इतना अधिक जकड़ लिया है कि उसे प्रेम केवल छल, कपट लगने लगा है।

प्रह्लाद 'सूर्य' का कोमल के सम्बन्ध में विचार है कि "प्रस्तुत कविताओं में यह कहा जा सकता है कि कवि ने स्वयं को जिया है तथा सूरज की तलाश में तम को पिया है। कवि ने प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा नयी कविता तीनों का अपने काव्य संग्रह में समावेश किया है जो सशक्त बन रहा है।"[2] इससे यह साफ स्पष्ट है कि 'सूरज के आस-पास' काव्य संग्रह में कविताओं का बदलता हुआ आयाम प्रस्तुत है। कवि की कविताओं में कहीं भी उग्रता नहीं है वे सामाजिक परिवर्तन के लिए व्यक्ति की स्वेच्छा और उसके विवेक सम्मत मूल्यों की पक्षधर है। प्रस्तुत संग्रह की कविताऐं व्यक्ति और समाज के संत्रास, जीवन की बिडम्बनाओं को काव्य में सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत करती हैं:

"सूरज के आस-पास"संग्रह की कविताऐं छोटी-छोटी सुक्तिपरक और व्यंग्यपरक हैं। कवि का व्यंग्य इतना सजीव है कि मनुष्य के मर्म को छू जाता है इन कविताओं के भाषा आम बोल-चाल की भाषा है देखिऐ 'यार' कविता-

"यार /जो हर
खुशी पर झपटने को रहे/तैयार !"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस-पास (काव्य संग्रह), पृ0 45
[2] प्रह्लाद 'सूर्य' द्वारा लिखित लेख 'दैनिक ट्रिब्यूनल' में रविवार 5-11-78
[3] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस-पास (काव्य संग्रह), पृ0 60

इस प्रकार की कविताओं के माध्यम से आज के मित्र का स्वरूप उजागर है। आधुनिक ढ़ोगीं मित्र और दोस्तों की उन्नति व विकास को देखकर किस प्रकार मानसिकता रखते है।

प्रस्तुत काव्य संग्रह 'सूरज के आस–पास' के प्रतिपाद्य रूप कहा जा सकता है कि कवि कोमल की कविताएं मानसिकता तथा जीवन के भावबोध की अभिव्यक्ति हैं प्रस्तुत संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कवि अपनी कर्तव्यशीलता के प्रति सचेत है और समाज को भी इसकी प्रेरणा देता है। जिससे की मनुष्य आज के इस आधुनिक युग में समाज के साथ चलता हुआ, आधुनिकता की दौड़ में अपने आपको भी
शामिल कर सके। यही इस संग्रह का मूल उद्देश्य है।

मेरे शब्द : मेरा लहू

कवि केदारनाथ कोमल का "मेरे शब्द : मेरा लहू" बहुत ही महत्त्वपूर्ण काव्य संग्रह है। इसमें 34 कविताऐं संकलित है। इस काव्य संकलन में कवि की प्रगतिवादी चेतना मुखरित हुई है तथा साथ ही मनुष्य के स्वाभिमान को जनाने की अद्‌भूत सामर्थ्य भी इस काव्य संकलन में है। कवि की काव्य यात्रा 'चौराहे पर', 'कोहरे से निकलते हुए', 'सूरज के आस–पास', से होती हुई यात्रा के नये–नये आयामों के प्रति उत्कृष्ट जिज्ञासा कोमल की कविताओं में देखने को मिलती है। कवि के इस काव्य संग्रह में 'रक्तस्नात मिट्‌टी' कविता देशभक्ति भावना से परिपूर्ण है। इसके अतिरिक्त 'तूफान कुछ नोट्‌स', 'जलता सत्य', 'जिन्दगी', 'अपमान के जाम', 'सभ्य लोग', दीवारें आदि सामाजिक बिडम्बना असफल मनुष्यों की कुण्ठित भावना, जीवन के संघर्ष को उजागर करने वाली कविताएँ हैं, 'मेरे शब्द मेरा लहू' संग्रह की कविताऐं विविध आयामों से गुजरने के बाद समाज को एक नवीनता का सन्देश देती हैं। यह नवीनता अपने अन्दर आधुनिकता का भाव लिए हुए है।

"मेरे शब्द : मेरा लहू" आम आदमी की बिखरती हुई अस्मिता को अपने युग के बढ़ते संत्रास को उजागर करती है। आधुनिक बोध कवि की कविता का प्राणतत्त्व है। कवि की संवेदनशीलता ही किसी–किसी स्तर पर आम आदमी को कविता से जोड़ती है। जनमानस

का दर्द, आकांक्षाऐं, बौद्धिकता, ईमानदारी और सच्चाई अति सजीवता से वर्णित हुई हैं। इस संग्रह की भूमिका में सुरेश 'विमल' ने लिखा है, "आज की कविता की सब से सुखद बात यह है कि वह किसी न किसी स्तर पर आम आदमी से जुड़े रहने का प्रयास करती रही हैं। आम आदमी के दर्द और उसकी कुण्ठा आकांक्षाओं के साथ तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास आधुनिक कविता के हर ईमानदार कवि ने किया है।"[1]

मरने से पहले–कवि कोमल की यह कविता सामाजिक विषमताओं एवं विसंगति बोध को लेकर प्रकट हुई है। मनुष्य मृत्यु के भय से भयभीत है क्योंकि आधुनिक मनुष्य प्रतिदिन मर रहा है, कहीं उसकी आस्था का खून हो रहा है तो कही उसका विश्वास टूट रहा है तो कभी सफलता प्राप्ति के संघर्ष में असफलता प्राप्त कर रहा है कवि कोमल इन्ही सब चीजों से लड़ने के लिए आम आदमी को प्रेरित करते हैं।

"मै मरने से पहले/मरना नही चाहता
यह जानते हुए भी की
मुझमें लड़ने का/बहुत दम नहीं
लेकिन जीने की इच्छा
उगते सूरज से कम नहीं !"[2]

आप–यह कविता मार्क्सवादी दृष्टिकोण से संयुक्त प्रगतिवादी कविता है। डॉ० इन्द्रनाथ 'मदान' ने मार्क्सवादी चेतना के सन्दर्भ में कहा है–"मार्क्सवाद के मूल में व्यक्ति चिन्तन की अपेक्षा समाज चिन्तन की विचार धारा है जो वर्ग चिन्तन को महत्त्व देती है। उसका सामाजिक उद्देश्य एक विशिष्ट ढाँचे में ढलने के परिणाम स्वरूप समाजवादी बन जाता है।"[3] यहाँ कवि भी मनुष्यों के सामाजिक मूल्यों की ओर संकेत करते हैं। मनुष्य का सामाजिक अस्तित्त्व ही उसकी चेतना को रूपायित करता है। इसी को स्पष्ट करते हुए कवि कहते है:–

---

1 केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू ; (काव्य संग्रह की भूमिका से) प्र0सं0 1983
2 वही, पृ0 10
3 डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ; आलोचना और साहित्य, प्र0सं0 1964, पृ0 22

"कितने अन्धों को /राह दिखायेगें आप
कितने बहरों को/गीत सुनायेंगे आप
अनगिनत सदियों के/अन्धे आसमानों को
कितनी देर सर पर/उठायेंगे आप !"[1]

वह चेहरा– यह कविता कवि के परिवारिक जीवन से जुड़ी हुई है। कवि कोमल की माता की मृत्यु उनके बचपन में ही हो गई थी, इसीलिए माँ का चेहरा उनकी कल्पना मात्र में है। कल्पना जो मनुष्यों के साथ–साथ उसके उत्साह को भी बड़ा करती है, और उसे सफलता की ओर अग्रसर करती है। कोमल का बचपन कष्टों में बीता कई बार पढ़ाई भी छूटी लेकिन वे निरन्तर संघर्ष करते रहे यह संघर्ष ही उनके जीवन का एक हिस्सा था जिसकी वजह से वह अपनी मंजिल की ओर बढ़ते गयें कवि ने अपने व्यक्तिगत जीवन के सन्दर्भ में लिखा –

"हवा चली /रंग बिखरे /सन्नाटे टूटे
धुंध छाई /भूख जागी /छूटी पढ़ाई कई बार
देखते–देखते माँ का चेहरा
बन गया रेगिस्तान/कड़ा इम्तहान !"[2]

सपने में–"मेंरे शब्द : मेरा लहू" में संकलित यह कविता वैज्ञानिक क्राँति एवं औद्योगिकरण से प्रभावित है। आधुनिक युग में विज्ञान और उद्योगों ने मनुष्य को जितनी अधिक सुविधायें दी है, उससे अधिक वह असुविधा भी महसूस कर रहा है मनुष्य आज समाज का पुर्जा बन कर रह गया है। कवि कोमल की यह कविता समकालीन परिस्थितियों एवं समाज का यथार्थ चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत कर रही है–

"आदमी – आदमी नहीं/ मशीन है
जीना अपराध है/जमाना संगीन है

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 16
[2] वही, पृ0 22

वायदों के खण्डहरों में चलोगे ?

सपनों की अर्थी संग/रोज–रोज जलोगे ?"[1]

तुफान : कुछ नोट्स :– यह एक लम्बी कविता है, इसके माध्यम से कवि ने मनुष्य की विवशता एवं समकालीन समाज का चित्रांकन यथार्थपरक ढ़ंग से किया है कवि इस कविता के द्वारा युग सत्य एवं सामाजिक जीवन पर व्यंग्य भी करता है। समाज पर व्यंग्य यह है कि मनुष्य अपनी स्वार्थ सिद्ध में लिप्त है और प्राप्ति पर खूब हंस रहा है। समाज में चाहे कुछ भी हो लेकिन वह खुश है समाज में बड़ी से बड़ी घटना होने पर भी उसका दिल नहीं पसीजता, आँख से आँसू नहीं निकलता वह अपनी इच्छा पूर्ति के लिए इस आग रूपी जंगल में भटक रहा है,–

"मै सदियों से फूल की खोज में

आग के जंगल में भटका हूँ

मुझे कुछ नहीं चाहिए !"[2]

जलता सत्य :–कवि कोमल की यह कविता समाज की एक बहुत ही गंभीर वेश्यावृत्ति की समस्या को प्रस्तुत करती है। जिसका दण्ड उसके होने वाले बच्चों को भुगतना पड़ता है। लेकिन कवि इस ओर भी संकेत करता है कि यह समस्या गरीबी और भूख के कारण समाज में उत्पन्न होती है–

"मै अछूत अजनबी अनाम अनजान

कुचला – रौंदा – जलता – कुढ़ता

नंगी सड़क पर खड़ा हूँ अकेला उदास

समाज का ठुकराया हुआ

मात्र एक पाप के कारण जो /मैने नहीं किया !"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 33
[2] वही, पृ0 36
[3] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 46

रक्तस्नात मिट्टी :– 'मेरे शब्द मेरे लहू' काव्य संग्रह की यह कविता राष्ट्रीयवादी भावना से परिपूर्ण लम्बी कविता है कवि इसमें जलियाँवाला बाग : काण्ड का बहुत ही हृदय विद्रक वर्णन किया है। जिसके कारण मनुष्य का हृदय काँप उठता है। ब्रिटिश शासन के प्रति ईर्ष्या तथा विरोध उत्पन्न होता है। अंग्रेज सरकार समकालीन समाज पर अत्याचार, द्वेश, अधिकारों का हनन कर रही थी। यह शासन करने का अनोखा तरीका था–

"माँ / 'हाँ' / कुछ पता भी है / कितना अनर्थ हो गया
हमारे अरमानों का खून हो गया
आजादी के दीवानों को कुचला गया है
हुकूमत करने यह ढ़ंग नया है !"[1]

कवि केदारनाथ कोमल की यह कविता ऐतिहासिक परिवेश को भी उजागर करती है। लोग अपने स्वाभिमान तथा देशभक्ति की भावना और अंग्रजों के दुर्दान्त कर्म और लोगों का देश के लिए दी गई कुर्बानी का बड़ा सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किया है–

"गोलियों की बारिश में / मुस्कराते हुए लोग
मौत को हंसकर गले / लगाते हुए लोग
गुलाम देश के लोग / मेरे वतन के लोग
मेरे अपने लोग !"[2]

अपमान के जाम :–कवि कोमल के समकालीन यथार्थबोध से युक्त स्वच्छन्दतावादी कविता है। **डॉ0 अजब सिंह** का कथन है–"स्वच्छन्दतावाद एक भावना है, इसके मूल में क्राँति एवं नवसृजन की प्रधानता है स्वच्छन्दतावादी कवि सत्ता, परम्परा तथा रूढ़ियों का विरोधी होता है।"[3] यह कविता युग सत्य, सामाजिक विफलताओं से कुण्ठित एवं भयभीत मनुष्यों के आत्मबोध की अभिव्यक्ति है तथा समकालीन समाज पर कवि का एक व्यंग्य है। आधुनिक

---

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 53
[2] वही, पृ0 57–58
[3] डॉ0 अजब सिंह ; स्वच्छन्दतावाद : छायावाद (भूमिका से) प्र0सं0 1975

युग के मनुष्य को कदम-कदम पर अपमान सहना पड़ रहा है। आज का मानव इस आधुनिकता की दौड़ में अवाध गति से दौड़ रहा है लेकिन फिर भी वह अपने-आपको अकेल महसूस कर रहा है-

"भीड़ की तनहाई में डूबे हुए
जिन्दगी की बेवफाई से उबे हुए लोग
आहों की धुंध में भटके हुए
आँख में आँसू की तरह अटके हुए लोग"[1]

सभ्य लोग :- "मेरे शब्द मेरा लहू" काव्य में संकलित यह कविता प्रगति वादी चेतना को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। कवि प्रगतिशीलता के प्रति अपनी दृढ़ आस्था का परिचय देता है कवि युग चेतना से पूरी तरह अवगत है। इनकी कविताओं में जीवन की निस्सारता, व्यर्थता, शुन्यता के स्वर तो अवश्य गुंजित होते है, परन्तु इन स्वरों में मानव की सामूहिक शक्ति, नवयुग की प्रगतिशील चेतना, अहंवादिता की तुच्छता, जीवन की अजेयता आदि के भाव भी व्यंजित हुए है-

"प्रसिद्धि की मीनारों पर
चढ़ते हुए
भीड़ में एक-दूसरे को
धकेलकर
आगे बढ़ते हुए लोग
इन्द्रधनुषी सपनों के हिंडोले में
डोलते हुए।"[2]

दीवारें :- कवि कोमल की यह कविता समसामयिक समाज की परिस्थितियों को उजागर करती है। आधुनिकता के इस युग में जहाँ मानवता के मूल्यों का हनन हुआ है वहीं मनुष्य

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 68
[2] वही, पृ0 69

के आपस में रिश्ते भी टूटे हैं अर्थात् मनुष्य ने अपने चारों ओर दीवारें खड़ी कर ली हैं। मनुष्य स्वार्थी हो गया है वह अपने जीवन को पूर्णतः की ओर ले जा रहा है। कवि इस कविता के माध्यम से समकालीन समाज पर व्यंग्य करता है :–

"मैने अपने और /अपने भाई के बीच
अनगिनत दीवारें खींच ली हैं –
x x x
चिल्लाता हूँ /बार–बार बेइख्त्यार
मेरी आवाज दीवारों के काटों से
उलझ कर घायल हो जाती है
लगता है कि दिल का दिमाग से
रिश्ता टूट गया है !"[1]

अन्ततः 'मेरे शब्द : मेरा लहू' कविता संग्रह के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि प्रस्तुत संकलन की कविताऐं प्रौढ़ एवं समकालीन सामाजिक परिस्थितियों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती हैं। जो कवि कर्म और उसकी व्यंजना शक्ति को प्रकट करने में पूर्ण सक्षम हैं। इस संकलन में कवि का उद्देश्य यह है कि मनुष्य को निरन्तर संघर्ष करते रहना चाहिए। निरन्तर कर्म करते हुए समाज के साथ चलना ही आाधुनिकता की पहचान है।

अंधे सूरज का सफर

'अन्धे सूरज का सफर' कवि केदारनाथ कोमल का पंचम काव्य संग्रह है। इसका प्रथम संस्करण 1986 में "भाषा विभाग पंजाब से प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह के अन्तर्गत 85 कविताएं संकलित हैं। वैसे कवि का यह काव्य संग्रह इससे पूर्व चारों संग्रहो की चुनी हुई कविताओं का संग्रह है। कवि "अन्धे सूरज का सफर" के द्वारा अंधेरे को दूर करने के लिए प्रकाश की साधना करते हैं। यहाँ अंधेरा और प्रकाश दोनों ही शब्द दृष्टब्य है प्रथम

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 73–74

अंधेरा मानव समाज की बुराईयाँ व रूढिवादी परम्पराएं है तथा प्रकाश मनुष्य की आस्था और विश्वास का उजाला है जो मनुष्य को सफलताओं तथा आधुनिक समाज की ओर अग्रसर करके चलते हैं। कवि की यह साधना कभी शब्द के माध्यम से हुई तो कभी भाव विन्यास के माध्यम से तो कभी स्वर साधना द्वारा हुई।

समकालीन कविता के बहुचर्चित कवि केदारनाथ कोमल तथा उनकी मार्मिक कविताएं दिल को छूतीं हैं तथा दिमाग को सोचने पर विवश करती हैं। कवि केदार नाथ कोमल स्वच्छन्दतावादी कवि हैं तथा उनका काव्य भी स्वच्छन्दतावादी काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। "स्वच्छन्दतावादी काव्य मुख्यतः इच्छा, ललक, उत्कण्ठा और अतृप्ति की भावनाओं को प्रश्रय देता है। स्वच्छन्दतावादी कवि वेदना का पुजारी होता है।"[1] डॉ0 अजब सिंह ने भी स्वच्छन्दतावादी काव्य के संन्दर्भ कथन है– "स्वच्छन्दतावादी काव्य व्यक्तिपरक चेतना की अभिव्यक्ति का परिणाम था। उसके मूल में आत्मभिव्यक्ति के लिए चेतना विकासशील स्वस्थ वैयक्तिकता ही थी।"[2]

इस प्रकार कवि कोमल के इस काव्य संग्रह में व्यक्तिपरक चेतना की अभिव्यक्ति भी है तथा इच्छा, ललक, उत्कण्ठा और अतृप्ति की भावनाओं का प्रश्रय भी है; अतः ये तत्त्व ही कवि और उनके काव्य को आधुनिकता की ओर ले जाते हैं। कवि कोमल के इस महत्वपूर्ण काव्य "अंधे सूरज का सफर" में व्यक्तिवादी भावनाऐं अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुई हैं, चाहे वह पार्थिक प्रेम की कविता हो (कविताऐं– राही, मशाल, जिन्दगी, बेनाम सा दर्द, प्यार, शिशु, चांद, बसंत आदि) चाहे राष्ट्रीय प्रेम से ओत–प्रोत (घर में इन्कलाब, तुफानः कुछ नोट्स तथा रक्तस्नात मिट्टी) मानवतावादी प्रेम तो कवि के समस्त काव्य संग्रह में मुखरित हुआ है। यह मानवतावादी प्रेम कवि को आधुनिकता की ओर ले जाता है, क्योंकि आधुनिकता में मानवतावादी दृष्टिकोण सर्वोपरि है।

---

[1] रामवीर सिंह (सम्पा.) ; आधुनिक काव्य संग्रह ; द्वितीय सं0 1982, पृ0 20
[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां ; प्र0सं0 1975, पृ0 20

शिशु :–**कवि केदारनाथ कोमल** ने शिशु कविता के माध्यम से समाज का बहुत ही यथार्थपरक चित्र प्रस्तुत किया है। यह कविता आज के सामाजिक जीवन पर तीखा व्यंग्य है। आज के मनुष्य की स्थिति चिड़ियाघर के जानवरों के समान है, जिसका अपना कोई अस्तित्व नहीं होता, वह तो वहाँ के रहने वाले के इशारे पर कार्य करता है। दर्शक भी आते जाते रहते हैं लेकिन उनका दर्द कोई नहीं समझ पाता। उसी प्रकार आज का मनुष्य अपने 'स्व' के तलाश में भटक रहा है। यह 'स्व' की भावना उसे मानवीय चेतना से जोड़ती है, यही मानवीय चेतना मनुष्य को आधुनिक बनाती है–

"…….न पूछों क्यों, कैसे, कब
यह चिड़ियाघर में घुस आया
न पूछों उसके माँ–बाप ने
गरीब पर तरस क्यों नहीं खाया
न पूछों, जानवरों के 'स्वर्ग' में
'इन्सान' कैसे घुस आया !"[1]

अपराध :–कवि कोमल की यह कविता आधुनिकता बोध को लिए हुए है, क्योंकि आधुनिकता अकेलापन, बेगानापन, अनिश्चितता, नग्नता आदि का बोध कराती है तथा दूसरी ओर यह कविता वर्तमान समय में मनुष्य के अस्तित्व का बोध कराती है। मनुष्य अपनी अस्मित की खोज में घायल होकर घूम रहा है, यही अस्मित की खोज उसके जीवन को पूर्णता की ओर ले जा रही है। लेकिन वह इस संघर्ष में अकेला पड़ गया है उसके दु:ख व पीड़ा को कोई नहीं सुन रहा है–

"मेरे शरीर से खून बहता है/सारे कपड़े खुन में
तर हो गये हैं/खामोशी चीख रही है/कोई नहीं सुनता

[1] केदारनाथ कोमल ; अंधे का सूरज का सफर, (काव्य संग्रह), पृ0 20

सब सो गये हैं/सब कहाँ खो गये हैं..........।"[1]

हरी घास :–कवि कोमल का सम्पूर्ण काव्य मानवीय पीड़ा व संघर्ष से ओत–प्रोत है, लेकिन वह फिर भी आधुनिक युग के मनुष्य के जीवन को 'हरी घास' की तरह हरा–भरा अर्थात् खुशहाल देखना चाहते हैं। घास को चाहे जितना भी काटों या पैरों से रौदों लेकिन वह फिर हरी हो जाती है। उसी तरह आधुनिकता के इस वैज्ञानिक एवं औद्योगिक युग में मानव मूल्यों का तथा उसके अस्तित्त्व का खूब तिरस्कार हो रहा है लेकिन वह अपने जीवन को सफलता की ओर ले जा रहा है। यह कविता हमारे समक्ष युगीन परिस्थितियों को भी प्रस्तुत करती है–

"ऊपर, ऊपर, ऊपर/जितना ऊपर
उड़ सकते हो तो उड़ो /अंत में आओगे
मेरी पास ही /'मै धरती का
मुसकाता विश्वास हूँ।"[2]

जैसे कि पहले हम लिख चुके हैं कि कवि कोमल का यह काव्य संग्रह पहले तीन संग्रह की चुनी हुई रचनाओं का महत्वपूर्ण संग्रह है। इस संग्रह की अधिकतर कविताओं की पहले व्याख्या कर चुके हैं जैसे– **अंतिम छोर तक, सर्दी की भोर**, जलता सत्य, सभ्य लोग, आदमी, घर में इन्कलाब, तुफान : कुछ नोट्स, रक्तस्नात मिट्टी।

इस प्रकार **अंधे सूरज का सफर** काव्य संग्रह की कविताओं के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि यह कवि की महत्वपूर्ण उपलब्धि है जो जीवन के अन्धकारपूर्ण पक्ष की अभिव्यक्ति करते हुए भी उसे जीवन के सूरज के उजालों से भरने की कामना करती हैं। उजालों से भरने से कवि का प्रतिपाद्य यह हैं कि वर्तमान समय में मनुष्यों का जीवन कुण्ठा,

---

[1] केदारनाथ कोमल ; अंधे का सूरज का सफर,(काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1986, पृ0 23
[2] वही, पृ0 54

पीड़ा एवं असफलताओं से भरा हुआ है अतः मनुष्य को यहाँ से निकालकर उसे उसके गन्तव्य तक पहुँचाना ही कवि के इस संग्रह का मूल उद्देश्य है, क्योंकि कवि कोमल की कविताऐं आधुनिक मनुष्य के जीवन में उत्साह भरने वाली तथा उसे संघर्ष करने की प्रेरणा देने वाली हैं। अतः कवि का यह संकलन अनुभूति एवं अभिव्यक्ति दोनों ही दृष्टियों से सशक्त है।

रेत पर लकीरें :–

कवि कोमल का यह छठवां काव्य संग्रह है यह काव्य संग्रह 1988 में वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ था। इस काव्य संग्रह में कुल 11 कविताएं संकलित है। कवि का यह काव्य संग्रह नयी कविता के **कवि भवानी प्रसाद मिश्र** को समर्पित है। इस संग्रह की सभी कविताएं आधुनिक भाव बोध को लिए हुए हैं तथा साथ ही मनुष्यों के जीवन से भी जुड़ी हुई हैं। प्रस्तुत काव्य संग्रह की भूमिका में **केदारनाथ** सिंह ने लिखा है– रेत पर **लकीरें** संग्रह की कविताऐं दर्द का सच्चा अहसास कराने वाली हैं।"[1] कवि का यह दर्द व्यक्तिगत न होकर समाज का है।

कवि कोमल का यह संग्रह आधुनिकता बोध एवं स्वच्छन्दतावादी चेतना दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है, क्योंकि जब कवि व्यक्तिवादी चेतना को महत्त्व देते हैं तो वह आधुनिकता को साथ लेकर चलते हैं। डॉ0 **केदारनाथ** सिंह का कहना सही है कि "नयी कविता में आधुनिकता का आन्दोलन एक क्राँतिकारी विचार धारा को लेकर आया था जिसका उद्देश्य था आदर्श और कल्पना के स्थान पर व्यक्ति के अनुभव सत्य को प्रतिष्ठित करना।"[2] **केदारनाथ कोमल** ने भी अपने इस काव्य संग्रह में वैयक्तिक अनुभव को प्रतिष्ठित करने की कोशिश की है।

"मानवतावादी कला दृष्टि जीवन की गहराईयों और मनुष्य की प्रकृतिगत विशेषताओं के उद्घाटन को बहुमान प्रदान करती है, पर उसकी आड़ में क्रूरता और पाशविकता के

---

[1] **केदारनाथ कोमल** ; रेत पर लकीरें (भूमिका से), प्र0 सं0 1988
[2] जगदीश नारायण श्रीवास्तव ; समकालीन कविता पर एक बहस, प्र0 सं0 1978, पृ0 18

चित्रण के व्यावसायिक उपयोग की आलोचना करती हैं।"[1] कवि कोमल ने अपने इस काव्य संग्रह में इसी मावनवतावादी दृष्टि को प्राथमिकता दी है, और आधुनिक युग के मनुष्य के जीवन को गहराई से जानने एवं समझने की कोशिश की है। कवि केदारनाथ कोमल ने मानव पीड़ा को बहुत ही गरीब से समझा है।

रेत पर लकीरें की कविताएं सरलता, सहजता, सादगी एवं सच्चाई की मुँह बोलती तस्वीरें हैं यें कविताएं आज के छटपटाहट, निराशा, त्रासदी एवं धुंध भरे माहौल में अपनी अलग पहचान रखती हैं। भाषा की दृष्टि से भी कवि का यह काव्य बहुत ही सजीव है। कवि ने बड़ी से बड़ी बात को थोड़े शब्दों में बाँधने की कोशिश की है। कोमल जी ने अपने समस्त काव्य में आम बोल–चाल की भाषा का प्रयोग किया है इन सभी दृष्टियों कवि के इस संग्रह का आलोचनात्मक अध्ययन आपेक्षित है।

आदमी :– कवि कोमल ने 'आदमी' कविता में आज की सामाजिक स्थितियों का बहुत ही यथार्थपरक चित्रण किया है। समाज में व्यक्ति आपस में लड़ रहें हैं। नफरत की आँधी मनुष्यों के मन को मलिन कर रही है। नफरत समाज में नदी के पानी की तरह बह रही है और इसी कारण मनुष्य, मनुष्य के खून का प्यासा हो गया है–

"निगाहों में तूफान
दिल में नफरत की नदी
मारधाड़–कत्ल, खून
जिन्दाबाद/बीसवीं सदी"[2]

कवि इस कविता के माध्यम से समाज पर व्यंग्य करता है तथा साथ ही आज की राजनीति पर भी। समाज में आज हिंसा का साम्राज्य ही दिखाई पड़ता है। पिस्तौल की

---

[1] डॉ0 अजब सिंह : आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां प्र0सं0 1975, पृ0 21
[2] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह) प्र0सं0 1988, पृ0 14

गोली से नफरत बढ़ती है, कम नहीं होती। विद्वेश की आंधी का अन्त आपसी भाई-चारे में है, हिंसा में नहीं। –

"अचानक पिस्तौल बोलता है :
नफरत का तूफान सो गया है
कितनी आसानी से
'सब कुछ' हो गया है।"[1]

आधुनिकता के इस समाज में मानव ही सर्वोपरि हो गया है। मनुष्य के समक्ष ईश्वर का कोई महत्त्व नहीं रहा, धर्म और ईश्वर की नवीन व्याख्याएं होने लगी हैं। कवि कोमल ने इस स्थिति को अपनी कविता **आदमी** में बहुत ही सहज ढंग से उजागर किया है। आज मनुष्य के मुंह में केवल राम शब्द रह गया है उसका महत्त्व तो वे खो चुके है। उसी प्रकार आज मनुष्यों के अन्दर से इन्सानियत तो मर चुकी, लेकिन उसका ढाँचा बाकी है। दूसरे शब्द में हमारे पास सिद्धान्त रूप में तो सब कुछ है लेकिन व्यवहारिक दृष्टि से हम निष्क्रिय हैं। कवि ने **आदमी** कविता में इसी भावना की ओर संकेत किया है–

"राम–राम /कहाँ हैं राम ?
राम–नाम का बस/बाकी है ढोल
आदमी तो कब का /मर चुका
उसका सिर्फ /बाकी है खोल।"[2]

जंगल :–इस कविता में कवि ने देश की विकराल 'सम्प्रदायिकता' की समस्या को उभारा है जिसमें कोमल के मन की वेदना प्रस्फूटित हुई है आज के लोग धर्म के नाम पर आपस में लड़ रहे हैं, कभी क्षेत्रीयता, तो कभी जाति के नाम पर खून की होली खेल रहे हैं। कवि **केदारनाथ कोमल** की कविता 'जंगल' में मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारों के नाम पर होने वाले

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1988, पृ0 16
[2] वही, पृ0 17

नरसंहार पर व्यंग्यपूर्ण दृष्टि है–

"रह जाते हे दाग़
जिस्म के घाव की तरह
कहीं मन्दिर, कहीं मस्जिद
कहीं गुरूद्वारे की शक्ल में
जाने क्यों/बार–बार हम
बन जाते हैं खुँख्वार भेड़िये।"[1]

आईना :– कवि कोमल की यह कविता, नयी कविता के समक्ष रख कर देखा जा सकता है। नयी कविता में व्यक्ति के स्वत्व और अस्तित्व बोध का प्रश्न मामूली आदमी की संवेदनाओं के स्तर पर आंका जाता है क्योंकि नयी कविता की यथार्थ दृष्टि लघुता और लघु मानव के दर्शन पर आधारित है। यह दृष्टि यथार्थ को जीवन की वास्तविक स्थितियों के सन्दर्भ में ग्रहण करती है। अतः **कवि केदारनाथ कोमल ने आईना** कविता में आज के जीवन को यथार्थवादी दृष्टि से देखा है। यह यथार्थ सामाजिक, आर्थिक विषमता का भी है और राजनीतिक व्यवस्था में पिस रहे मनुष्य का भी।

'मगर/दिन के उजाले में हम
करते हैं काम इतने भले कि
अँधेरा भी हम से /कन्नी काट के
निकल जाता है।'[2]

तस्वीरें :– कवि की इस कविता के अन्तर्गत वर्तमान समाज का बहुत ही यथार्थपरक एवं व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया गया हैं। आज समाज में प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि नाग के समान खतरनाक है अर्थात् मनुष्य की दृष्टि में अब प्यार नहीं रहा, वह अपने मन में समाज से तृस्त होकर प्रतिशोध का ज्वाल लिये हुए है। आज के आधुनिक समाज का मनुष्य

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1988,पृ0 35
[2] वही, पृ0 40

जिन्दगी के ऐसे चौराहे पर खड़ा है, जिसे अपना मार्ग चुनने में काफी कठिनाई हो रही है। कवि कोमल इसी भावना से प्रेरित होकर तस्वीरें नामक कविता में कहा है।

है ज़िन्दगी अगर–मगर
जायें हम किधर–किधर।"[1]

तस्वीरें कविता में कवि कोमल मनुष्य के जीवन को एक अर्थवत्ता प्रदान करना चाहते हैं, एक नई दृष्टि तथा नई राह देना चाहते हैं। कवि कहता है :–

"खोल दो/रोशनदान खिड़कियाँ दरवाजे
खोल दो/जाने कब से/पटक रही है सिर हवा
काँच की दीवारों पर/दबे पाँव आ गया है
बसन्त सेहन में, आंगन में/मन में ।"[2]

सागर :– कवि ने इस कविता में मनुष्य की भावनात्मक स्थिति की अभिव्यक्ति की है। आज मनुष्य सागर रूपी समाज में निराशा, हताश और अवसाद का जीवन जी रहा है जिससे निकलने के लिए वह निरन्तर आत्म संघर्ष कर रहा है। कोमल जी वह मानव को एक दिशा देना चाहते हैं, उसके मन में स्फूर्ति एवं विश्वास जागृत करना कवि का प्रतिपाद्य है –

सुबह की पहली किरण
चिड़िया का चहचहाना
संगीत–सागर का थरथराना
इठलाते चले जाना
दूर क्षितिज से परे
और फिर/मेरे
मन के कोने तक।"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1988, पृ0 44
[2] वही, पृ0 46
[3] वही, पृ0 53

'सागर' कविता में कवि ने युगीन परिस्थितियों का भी चित्रण किया है। आज समाज के प्रत्येक व्यक्ति की आंखों में सुख का सागर छलक रहा है,लेकिन रोजी–रोटी के संघर्ष में उसका जीवन रेगिस्तान की भांति हो गया है। मनुष्य आज अपने को इतना तस्त्र एवं असहाय महसूस कर रहा है कि उसे संभलना मुश्किल है–

"आंखों में सागर
पेट में रेगिस्तान
पांव में छाले
होठों पर ताले
कहाँ तक कोई
अपना आप संभाले।"[1]

कवि कोमल ने जीवन की पीड़ा विषमताओं एवं संघर्ष को खूब झेला एवं महसूस किया है इस आधुनिक युग के मनुष्य का जीवन सागर के समान है, कवि ने मानव के सम्बन्धों को भी महसूस किया है। आज का मनुष्य स्वयं अपनी जिन्दगी के बीहड़ में भटक गया है और यह भटकाव ही उसे आधुनिक बनाता है–

"मैने सचमुच का सागर नहीं देखा :
मैने आँखों में सागर देखा है
x x x x
मैने सचमुच का जंगल नहीं देखा :
मै जिन्दगी के बीहड़ में खो गया हूँ।"[2]

सागर कविता में कवि का प्रतीक विधान बहुत उपयुक्त है कवि केदारनाथ ने नारियल के माध्यम से मानव के आपसी सम्बन्धों का विश्लेषण किया है–

"एक नारियल/दूसरे नारियल के पास रहता है

---

1 केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1988, पृ0 54
2 वही पृ0 55

दूसरा नारियल /तीसरे से कुछ कहता है

तीसरा नारियल /चौथे को बुलाता है।"[1]

सागर के किनारे नारियल के वृक्ष पर लगे नारियल आपस में वार्तालाप करते हुए कवि को प्रतीत हो रहे हैं। ये नारियल व्यक्ति के आपसी सम्बन्धों के वाहक हैं। मनुष्य समाज में एक दूसरे के साथ अच्छा व्यवहार करता है तभी उसका जीवन आनन्दमयी एवं सुख प्रद बनता है।

कवि केदारनाथ कोमल का रेत पर लकीरें संग्रह की कविताएं वर्तमान मनुष्य की जिन्दगी के इतनी करीब है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति महसूस करता है। इस संग्रह में कवि ने कहीं विद्रोह का स्वर अपनाया तो कहीं व्यंग्य का सहारा भी लिया है। कवि का यह संग्रह भाषा की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है इसकी भाषा साहित्यिक खड़ी बोली है उर्दू एवं संस्कृत के शब्द का भी प्रयोग किया। भाषा का व्यवहारिक प्रयोग है। केदारनाथ सिंह ने कविता की भाषा की समाहार शक्ति की प्रशंसा की है–"छोटे आकार वाली कविताओं के लिए भाषा की जिस समाहार शक्ति की बात आचार्य शुक्ल ने की थी, कोमल जी के पास वह है और वे बखूबी जानते हैं कि आधुनिक भाव बोध की परिधि के भीतर उसका अधिकतम उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है।"[2]

केदारनाथ कोमल ने अतुकान्त छन्दो का प्रयोग किया है जो समकालीन कविता की विशेषता है। कवि केदारनाथ कोमल की कविता इतनी सहज है कि पाठक के मन–मस्तिष्क में आसानी से उतर जाती है।

पतझड़ के हस्ताक्षर :–

"पतझड़ के हस्ताक्षर" कवि केदार नाथ कोमल की छोटी–छोटी कविताओं का संग्रह है। यह संकलन 1991 में "महाशक्ति साहित्य मंदिर, वाराणसी से प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 76 कविताएं हैं, इसे कवि ने अमर शहीद भगत सिंह के सपनों के नाम समर्पित किया है।

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत की लकीरें, (काव्य संग्रह), प्र0 सं0 1988, पृ0 60
[2] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीर (भूमिका से) प्र0 सं0 1988

यह काव्य संकलन चार भागों में बंटा हुआ है–'**हसों की अभी**', '**अंधेरे–अंधेरे के दरम्यान**', '**लोग मौजुद है**' तथा '**शायद यही होगा**..........'।

पिछले लगभग चार दशकों से **केदारनाथ कोमल** की कविताओं ने साहित्य में अपनी खास पहचान बनाई है। उनकी कविताएं यथार्थ जीवन, अनुभव और जीवन की विषम परिस्थितियों की उपज हैं। इनकी कविताओं में बदलते, टूटते, पिघलते मानव मूल्यों की झलक है। पिछले कुछ वर्षो में जिस तेजी से जीवन मूल्यों का ह्रास हुआ, वह किसी से छिपा नहीं है। लेकिन कवि कोमल की कविताएं "सहीं अर्थों में मनुष्य को मनुष्य बनाने की शक्ति रखती हैं। उनकी कविताएं जीवन की परछाई नहीं, आत्मीय प्रसंग है।"[1] कवि कोमल की कविताएं सरलता, सादगी और सौन्दर्य से ओत–प्रोत हैं वह पाठक को अनायास अपनी और आकर्षित करती हुई, बड़ी आसानी से मन में उतर जाती हैं। **केदारनाथ कोमल** ने **पतझड़ के हस्ताक्षर** काव्य संग्रह में **शायद हम** नाम से इस संग्रह की भूमिका लिखी। कवि ने लिखा, "विज्ञान एवं प्रविधि की विस्फोटक प्रगति से जीवन की नस–नस में हलचल मच गई है.......। मनुष्य–मनुष्य नहीं रहा–वह मशीन बनता जा रहा है। चारों ओर प्रदूषण, आदर्शों के टूटते आईने.........।"[2]

कवि केदारनाथ कोमल आशावादी कवि हैं उनकी कविताएं जीवन की गरिमा को बनाएं रखने वाली शक्तियां हैं, यह मनुष्य को संघर्ष के लिए प्रेरित करती हैं रूढि तथा परम्पराओं को तोड़कर नये मूल्य स्थापित करती हैं इसीलिए कवि कोमल का मत है–"साहित्यिक मूल्य असाहित्यिक मूल्यों के अधीन हैं..... परन्तु धरती की कविता अमर है...... आस्था, विश्वास जीवन की धुरी से दूर होते जा रहे हैं....... प्रकृति, भगवान को मृतक घोषित कर दिया गया है–

"आप/किस खुदा की/बात करते हैं

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह के कवर पृष्ठ से) प्र0. सं0 1991
[2] वही, (भूमिका से)

इस शहर का/हर नागरिक/खुदा से बड़ा है.. ।"[1]

आज मनुष्य आधुनिकता के इस दौर में मनुष्य ने विकास, उन्नति तथा सुख तो पाया है लेकिन उसने शान्ति खो दी है वह दर्द, घुटन, चुभन, संत्रास, भवहीनता, तबाही, बरबादी में जीवित है। आदमी वहशी बन गया है, चारो तरफ नफरत का बोलबाला है। अन्त में कवि ने लिखा –"शायद इन कविताओं में आप, मै, हम सब हैं कहीं! शायद इसी बहाने हम एक दूसरे को जान सकें, पहचान सकें।"[2]

अधूरी गजल :–इस कविता में कवि ने आधुनिक युग की परिस्थितियों को उभारा है। आज मानव अपने रास्ते से भटक गया है। उसकी मंजिल उसे नहीं मिल रही है जिस स्थान पर वह जाना चाहता है। उसकी जिन्दगी रास्ता इतना कठिन हो गया है कि अपनी उम्मीद खो **बैठा है। कवि ने इन परिस्थितियों को अधूरी गजल कविता में दिखाया है–**

"पथरीला वक्त, घायल उम्मीद
जिन्दगी सूनी–काली रात
उजड़ी राहें, थके कदम
खो गयी मंजिल की बात।"[3]

मजबूरी :– कविता में **कवि केदारनाथ कोमल** ने आदमी–आदमी के बीच की बढ़ती दूरी पर अपनी दृष्टि डाली है। आधुनिक समाज में मनुष्य अपनी समस्याओं से इतना घिर चुका है कि उसे अपना बोध भी नहीं है वह खुद घुटी और परेशान जिन्दगी व्यतीत कर रहा है–

"अधुरी है जिन्दगी अधूरी है/घुटी–घूटी मजबूरी है
आदमी के दरम्यान/अभी दूरी–सी दूरी है।"[4]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत की लकीरें, (भुमिका से) , प्र0सं0 1988,
[2] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1991
[3] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह के कवर पृष्ठ से) प्र0सं0 1991, पृ0 5
[4] वही, पृ0 5

वक्त के माथे पे :–कोमल ने इस कविता में जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। "यथार्थ वादी चिन्तन में मानवी अनुभूतियाँ प्रधान होती है।"[1] यहाँ संघर्षरत मानव को कविता में चित्रित किया गया है तथा यह कविता वर्तमान जीवन पर सटीक व्यंग्य करती हैं। आज मनुष्य वक्त के सामने एक सवालिया निशान बन कर रह गया है, वह अपनी पहचान खो चुका है–

"वक्त के माथे पे/सवालिया निशान हैं हम
आदनियत की टूटती/पहचान हैं हम ।"[2]

कवि इस कविता में समाज में भुखमरी, तो कहीं गरीबी, कहीं हिंसा का बोलबाला है। दूसरे ओर उच्चवर्ग के पास उसके एशो–आराम की सारी वस्तुएं उपलब्ध है, लेकिन वह फिर भी परेशान है अतः कवि ने समकालीन परिस्थितियों का जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया। कवि कोमल ने अपने भावों को इस प्रकार चित्रित किया है–

"अंबर–छूती सहूलतें/नाजुक फूल सी मगर
टूटी झोंपड़ी से ज्यादा/परेशान है हम ।"[3]

जहर :–कवि ने जहर कविता में सामाजिक संबंधों एवं सामाजिक दशा को चित्रित किया है। आज समाज का हर व्यक्ति अपने अन्दर एक ज्वाला और तनाव को लिए हुए है। उसके अन्दर आज के समाज के प्रति सागर की सी लहर बह रही है। जिसमें वह खुद भी बह रहा है। कवि ऐसे समाज के प्रति संघर्ष करना चाहता है। इस सामाजिक स्थिति को कवि ने अपनी कविता जहर में इस प्रकार चित्रित किया है–

"दिल शहर हो गया है
दिमाग जहर हो गया है
सागर हूँ फक्त सागर

---

[1] डॉ0 अजब सिंह ; नवस्वच्छन्दतावाद ; प्र0सं0 1987, पृ0 49
[2] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,,(काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1991, पृ0 13
[3] वही, पृ0 13

हर सांस लहर हो गयी है।"[1]

वेद के पन्ने :–कवि केदार नाथ कोमल ने "वेद के पन्ने" नामक कविता में सामाजिक परिस्थितियों की बहुत ही मार्मिक अभिव्यक्ति की है। कोमल जी कहना चाहते हैं कि जिस पृथ्वी पर ऋग्वेद, उपनिषद्, महाभारत आदि पवित्र ग्रंथ लिखे गये हों। आज उस धरती पर खून से इतिहास लिखा जा रहा है अर्थात् आज सारे देश में हिंसा, आतंकवाद का बोलबाला है, मनुष्य मनुष्य का खून बहा रहा है। क्या हम अपनी आने वाली पीढी को यही सब देंगे। अतः कवि मनुष्य समाज को इस सोच से निकालकर, समाज में शान्ति स्थापित करना चाहता है।

"जिस धरती पर/ऋग्वेद का जन्म हुआ
वहाँ एक नयी किताब लिखी जा रहीं है
खून से –/ आदमी के खून से।"[2]

धरती वही है :–परिस्थितियाँ प्रत्येक रचनाकार को प्रभावित करती हैं। आधुनिक युग में समाज में बहुत कुछ परिवर्तन हुए, उसे कवि कोमल ने **धरती वही है** कविता में दिखाया है कवि की यह कविता व्यंग्यात्मक तथा युग सत्य की ओर संकेत करती है। आज समाज में सब कुछ वहीं है लेकिन मनुष्य की सोच बदल गयी वह आज धर्म, जाति के नाम पर लड़ रहा है अर्थात् आज इन्सानियत का खून हो चुका। समाज में व्यक्ति प्रतिशोध की ज्वाल लिए घूम रहा है–

"फर्क सिर्फ इतना है कि
यज्ञ की आग
पहले मन्दिर में जलती थी
अब/पुजारी के दिल में जलती है।"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,,(काव्य संग्रह), प्र0 सं0 1991, पृ0 23
[2] वही, पृ0 25
[3] वही, पृ0 26

क्या तुमने :–इस कविता में कवि मनुष्य के अस्तित्व का बोध कराते हैं। आज का युग बौद्धिक प्रधान है, इसलिए मनुष्य विवेक से अधिक काम ले रहा है। वह अपनी आत्मा की आवाज को नहीं पहचान रहा है। इसी कारण उसे आज समाज में कष्टों का सामना करना पड़ रहा है। कवि कोमल **क्या तुमने** कविता में इस भाव को अभिव्यक्त करते और समाज को इस ओर प्रेरित भी करते हैं–

"क्या तुमने शरीर में झाँका है
उसकी शक्ति को आँका है
x x x
क्या तुमने आत्मा के सितार पर
गीत गाया है
थरथराते तारों का दर्द बंटाया है।"[1]

सुनों :–कोमल की यह कविता भी मनुष्य को उसके अस्तित्व की पहचान कराती है। कवि कहता है कि आज ग्रन्थों की वाणी झुठी सिद्ध हो रही है क्योंकि आज मनुष्य छल, कपट तथा चिखते चिल्लाते लोगों की आवाज नहीं सुन रहा है वह अपनी स्वार्थ सिद्धी में लिप्त है।कवि कोमल चाहते हैं कि मानव को सारे बुरे कर्म छोड़कर अपनी आत्मा की आवाज को पहचानें–

"तुम अपनी आत्मा की आवाज /जानों पहचानों मानों
इससे पहले कि तुम्हारा तुम/तुम्हें नंगा कर दे
इससे पहले कि तुम्हारा तुम /चिड़िया से चील बन जाए
तुम्हारे स्वार्थ की मांस की /बोटी–बोटी नोच डाले।"[2]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,, (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1991, पृ0 39
[2] वही, पृ0 44

तू : मैं :–पतझड़ के हस्ताक्षर काव्य संग्रह की यह कविता साम्प्रदायिकता की समस्या को व्यंजित करती है। कवि ने इस कविता द्वारा समाज पर व्यंग्य तथा वर्तमान समाज का यथार्थ चित्रण किया है। आज समाज में धर्म, जाति के नाम पर दंगे हो रहे हैं। कवि कहता है कि कभी तुमने सोचा है कि तू और मैं में क्या अन्तर है? तुम्हारे और हमारे धर्म में क्या अन्तर है? क्या ईश्वर की कृपा सभी प्राणियों पर बराबर नहीं होती? क्या भूख की तृप्ति सभी को समान नहीं होती ? इस सन्दर्भ में कोमल अपने भावों को इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है–

मै मूसलमान हूँ तू हिन्दू है
तू सिक्ख है मै ईसाई हूँ
x x x
तेरे और मेरे मजहब और
धर्म में क्या अन्तर है।"[1]

बार–बार :– पतझड़ के हस्ताक्षर काव्य संग्रह की सभी कविताएं मनुष्य की जिन्दगी और समाज की मुँह बोलती तस्वीरें हैं। बार–बार कविता में कवि कोमल ने सम्प्रदायिकता, नफरत और आतंकवाद के विरूद्ध अपनी आवाज बुलंद की है। कोमल मनुष्य को नफरत की आग, धर्म के अंधेरे जंगल से निकालकर इंसानियत, कर्म और धर्म को पहचानने का आग्रह करतें है–

कौन बार–बार धर्म को मानता नहीं
कौन बार–बार कर्म को पहचानता नहीं।"[2]

कवि केदारनाथ कोमल का पतझड़ के हस्ताक्षर काव्य संग्रह अभिव्यंजना की दृष्टि से सशक्त है। छोटी–छोटी कविताएं इतनी सटीक एवं चुटीली है कि उनका सीधा प्रभाव सीधे मनुष्यों के मन पर पड़ता है। इस संग्रह की अधिकतर कविताएं मानवीय जिन्दगी एवं समाज

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,, (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1991, पृ0 46
[2] वही, पृ0 49

की मुँह बोलती तस्वीरें हैं तथा जिन्दगी के इतनी करीब है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति की अनुभूति है।कवि ने व्यंग्य, बिम्ब विधान प्रतीक योजना और वैज्ञानिक सन्दर्भो के माध्यम से अपनी बात कही है। कवि ने नवीन बिम्ब और प्रतीकों के माध्यम से अपनी बात कही है

प्रस्तुत संकलन में कवि ने जीवन को सपने और स्वप्न आदि प्रतीक योजना के माध्यम से सहज प्रस्तुत किया है' पतझड़ कविता में कवि केदारनाथ कोमल ने कहा है–

"पतझड़, पेड़, पत्ते, इतिहास
पतझड़ : इतिहास
पेड़ : जीवन
पत्ते : सपने
प्यास : आस
पतझड़ पेड़ो के पत्तों की आस
अन्तहीन प्यास का इतिहास ।।"[1]

पतझड़ बीता हुआ कल है। पेड़ में जीवन के जीने की आशा है। पतझड़ के हस्ताक्षर में कवि कोमल ने अतुकान्त छन्दों का भी प्रयोग किया है शब्दों के विन्यास में लयात्मकता है। भाव इतने सहज है कि तुरन्त अपना प्रभाव मन मस्तिष्क पर छोड़ते हैं। कवि की भाषा भावानुकूल है। कवि ने संस्कृत, उर्दू फारसी और अन्य भाषाओं के शब्द प्रयोग किये हैं।

सुगन्ध :–

केदारनाथ कोमल की सुगन्ध 1992 में प्रकाशित एक लम्बी कविता है। यह आन्तर भारती प्रकाशन महाराष्ट्र से प्रकाशित हुई। समकालीन कविता में जब प्रेम का स्वर विलुप्त हो रहा हो तो लेखकों का उसके भविष्य को लेकर चिंतित होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसे में कवि 'कोमल' का अपनी कविताओं में प्रेम की भावना को लेकर

---

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,, (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1991, पृ0 12

उपस्थित होना सुखद अनुभूति कराता है। कवि केदारनाथ कोमल के काव्य में जो जीवन के प्रति आस्था, विश्वास एवं उमंग देखने को मिलती है । वह 'सुगन्ध' में भी मौजूद है। मनुष्य इस विशाल समुद्र रूपी संसार में तिनके के समान इधर–उधर डोल रहा है कवि ने अपनी इस भावना को इस प्रकार प्रकट किया है–

"ऊपर विशाल अम्बर
नीचे
विशाल समन्दर
आकाश पर खिली
तारों की अनन्त
कलियाँ/मैं एक तिनके–सा
सागर लहरों पर डोल रहा।"[1]

कोमल की इन पंक्तियों की तुलना कबीर की इस साखी से की जा सकती है–

"साँकर हूँ तें सबल है, माया इहि संसार।
ते क्यूँ छूटैं बापुरे, बाधे सिर जनहार।।"[2]

भाव यह है कि आधुनिक युग का मनुष्य आज अपनी जीवन की पूर्णत: को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत है आज के मनुष्य का अस्तित्त्व संसार में तिनके के समान है क्योंकि मानव ने तकनीकी विकास और औद्योगिक विकास के कारण सफलता की उन ऊँचाईयों को पा लिया है जहाँ उसे अपना अस्तित्व बोध नहीं रहता वह केवल भटकाव की स्थिति में है, दूसरी ओर कबीर की साखी का भाव यह है, कि–इस संसार में माया जंजीर से भी अधिक दृढ़ बन्धन है। जब स्वयं स्रष्टा ने सबको माया रूपी बन्धन में बाँध रखा है तो बेचारे संसारी जीव कैसे छूट सकते है?

---

[1] केदार नाथ कोमल, सुगन्ध, प्र0सं0 1992 , पृ0 1.
[2] डॉ. जयदेव सिंह, डॉ. वासुदव सिंह, (सम्पा.) साखी (कबीर वांङमय) प्र0सं0 1976, खण्ड 3, पृ0 154

कवि कोमल की सुंगध कविता वर्तमान समाज की परिस्थितियों का बोध कराती है। आज के इस युग में मनुष्य के पास समय नहीं है, वह अपनी पूरी शक्ति के साथ समाज के साथ दौड़ रहा है। लेकिन उसके ह्रदय मे भविष्य की अनेक चिंताएं हैं, उसकी आँखे तपकर रेगिस्तान बन चुकी हैं। लेकिन फिर भी वह अपनी सफलता के प्रति आशावान हैं–

"वृक्ष में सुलगती चिताएं
नयनों में रेगिस्तान
x x x
हर हालत में /आशा दीप जलाने है
असफलताओं! न मुस्कराओं
हम तो दीवाने हैं!"[1]

केदारनाथ कोमल की सुगन्ध कविता में आम आदमी की भावना को अभिव्यक्ति देते हैं। निर्धन वर्ग जो पहले समाज से कटा हुआ था, उसका शोषण होता था, अब वह समाज का एक अंग बन गया, अब उसका शोषण नहीं होता। उसके मन में जो सदियों से उच्च समाज के प्रति पीड़ा थी वह समाप्त हो चुकी है अब ? वह अपने को समाज में स्वच्छन्द महसूस कर रहा है–

'निर्धन के नयनों में
आँसू बन के खिला हूँ
सदियों पुराना दर्द हूँ/मानव मन में
प्रातः की आस में/मुसकरा के जला हूँ।"[2]

कवि कोमल वर्तमान समय में मनुष्य के जीवन की परिस्थितियों का आलंकन बहुत ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत करते हैं। आज के मनुष्य की जीवन रेगिस्तान के समान है अर्थात्

---

[1] केदाननाथ कोमल ; सुगंध प्र0सं0 1992,, पृ0 3
[2] वही, पृ0 10

वह कुण्ठित, तृस्त, टूटन, दर्द, भविष्य की चिंता तथा स्वप्न की स्थिति में जी रहा है। आधुनिक तकनीकी एवं औद्योगिक विकास के युग में उसकी मंजिल खोई हुई है फिर भी वह अपनी मंजिल की तालाश में भटक रहा है। कवि ने वर्तमान समय में मनुष्य की जिन्दगी को इस प्रकार महसूस किया है:–

"फैला–फैला रेगिस्तान/जहरीला अँधेरा है
रूठी जिन्दगी का/जाने कहाँ सँवेरा है
चल रहा हूँ/खो गई मंजिल कहाँ
याद नही !"[1]

आज विज्ञान ने मनुष्य को जितनी सुविधाएं दी हैं,लेकिन उससे कहीं ज्यादा उसकी शान्ति एवं सुख में कमी आई है। कवि कोमल ऐसा गीत गाना चाहते हैं,जो मानव की पीड़ा को समाप्त कर दे, उसके जीवन में नयी उमंग एवं रोशनी भर दें तथा सुख शान्ति के साथ सफल जीवन व्यतीत करें–

"गीत मुझे बुला रहा हैं
पीड़ित मान की पीड़ा में
प्रकृति की अनथक क्रीड़ा में
धरती की विकलित वीड़ा में"[2]

'सुगन्ध कविता सामाजिक बोध एवं आधुनिक मनुष्य के जीवन से जुड़ी हुई है। आज मनुष्य के जीवन में चाहें कितना ही दर्द, कितने ही अवरोध हैं, लेकिन उसकी भावना के दीप जगमगा उठे हैं। जीवन में सफलता की कामना उसकी पीड़ा एवं परेशानी को दूर कर रही है –

"मंजिल मुस्काराती है पाँव में
पर दिल की बेचैनी/बढ़ती जाती है

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध प्र0सं0 1992, पृ0 12
[2] वही, पृ0 18

भूल गया हूँ शायद/दिल पे पराई
पीड़ा इठलाती है!"[1]

आज के इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य एक मशीन बनकर रह गया है। वह अपनी भावनाओं में बहकर आशा के दीप जला रहा है। दिन प्रतिदिन उसके मन में एक उमंग की किरण जगमगा उठती है। कितनी परेशानियों के बावजूद वह हर समस्या का सामना करते हुए, आगे बढ़ रहा है–

"पग –पग पर मुसकाता हूँ
आशा के दीप जलाता हूँ
लगी मेरे मन में एक लगन
नहीं रुकता –थकता मेरा मन
करता आँधी–तूफान सहन
बस कदम आगे बढ़ाये जाता हूँ।"[2]

कवि केदारनाथ कोमल 'सुगन्ध' कविता के माध्यम से मनुष्य की खोई हुई मर्यादा को वापस लाना चाहते हैं। आज के आधुनिकता के इस दौर में मनुष्य–मनुष्यों के बीच में दूरी इतनी बढ़ गयी है कि अब प्रेम तो केवल दिखावा मात्र रह गया है कवि यहाँ आध्यात्मिक भावना को भी उजागर करते हैं कि वह कहते हैं कि मनुष्य आज सामाजिक विषय–वासनाओं में इतना लिप्त हो गया है कि उसे स्वयं का बोध नहीं है जबकि यहाँ उसका कुछ भी नहीं हैं,उसे सब कुछ छोड़कर उस सत्ता के पास वापस जाना है–

"मैं मतवाला प्रेम–पथिक हूँ/जाना है मुझे प्रेम–नगर
धरती अम्बर चाँद सितारे/कोई नही है अपना घर।"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध ; प्र0सं0 1992, पृ0 23
[2] वही, पृ0 25
[3] वही, पृ0 26

कवि कोमल की यह 'सुगन्ध' कविता मनुष्य को उसके भविष्य के प्रति उसकी कोमल भावनाओं को अभिव्यक्त करती है। आज मनुष्य के मन में समकालीन समाज की पीड़ा है जिसे वह हमेशा महसूस करता रहता है लेकिन उसकी आँखो में जीवन के प्रति उमंग है जो मनुष्य को विकास की ओर अग्रसित करती है–

'मन में युग–भर की पीड़ा/नयनों में यौवन कम्पन
हर साँसे एक जीवन है/जीवन उमंगों का मधुवन।'[1]

'सुगन्ध' कविता मनुष्य की जिन्दगी के अनेक पहलू पर प्रकाश डालती है। आधुनिक युग में जहाँ विकास की गति ने मनुष्य को सुख सुविधायें दी हैं, वही उसे मानसिक पीड़ा का सामना भी करना पड़ रहा है आधुनिक समाज में मनुष्य तृस्त व कुण्ठित है। कवि कोमल अपनी इसी भावना को इन शब्दों क. में अभिव्यक्त करते हैं–

"जिन्दगी का मजा पा लिया है,
दर्द को दोस्त बना लिया है
उदासी छाई है निगाहों में लेकिन
दिल को मन्दिर बना लिया है।"[2]

'सुगन्ध' कविता में मानव जीवन के विभिन्न पहलूओं पर दृष्टि डाली है। आधुनिकता के इस युग में मनुष्य के मन में एक दर्द एवं घुटन है, कवि कोमल का जीवन बहुत ही कष्टों एवं संघर्षों में गुजरा है। वही पीड़ा कवि कोमल ने समाज एवं मनष्यों की जिन्दगी में महसूस की है उसे शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति सुगन्ध में दी है यह कविता भाषा, छन्द विधान, बिम्ब, प्रतीक योजना की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

परम्परा की पदचाप :–

कवि केदारनाथ कोमल का यह नवां महत्वपूर्ण काव्य संग्रह है। कवि कोमल का यह काव्य संकलन निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। केदारनाथ कोमल ने परम्परा

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध ; प्र0सं0 1992, पृ0 43.
[2] वही, पृ0 44

की पदचाप काव्य संग्रह में हिन्दी साहित्य व इससे इतर अनेक कवियों एवं साहित्यकारों की कविताओं एवं उनकी साहित्यिक प्रतिभाओं की प्रशंसा अपनी कविताओं की माध्यम से की है। इस दृष्टि से कवि कोमल का यह काव्य संग्रह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

नाचे श्याम सलोना :–कवि केदारनाथ कोमल ने इस कविता के द्वारा हिन्दी साहित्य में भक्ति काव्य के सगुण भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि सूरदास के काव्य की बहुत ही मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। कवि ने सूरदास को सूरज के समान बताया है। सूरदास ने अपनी भक्ति के माध्यम से भटके हुए मनुष्य को मुक्ति का रास्ता बताया तथा समकालीन मनुष्य जो अनेक विषय–वासनाओं में लिप्त था, उसे प्रेम, श्रद्धा और भक्ति के माध्यम से जीन का सरल ढंग बतलाया है। कवि ने सूर की इस भावना को इस प्रकार उजागर किया–

"सूर /तुम सचमुच सूरज थे
तुम्हारे नाम का सूरज /आज भी कोटि
तम में भटके मानव को /राह दिखाता है
प्रेम श्रद्धा भक्ति का
जीने का सरल ढंग /बतलाया है।"[1]

कबिरा खड़ा बाजार में :–कवि कोमल इस कविता के द्वारा संत कबीर को आज के सन्दर्भ में प्रासांगिक बतलाया है। कबीर अपने समय के समाज के सुधारक थें। उन्होनें धार्मिक अन्धविश्वास, रूढ़ियों, आडम्बरों के प्रति आवाज बुलंद की। कबीर ने तत्कालीन मनुष्य का परिचय मानवता से कराया, लेकिन आज के इस आधुनिक एवं वैज्ञानिक युग में मनुष्य की पहचान मिट रही है, धर्म और कर्म का ह्रास हो रहा है।मनुष्य आधुनिकता के इस युग में सारी मर्यादायें भुलाकर अपनी पूरी शक्ति के साथ दौड़ रहा है–

"मिटते–मिटते मिट रही/आइने में अपनी पहचान

[1] केदारनाथ कोमल ; परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1995 पृ0 13,

धर्म कर्म अब रोते हैं/हँसता जगमग विज्ञान।"[1]

राम भक्त : निराला :–कवि कोमल की यह कविता निराला की भक्ति भावना एवं आधुनिक हिन्दी साहित्य में उनका अभूतपूर्ण योगदान पर लिखी गयी है। निराला आधुनिक हिन्दी साहित्य के एक ज्योति के समान हैं जिनकी चमक और महक से सारा हिन्दी साहित्य महक उठा। निराला ने ही सर्वप्रथम कविता की मुक्ति की बात की। उन्होंने कहा–'मनुष्य की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है।' अर्थात् उन्होंने कविता को छन्द के बन्धनों एवं रूढ़ियों से मुक्ति दिलाई–

"एक किरण /बंदी–छंदों को
रूढ़ियों की कारा से /मुक्ति दिला गयी।"[2]

प्रकृति पुत्र पंत :–कवि कोमल की यह कविता पंत के प्रकृति चित्रण पर आधारित है। जितना प्रकृति का मानवीयकरण चित्रण पंत ने किया है उतना किसी छायावाद के अन्य कवि ने नहीं किया है। पंत ने प्रकृति चित्रण के माध्यम से मनुष्य को एक नयी राह दिखाई –

"तुमने आदमी के लिए
सारे जीवन की पूँजी लगाकर
कंटीली राहों को
शब्दों के फूलों से सजाकर
क्या नहीं किया?
क्या आत्मा का दर्द कम हुआ ?"[3]

राष्ट्र कवि अभिमन्यु :–इस कविता में कवि केदारनाथ कोमल ने रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य की प्रंशसा की है–

"वाणी तुम्हारी/भावों की नावों भरी

---

[1] केदारनाथ कोमल ; परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1995, पृ0 15
[2] वही, पृ0 24
[3] वही, पृ0 34

गंगा की धार/दर्शन तुम्हारा
सीला सुलगता जलता भभकता
हथेली पर अँगार ।"[1]

चेहरा हिन्दुस्तान का :-इस कविता में कवि कोमल ने आज के भारतीय समाज पर तीखा व्यंग्य किया है तथा समाज की सच्ची तस्वीर हमारे सामने प्रस्तुत की है। आज मनुष्य अपने विचारों की दुनियां में भटक रहा है। आधुनिक समाज का प्रत्येक मनुष्य अपनी आंखों में आभावों की छाया लिये घुम रहा है,प्रत्येक मानव चिंता में डूबा हुआ है वह बीड़ी का नहीं अपितु अपने अरमानों का धुआँ उड़ा रहा है कवि की यह कविता **मुक्तिबोध** की काव्य रचना पर आधारित है-

'तेरे होठों पे सुलगती बीड़ी का धुआँ
धुआँ नहीं/ अरमानों का धुआँ
सर्वहारे मानव की अमिट
भूख का अंधा कुआँ।'[2]

कितनी नावों में कितनी बार -कवि कोमल ने **अज्ञेय** की प्रसिद्ध कविता कितनी नावों में **कितनी बार**' शीर्षक के नाम पर उनके (अज्ञेय) के जन्म दिन पर लिखी। **अज्ञेय** ने अपने काव्य में मानवीय करूणा को चित्रित किया, खुद उन्होंने कितनी बार करूणा के जाम पिये, कवि ने सारी पृथ्वी को अपने आँगन का द्वार माना। कवि कोमल ने **अज्ञेय** की इसी भावना को इस कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया है-

'वह आता
कभी 'अहेरीबावरा' बन
हाथों में 'इन्द्रधनुष रौदें हुए लिये

---

[1] केदारनाथ कोमल ; परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1995, पृ0 40
[2] वही, पृ0 43

'करूणा' के जाम पिये
जानता है वह कि
'आंगन के पार द्वार
पर जिसका सारी
x x x
लहराता पारावार
उसके आँगन के कितने द्वार।'[1]

चचा ग़ालिब को सलाम :–इस कविता में कवि मिर्जा ग़ालिब को संकेत करके तत्कालीन समाज व दिल्ली के ऊपर व्यंग्य किया है। कवि कहता है, पुराने समय में मनुष्यों में कितना भाईचारा था। लेकिन आज वे बातें सब इतिहास बन कर रह गई हैं। इन्सान ने अपने को इतना सीमित कर लिया है कि वह अपनी स्वार्थ सिद्धी में लगा हुआ है।

कितनी बदल गयी है दिल्ली
न बो जोश–खरोश /न महफिलें न रंगरलियाँ
न वह भाईचारा/जैसे इतिहास : खण्डहर विचारा।"[2]

मगध कहाँ है – श्रीकांत वर्मा के मगध उपन्यास पर आधारित है। इस कविता के द्वारा कवि ने समकालीन परिवेश को चित्रित करने की कोशिश की है। वर्तमान युग ओद्यौगिक विकास, तकनीकी तथा विज्ञान का युग है हर इन्सान अपने आपमें व्यथित है, समाज का प्रत्येक मनुष्य आधुनिकता के युग में बेतहाशा दौड़ रहा है। कौन किधर जा रहा है, ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे चारों तरफ आग लगी है। कवि ने समाज की इसी स्थिति को इस कविता में अभिव्यक्त किया है–

'आज पता ही नही चलता/कौन किधर जा रहा है
कौन किधर से आ रहा है/कौन गीत गा रहा है

---
[1] केदारनाथ कोमल ;परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1995, पृ0 51
[2] वही, पृ0 67

कौन मरसिया गा रहा है/ भागमभाग
दिन –रात जाग/जैसे हर तरफ लगी है आग।"[1]

प्रस्तुत संग्रह 'परम्परा की पदचाप' विभिन्न हिन्दी, उर्दू व अन्य भाषा के कवियों तथा उनकी काव्य भावनाओं पर लिखी गई कविताएं हैं, कवि ने इन कविताओं के माध्यम से संग्रह में प्रस्तुत कवियों की प्रतिभाओं को कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है। भाषा की दृष्टि से भी कवि कोमल का यह काव्य संग्रह बहुत ही उपयुक्त है कवि ने बहुत ही सहज एवं सरल ढंग से अपने भावों को प्रस्तुत किया है।

एक संमदर : मेरे अन्दर :–

एक समन्दर : मेरे अन्दर कविता संग्रह 1998 में श्री मारूति प्रकाशन बंगलूर से प्रकाशित हुआ। कवि कोमल का यह बहुत महत्त्वपूर्ण काव्य संग्रह है। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि कवित कोमल अपने हृदय में एक संमदर लिए हुए हैं। कवि इस काव्य संग्रह के माध्यम से आधुनिक परिवेश को उजागर करते हैं। कवि ने इस संग्रह में समाज की यथार्थ स्थिति की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत की है। यहाँ मुझे डॉ0 नगेन्द्र के कथन का स्मरण आता है –"कविता मनुष्य की आत्मा की अभिव्यक्ति होती है जिसके द्वारा वह अपने व्यक्तित्व का सृजना करता है।"

"एक संमदर : मेरे अन्दर काव्य मुक्तक नहीं वरन् प्रबन्ध काव्य है, क्योंकि इसमें संकलित विभिन्न मुक्तकों में एक ही विषय 'सागर' का वर्णन है।"[2]मेरे विचार से 'सागर' मनुष्य का 'मन' है। वर्तमान समाज का मनुष्य अपने अन्दर एक सागर लिए हुए है, और 'समंदर' आज का आधुनिक समाज है जिसमें मनुष्य अपनी असमान्य स्थिति को सामान्य करने के लिए गोते खा रहा है । कवि कोमल ने उसी मनुष्य की स्थिति को इस काव्य संग्रह के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है। डॉ0 सरगु कृष्ण मूर्ति ने इस संग्रह की भूमिका में

---

[1] केदारनाथ कोमल ;परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1995, पृ0 73,
[2] केदारनाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर (काव्य संग्रह की भूमिका से) ; प्र0सं0 1998, पृ0 5

लिखा है– "भौतिकवाद की उपासना में निबद्ध इस संसार में सागर का आत्मवाद प्रतिस्थापित कर कवि एक नया संसार हमें प्रदान करता है, सागर में डूबते हुए भी कवि के पाँव धरती पर हैं। सागर प्रार्थना का प्रतीक है, धर्म एवं आत्मा का प्रतीक है।"[1]

कवि सागर को विचार विनिमय का माध्यम बनाकर अपने भावों को प्रकट किया है उसकी कल्पना की उड़ाने व चिंताए इतनी गहरी हैं कि कवि स्वयं में इतना तल्लीन होकर स्वयं सागर बन जाता है। डॉ0 सरगु कृष्ण मूर्ति ने इस संग्रह की भूमिका में लिखा है–"सागर की लहरों में कवि जीवन का संघर्ष देखता है। सागर सबके प्रति सहानुभूति दिखाता है जगमगाहट की आहट में नयी दुनिया सजाता है।"[2]

भाषा की दृष्टि से भी यह काव्य संग्रह एक सफल काव्य कृति है। कवि ने बहुत ही सहज एवं सरल भाषा में अपने भावों को व्यक्त किया है। कवि ने नये उपमान व प्रतीकों का प्रयोग किया, संगीतात्मकता, कल्पना, अलंकार योजना का भी कवि ने सफल प्रयोग किया। डॉ0 सरगु कृष्ण मूर्ति ने इसकी भूमिका में लिखा –एक समंदर : मेरे अन्दर' –"काव्य प्रकृति – सौन्दर्य के चित्रों का भण्डार है : कोमल जी के सागर जैसे मन के भावों की नर्तनशाला है, सागर के गीतों की गूजों से रणित रंगशाला है, कलित कल्पनाओं का ललितमहल है, मानव को सागर बनने की प्रेरणा देने वाली अमृत वीणा है।[3]"

एक समन्दर : मेरे अन्दर काव्य में संकलित व्यंग्यात्मक कविता है। इस कविता के द्वारा कवि ने सामाजिक परिस्थितियों को यथार्थ के धरातल पर उतारा है। कवि का मानना है कि मनुष्य इस संसार रूपी समाज का एक ज़र्रा (अंग) है। लेकिन आज (सागर से बड़ा दर्द–अर्थात् हृदय की पीड़ा) वह अपने हृदय की वेदना पीड़ा को सहन नहीं कर पा रहा है।

"चिल्लाऊँ / या चुप रहूँ
जर्रा हूँ/ सागर का एक ज़र्रा

[1] केदारनाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर (काव्य संग्रह की भूमिका से) ; प्र0सं0 1998, पृ0 5
[2] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर, (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1998, पृ0 9.
[3] वही पृ0 12

सागर में
सागर से बड़ा दर्द / कैसे सहूँ"[1]

कवि कोमल की यह कविता प्रतीकात्मक कविता है। इस कविता में 'लहर'– 'मनुष्य जीवन का संघर्ष' का प्रतीक है। अर्थात् कवि अपने भावों को इस प्रकार व्यक्त करना चाहता है कि आधुनिकता के इस संसार में मनुष्य संसार रूपी सागर में वह निरन्तर संघर्षरत है, अर्थात् वह अपने जीवन को नवीन आयाम देने तथा नवीन दिशाओं की खोज में निरर्थक व निरन्तर संघर्ष कर रहा है –

'जब से
सागर
देखा है
अनंत लहरों में
बेनाम लहर–सा झूम रहा
नई दिशायें चुम रहा............।'[2]

आधुनिक व प्रगतिशील चेतना के कवि केदारनाथ कोमल ने इस कविता में प्रतीकों के द्वारा वर्तमान की सामाजिक परिस्थितियों एवं मनुष्य की सामाजिक दशा को प्रस्तुत किया हैं। इस कविता में किरण का कलम–सफलता का प्रतीक है, सागर का कागज –समाज का। मीन सा गीत –'आत्म का' तथा लहर–लहर झूमता –संघर्ष का प्रतीक है। इन प्रतीकों के द्वारा ही कवि ने अपने भावों–विचारों को व्यक्त किया। मनुष्य इस समाज में अपनी सफलता तथा अपने जीवन को पूर्णतः की ओर ले जाने के लिए पूरी तरह अग्रसर है उसकी आत्मा संघर्ष का गीत गा रही है।

1 केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर, (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1998, पृ0 13
2 वही, पृ0 21

यह संघर्ष आज की परिस्थितियों के प्रति तथा सामाजिक बुराईयों के प्रति है जिसमें मानव अपना व्यक्तित्व व दिशा खोज रहा है उसके पूरे शरीर में समाज की वर्तमान व्यवस्था के प्रति अग्नि दहक रही है जिसे कवि अपनी इस कविता के माध्यम से समाप्त करना चाहता है–

"किरण का कलम /सागर का कागज
मीन–सा गीत /लहर–लहर झूमता
दिशा–दिशा चूमता/अंग–अंग आग सा
फूल फूल फाग सा।"[1]

कवि ने इस कविता में मनुष्य की आधुनिक जिन्दगी को प्रस्तुत किया है। आज के इस वैज्ञानिक, तकनीकी तथा औद्योगिकरण के इस युग में सामान्य मनुष्य की आस्थाऐं किस प्रकार से टुट रही है। वह इन संघर्ष रूपी लहरों से कितनी सहजता के साथ लड रहा है। वर्तमान युग का मनुष्य समाज इस बात के लिए कृत संकल्प है कि किसी भी कीमत पर उसकी आस्थाऐं एवं विश्वास न टूटे यही कवि का मूल उद्देश्य है–

"तड़पती–हाँफती–काँपती
बनती –टूटती–सँवरती
थिरकती –/सागर लहरें
कितनी सहजता से
जीवन संघर्ष करती है........."।[2]

कवि कोमल की यह कविता आधुनिक भाव बोध को अपने अन्दर समाहित किये हुए है तथा साथ ही वर्तमान की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत की है, यहाँ कवि ने समाज के शोषित एवं पीड़ित मनुष्य की वस्तु स्थिति को उजागर किया है, आज के भौतिकवादी, औद्योगिक तथा विज्ञान के युग में मनुष्य इतना हतोत्साहित हो गया है कि अपने आप को अभिव्यक्त भी

---

[1] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर , प्र०सं० 1998, पृ० 22
[2] वही, पृ० 27

नहीं कर पा रहा है। आज के समाज की दशा को देख कर वह गूँगा और बहरा हो गया है कि उसके चेहरे की मुस्कुराहट भी समाप्त हो गई है अर्थात् आधुनिकता ने जहाँ मनुष्य को कुछ सहुलतें दी हैं। वहीं उसका सुख चैन व जीने के तरीके में कुछ कमी व परिवर्तन भी हुए हैं :–

"मुझे बोलना नहीं आता
मै सागर से बोलना सीख रहा हूँ
मुझे सुनना नहीं आता
मैं सागर से सुनना सीख रहा हूँ
x x x x
मुझे जीना नहीं आता
मैं सागर से जीना सीख रहा हूँ।"[1]

कवि केदारनाथ कोमल *इस संग्रह में युग, सत्य को प्रस्तुत करते हैं, तथा यहाँ तक* आते–आते स्वयं सागर बन जाते हैं। वह कहते है कि मै इस सागर रूपी संसार में चल–ढल एवं जल रहा हूँ। मेरा मन रूपी सागर अन्दर से इतना टूट एवं बिखर गया है कि वह निरन्तर नवीनता और सुख शांन्ति के लिए भटकता हुआ, नवीन दिशाऐं खोज रहा है इस कविता में कवि ने सागर की तुलना मानव मन से करके सागर का मानवीयकरण किया है। कवि स्वयं को कभी सूरज के कणों के साथ तो कभी 'स्वप्न फूलों संग झूमता' तो कभी 'धरा की धड़कन संग अपने को उपस्थित पाता है। कवि ने अपने इन विचारों को कविता के द्वारा इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

"सागर/मै सागर
चलता–जलता–ढलता सागर
मै सागर

---

[1] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर, ; प्र0सं0 1998, पृ0 39

टूटता–फूटता–बिखरता

x x x

पूर्णिमा सा/स्वप्न–फूलों संग झूमता

धरा की धड़कन संग/घूम–घूम घूमता ।"[1]

"एक समंदर : मेरे अन्दर" कविता संग्रह की सारी कविताए युग सत्य तथा मानवीय जीवन की यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत करती हैं। कवि की यह कविता राजनीतिक, भ्रष्टाचार तथा कुण्ठा को अभिव्यक्त करती है। कवि कहना चाहता है कि मनुष्य की आँखों में आज भी उम्मीद का सागर है, लेकिन भूख से तड़पते हुए मनुष्य की जिन्दगी रेगिस्तान के समान है निरन्तर कुछ पाने के प्रयत्न में ; इस संघर्ष ने उसे तोड़ दिया है। इतना कुछ होने के बाद भी वह अपने को संभालने का प्रयत्न कर रहा है। और वह एक मूक दर्शक की भाँति इस सारी स्थिति को देख रहा है –

"आँखों में सागर

पेट में रेगिस्तान

पाँव में छाले

होठों पर ताले

कहाँ तक कोई

अपना–आप सँभाले।"[2]

कवि केदारनाथ कोमल मानवीय चेतना के कवि हैं। उन्होंने इस समस्त काव्य संग्रह मे मानव से सम्बन्धित समस्याओं को उठाया है। इस कविता में भी उन्होंने मनुष्य जीवन के मार्मिक बिन्दुओं को उभारा है कवि कोमल कहतें है कि मैंने सागर को नहीं देखा, लेकिन आज के समाज में प्रत्येक मनुष्य की आँखों में सागर देख रहा हूँ। समाज में मनुष्य के बिगड़ते सम्बन्धों को भी महसूस कर रहा हूँ। कवि कोमल इस सारी परिस्थितियों पर प्रश्न

---

[1] **केदारनाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर, ; प्र0सं0 1998, पृ0 53**
[2] **वही, पृ0 76**

चिह्न लगाते हैं कि आखिर ऐसा क्यों हो रहा है। आधुनिकता के इस समय में मनुष्य जो अपनी सफलता के स्वप्न देख रहा है तथा उन स्वप्नों को साकार करने के लिए स्वयं को जला रहा है अर्थात् वह जिन्दगी के बीहड़ में खो गया है। कवि समाज को इन परिस्थितियों से उभारना चाहते हैं–

"मैने सचमुच का सागर नहीं देखा :
मैने आँखों में सागर देखा है
मैने गगन से गिरती बर्फ नहीं देखी
मैने सम्बन्धों की बर्फ को महसूस किया है
x x x x
मैनें सचमुच का जंगल नहीं देखा :
मै जिन्दगी के बीहड़ में खो गया हूँ।"[1]

अंततः इस काव्य कृति के आलोचनात्मक अध्ययन के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि केदारनाथ कोमल मानवीय चेतना के कवि है। इस काव्य कृति (एक समंदर : मेरे अन्दर) में मनुष्य की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दशा को प्रस्तुत किया है इस संग्रह की समस्त कविताएं मनुष्य जीवन के चारों ओर घुम रही हैं। अतः उन्होंने मनुष्य की पीड़ित कुण्ठित तथा असहायहीनता का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है, किन्तु कवि कोमल उसे निरन्तर संघर्ष करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं, यही इस काव्य संग्रह का मूल उद्देश्य है भाषा की दृष्टि से भी यह संग्रह एक महत्वपूर्ण कृति है। दुरूहता कहीं भी कोमल जी की भाषा को छू नहीं पायी है।इस संग्रह में सागर का मानवीकरण किया गया है। अलंकार, बिम्ब व उपमानों का भी सार्थक प्रयोग किया है।

[1] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर, (काव्य संग्रह), प्र०सं० 1998, पृ० 82

शब्द–नाच :–

कवि केदारनाथ कोमल आधुनिक हिन्दी काव्य के बहुत ही सशक्त रचनाशिल्पी कवि हैं। कवि कोमल का यह काव्य संग्रह 1999 में अनुभव प्रकाशन, गाजियाबाद से प्रकाशित हुआ। कवि कोमल की यह अन्तिम काव्य कृति है। कवि की यह कृति कवि एवं आलोचक 'अशोक वाजपेयी को समर्पित है। इस काव्य संग्रह को कवि ने चार भागों में विभक्त किया है–'देवता की आँख' 'अंबर सी पेशानी', 'दर्द युगों पुराना', 'बूंद बूंद'।

'शब्द–नाच' काव्य संग्रह की कविताओं में "सृजनात्मक प्रौढ़ता ने सहज और स्वाभाविक ढंग से आकार लिया है, साथ ही नये अंदाज और ढब के साथ उन्हें फिर से नया बना दिया है।"[1] केदारनाथ कोमल का 'शब्द–नाच' काव्य संग्रह अत्यन्त मार्मिक तथा आज के मनुष्य एवं समाज की भावाभिव्यक्ति है इस संग्रह की अधिकतर कविताएं भाषा एवं कथ्य के स्तर पर एक अजीब सी सरलता और सहजता को अपने अन्दर समाहित किये हुए है, जो मनुष्य को सोचने पर ही मजबूर नहीं करती वरन् उसे कई बार अन्दर तक झकझोर कर देती हैं। कोमल जी इस काव्य संकलन के द्वारा "इंसानी जिन्दगी की विसगतियों को एक अलग फार्म एवं भाषा में अभिव्यक्त करता है, बिना किसी वाद और बिना किसी नारेबाजी के मनुष्य के दर्द और पीड़ा को स्वर देता है।"[2] 'दर्द युगों पुराना' कविता में वर्तमान समाज की मौजुदा स्थिति एवं तंत्र की कटुताएं और विभीषिकाएँ एक नये तेवर में चित्रित हुए हैं। कवि का यह काव्य मौजुदा तंत्र पर कटु व्यंग्य है और आज के समाज की स्थिति को उजागर करने में पूर्ण सक्षम है।

देवता की आँख –'शब्द–नाच 'कविता संग्रह का पहला खण्ड है। इस खण्ड के अन्तर्गत कवि ने समकालीन परिस्थितियों को प्रस्तुत किया है, तथा वर्तमान समाज पर व्यंग्य किया है–

'देवता की आँख में

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द नाच (काव्य संग्रह की भूमिका से), प्र0सं0 1999.
[2] वही (भूमिका से)

सदियों का पानी हूँ।'[1]

यहाँ कवि का देवता की आँख से आशय भविष्य की ओर उन्मुख होने से है। देवता की कृपा सब जन के लिए हितकारी होती है। आंख में 'सदियों का पानी' मनुष्य में आस्था एवं विश्वास जागृत करता है। आज का आधुनिक समाज आर्थिक, सामाजिक, एवं राजनीतिक दृष्टि से छिन्न-भिन्न है लेकिन कवि यहाँ व्यंग्य का स्वर अपनाता हुआ कहता है कि जिस प्रकार अंधे, गूँगे, बहरे कह सुन नहीं सकते, अपितु उनकी वाणी का भी अर्थ होता है लेकिन दूसरी ओर कवि भविष्य की सुखमय कल्पना करता है। आज के इस आधुनिकता के युग में मनुष्य कुण्ठा, संत्रास से पूरी तरह थक व उब गया है, लेकिन वह फिर भी संघर्ष कर रहा है यहाँ कवि ने आज के मनुष्य समाज की पानी से बहुत ही उपयुक्त उपमा दी है। जिस प्रकार पानी कभी थकता नहीं वह निरन्तर बहता रहता है उसी प्रकार आज का मनुष्य निरन्तर संघर्षरत है-

'अंधे बहरे गूँगे की/अर्थ भरी वाणी हूँ
थक कर जो नहीं थकता/पानी की रवानी हूँ'।[2]

यहाँ कवि समाज में मज़दूर की आर्थिक स्थिति का यथार्थ चित्रण करता है उसकी दशा समाज में अत्यन्त दयनीय है,फिर भी वह आधुनिकता के इस दौर में बार-बार अपने को संभालता है। आज मनुष्य दिखावे के लिए कितना ही चाहे खुश क्यों न हो, लेकिन भीतर से वह पूरी तरह टूट एवं बिखर गया है -

'बार-बार गिरता हुआ/मज़दूर का ईमान हूँ
बाहर से इन्द्रधनुष हूँ/भीतर से शमशान हूँ।'[3]

कवि केदारनाथ कोमल ने खुली दृष्टि से समाज का अवलोकन करते हुए बहुत की यथार्थपरक चित्र प्रस्तुत किया। आज के आधुनिक दौर में समाज के अन्दर से मानवता का

---

[1] केदारनाथ कोमल : शब्द नाच (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1999, पृ0 13
[2] वही, पृ0 13
[3] वही, पृ0 15

दिन व दिन ह्रास हो रहा अर्थात् मानवता खत्म हो रही है। लेकिन मनुष्य केवल मूक दर्शक की भाँति इस सारे तमाशे को देख रहा है। कवि इन सारी स्थितियों पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं और कहते हैं ऐसा क्यों हो रहा है–

'लुटती–पिटती मानवता का
सिसकती दिलासा हूँ
खुद की तमाशायी हूँ
खुद ही तमाशा हूँ।'[1]

आधुनिकता के इस युग में कोई किसी का दोस्त नहीं लेकिन फिर भी वह संग है सब अपनी स्वार्थ सिद्धी में लगे हुए हैं कवि आज के संघर्षपूर्ण जीवन पर व्यंग्य करता है मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए अन्तहीन जंग लड़ रहा है।वह हर रोज़ जीने के नये ढंग व अंदाज अपनाता है अर्थात वह अपनी अस्मिता की खोज में लगा हुआ है–

"महाभारत खत्म कहाँ/अन्तहीन जंग हूँ
नित नया रंग हूँ/खुद पर व्यंग्य है।"[2]

देवता की आँख में कवि कोमल वर्तमान की राजनीति पर करारी चोट करते हैं।आज की गंदी राजनीति ने समाज की सारी मर्यादाओं को लांघ दिया है, मानवता का हनन हुआ है। आज मनुष्य इन्सान नहीं रह गया, बल्कि उसका ढाँचा बचा है, अर्थात् उनके अन्दर से सारी इन्सानियत खत्म हो चुकी है इस संग्रह में केदारनाथ कोमल उसी इन्सानियत की तालाश में निकले हैं–

'सियासत के हाथ में/खून आलूदा खंजर हूँ
इतिहास मेरा गवाह है/इन्सान का पंजर हूँ।[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द नाच (काव्य संग्रह), प्र0सं0 1999, पृ0 17
[2] वही, पृ0 19
[3] वही, पृ0 24

अंबर सी पेशानी :–"शब्द–नाच" काव्य संग्रह के **अम्बर सी पेशानी** खण्ड में कवि ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहता है कि हे ईश्वर ! हे सबके पालनहार संसार में सब मनुष्य को सत्य और ईमानदारी के रास्ते पर चलने की हिम्मत दे। आगे कवि कहता है कि जो मनुष्य इस संसार की भीड़ में भटक गये हैं उनको मानवता को समझने का ज्ञान दें अथवा उन्हे मानवता के रास्ते से भटकने मत दें–

"भीड़ में भटके मानव को
लकीर वही पुरानी दें।"[1]

कविवर कोमल हमेशा मनुष्य की सामाजिक दशा व उनके अस्तित्व को लेकर चिन्तित रहे। आज के आधुनिक युग में मनुष्य की नित इच्छाओं का खून हो रहा है। वह हर रोज़ नई–नई इच्छाओं को जन्म देता है और उनकी पूर्ति में लगा भी रहता है कवि कहता है कि–

"अरमानों की लटकी लाश
आपका अहसान है।"[2]

कवि समाज की भयानक स्थिति को भी चित्रित करते हुए उस पर व्यंग्य करता है तथा समाज का यथार्थ चित्रण करता है। आज पूरे देश में तिराही–तिराही मची हुई है। हर जगह आंतक, खून खराबा, फरेब का ताण्डव है। आज का मनुष्य किसी भी आध्यात्मिक सत्ता को नहीं मानता, वह आज स्वयं भगवान बनकर अपने भाग्य का विधाता बनने की भूल कर रहा है। कवि कोमल मनुष्य की इस भावना को समाप्त करना चाहते हैं वह देश में सुख–शान्ति तथा देश को समृद्ध की ओर ले जाना चाहते हैं कवि के इन परिस्थितियों को इन पंक्तियों में व्यक्त किया है–

1 केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1999, पृ0 35
2 वही, पृ0 38

"आग लहू धुआँ फरेब
मेरा यही दीवान है
भगवान की जरूरत नहीं
हर आदमी भगवान है।"[1]

यहाँ कवि आधुनिकीकरण के एक बिन्दु नगरीकरण की ओर संकेत करता है। वैसे नागरीकरण होने से गाँव की संस्कृति, खेत खलिहान सब समाप्त हो रहें हैं। वर्तमान समय में मनुष्य गांव से शहर की ओर भाग रहा है। गाँव भी शहर व कस्बों में तब्दील हो रहे हैं।दूसरी ओर शहरीकरण होने से मनुष्यों के अन्दर से अपनापन समाप्त हो रहा है।आज मनुष्य अजनबियत की जिन्दगी जी रहा है।आज का मनुष्य इतना व्यस्त व परेशान है कि वह स्वयं को भी नहीं पहचान पा रहा है अर्थात् इसे अपनी स्थिति का बोध नहीं है–

"खेत खलिहान सो गये
गांव सारे खो गये
पराये तो पराये थे
खुद तो पराये हो गये।"[2]

यहाँ कवि देश की सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण करता है। तथा साथ ही सामाजिक व राजनीतिक स्थिति पर चोट भी करता है। आज देश के अन्दर धर्म–कर्म के नाम पर लड़ाईयाँ व दंगे हो रहे हैं। चारों तरफ आतंक ही आतंक छाया हुआ है। आधुनिक युग में मनुष्य ने अपना धर्म, कर्म व ईमान सब कुछ बेच दिया। यहाँ प्रत्येक मनुष्य देश के साथ खिलवाड़ करने की कोशिश कर रहा है। यहाँ कवि ने देश के प्रति भक्ति भावना को अभिव्यक्त किया तथा उन लोगों को बेनकाब किया है जो धर्म–कर्म के नाम पर राजनीति करने की कोशिश कर रहे हैं–

"धर्म नहीं, कर्म नहीं

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1999, पृ0 38
[2] वही, पृ0 48

नाचे नंगा, खुल्लम खुल्ला
तुम भी आओ शोर मचाओं
खेलों आजादी संग गेंद बल्ला।"[1]

दर्द युगों पुराना :–शब्द–नाच कविता संग्रह का तृतीय खण्ड है। दर्द युगों पुराना में कवि अपने भाग्य, राजनीति वातावरण एवं सामाजिक परिस्थितियों का खुली दृष्टि से व्यापक अवलोकन करता है। वर्तमान युग में प्रत्येक मनुष्य संघर्षशील है, वह कभी अपने भाग्य को धन्यवाद देता है तो कभी अपने भाग्य को कोसता है। वैसे तो आधुनिक समाज में मनुष्य ने अपनी सुख सुविधाओं के लिए बहुत कुछ जुटा रखा है; लेकिन फिर भी उसे शान्ति नहीं मिलती। यहाँ कवि उन लोगों की तरफ भी ध्यान केन्द्रित करता है कि जो लोग इन सारी सुख–सुविधाओं से दूर हैं अर्थात् फक्कड़ व मस्त हैं। वह फुटपाथ पर भी पूर्ण शान्ति से सोते हैं–

"महल में रहती है/फुटपाथ पर सोती है
होती है किस्मत क्या /किस्मत क्या होती है।"[2]

कवि कोमल मन को चादर के समान बताते हैं। उनका मानना है कि आज के युग में मन को जितना ही विकारहीन व बुराईयों से दूर करने की कोशिश कीजिए वह उनमें उतना ही लिप्त होता चला जाता है, क्योंकि समाज में आज धर्म, ईमान, कर्म नाम जैसी कोई चीज नहीं रह गई है। कोमल जी ने अपनी इस भावना को अभिव्यक्ति निम्न पंक्तियों दी हैं–

"और मैली होती है
चादर जब धुलती है"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1999, पृ0 50
[2] वही, पृ0 60
[3] वही, पृ0 60

कवि कोमल की इन पंक्तियों की तुलना मुक्तिबोध की कविता ब्रह्मराक्षस की पंक्तियों से की जा सकती है–

"तन की मलीनता
दूर करने के लिए प्रतिफल
पाप छाया को दूर करने के लिए,
दिन रात स्वच्छ करने –
x x x
फिर भी मैल
फिर भी मैल !!"[1]

दर्द युगों पुराना कविता खण्ड में कवि युग की बौद्धिकता की ओर भी संकेत करता है। आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य ने अपनी बुद्धिमत्ता से संसार की लगभग सभी वस्तुओं पर अधिकार सा कर लिया है उसने अविष्कार के द्वारा ऐसी-ऐसी वस्तुओं को आकार दिया जिसकी प्राचीन समय में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। इस सब के पश्चात् भी मनुष्य को हृदय से संतुष्ठि नहीं है वह अपने अन्दर कुछ खालीपन महसूस कर रहा है–

"दिमाग तो गुलशन है/दिल सून सहरा है
युगों से पूजा में है/भगवान राम बहरा है।"[2]

इस कविता में कोमल जी ने मनुष्य की मनः स्थिति को उजागर किया है। आज के संसार में इंसान के पास सब कुछ है, वह पूरी तरह से शान्त एवं प्रसन्नचित्त दिखाई देता है लेकिन ऐसा है नहीं, क्योंकि वह अन्दर से इतना टुट चुका है कि उसमें संघर्ष करने की शक्ति भी नहीं रहीं–

"बाहर से हंसता है

---

[1] नेमिचन्द्र जैन (सम्पा.) ; मुक्तिबोध रचनावली, प्र0सं0 1980, भाग-2, पृ0 345
[2] केदारनाथ कोमल ; शब्द-नाच (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1999, पृ0 64

भीतर से जनाजा है।"[1]

आगे कवि कहते हैं कि आधुनिक युग में मनुष्य ने जहाँ इतनी प्रगति की है वहीं उसने अपना कुछ खोया भी है, उसकी इच्छाओं का दमन हुआ है, बहुत सी जगह उसे निराशा भी हाथ लगी है। कहीं–कहीं तो वह ऐसे अन्धेरे में भटक गया है कि उसे ऊपर छितिज तो दिखाई देता है लेकिन आशा की कोई किरण नहीं दिखाई देती है–

"ऊपर आसमान तो है/पर रोशनी कहाँ है

धरा पे मिटता–मिटता/उम्मीद का निशाँ है।"[2]

बूँद–बूँद :–कविता खण्ड में कवि ने समकालीन समाज में जीवन व्यतीत करने वाले लोंगो को गिरगिट बताया है, क्योंकि जिस प्रकार गिरगिट रंग बदलता रहा है उसी प्रकार आज का मनुष्य भी रंग बदल रहा है। वर्तमान समाज में हमे कदम–कदम पर परीक्षा देनी पड़ती है। यहाँ पर कवि ने युग सत्य की यथार्थपरक तस्वीर प्रस्तुत करते हुए उन लोगों पर व्यंग्य किया है जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को परेशानी में डालते हैं। कवि कोमल इन परिस्थितियों को इन पंक्तियों के द्वारा प्रस्तुत किया है–

'मुसलसल इम्तेहान है लोग

गिरगिटी मुस्कान है लोग

बिना बात परेशान है लोग

समाज का अरमान है लोग'[3]

यहाँ कवि ने देश के अतीत की ओर ध्यान आर्कषित करते हुए देश के भविष्य की ओर भी संकेत किया है। कवि कहता है कि कभी हमारा देश सोने की चिड़िया कहलाता था, लेकिन आज देश के अन्दर सर्वत्र आंतक व अहिंसा व्याप्त है यह आतंक आन्तरिक एवं

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1999, पृ0 69
[2] वही, पृ0 78
[3] वही, पृ0 83

बाह्य दोनों तरफ से है। यहाँ कवि देश के भविष्य को लेकर चिन्तित हैं यही कवि की भक्ति भावना भी है–

'सोने की माटी में
बारूद कौन बो गया।'[1]

कवि का यह संग्रह उनकी मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित हुआ। बूँद–बूँद कविता खण्ड में कोमल जी की मृत्यु के सन्दर्भ में दो पंक्तियाँ है कहने का मात्र आशय यह है कि कवि तो मृत्यु के वरण कर लेता है लेकिन उसकी भावना काव्य के रुप में हमेंशा रहती है उसकी आत्मा गुनगुनाती रहती है दूसरी ओर कवि कहते हैं कि आधुनिक युग में कवि को बार–बार मौत आती है अर्थात् कहीं उसका उपमान है तो कहीं उसकी इच्छाओं का दमन किया जाता है यहाँ कवि ने अपनी भावाभिव्यक्ति इस प्रकार की है:–

'कोमल तो कल चल बसा, बधाई
मगर गुनगुनाती उसकी लाश है
मौत आती मगर आती नहीं
बार–बार मर के देख लिया ।'[2]

कवि केदारनाथ कोमल का 'शब्द–नाच' अन्तिम काव्य संग्रह है यह संग्रह कवि की मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह में कवि ने देश की वर्तमान राजनीति, सामाजिक, दशा आर्थिक स्थिति, तथा भ्रष्टाचार के विरूद्ध आवाज बुलन्द की है। तथा यन्त्र–तन्त्र कवि की देश भक्ति भावना ऊभर कर सामने आयी है। इस काव्य संग्रह से यह स्पष्ट हो जाता है कि कोमल जी देश तथा मनुष्य समाज के प्रति कितने सचेत थे। उन्होंने अपने प्रत्येक काव्य संग्रह में मनुष्य को सामाजिक बुराईयों के प्रति संघर्ष करने की प्रेरणा दी है। शब्द–नाच भाषा की दृष्टि से बहुत सरल व सफल कृति है कवि ने आम बोलचाल

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह) प्र0 सं0 1999, पृ0 84
[2] वही, पृ0 88

की भाषा में अपनी भावना को अभिव्यक्त किया है दुरूहता तो कवि की भाषा तो छू तक नहीं पायी है कवि ने उर्दू के शब्दों का भी अधिक से अधिक इस्तेमाल किया है। इसके साथ ही नये प्रतीक (जैसे चादर–मन) नये उपमान बिम्ब योजना का भी बहुत सार्थक प्रयोग किया है।

काव्य का एक पक्ष है अनुभूति और दूसरा है अभिव्यक्ति। दूसरे शब्दों में इसे वस्तु पक्ष और शैली पक्ष भी कहा जाता है। विचारों और भावों का उदात्त होना तो श्रेष्ठ काव्य के लिए अनिवार्य है किन्तु भाषा शिल्प की कमनीयता को नकारा नहीं जा सकता। हमारे भाव संवेदनो का प्रेषणीकरण अभिव्यंजना पर भी निर्भर है वास्तव में काव्य के अन्तर्गत भाषा और भाव का एकीकरण हो जाता है। काव्यगत वैशिष्टय की दृष्टि से पहले हम केदारनाथ कोमल के काव्य के भावगत वैशिष्टय पर विचार कर लें।

(क) भावगत वैशिष्ट्य –

केदारनाथ कोमल का अनुभव संसार बहुत ही व्यापक पलक रखता है। उनके भाव इतने गहन एवं सशक्त हैं कि मनुष्य के मन मस्तिष्क पर छा जाते हैं। उन्होंने अपने व्यापक जीवन को बहुत ही सुक्ष्मता के साथ देखा तथा उनसे संघर्ष किया। वे जीवन सत्य, तथा युग सत्य को उद्घाटित करने के लिए व्यापक दृष्टि एवं उसकी गहराइयों को लेकर आगे बढे। कवि कोमल के काव्य संसार पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि उन्होंने व्यक्ति समाज, धर्म, राजनीति तथा आर्थिक स्थिति आदि विषयों को लेकर अपनी कविताओं का ताना बाना तैयार किया। **केदारनाथ कोमल** की आत्मपरकता जीवनव्यापी समस्याओं से उद्घाटित होती है। इसी कारण उनमें प्रगतिशीलचेतना है। उनकी समस्त कविताऐं मानवीय धरातल, सर्वहारावर्ग से अधिक जुड़ी हुई हैं। उनके भागवत काव्य का मूल्यांकन इस प्रकार है–

सामाजिक विषमता –आज समाज में चारों तरफ विषमताऐं फैली हुई हैं,अर्थात् आज ऐसा लगता है कि मनुष्य का जीवन ही विषमताओं का पर्याय हो गया है। समाज में कुण्ठा, संत्रास, घुटन आदि मानव मन में पूरी तरह विद्यमान है यही सारी स्थितियाँ समाज में सामाजिक वैषम्यता का कारण है। इसी सामाजिक विषमता को कवि कोमल ने अपनी कविताओं मे अभिव्यक्ति दी। कवि की लोग कविता में व्यक्ति भूख और उसके जीवन की विवशता को इस प्रकार प्रस्तुत किया हैं–

"भूख–बीमारी के सताये हुए
भगवान के कहने भर को बनाऐ हुए लोग
जरा–जरा सी बात पर बिगड़ते हुए
पैसे–पैसे के लिए झगड़ते हुए लोग !
सदियों से बे मतलब जीते हुए
सदियों से अपमान के जाम पीते हुए लोग !"[1]

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर,, पृ0 12

समाज में असमानता इतनी फैली है कि कुछ व्यक्ति तो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति को भी नहीं कर पा रहें हैं, वे छोटी–छोटी चीजों के लिए संघर्ष कर रहें हैं। उनकी जिन्दगी में आशा की किरण हीं नहीं है अपमान का जहर पीना उनके जीवन की विवशता है।इस सन्दर्भ में केदारनाथ कोमल की कविताऐं इतनी सशक्त और जीवन्त हैं जो सारी कथा स्वतः कह देती हैं। आज जीवन में आक्रोश है, समाज में चारों तरफ आतंक व हिंसा ही व्याप्त है। प्रत्येक मनुष्य डरा व सहमा हुआ है। ऐसा महसूस होता है कि जैसे जीवन का कोई मूल्य ही नहीं रहा। इस सामाजिक विषमता को कवि ने गोलियों के आवाजों में अनुभव किया। हिंसा के माध्यम से झरते हुए फूलों का प्रतीक व्यक्त करते हुए उन्होनें कहा है–

"घृणा की आँधी चली
चारों तरफ अन्धेरा हो गया।
गूँज उठी गोलियाँ /समय की टहनी से
बहुत बहुत प्यारा फूल झर गया।
X X X
हमारा बापू/मर गया।"[1]

नफरत का तूफान के द्वारा कवि केदारनाथ कोमल मन की पीड़ा व्यक्त की है। यह कवि का उत्तरदायित्व होता है कि वह सामाजिक विषमताओं और विभीषिकाओं के विनाश के प्रति सचेत रहे। कवि अपने दायित्व के निर्वाह के प्रति पूर्ण सचेत रहें। आज की सामाजिक स्थिति को सत्य रूप में प्रस्तुत करने में कवि को संकोच नहीं–

"पाँव–पाँव में छाले हैं/होंठ होंठ पर ताले हैं
जीने ढंग निराले हैं।/नजर नजर उदास है
आदमी–आदमी बदहवास है
जहर की तलाश है।"[2]

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर,, पृ0 50
[2] केदार नाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए, पृ0 47

सामाजिक विषमता के अन्तर्गत कवि ने समाज में मित्रता की खिल्ली उड़ाई है। कवि कहते हैं कि आज मनुष्य ऊपर से मित्रता प्रकट करते हैं, लेकिन अन्दर-अन्दर ईर्ष्या, द्वेष एक दूसरे की बुराई भी करते हैं-

"दोनों । कितने प्यार से
एक दूसरे की
बात सुनते हैं
दोनों कितने प्यार से
एक दूसरे का
कफन बुनते हैं।"[1]

अतः कवि कोमल आज समाज में चारो ओर निराशा देखते हैं उन्हें जीवन उमंग से भरा न दिखाई न देकर विवशता से भरा हुआ प्रतीत होता। समाज में एक ओर वैभव सम्पन्नता है तो दूसरी दरिद्रता का सम्राज्य है कवि केदारनाथ कोमल अपने काव्य के माध्यम से समाज की किसी विषमता को समाप्त करना चाहतें हैं यही कवि कोमल के काव्य का मूल उद्देश्य हैं।

मानववादी दृष्टि :- केदारनाथ कोमल ने अपने काव्य संसार में भारतीय संस्कृति के व्यापक धरातल पर प्रस्तुत कर उसे मानववादी रूप प्रदान किया। उनके काव्य में उच्चतम मानवीय मूल्यों की सुन्दर और विशद अभिव्यक्ति हुई है। उनका काव्य मानवीय अनुभूतियों का काव्य है। भारतीय मानव अहिंसा, करूण समरसता आदि उदात्त भावों को लेकर चला है और आध्यात्मिकता से आवेष्ठित है। सर्वभूत हित की भावना, सह अस्तित्व, विश्व बंधुत्व, करूणा, मैत्री आदि कल्याणमयी भावनाओं का सहज समावेश उनके काव्य के मानवतावादी स्वरूप को स्पष्ट करता है :-

---

[1] केदार नाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर, पृ0 24

"भीड़ की तनहाई में डूबे हुए
जिन्दगी की बेवफाई से ऊबे हुए लोग !
x x x
वक्त की भट्टी में
इस्पात की तरह पिघलते हुए लोग !"[1]

समकालीन कवियों ने भी अपने काव्य में मानवतावादी दृष्टि को महत्त्व दिया। डॉ0 धर्मबीर भारती के ठेले पर हिमालय नामक निबन्ध में मानवतावादी दृष्टि को दर्शाया गया है,"साधारण, छोटे, महत्वहीन, नगण्य, मनुष्य की मुक्ति उसकी निहित सम्भावनाओं का विकास, उसकी चेतना जकड़ी हुई राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, मनौवैज्ञानिक जंजीरों को खोलकर उसे अपने विवेक,अपनी जीवन पद्धति से व्यापक सत्य की निजी उपलब्धि का अवसर देना, उसे यथार्थ के सारे जटिलता के ताने–बाने को ठीक–ठाक समझना और किसी काल्पनिक भविष्य की नहीं वरन् इसी कटुतम वर्तमान में सामान्य मानव की नियति को संस्कार दे सकने की क्षमता यही नये साहित्य की मानवतावादी प्रवृत्ति है।" यही दृष्टि लगभग कोमल जी के काव्यमें भी देखने को मिलती है–

"आँधी ने मुसकरा के हर दीप बुझा दिया
हम मुसकरा के हर दीप जलाते चले गये
x x x x
भाग्य की जंजीरों के जाल को
फूलों की आग से पिघलाते चले गये।"[2]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (कविता संग्रह) पृ0 12
[2] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (कविता) पृ0 8

डॉ0 अजब सिंह ने मानवतावादी दृष्टिकोण के संम्बन्ध में कहा, "मानववादी कलादृष्टि जीवन की गहराईयों और मनुष्य की प्रकृतिगत विशेषताओं के उद्घाटन को बहुमान प्रदान करती हैं पर उसकी आड़ में क्रूरता और पाशविकता के चित्रण के व्यावसायिक उपयोग की आलोचना करती है।"[1] **कवि केदारनाथ कोमल** भी प्रत्येक मानव मन की पीड़ा को अपनी ही पीड़ा मानते हैं :–

"रूठा हुआ भगवान हूँ
बिकता हुआ इन्सान हूँ
गिरती मरती मानवता की
जीती–जागती पहचान हूँ "[2]

कवि केदारनाथ कोमल आस्थावादी कवि हैं; उन्होनें अपने समस्त काव्यों में समाज में आस्था और विश्वास जागृत किया तथा निरन्तर संघर्ष करने की प्रेरणा दी–

"मै सागर
टूटता–फूटता–बिखरता
x x x
मैं सागर / गूँजता–गरजता– थर्राता
नई दिशायें गुदगुदाता ।"[3]

केदारनाथ कोमल का सम्पूर्ण जीवन कष्टों व आभावों में बीता। इसलिए उन्हें मानव के व्यक्तित्व की अच्छी परख थी। वे अपने काव्य के माध्यम से मनुष्य के व्यक्तित्व एवं मानव की खोई हुई मानवता को अपने काव्य के माध्यम से पुर्नजीवित करना चाहते हैं। वे स्वयं कष्ट भोगकर संसार को सुखी देखना चाहते थे–वे **दिन** नामक कविता में कहा–

---

1 डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, प्र0सं0 1975, पृ0 21
2 केदारनाथ कोमल ; शब्द नाच (काव्य संग्रह) पृ0 25
3 केदार नाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर (काव्य संग्रह), पृ0 53

"यें भी दिन है कि
जमाने के आँसू पीकर भी
एक/आँसू नहीं गिरता ।"[1]

अतः हम कह सकते हैं कि कवि केदारनाथ कोमल की मानवतावादी दृष्टि वर्तमान मनुष्य को प्रेरणा प्रदान करती है।

आध्यात्मिक चेतना :–आध्यात्म मन को बाँधने वाली एक ऐसी शक्ति है,जो किसी भी कार्य की सिद्धि की अनिवार्यता है। जब–जब भी मनुष्य के अन्तःकरण में अध्यात्म का स्फुरण होता है। ह्रदय अदृश्य, अज्ञात, प्रेमपाश मे बांधकर असामान्य की ओर बढ़ने लगता है। बीच में आने वाली विघ्न बाधाओं से न घबराकर उसकी अपनी परम आराध्य के प्रति त्याग, समर्पण और बलिदान की भावना बलवती होती है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने अपनी आलोचना कृति आधुनिक साहित्य में लिखा है, "आधुनिक परिवर्तन शील समाज व्यवस्था और विचार जगत में छायावाद भारतीय आध्यात्मिकता की, नवीन परिस्थिति के अनुरूप स्थापना करता है।"[2]कवि केदारनाथ कोमल ने भी आधुनिक संघर्ष शील मनुष्य को आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित किया–

"जिसे भी चाहा पूजा प्यार किया
उस घर के आँगन–द्वार
x x x
मिला है दर्द ऐसा कि शायद
जिसकी नहीं दवा ।"[3]

अपनी आध्यात्म भावना को कवि कोमल ने अपनी कविता सुगन्ध में इन शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है–

---

[1] केदार नाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह), पृ0 15
[2] नन्ददुलारे वाजपेयी ; आधुनिक साहित्य ;चतुर्थ सं0 संवत् 2022 वि. पृ0 351
[3] केदारनाथ कोमल ; अंधे सूरज का सफर (काव्य संग्रह), पृ0 24

बढ़ता जाता अपनी धुन में

झरना जैसे झर-झर-झर "[1]

डॉ0 अजब सिंह ने आध्यात्मिक चेतना के सन्दर्भ में भाव व्यक्त करते हुए कहा, "आध्यात्मिकता भक्तिकालीन समर्पण न होकर जीवन-जगत को समझने की दार्शनिक अभिलाषा थी, गुह्यतम जटिलताओं के समाधान का एक प्रयास था।"[2] कवि कोमल जी भी अपने काव्य में मनुष्यों को आधुनिक जीवन और जगत को समझने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, वे इसके लिए ईश्वर से प्रार्थना भी करते हैं-

परम पिता! परमेश्वर जी

हैरानी-सी हैरानी दे।"[3]

राष्ट्रीय चेतना – राष्ट्रीयता का सम्बन्ध किसी देश की भौगोलिक सीमा के अन्दर रहने वाले मनुष्यों, जहाँ वे अपनी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं देशभक्ति परक, स्थितियों को उजागर करते हैं, इस दृष्टि से केदारनाथ कोमल के काव्य में अखण्ड राष्ट्रीय चेतना मुखरित हुई है:

"भगत।

तेरा सपना /सच्चा हो गया

X X X

फसल उगानी चाही थी

आजादी पाने के लिए"[4]

कवि केदारनाथ कोमल की पीड़ा भरी जिज्ञासा सहज ही कह देती है कि हे भारतवासी तुम आपस में लड़कर अपनी वसुन्धरा का विनाश मत करो। तुम्हारे ही पूर्वजों ने

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध, पृ0 26
[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, पृ0 109
[3] केदारनाथ कोमल ; शब्द-नाच, (काव्य संग्रह), पृ0 35
[4] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर,(काव्य संग्रह), पृ0 9

अपने प्राणों का बलिदान देकर स्वतन्त्रता प्राप्त की है, इस राष्ट्र की रक्षा तुम्हारा प्रथम कर्तव्य है कवि ने अपनी कविता घर में इन्कलाब में अपनी भावना को उजागर किया है–

"बेटे से अक्सर सवाल किया है मैंने
इन्कलाब का मतलब क्या है?
x x x
क्या सचमुच इन्कलाब आयेगा?
आयेगा तो कब आयेगा?"[1]

कवि कोमल की कविता रक्तस्नात मिट्टी राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत है–

"कितना अनर्थ हो गया है
हमारे अरमानों का खून हो गया है
आज़ादी के दीवानों को कुचल गया है
हुकूमत करने का यह ढंग नया है !"[2]

राष्ट्र के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर करने की प्रेरणा कवि ने समस्त देशवासियों को दी है–

"शत्रु ने आज हमें ललकारा
जागा–जागा भारत सारा
अंगड़ाई ले रहा काश्मीर
पंजाब ने भृकुटि तानी है।"[3]

कोमल जी ने अपने काव्य के माध्यम से देश वासियों के अन्दर राष्ट्रीयता का स्वर फूँका। कवि कोमल जी को राष्ट्र पिता की मृत्यु पर गहरा आघात! पहुँच, उन्होने अपनी इसी भाव व्यंजना को अपनी कविता तूफानः कुछ नोट्स में अभिव्यक्ति दी है–

---

[1] केदारनाथ कोमल ; अंधे सूरज का सफर (काव्य संग्रह), पृ० 85
[2] वही, पृ० 98
[3] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (कविता) पृ० 39

"मरने वालों ! उठो देखो
वह आ गया गाँधी
वह आ गया नारायण
मरते मंगतू को सुनाओ रामायण ?"[1]

लोकोन्मुखी प्रगतिशील चेतना :–प्रगतिवाद का प्रेरक स्रोत मार्क्सवाद है। डॉ0 अजब सिंह ने प्रगतिवाद के सन्दर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुए कहा,"प्रगतिवादी धारा में प्रमुखतः अभिव्यंजित जीवन–दर्शन साम्यवादी कहा जाता है। यही साम्यवाद कविता में प्रगतिवाद बन गया है। यह अध्यात्मवाद का विरोधी है और इसकी सबसे बड़ी देन है ईश्वर, धर्म एवं नियति आदि के जंजाल से मुक्त सामाजिक चेतना।"[2] क्या आज का आधुनिक मनुष्य आध्यात्मिकता का विरोध नहीं कर रहा है ? ईश्वर, धर्म एवं नियति से मुक्त होने की कोशिश नहीं कर रहा है। कवि केदारनाथ कोमल अपने काव्य में इन्हीं सभी बिन्दुओं को बार–बार समाज के सामने लाने का प्रयत्न करते हैं।

"खुदा–सा खुदाई मानव
मानव का मिटता निशाँ हूँ
धर्म–कर्म इन्सानियत की
जलती–लुटती दुकाँ हूँ।"[3]

आधुनिकता के इस युग में मनुष्य इतना स्वार्थी हो गया है कि अब उसके समक्ष ईश्वर का महत्त्व भी कम हो गया है लगता है उसे ईश्वर की जरुरत ही नहीं है–

"भगवान की जरुरत नहीं
हर आदमी भगवान है ।"[4]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू (काव्य संग्रह), पृ0 38
[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, प्र0सं0 1975, पृ0 168
[3] केदार नाथ कोमल ; शब्द–नाच (काव्य संग्रह), पृ0 29
[4] वही, पृ0 38

कोमल जी की काव्य दृष्टि विश्व चेतना से स्पंदित समाजोन्मुखी है, लोक हिताए है, कोमल जी की स्वानुभूति पूर्णता लोकोनुभूति में एकाकार हो उनकी प्रगतिशीलता का परिचय देती है। युग जीवन को कोमल जी ने बहुत सही रूप में परखा है-

"प्रसिद्धि की मीनारों पर /चढ़ते हुए
भीड़ में एक दूसरे को /धकेलकर
आगे बढ़ते हुए लोग
इन्द्रधनुषी सपनों के हिंडोले में/डोलते हुए !"[1]

शोषक और शोषित के वर्ग संघर्ष को प्रगतिशीलता की संज्ञा दी जाती है। प्रत्येक कवि प्रगतिशील होता है,जो बढ़ते हुए जीवन में आने वाली चुनौतियों को सहज स्वीकारता है। प्रगतिशील चेतना कोमल के काव्य का महत्वपूर्ण बिन्दु है। प्रगतिवादी चेतना ने ईश्वर व आदमी दोनों के महत्त्व को कम कर दिया। इन दोनों पर व्यंग्य करते हुए कोमल जी कहते हैं -

"राम-राम /कहाँ है राम
राम-नाम का बस/बाकी है ढोल
आदमी तो कब का /मर चुका
उसका सिर्फ /बाकी है खोल ।"[2]

प्रगतिवादी चेतना कवि के जीवन की धुरी है। केदारनाथ कोमल समस्त मनुष्यों को कर्म की प्रेरणा देना अपना कर्तव्य व धर्म समझते हैं। धार्मिक रूढियों, आडम्बरों और अन्धविश्वासों को कवि की प्रगतिवादी दृष्टि स्वीकार नहीं करती। जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा सदा ही कवि ने मानव को दी है।

आदर्श और यथार्थवादी दृष्टिकोण :-कोमल जी ने अपने काव्य में 'आज' को लेकर चले और उसी के प्रकाश में जीवन के 'कल' को भी रूप प्रदान किया। यथार्थ आदर्श को

---

[1] केदार नाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरे लहू ; पृ0 69
[2] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें,(काव्य संग्रह), पृ0 17

एक सुदृढ़ आधार देता है, उसे एक निश्चित वांछित आकार देता है,कवि समस्त समाज को आदर्शवादी दृष्टि देना चाहता है :–

"तुम अपनी आत्मा की आवाज
जानो पहचानों मानों
इससे पहले कि तुम्हारा तुम
तुम्हें नंगा कर दें
x x x
तुम्हारे स्वार्थ के माँस की
बोटी–बोटी नोच डाले ।"[1]

कवि कोमल ने एक समंदर : मेरे अन्दर की छोटी–छोटी कविताओं में सागर के माध्यम से मनुष्य व समाज की यथार्थ स्थिति को हमारे सामने अंकित किया है–

"तड़पती–हाँफती–काँपती
बनती–टुटती–सँवरती / थिरकती–
सागर लहरे / कितनी सहजता से
जीवन संघर्ष / करती है........ ।"[2]

यहाँ कवि ने मनुष्य की आन्तरिक स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया। मनुष्य अपनी सफलता के लिए निरन्तर नयी दिशायें तलाश रहा है, अब वह टुट चुका है, कवि कोमल कहते है–

"मै सागर / टूटता– फूटता बिखरता
मै सागर / गूँजता –गरजता –थर्राता
नयी दिशायें गुदगुदाता।"[3]

[1] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह) ; पृ0 44
[2] केदार नाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर (काव्य संग्रह) ; पृ0 27
[3] वही, पृ0 53

यथार्थ को सरस बनाकर लोक जीवन के हृदय में नवीन आशा नवीन उत्साह और नवीन प्रेरणा भर देता है। यथार्थ और आदर्श बुद्धि और हृदय का पूर्ण सामंजस्य चाहता है कवि कोमल ने अपनी कविता सर्दी के भोर समाज की बड़ी यथार्थपरक तस्वीर प्रस्तुत की है–

"चीथड़ों में दुबका मजदूर का बच्चा
उठते ही माँगेगा वासी रोटी का टुकड़ा।
कौन देगा रोटी उसे
भूखों के देश में ?"[1]

यहाँ पर कवि ने मनुष्यों की स्वार्थी भावना पर व्यंग्य किया है। कवि मनुष्यों की टुटती हुई आदर्शवादी भावना को भी घर में इन्कलाब कविता के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं–

"धर्म, दर्शन, ज्ञान, ईमान/आस्था विश्वास
यहाँ तक की भगवान भी /खो गया है !"[2]

आधुनिकता के इस युग में मानव इतना अंधा हो गया है कि अब उसके सामने आदर्श व इन्सानियत नाम की कोई चीज नहीं ; वह अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी करने को तैयार है कवि आज के समाज का बड़ा ही मार्मिक व यथार्थपरक चित्र दर्शाया हैं–

"जिस धरती पर
ऋग्वेद का जन्म हुआ
वहाँ एक नयी किताब लिखी जा रही है
खून से /आदमी के खून से !"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह) ; पृ0 47
[2] वही, पृ0 62
[3] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह) ; पृ0 25

कवि **कोमल** ने अपनी आदर्शवादी भावना को दर्शाते हुए तथा ऊँच–नीच जैसी बुराई पर व्यंग करते हुए **तटस्थ** कविता में कहा है :–

"तुम जो ऊँच–नीच की महिमा/गाते हो
क्या तुम जानते हो
हरिजन और सुर्यवंशी के शरीर में
एक ही खून चमकता है !"[1]

कोमल जी **सूरज** कविता में कहना चाहते हैं कि जिस प्रकार सूरज अपनी रोशनी की खुशबु दूर–दूर तक बिखेर देता है उसी प्रकार आदर्शवादी व्यक्ति सभी को अपनी ओर आकर्षित करता हैं। आदर्श व्यक्ति के व्यक्तित्व को दर्शाता हैं–

"नित नया रूप लेकर आता है !
उम्मीद की रोशनी की खुशबु
कण–कण में बिखरता है !
सुबह से शाम तक
गीत खुशी के गुनगुनाता है !"[2]

आशा, आस्था और संघर्ष की सबल अभिव्यक्ति :–आशा, आस्था और दृढ़ संघर्ष की सबल अभिव्यक्ति प्रगतिशील रचनाओं का एक अनिवार्य मापदंड हैं।ये ओजस्वी स्वर हमारी जीवन ऊर्जा के स्वरूप प्रमाण हैं। प्रगतिवादी काव्य में समाज की विषमताओं, मलिनताओं विकृतियों आदि के दुर्बल चित्र ही अंकित नहीं हुए, वरन् उन सबसे लड़ने की एक विश्वासमयी संकल्प शक्ति भी स्थापित हुई है। कवि **कोमल** ने मनुष्य की स्वर्णिम संभावनाओं के प्रति पूर्ण आश्वस्त होकर कवि उसकी जीवन्त कर्मठ–चेतना को जागृत करता है। कवि कोमल **राही** कविता में आस्था और संघर्ष को अभिव्यक्त करते

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हूए (काव्य संग्रह) ; पृ0 51
[2] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह) ; पृ0 8

हुए अपनी प्रगतिशीलता का परिचय देते हैं–

"धरती के पीड़ित
मुखड़े की/स्याही हूँ
चल रहा हूँ कि/मानव को
मंजिल मिल जाये/जल रहा हूँ कि
धरती का अंधेरा/धुल जाये ।"[1]

कवि कोमल अपनी कविताओं में मनुष्य को कर्तव्य के प्रति सतर्क करते हैं फिर उनमें आस्था और विश्वास का मंत्र फूकते है। संघर्ष उनके काव्य का मूल उद्देश्य है–

"मै हाफते–कांपते–टूटते–बिखरते
समय के साथ हूँ / मैं निराशा की आस की हूँ
जीता जागता विश्वास हूँ / मैं...... मैं हूँ
जीवन की मशाल हूँ"[2]

कवि केदारनाथ कोमल अपने काव्य में आस्था व आशा के साथ–साथ कर्म को भी महत्त्व देते हैं। कवि मानव को एक सफल जिन्दगी देना चाहता है, इसलिए उसका काव्य कर्तव्य, निष्ठा और संघर्ष से भरा है वे मनुष्य को सदा प्रगति के पथ पर देखना चाहते थे। इसलिए व कह उठते हैं–

"पग–पग मुसकाता हूँ
आशा के दीप जलाता हूँ
x x x
करता आँधी तूफान सहन
बस कदम आगे बढ़ाये जाता हूँ !"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; अन्धे सूरज का सफर (काव्य संग्रह) ; पृ0 11
[2] वही, पृ0 12
[3] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (कविता), पृ0 25

सुगन्ध कविता में आगे कवि कोमल पूर्ण रूप से प्रगतिवादी दिखायी पड़ते है, उनके कदम बढ़ते ही जाते हैं। चाहे मार्ग में कितनी कठिनाईयाँ क्यों न हो–

"जीवन के पथ पर /तू कदम बढ़ाता चल
कदम बढाता हंसता गाता/धूम मचाता चल
पग–पग पर हैं तेरे काँटे/दु:ख के समुद्र तुझको बाटे
फूल समझ कर/काँटें मसलता चल !"[1]

करूणा :–उच्चतर मानवीय मूल्यों का मूल तत्त्व है कोमल के काव्य में करूणा उच्चतर मानवीय मूल्यों की तलाश में भटक रही है। मनुष्य हृदय की संवेदनशीलता अविरल करूणा की धारा के रूप में प्रवाहित होती है। और यह व्यापक करूणा भाव सबके दु:ख को उनका दु:ख बना देता है,उनकी पीड़ा विश्व की पीड़ा को आत्मसात कर मानवीय करूणा तक विस्तृत है। कोमल की यह पीड़ा उनकी कविता "बेनाम सा दर्द" में मानवीय वेदना बनकर प्रस्फूटित हुई :–

"जिन्दगी से भीख माँगी थी !
फूल तो क्या
दो काँटे भी न मिले
एक बेनाम सा दर्द
दे दिया और कहा
'यही सब कुछ है' ।"[2]

कवि केदारनाथ कोमल की वेदना लोक संवेग बनकर करूणा, सौहार्द और मानववाद को जन्म देती है। वह विश्व व्यापी करूणा बन कर पाशविकता, रूढ़ियों आदि विकृतियों को नष्ट कर मनुष्यता और युग जीवन का निर्माण करने हेतू तत्पर है। कवि कोमल वर्तमान की

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (कविता), पृ0 29
[2] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह) ; पृ0 36

विभीषिकाओं से भी अनभिज्ञ नहीं हैं। कवि एक अनुभुति कविता के माध्यम से कहते हैं–

"निगाहों में बदहवासी
क्षितिज के आर–पार गुमसुम उदासी,
दिल जोर से धड़का
और धड़क कर रह गया,
टूट कर लकीर बनाता हुआ
अन्धेरे में गुम हो गया ।"[1]

आज जिन्दगी केवल बुराईयों का घर बन कर रह गई है। आम–आदमी की बिषमता भरी जिन्दगी का चित्र प्रस्तुत करते हुए वे कहते हैं कि

"जिन्दगी /मच्छरों –खटमलों
उल्लूओं और भूतों से भरा
मकान है !/धरती के ग्रैंड होटल में
चन्द दिन की /मेहमान है।"[2]

कोमल जी कारूणिक व निराश मनुष्य को शान्त्वना देते हुए और कविता "कोहरे से निकलते हुए" की पंक्तियों में अपने भावों को इस प्रकार उद्‌बोधित करते हैं–

"काम नहीं मिलता, तो न मिले,
भाग्य का फूल नहीं खिलता, तो न खिले।
बेकार तुम हथेली की बेजान लकीरों में
उलझे हों,/ये लकीरें गूंगी हूँ बहरी हूँ,
कुछ भी तो नहीं बोलेंगी ।"[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह), पृ0 41
[2] वही, पृ0 54
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) ; पृ0 65

आज के इस आधुनिक युग में मनुष्य के जीवन में खुशियां तो बहुत कम है। करूणा, वेदना, पीड़ा और विवशताएँ बहुत अधिक हैं। कवि कोमल दु:ख, करूणा और जीवन की बिषमताओं के आधार पर विश्व प्रेम और शान्ति का सन्देश देना चाहते हैं तथा साथ ही समाज में मानवीय मूल्यों को स्थापित कर, समाज के अन्दर से करुणा को समाप्त करके समाज में सुख शान्ति स्थापित करना चाहते हैं।

व्यंग्य परक दृष्टि :—कवि के व्यक्तित्व का निर्माण परिस्थितियाँ करती हैं। युग, जीवन परिवर्तित होता रहता है, और उसी के अनुरूप कवि की प्रगतिशीलता हमे देखने को मिलती है। आज की कविता व्यंग्य द्वारा अभिव्यक्ति पर जोर दे रही है। अत: कोमल जी भी सामाजिक विकृतियों से छुब्ध होकर तीखे व्यंग्यों के माध्यम से इस अव्यवस्था पर प्रहार कर उठते हैं इसमें सन्देह नहीं कि कोमल जी के व्यंग्य 'दिनकर' 'निराला' की भाँति मार्मिक और सशक्त हैं। सामाजिक व्यवस्था पर कवि व्यंग्य करते हुए **'सर्दी की भोर'** कविता मजदूर की स्थिति को चित्रित करते है :–

"चीथड़ों में दुबक मजदूर का बच्चा
उठते ही मागेंगा बासी रोटी का टुकड़ा !
कौन देगा रोटी उसे
भूखों के देश में ?"[1]

आज समाज के अन्दर से आस्था, विश्वास, धर्म, ईमान आदि सभी मूल्यों का ह्रास हो रहा है कवि इससे दु:खी होकर **'धर में इन्कलाब'** कविता में व्यंग्य करते हुए–

"धर्म, दर्शन, ज्ञान, ईमान/आस्था, विश्वास
यहाँ तक कि भगवान भी/खो गया है !"[2]

'आदमी' कविता में कवि कोमल ने समाज से इन्सानियत का समाप्त होना अखरता है। उन्होनें मनुष्य के अन्दर से मनुष्यता का ह्रास होने पर समस्त मानव जाति

---

[1] **केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह) ; पृ0 47**
[2] **वही, पृ0 62**

पर व्यंग्य किया –

"राम–राम /कहाँ है राम ?
राम नाम का बस/बाकी है ढोल
आदमी तो कब का /मर चुका
उसका सिर्फ/बाकी है खोल।"[1]

कवि कोमल ने समाज में व्याप्त सम्प्रदायिकता की समस्या पर अपने भावों को अभिव्यक्त करते हुए सम्प्रादायिकता को अभिशाप माना है, 'जंगल' कविता में कहा है –

" कहीं मन्दिर कहीं मस्जिद
कहीं गुरूद्वारे की शक्ल में
जानें क्यों /बार – बार हम
वन जाते हैं खूंखार भेड़िये ।"[2]

आधुनिक युग में मनुष्यों के समक्ष धर्म और ईमान का कोई महत्व नहीं रहा वे निरन्तर कुकृत्यों में लगा है। उसकी धार्मिक भावना समाप्त हो गई है कवि अपनी 'तटस्थ' कविता में तीक्ष्ण व्यंग्य करता है–

"तुम जो धर्म–ईमान का वास्ता देते हो
क्या तुम जानते हो
कि धर्म कब का बिक चुका है।"[3]

कवि की व्यंग्य पर तीखी दृष्टि से कुछ नहीं बचता उन्होंने छल–कपट की राजनीति तथा समाज की अन्य समस्याओं एवं बुराईयों अपने भावों के व्यंग्य बाण वर्षाऐं तथा साथ ही समाज को इन सभी बुराईयों से दूर रहने की प्रेरणा देते हैं। अतः कवि कोमल के व्यंग्य बहुत ही मार्मिक, तीखें एवं सटीक हैं।

---

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें (काव्य संग्रह) ; पृ0 17
[2] वही, पृ0 35
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) ; पृ0 52

प्रकृति चित्रण :—छायावादी कवियों ने अत्यन्त आत्मीयता के भाव से प्रकृति को अपने भावों का आलंबन बनाया है प्रकृति–प्रेम तो कविता की आदिम प्रवृत्तियों से एक है विश्व की प्रत्येक भाषा के साहित्य में प्रकृति चित्रण अवश्य होगा। 'वेदों' में प्रकृति सौन्दर्य का आकर्षक वर्णन मिलता है। वाल्मीकी रामायण में समुद्र, पर्वत, अरण्य आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। संस्कृत और हिन्दी के महाकवियों ने प्रकृति से रागात्मक संबन्ध स्थापित करके, उसके विविध पक्षों का सरस शाब्दिक चित्रण प्रस्तुत किया, जैसी आत्मीयता के साथ छायावादी कवियों ने प्रकृति को ग्रहण किया, वैसी आत्मीयता हिन्दी कविता के पूरे इतिहास में या इससे पहले देखने को नहीं मिलती।

प्रकृति मानव का प्रति पक्ष है अर्थात् मानवेतर ही प्रकृति है। **अज्ञेय** ने प्रकृति की व्यंजन इन शब्दों में की है–"वह सम्पूर्ण परिवेश जिसमें मानव रहता है, जीता है, भोगता है और संस्कार ग्रहण करता है और भी स्थूल दृष्टि से देखने पर प्रकृति मानवेतर का वह अंश हो जाती है जो कि इन्द्रिय गोचर है।"[1]कवि **केदारनाथ कोमल** ने तन्मयता के साथ अपनी सुक्ष्म तूलिका से प्रकृति के चित्र प्रस्तुत किये हैं। **'एक समन्दर : मेरे अन्दर'** काव्य में कवि ने सागर, लहरे, पवन, आकाश, धरती आदि का मानवीकरण किया है–

"मै सागर
सूरज–सा कण–कण चूमता
पूर्णिमा–सा
स्वप्न–फूलों संग झूमता
धरा की धड़कन संग
धूम–धूम घूमता ।"[2]

कवि ने प्रकृति का मानवीयकरण करते हुए प्रकृति को प्रसन्नचित्त महसूस किया है–

"पवन संग /मृगनयनी यादें झूम रहीं

---

[1] अज्ञेय ; आधुनिक हिन्दी साहित्य ; पृ0 171
[2] केदारनाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर (काव्य) ; पृ0 53

अल्हड़ कलियों के अधर चूम रहीं
आज जर्रा-जर्रा गूनगुनाता
आज अपने पे 'प्यार आता ...."[1]

वैसे देखा जाए तो प्रकृति मानव की सहचरी है। कभी वह मनुष्य के साथ आँख मिचौली करती है तो कभी जीवन का सन्देश देती है। आज प्रकृति को विज्ञान के समीप लाकर देखा जा रहा है। कोमल जी ने अपने काव्य में प्रकृति का यथार्थपरक चित्रण किया है। उनकी 'चाँद' कविता की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य है-

"नदी-दर्पण-सा चाँद
सपनों में धूम मचा गया :
लहर-लहर के सीने में
प्रीत के गीत जगा गया !"[2]

कवि केदारनाथ कोमल 'जी होता है' नामक कविता में आषाढ़ के इस सुरम्य वातावरण में वगुलों की भांति, पहाड़ों का प्राकृतिक उन्माद तथा नदी-नालों के जल की भाँति मन को उल्लासित करूँ तथा उनका मैं सच्चा सहचर बन जाऊँ-

"जी होता है
आषाढ़ के बगुलों को/चुमूँ झुमूँ , गाऊँ
जंगल -पहाड़ों में /नदी, नालों, पोखरों की
लहर-लहर को गुदगुदाऊँ।"[3]

इस प्रकार कोमल जी ने अपने काव्य में प्रकृति का अत्यन्त सजीव एवं सुन्दर चित्रण किया है।

---

[1] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध (काव्य) ; पृ0 24
[2] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह) ; पृ0 23
[3] केदार नाथ कोमल ; चौराहे पर पृ0 52

वैज्ञानिक दृष्टिकोण :–विज्ञान ने व्यक्ति को अधिक तार्किक एवं बौद्धिक बना दिया है। इसके प्रभाव से कवि व साहित्यकार भी नहीं बचे। समकालीन कविता में वैज्ञानिक परिवेश व्यापकता के साथ प्रयोग हुआ। **'डॉ0 अवध नारायण त्रिपाठी'** ने **'नई कविता में वैयक्तिक चेतना '** में विज्ञान की उपादेयता की चर्चा की है। "विज्ञान ने कवि को सोचने विचारने और परिक्षण करने की एक नई शक्ति भी दी है।"[1]कवि **केदारनाथ कोमल** की कविताओं में बौद्धिकता का व्यापक धरातल में समायोजन करने के लिए विज्ञान में शब्द व्यापार और वैज्ञानिक प्रक्रिया दोनों ही मिलते हैं। **चौराहे पर** काव्य संग्रह में कवि ने अपनी वैज्ञानिक दृष्टि को प्रस्तुत किया। **पाठकों के नाम शीर्षक** में लिखा–

"मेरे अकेलेपन में
बिजली की तरह/चमचमाती हैं
सैकड़ों तुफान बनकर / बिखर जाती है"[2]

आज विज्ञान और कविता एक–दूसरे के पूरक होते जा रहे हैं। तकनीकी प्रक्रिया के विविध प्रभावों ने मानवीय चेतना को उर्जा दी है। कवि **कोमल** ने भारत के प्रत्येक व्यक्ति की धड़कन को मशीन की प्रक्रिया से प्रकट किया है–

"भारत के/जन–जन में
धड़कती/मशीनों के
तनमन में/उन्नति का गीत
प्यारा है।"[3]

केदारनाथ कोमल का अभिव्यक्ति पक्ष बहुत ही सुन्दर एवं सुस्पष्ट है। कवि के सम्पूर्ण काव्य में मानवतावादी दृष्टि के दर्शन होते हैं। कवि ने अपनी कविताओं में

---

[1] डॉ0 अवध नारायण त्रिपाठी ; नयी कविता में वैयक्तिक चेतना ; प्र0सं0 जून 1979, पृ0 239
[2] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर (काव्य संग्रह के मुख्य पृष्ठ से)
[3] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध पृ0 38

सामाजिक विषमताओं को व्यापकता के साथ उभारा है। समकालीन कवि केदारनाथ कोमल ने अपने काव्य में प्रगतिशील मानदण्डों को स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत किया है। व्यंग्यात्मकता कवि के काव्य का अभिन्न अंग है।समाज की अनेक बुराईयों पर कवि ने बहुत करारे व्यंग्य किये हैं। राष्ट्र भावना भी उनके काव्य का मूल उत्स हैं। यदि कवि केदारनाथ कोमल की भाव सम्पदा को देखकर यह कह दिया जाय कि वह वैशिष्ट्यता से युक्त तथा व्यापकता से परिपूर्ण है तो अतिश्योक्ति न होगी ।

(ख) शिल्पगत वैशिष्ट्य :–

काव्य का दूसरा पक्ष अभिव्यक्ति पक्ष है इसे वस्तु पक्ष अथवा शैली पक्ष भी कहा जाता है। भाव पक्ष काव्य की अन्तरंगता से सम्बधित होता है तो शिल्प उसके वहिरंग से सम्बन्धित होता है। श्रेष्ठ काव्य वही है जिसमें इन दोनों पक्षों का सुन्दर समन्वय हो। वास्तव में भाषा के विकास के साथ ही मानव का इतिहास जुड़ा है। **मानक हिन्दी कोश** में शिल्प का अर्थ–हाथ से काम करने का हुनर, दस्तकारी, हस्तकला, अर्थात् वैसे देखा जाय तो "लेखक या साहित्यकार भी अपने काव्य में अपनी शिल्पकला के माध्यम से अपने भावों का ताना–बाना बुनता है जो भाषा के रूप में प्रकट होते है।"[1]

हिन्दी शब्द सागर में **'शिल्प'** का अर्थ –'दक्षता, कौशल चातुर्य, सर्जन, सृष्ट, रचना आकार, आवृत्ति रूप"[2]आदि अर्थ दिये गये है। अर्थात् कवि या साहित्यकार और दक्षता, कौशल, चातुर्य आदि के माध्यम से अपने अभूर्त भावों को अपनी सर्जना शक्ति के द्वारा अपनी रचना को आकार, आवृत्ति रूप देकर अपने विचारों को मूर्त रूप देता है। **डॉ0 मोहन अवस्थी** ने शिल्प के सन्दर्भ में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए कहा,–"काव्य–विधान काव्य का विज्ञान है। कविता करने की विधि से लेकर कविता–सम्बन्धी गुण–दोषों का विधिवत् ज्ञान उसके भीतर आ जाता है, और उस ज्ञान का आत्म–प्रकाश काव्य शिल्प है। काव्य विधान तथा काव्यशिल्प में निराकार और साकार का अन्तर है।"[3] अर्थात् दूसरे शब्दों में,"विधान को मूर्त करने का यही प्रयास शिल्प है।"[4] डॉ0 नगेन्द्र अमूर्त–अनुभूति की मूर्त प्रक्रिया में शिल्प की महत्त्वपूर्ण भूमिका मानते हैं। उनके मतानुसार,"अमूर्त–अनुभूति को मूर्त बनाने में ही काव्य शिल्प की सार्थकता है काव्य शिल्प वस्तुतः काव्य चिन्तन का प्रयोगात्मक पक्ष है।"[5]

---

[1] रामचन्द्र शुक्ल (सम्पा.) मानक हिन्दी कोश ; प्र0सं0 1966, पांचवाँ खण्ड पृ0 173
[2] श्याम सुन्दर दास (सम्पा.) ; हिन्दी शब्द सागर , सं0 1972, नवाँ भाग, पृ0 4751
[3] डॉ0 मोहन अवस्थी ; आधुनिक हिन्दी काव्यशिल्प ; प्र0सं0 1962 पृ0 6
[4] वही, पृ0 6
[5] डॉ0 नगेन्द्र ; काव्य शिल्प के आयाम ; प्र0सं0, पृ0 5

शिल्प का तात्पर्य वस्तु प्रकाशन की विधि से है काव्य के क्षेत्र में अभिव्यक्ति या शिल्प वह विशिष्ट वस्तु प्रकाशन, व्यापार है जो किसी वस्तु व्यापार या अनुभूति को प्रकट करता है। वास्तव में जो श्रेष्ठ अनुभूति हुआ करती है वह काव्य रूप में प्रकाशित हुए बिना रह ही नहीं पाती। क्रोंचे का अभिव्यंजनावाद भी इसी तथ्य का समर्थन करता है। डॉ0 कैलाश वाजपेयी शिल्प के सन्दर्भ में अपना मत स्पष्ट करते हुए कहा, शिल्प वास्तव में– "कला के विभिन्न तत्त्वों अथवा उपकरणों की योजना का वह विधान है वह ढंग है, जिसमें कलाकार की अनुभूति अमूर्त से मूर्त हो जाए।"[1] डॉ0 वाजपेयी ने कहा, "कवि का शिल्प विधान किन्ही विशिष्ट तथ्यों पर उतना आधारित नहीं होता जितना की सृष्टा की उर्वर कल्पना और मौलिक सूझ पर। इसीलिए काव्य की शिल्प विधि विज्ञान की अपेक्षा स्वच्छन्द और व्यापक है।"[2] भारतीय साहित्य में काव्य की शिल्प विधान का स्वरूप अलंकार शास्त्र के द्वारा स्पष्ट हुआ। शिल्प विधान का रस सिद्धान्त से कोई सरोकार न होने पर भी रस निष्पत्ति की प्रक्रिया वास्तव में शिल्पपक्ष का ही महत्वपूर्ण अंग है–"रस निष्पत्ति का निश्चित क्रम तथा क्रमशः स्थायीभाव की जागृति के लिए कारण स्वरूप विभाव का आना आदि शिल्प विधि ही है।"[3] उदाहरणार्थ –

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्ति

दूसरे रूप में शिल्प विधान के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है अनुभुति पक्ष काव्य का प्राण है तो अभिव्यक्ति पक्ष उसका शरीर हैं। अज्ञेय ने 'तीसरा सप्तक' की भूमिका में लिखा, "नया कवि नयी वस्तु को ग्रहण और प्रेषित करता हुआ शिल्प के प्रति कभी उदासीन नहीं रहा है। क्योंकि वह उसे प्रेषण से काट कर अलग नहीं करता है, नयी शिल्प दृष्टि उसे मिली।[4]

---

[1] डॉ0 कैलाश वाजपेयी ; आधुनिक काव्य में शिल्प ; प्र0सं0, 1963 पृ0 19
[2] वही, पृ0 19
[3] वही, पृ0 39
[4] अज्ञेय (सम्पा.) ; तीसरा सप्तक (भूमिका से) ; तृतीय सं0 1967, पृ0 11

शिल्प के मुख्य तत्त्व – भाषा, शैली, बिम्ब मिथक, प्रतीक, छन्द और लय आदि है। **डॉ० हुकुमचन्द्र राजपाल** ने **केदारनाथ कोमल** के काव्य शिल्प को सराहा है। उनके शब्दों में **केदारनाथ कोमल** का शिल्प मौलिकता को आत्मशात् किये हुए है, वह नये एवं सटीक शब्दों का प्रयोग सार्थक आधार पर करते हैं लय, प्रवाह सभी रचनाओं में है। सम्बोधन शैली में वह अनेक प्रश्न तथा उसका यथा सम्भव समाधान काव्यात्मक वाक्यों में प्रस्तुत करते हैं। ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता तथा लाक्षणिकता इनके शिल्प को गहन आधार प्रदान करते हैं।"शिल्प पक्ष की दृष्टि से कवि '**केदारनाथ कोमल**' का काव्य है। इनके काव्य में अभिव्यंजना कौशल, भाषा संगठन, मानवीकरण संगीतात्मकता, प्रकृति चित्रण, अलंकार विधान, छंद योजना, बिम्ब विधान आदि का बहुत ही सुन्दर समन्वय है।

भाषा संगठन :– भाषा हमारे विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम है। डॉ० '**जगदीश चन्द्र चौरे**' ने भाषा के विषय में अपना मत व्यक्त करते हूए कहा, "भाषा हमारे मन के आवेगो का बाना है। स्वच्छन्द प्रकृति की गोद में पहाड़ों की ऊंचाई, समुद्र की गहराई, खिले हुए पुष्प, बहते हुए झरने को देखकर मानव मन कुछ कह उठता है। ठीक इसी प्रकार भाषा के सौन्दर्य से मन भी प्रफुल्लित हो जाता है। भावो को वहन करने के लिए भाषा तो माध्यम है।"[1] "भाषा सरल, जन–जीवन के निकट तथा सहजता में लिपटी हुई होनी चाहिए तथा आत्मसात् करने में किंचित भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए।"[2] मानव अपने स्वभाव से ही चिन्तनशील एवं संवेदनशील रहा है। परिस्थितियों के अनुरूप उसके मन में भाव जागृत होते रहते हैं, जिनको वह भाषा के द्वारा अभिव्यक्त करता है। **डॉ० विजय द्विवेदी** के मतानुसार "कवि जिस अनुभूति को अभिव्यक्ति देना चाहता है। वह भाषा के गर्भ से ही पैदा होती है।"[3]

---

[1] डॉ० जगदीश चन्द्र चौरे ; माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का अनुशीलन ; प्र०सं० 1982 पृ० 213
[2] डॉ० अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ; प्र०सं० 1975, पृ० 148
[3] डॉ० विजय द्विवेदी ; नई कविता प्रेरणा और प्रयोजन ; प्र०सं० 1978, पृ० 121,

भाषा की दृष्टि से कवि **'कोमल'** का काव्य प्रगतिशील कविता और आधुनिक कविता में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कवि कोमल की भाषा जनभाषा है जो जीवन की गहराईयों में उतर कर आम आदमी की भावना को व्यक्त करने वाली है। उनकी भाषा मानव पीड़ा से उपजी है बड़ी से बड़ी बात को थोड़ शब्दों में बाधा है उदाहरण–

"जीवन से भीख मांगी थी
फूल तो क्या/दो काटें भी न मिले
एक बेनाम–सा दर्द/दे दिया और कहा
'यही सब कुछ है।"[1]

डॉ0 **रमाशंकर तिवारी** ने भाषा की वैचारिकता को स्वीकारा है,"भाव उत्कृष्ट होने पर ही भाषा उत्कृष्ट होती है। भीतर समृत होने पर बाहर समृद्धि का दर्शन होता है।"[2]आम आदमी की भाषा में उसकी बात कहने में सिद्धहस्त कोमल समकालीन सामाजिक विसंगतियों और विद्रूपताओं को अज्ञात अन्ध गह्वरों से निकाल कर कविता के कालजयी आलोक–वृत्त के बीच खड़ा कर देने का साहस भी रखते हैं। कोमल की 'मरने से पहले' आम–आदमी की भाषा में भावों को व्यक्त करते हैं–

"मैं मरने से पहले/मरना नहीं चाहता
यह जानते हुए भी कि /मुझमें लड़ने का
बहुत दम नहीं / लेकिन जीने की इच्छा
उगते सूरज से कम नहीं !"[3]

अतः **कोमलजी** की भाषा स्वाभाविक सहज एवं सरल है वह जनसामान्य के अधिक निकट है। पाठक उसे आसानी से उसे ग्रहण कर लेता है कवि ने कहीं भी भाषा को गढ़ा नहीं, दुरुहता तो उनकी काव्य भाषा के निकट तक नही आयी। भाषा की दृष्टि से कवि

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरें, (काव्य संग्रह) प्र0सं0 1988, पृ0 17
[2] आलोचना (पत्रिका) जनवरी–मार्च 1957 पृ0 67
[3] केदारनाथ कोमल ; मेरे शब्द : मेरा लहू,(काव्य संग्रह) ; प्र0सं0 1983, पृ0 10

कोमल के काव्य को श्रेष्ठ कहना समीचीन नही होगा –

"छंद की रूनझुन / स्वर की खुशबु
लय की नर्तन / ताल का जादू
बुलाता है बार–बार / पर कदम–कदम पर
बिखरे है / शब्दों के आंल–पिन ।"[1]

कवि केदारनाथ कोमल ने अपने काव्य में तत्सम, तद्‌भव अंग्रेजी, उर्दू, अरबी–फारसी तथा देशज भाषा के शब्दों का भी भरपूर प्रयोग किया। कवि ने अपने काव्य में सूक्तियों का भी सार्थक व उपयुक्त प्रयोग करने में सिद्धहस्त हैं इनके कविता संग्रहो से कुछ सुक्तियों के उदारहण प्रस्तुत है–

1."चेहरा आत्मा का पहरा।"[2]
2."कविता की पंक्ति के शब्दों में सुलगती है आग।"[3]
3. "साँच को आंच नहीं।" [4]

किसी भी काव्य अथवा भाषा की सार्थकता उसकी प्रेषणीयता में निहित होती है। प्रेषणीयता किसी भी भाषा को प्राणवान बनाती है।'**केदारनाथ कोमल**' की कविताओं में भाषा का यह गुण अति प्रभावी बन पड़ा है। कहीं–कहीं वे आम आदमी की जिन्दगी के पृष्ठों को खोलते हैं तो कहीं राजनीति की अवसरवादिता को उजागर करते हैं। देश की व्यवस्था और विसंगतियों के चित्रण में कवि केदारनाथ कोमल की प्रेषणीयता अतिश्रेष्ठ है वे 'अनजाने मोड़पर; कविता में फुटपाथ और गरीबी की जिन्दगी जाने वाले व्यक्ति का चित्र प्रस्तुत करते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि **केदारनाथ कोमल** के काव्य की भाषा घोर यथार्थवादी है। उनकी भाषा बोलचाल की सरल भाषा है, लोक प्रचलित भाषा का प्रयोग कोमलजी ने अपने

---

[1] केदार नाथ कोमल ; चौराहे पर ; प्र0सं0 1968, पृ0 18
[2] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास ; प्र0सं0 1978, पृ0 62
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए ; प्र0सं0 1975, पृ0 32
[4] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास, पृ0 33

काव्य में भरपूर किया है कोमलजी ने भाषा की सुबोधता को और उसके लोक प्रचलित प्रयोग का सदैव समर्थन किया।

प्रतीक विधान – प्रतीक का शाब्दिक अर्थ–"अंग, अवयक पता चिन्ह अथवा निशान किसी गद्य के आदि या अन्त के कुछ शब्द लिख कर या पढ़ कर उससे पूरे वाक्य का पता लगाना।"[1] अभिव्यंजना का एक प्रबल माध्यम है प्रतीक विधान। साहित्य में प्रतीक उस अप्रस्तुत विधान को कहते हैं, जिसमें पूरे अर्थ का सन्दर्भ को व्यंजित करने की शक्ति मिलती है, अर्थात् अपने भावों को प्रस्तुत करने के लिए प्रतीकों का सहारा लिया जाता है प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य वस्तु के लिए किया जाता है। जो किसी अप्रस्तुत विधान का कारण बनती है–'प्रतीक' ऐसे संकेत हैं जिन माध्यम से अभिव्यक्ति को प्रेषणीय सार्थक और अर्थ गर्भित बनाया जाता है। इस प्रक्रिया का जन्म मानव की भावनाओं के विकास के साथ माना गया है। सामान्यतः भाव को कम से कम शब्दों में और सांकेतिक रूप में कहने की प्रवृत्ति के कारण प्रतीकों का प्रचलन बढ़ता जाता है।"[2] प्रतीकों से रहस्योंन्मुखी अध्यात्मिक भावनाओं का यथार्थ चित्रण होता है तथा इससे भाषा में भी एक सारगर्भित अर्थवेत्ता और नयी सामर्थ्य आ जाती है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा के काव्य में प्रतीकों का सुन्दर नियोजन हुआ है। प्रसाद–'कामायनी' और 'आंसू' में जैस (रागनी–व्यथा के स्वर) झंझा झकोर गर्जन (तीव्र भावों की उमड़–घुमड़) बिजली (रह–रहकर उठने वाली व्यथा) निराला ने 'गीतिका' और 'परिमल' में प्रतीकों का अत्यन्त विशदता के साथ प्रयोग हुआ। महादेवी वर्मा ने भी प्रतीकों का सुन्दर व सार्थक प्रयोग किया उनके प्रतीक 'दीपक' (साधना का) दर्पण (माया का) पिंजर (माया बंधन का) प्रतीक हैं।

केदारनाथ कोमल ने ही प्रतीकों का प्रयोग बड़ी सार्थकता के साथ किये है–'सर्दी की भोर'! कविता में प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग हुआ–

---

[1] नागेन्द्रनाथ बासु (सम्पा0) हिन्दी विश्व कोश ; भाग 14 सं0, पृ0 546
[2] श्याम सुन्दर दास (सम्पा0) हिन्दी शब्द सागर ; सं0 1972 ; नवां भाग, पृ0 2208

"भटकती धुंध / ठिठुरती सड़कें
काँपते पेड़ / ऊँघते मकान
x x x
बाँहे फैलाये रेत की पटरियाँ
उजड़ी पगडंडियाँ / सब जम गयी हैं
कलम की नोक पर !"[1]

समकालीन कवि **केदारनाथ कोमल** ने प्रकृति और सांस्कृतिक प्रतीकों उपयुक्त प्रयोग किया है –

जिन्दगी / मच्छरों, खटमलों
उल्लओं और भूतों से भरा / मकान है।"[2]

यहाँ कवि ने मनुष्य जिन्दगी के माध्यम से समाज की यथार्थ तस्वीर खींची है। यहाँ 'मच्छर' और 'खटमल' सामाजिक बुराईयाँ है। 'उल्लू और 'भूत' आधुनिक मनुष्य के कुविचार है। कवि **कोमल** ने मानवीय करूणा तथा मानव मूल्यों को स्थापित करने वाले कवि हैं। उनका समस्त काव्य मनुष्य वेदना व पीड़ा से ओतप्रोत है। वे हमेशा मनुष्य को इससे मुक्त कराने के लिए संघर्षशील रहे उन्होंने नवीन प्रतीक के माध्यम से मनुष्य की इस पीड़ा को व्यक्त किया–

1. " काटे ही काटे है / कहने को बहार है
   दिल में अन्धेरा है, / सूरज पर निखार है।"[3]
2. " सागर की सतह पर / पानी की पहाड़ियाँ
   उभरती–बनती–बनती / टूटती–बिखरती है।"[4]

---

[1] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर पृ० 47
[2] वही, पृ० 54
[3] केदारनाथ कोमल ; पतझड़ के हस्ताक्षर पृ० 50
[4] केदारनाथ कोमल ; एक समंदर : मेरे अन्दर ; प्र०सं० 1998, पृ० 28

यहाँ 'सागर' मानव ह्रदय व मन का प्रतीक है और 'पानी की पहाड़ियाँ' –उसके उठते बनते, बिगड़ते भावों का प्रतीक है। अतः कविवर केदारनाथ कोमल अपने काव्य में प्रतीकों का बहुत ही सार्थक चित्रण प्रस्तुत किया है।

बिम्ब विधान– केदारनाथ कोमल के काव्य में बिम्ब के अनेक रूप मिलते हैं, लेकिन हमें इससे पहले उसके अर्थ एवं स्वरूप को समझ लेना चाहिये। बिम्ब अंग्रेजी के "इमेज" का पर्याय है। "इमेज" से मानसिक प्रतिकृति, मानस प्रत्यक्ष अथवा किसी वस्तु की सादृश्य योजना की अभिव्यक्ति होती है। डॉ0 कुमार विमल ने सौन्दर्य के विवेचन में बिम्ब के सन्दर्भ में अपने मत को इस प्रकार व्यक्त किया है –"सौन्दर्यशास्त्र या कला विवेचन और विशेषकर काव्यलोचन की दृष्टि से बिम्ब एक प्रकार का रूप विधान है, जो प्रायः किसी ऐन्द्रिय प्रभाव या संवेदन की मानसिक प्रतिलिपि अथवा प्रतिकृति हुआ करता है।" [1]

मानव सदा से ही अपने भावों को तंरगित करता रहता हैं और तंरगमयी भाव उसे सृजन शक्ति सम्पन्न करते हैं उसके भावों को कलामयी अभिव्यक्ति देते हैं। काव्य में बिम्ब महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि यह ही काव्य को रसानुभूति तक पहुचाता है। डॉ0 अजब सिंह' ने बिम्ब के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुये लिखा,"कल्पना के द्वारा ही कवि बिम्ब सृष्टि की शक्ति प्राप्त करता है कल्पना अनुभूत जीवन के सन्दर्भों में अपने बिम्बों को पनुः प्रस्तुत करती है और कई बिम्बों को मिला कर नये बिम्ब भी बनाती है जो अनेक नये सूक्ष्म और संश्लिष्ट बोधों को साकार करने में समर्थ होते हैं, बिम्ब निर्माण तो काव्य का सहज धर्म है।"[2] डॉ0 नामवर सिंह ने कहा, "कविता में बिम्ब रचना सदैव वास्तविकता को ही मूर्त नहीं करती कभी–कभी वह वास्तविकता का अमूर्तन भी करती है।"[3] इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि बिम्बों के पाँच लक्षण माने जा सकते हैं –

(1) चित्रात्मकता (2) शब्द रूपात्मकता (3) ऐन्द्रियता

---

[1] डॉ0 कुमार विमल ; सौन्दर्य शास्त्र के तत्व ;प्र0सं0 1967, पृ0 211,
[2] डॉ0 अजब सिंह ; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां ; प्र0सं0 1975, पृ0 114
[3] डॉ0 नामवर सिंह ; कविता के नये प्रतिमान ; प्र0सं0 1968, पृ0 139 ,

(4) भावोत्पादकता (5) आरोपण का प्रभाव

इस आधार पर बिम्ब कई प्रकार के होते हैं–दृश्य बिम्ब, श्रव्य बिम्ब, घ्राण बिम्ब, बाह्य बिम्ब, स्पर्श बिम्ब। अन्य मानसिक अनुभूतियों के आधार पर बिम्ब नाना प्रकार के बिम्ब का सृजन किया जाता है। बिम्ब विधान कोमल के काव्य का महत्वपूर्ण अंग है। उन्होंने शोषित एवं पीड़ित समाज के बहुत ही उपयुक्त चित्र प्रस्तुत किये। कवि केदार नाथ कोमल की सूक्ष्म दृष्टि जीवन, जगत, और प्रकृति के बीच से चुने हुए अनुभवों या अवलोकित वस्तुओं के आधार पर बिम्ब निर्माण करता है।कोमलजी के बिम्ब यथार्थवादी है। इनके काव्य में–वस्तु बिम्ब, ऐन्द्रिय बिम्ब, अंलकृत बिम्ब, मानस बिम्ब, भावणिक बिम्ब, स्पर्श बिम्ब, घ्राण बिम्ब आदि मिलते हैं।

वस्तु बिम्ब :– वस्तु बिम्ब से आशय वस्तु या शब्द के व्यापार से है इन्हें शब्द बिम्ब भी कहते हैं ये शब्द को अर्थवत्ता से युक्त कर इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं। जिससे सम्पूर्ण सन्दर्भ चमत्कृत हो उठे। उनके काव्य में बिम्बों का अनायास आ जाना देखा जा सकता है। वस्तु बिम्ब का उदाहरण दृष्टव्य है–

"किताबें, पुराने अखबार, बिखरे बर्तन
पुरानी मेज, अधटूटी कुर्सी
अधेड़ चारपाई,
कील में टंगे कपड़े," [1]

ऐन्द्रिय बिम्ब :– इसके अन्तर्गत वे बिम्ब आते हैं जो दृष्टि के निकट गधादि प्रक्रियाओं से प्रकट होते है अर्थात् ये बिम्ब इन्द्रिया सग्निकर्ष से ग्रहण किये जाते है जैसे–घ्राण, स्पर्श, श्रवणादि ऐन्द्रिय बिम्ब है उदाहरण –

1. "राम–राम/कहाँ है राम?
   आदमी तो कब का/मर चुका

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए ; पृ0 64

उसका सिर्फ
बाकी है खोल ।"[1]

2. सागर लहरे
कितनी सहजता से
जीवन संघर्ष
करती है......... ।"[2]

अलंकृत बिम्ब : अलंकृत बिम्ब काव्य में चमत्कार उत्पन्न करने के लिए भी प्रयोग किये जाते हैं और अनुभूति की तीव्र प्रक्रिया के साथ मानव को आन्दोलित करने के लिए भी अलंकृत बिम्बों का प्रयोग किया जाता है कोमल जी के काव्य में भी अलंकृत बिम्बों का सुन्दर व सार्थक प्रयोग देखने को मिलता है –

1. "नदी–दर्पण –सा चांद
सपनों में धूम मच गया
लहर–लहर के सीने में
प्रीत के गीत जगा गया।" [3]
"गोरे–गोरे बादल लिपटे
सपनों की छाओं में।"[4]

मानस बिम्ब :– ये बिम्ब दृश्य गुण की अपेक्षा किसी विचार या भाव के सहारे खड़े किये जाते हैं। जब कभी कवि अधिक भावुक होता है तब इन बिम्बों की सृष्टि होती है। वैचारिकता और यथार्थकता के कारण मानस बिम्ब सहज ही निर्मित होते हैं–

1. "बसंत के मौसम में/टूटा पत्ता ज़र्द हूँ

[1] केदारनाथ कोमल ; रेत पर लकीरे पृ0 96
[2] केदारनाथ कोमल ; एक समन्दर : मेरे अन्दर , पृ0 27
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए, पृ0 23
[4] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध, पृ0 19

मानव के इतिहास की/भटकी –भटकी गर्द हूँ।[1]

2. राम के नाम पर/लूट है ये जिन्दगी

धर्म के नाम पर /फूट है ये ज़िन्दगी ।"[2]

श्रव्य बिम्ब – ये बिम्ब नाद के अर्न्तगत आते हैं ये वर्ण, ध्वनि, लय, छन्द आदि के द्वारा मूर्त होते हैं। कोमल के काव्य में यत्र–तत्र ये बिम्ब मिल जाते है –

"छन्द की रूनझुन/स्वर की खुशबू

लय की नर्तन /ताल का जादू

बुलाता है बार–बार।"[3]

2. यह गोलियो की बोली/बन्दूक की ठिठोली

कब तक यो ही चलेगा/हम जबाब क्यों नही देते

बदला क्यों नही लेते।"[4]

स्पर्श बिम्ब :– ये बिम्ब स्पर्श से अनुभव किये जाते है। कवि कोमल ने समाज की प्रत्येक समस्या को स्पर्श किया है अनुभव व महसूस किया है –

"जी होता है

अंधे भिखारी के/फैले हाथों में

रोटी का टूकड़ा/बन जाऊ।"[5]

इस प्रकार कवि कोमल ने अपने काव्य में बिम्बों का बहुत ही सुन्दर व उपयुक्त प्रयोग किया वे अप्रस्तुत विधान के माध्यम से अपने भावों को मूर्त करने में सफल व सिद्धहस्त कवि हैं। अतः कोमल बिम्ब विधान की दृष्टि से श्रेष्ठ व उनका काव्य भी श्रेष्ठ है।

संगीतात्मकता – कविता में संगीतात्मक लालित्य भाव व्यंजना को अति सुरिक्षित कर देता है। संगीत के आकर्षण से कविता स्वाभाविक रूप से मन को अपनी ओर आर्कषित करती

---

[1] केदारनाथ कोमल ; शब्द–नाच, पृ0 32
[2] वही, पृ0 39
[3] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए, पृ018
[4] केदारनाथ कोमल ; अंधे सूरज का सफर,, पृ0 102
[5] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर ,पृ0 53

है। वास्तव में देखा जाए तो शब्दों की ध्वनि से संगीत की ध्वनि उत्पन्न होती है। केदार नाथ कोमल ने बाल गीतों के माध्यम से संगीत का सुन्दर व सार्थक चित्रण किया है। कवि कोमल के एक समन्दर : मेरे अन्दर काव्य में सागर के माध्यम से अपने भावों को संगीतात्मक ध्वनि प्रदान की। सागर के दर्शन से कवि की आत्मा अनंदित होकर झूम उठती है। किरण की कलम से सागर के कागज पर मीन सा गीत देखकर कवि की वाणी गीतमय बन जाती है –

'अंग–अंग आग सा/फूल–फूल फाग सा
कूल–कूल काँपता/अंग–अंग झाकता
रूप की मस्ती नयी/दूर–दूर बिखर गयी।"[1]

संगीतात्मकता कवि कोमल के काव्य का मुख्य अंग है। उन्होंने 'बधाई' कविता के द्वारा शोषित, मजदूर एवं ग्रामीण जीवन का सुन्दर एवं हृदयग्राही चित्रण किया। कवि का मन ग्रामीण जीवन को देखकर आनन्दित हो उठती है :–

संलोनी–संदली बाँहो को/प्यार की नयी राहो को।"[2]
"मै मतवाला प्रेम पथिक हूँ/जाना है मुझे प्रेम –नगर
x x x
बढ़ता जाता अपनी धुन में/झरना जैसे झर–झर–झर ।"[3]

ऐसा माना जाता है कि संगीतात्मकता कविता का प्रमुख अंग है। कवि केदारनाथ कोमल की कविताओं में संगीतात्मक का भरपूर पुट देखने को मिलता है उनकी यह भावना बाल गीतों में और भी अधिक बलवती हो उठती है। इस दृष्टि से उनका काव्य श्रेष्ठ है।

प्रकृति का मानवीकरण – प्रकृति में सचेतनता का आरोप करने और उसे मानवीय रूप में चित्रित करने की पद्धति को प्रकृति का मानवीकरण कहते हैं जब कवि प्रकृति से घनीभूत

[1] केदारनाथ कोमल ;एक समन्दर : मेरे अन्दर, पृ0 22
[2] केदारनाथ कोमल ; सूरज के आस–पास पृ0 19
[3] केदारनाथ कोमल ; सुगन्ध पृ0 26

तादात्मय स्थापित कर लेता है। तो उसे प्रकृति अपनी तरह हँसती खेलती गाती दिखाई देती है। इस सन्दर्भ में 'डॉ० अजब सिंह ने कहा-"स्वच्छन्दतावादी प्रकृति सचेतन बन गयी। वह मनुष्य की तरह की गतिशील दिखायी पड़ने लगी। प्रकृति को मानव की तरह सचेतन रूप में स्वच्छन्दतावादी कविता में ही स्वीकृति मिली।"[1]

इस दृष्टि से कवि कोमल ने अपनी कविताओं मे प्रकृति कहा बहुत हृदयग्राही मानवीकृत चित्रण किया :-

1. "पवन संग/मृगनयनी यादे झूम रही
अलहड़ कलियों के अधर चूम रही
आज जर्रा-जर्रा गुनगुनाता
आज अपने पे प्यार आता......... ।"[2]

एक समन्दर : मेरे अन्दर काव्य में कवि ने सागर को सम्बोधित करके अपने भावों को व्यक्त किया है और यह सागर कुछ ओर नही बल्कि उसका 'मन' है अतः कवि ने सागर को मानवीकृत करते हुए अपने को तथा मनुष्यों के भावों को व्यक्त किया है –

1. "सागर ने/सपने में कहा
गा तू मरे संग गा
सा..... रे.....गा.....म........गा.....
और मैं/सागर हो गया............ ।"[3]

नवीन उपमान :- उपमान भी कविता का मुख्यतत्व है जिनके द्वारा कवि अपने भावों को सार्थकता प्रदान करता है और अपनी भावनात्मक विचारों को उपमानों के द्वारा दूसरों तक पहुचाने का प्रयास करता है। कोमल ने अपने काव्य में अनके नये उपमानों का प्रयोग किया है।

---

[1] डॉ० अजब सिंह; आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, प्र०सं० 1975, पृ० 33
[2] केदारनाथ कोमल, सुगन्ध, पृ० 24
[3] केदार नाथ कोमल ;एक समन्दर : मेरे अन्दर पृ० 48

कवि केदारनाथ कोमल ने **'एक समन्दर : मेरे अन्दर'** काव्य संग्रह में 'सागर' को नयन का उपमान माना है। मेरे विचार से **'सागर'** मानव हृदय का उपमान भी है क्योंकि मनुष्य हृदय की अथा गहराईयों में अनेकों विचार तंरगित होते रहते हैं। कवि केदार नाथ कोमल के ये उपमान 'एक समन्दर : मेरे अन्दर' की इन दोनों कविताओं से स्पष्ट हो जाते हैं :–

'मीन सा गीत
लहर–लहर झूमता
दिशा–दिशा चुमता'[1]

यहाँ **'रोशनी'** आधुनिकता की अंधी चमक है और **'जीवन नागिन'** के समान संसारिक मोह, माया व वासनाओं में फँसा हुआ है।

'जिन्दगी / मच्छरों–खटमलों
उल्लूओ और भूतों से भरा
मकान है।'[2]

कवि ने 'जिन्दगी' नामक कविता में मच्छरों, खटमलों उल्लूओं को मानव की जिन्दगी में बुराइयों उपमान मानता है

अलंकार योजना :– साहित्य में अलंकार योजना का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता चला आ रहा है। अलंकारों का प्रयोग काव्य की चारुता तथा सुन्दरता बढ़ाने के लिए भी किया जाता है कभी–कभी अलंकारो का प्रयोग कवि अपनी विद्वता दिखाने के लिए भी किया जाता है। इसीलिए **केशव** को कठिन काव्य को प्रेत कहा गया है। लेकिन आधुनिक प्रगतिशील कविता में, कवियों ने अलंकारो का प्रयोग अपने पांडित्य प्रदर्शन के लिए नहीं किया। उनमें सरल स्वाभाविकता है।

---

[1] केदारनाथ कोमल, एक समन्दर : मेरे अन्दर ; प्र0सं0 1998, पृ0 22
[2] केदारनाथ कोमल, अंधे सूरज का सफर, पृ0 17

कवि केदारनाथ कोमल के काव्य में अलंकार अनायाश ही आ जाते हैं। कोमल जी ने अलंकारों का प्रयोग अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए स्वाभाविक प्रयोग किये। अतः इस दृष्टि से कोमल जी काव्य उपयुक्त है उनके काव्य में रूपक, पुनरूक्तिप्रकाश, मानवीकरण, उपमा आदि अलंकारो का बहुत ही सुन्दर एवं सजीव प्रयोग मिलता है।

मानवीकरण :–आमानव में मानव गुणों के आरोप करने की साधरण प्रक्रिया या प्रवृत्ति को मानवीकरण कहते हैं कोमल जी के सम्पूर्ण काव्य में मानवीकरण का पूर्ण उपयोग मिलता है। कोमल जी का **एक समन्दरः मेरे अन्दर** काव्य इस बात का साक्षात प्रमाण है, उन्होंने सागर को मानवीय ह्रदय के रूप में सम्बोधित किया है। प्रस्तुत काव्य में वे सागर, लहर, पवन, आकाश, धरती आदि का मानवीकरण करते हैं –

1. मै सागर
   सूरज –सा कण कण चूमता
   पूर्णिमा सा
   स्वप्न–फूलों संग झूमता
   धरा की धड़कन संग/घूम–घूम –घूमता ।'[1]
2. प्रेयसी के मुखड़े सा चाँद
   रूप की रग–रग में
   उजले गीत बिखरा गया।'[2]

पुनरूक्ति प्रकाश – जहाँ अपने भावों को अभिष्ट रूचि कर बनाने के लिए एक ही शब्द की अनेक बार आवृत्ति की जाए, वहाँ पुनरूक्तिप्रकाश होता है–

दीवारों के पीछे, पीछे, पीछे,
और और और/दीवारें, दीवारें, दीवारें।[3]

---

[1] केदारनाथ कोमल; एक समन्दर : मेरे अन्दर,, पृ0 53.
[2] केदारनाथ कोमल ; अंधे सूरज का सफर, पृ0 64
[3] केदारनाथ कोमल ; चौराहे पर पृ0 17

यहाँ कवि का आशय दीवारों से सामाजिक वैमनस्यता से है। जैसे–काम की दीवारें, जाति की दीवारें, धर्म की दीवारें आदि ।

रूपक – का शाब्दिक अर्थ ; रूप ग्रहण करना।जब उपमेय या उपमान में से कोइ दूसरे का रूप ग्रहण कर लेता है तो अभेद या तादात्म्य सम्बन्ध स्वतः ही स्थापित हो जाता है। जैसे चद्रन्मुख, पद–कमल आदि

प्रेमसी को मुखड़े सा चांद
रूप की नस–नस में
उजले गीत बिखरा गया।[1]"

अन्ततः यह कहना समीचीन नहीं होगा कि कवि **केदारनाथ कोमल** का काव्य शिल्प की दृष्टि से आधुनिक प्रगतिशील कविता में अपना श्रेष्ठ स्थान रखता है। उनके काव्य में भाषा की सहजता, संगठन, बिम्ब योजना, संगीतात्मकता, प्राकृति का मानवीयकरण अलंकार, योजना, मुहावरों तथा लोकोक्तियों का सुन्दर व सार्थक समंवय है। कवि ने अपने काव्य में, अपने भावों तथा विचारों को पाठकों तक पहुचानें में सफल हुए है यही प्रति प्रत्येक कवि का प्रतिपाद्य होता है कि वह अपने विचारों को दूसरों तक पहुचायें और यह कार्य भाषा से संयोजन से ही हो सकता है। अतः कवि कोमल का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। इसीलिए उनका काव्य शिल्प की दृष्टि से पूर्ण रूप से सफल है।

❋❋❋

---

[1] केदारनाथ कोमल ; कोहरे से निकलते हुए, पृ0 23

अष्टम अध्याय :

उपसंहार

अष्टम अध्याय

उपसंहार

आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि है जो मध्ययुगीन भावबोध से हटकर एक अभिनव जीवन दृष्टि का बोधक है। आधुनिकता मनुष्य को मनुष्य के रूप में समझने की मांग है दूसरे इसमें वैज्ञानिक दृष्टि से भी मानववाद का पक्ष प्रबल है। इसका एक कारण यह भी है कि कोई भी वैज्ञानिक दृष्टि मानवता के विरोध में खड़ी नहीं होती यदि आधुनिकता को सार्थकता प्रदान करनी है तो वह मानववाद से संपृक्त विशिष्ट युग–बोध के माध्यम से ही हो सकती है और इस कार्य के लिए ऐतिहासिक बोध की आवश्यकता रहती है। यही ऐतिहासिक बोध आधुनिकता बोध का मूल रूप स्वप्न है।

आधुनिकता का अनिवार्य तत्त्व है –स्वचेतना क्योकि 'स्वं' का सबसे गहरा बोध और सम्पर्क वर्तमान से होता है वर्तमान की चिन्ता के माध्यम से ही आधुनिक व्यक्ति भविष्य को रूपायित करता है। अपने वर्तमान के प्रति तीव्रतम सजगता आधुनिकता का केन्द्रीय तत्त्व है स्वचेतनता मानवीय व्यक्तित्व की चरम परिणति है इस प्रकार आधुनिकता के तीन बिन्दु हो सकते है :–

1. विवेकपूर्ण वैज्ञानिक दृष्टि
2. प्रगतिशील परम्परा का समर्थन
3. वर्तमान के साथ जीवन्त एवं सचेतन सम्बन्ध

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता कि आधुनिकता, एक तार्किक दृष्टि तथा जीवन मूल्य है। आधुनिकता जीवन के प्रति तार्किक दृष्टि होने के कारण आज तक अपना कोई कोण स्थापित नहीं कर पा रही है और यह आज भी अपनी विकासमान स्थिति में गतिशील है। इसीलिए डॉ0 इन्द्रनाथ मदान का मानना है कि 'आधुनिकता आज भी अनेक दौरो से गुजर रही है अतः वह एक प्रक्रिया है। वस्तुतः आधुनिकता मानव सभ्यता एवं संस्कृति के विकास बोध की प्रक्रिया है। इसी कारण हम आधुनिकता को न तो केवल परम्परा में देख सकते हैं और न ही केवल परम्परा से कट कर। आधुनिकता अपना ऐतिहासिक बोध भी रखती है,

इसलिए इसे अतीत की सापेक्षता में भी देखना चाहिए, क्योंकि यह अतीत से ऊर्जा ग्रहण करके वर्तमान को संवारने का कार्य करती है अर्थात् नवीन दृष्टि, नवीन जीवन मूल्य तथा नवीन अविष्कारो से भी अवगत कराती है।

इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि आधुनिकता बौद्धिकता का ही परिणाम है। इस बौद्धिकता ने हमें नवीन विचरणा के लिए उकसाया यद्यपि इससे हमारी सभ्यता एवं संस्कृति को थोड़ा नुकसान अवश्य हुआ लेकिन उससे कहीं अधिक हमें सहुलतें प्रदान की है। आधुनिकता का आशय देशकाल बोध से लिया जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आधुनिकता मानवीय प्रगति की सूचना देती है तथा नये परिवेश को अपने अन्दर समाहिता करके चलती रहती है।

समकालीनता में आधुनिकता को देखा जा सकता है क्योंकि वर्तमान में आधुनिकता और समकालीनता दोनों सामाहित होते हैं। समकालीनता में यथार्थ बोध प्रमुख रहता है यही यथार्थवादी दृष्टिकोण कविता में कथ्य के स्तर पर उभरता है अतः समकालीनता एक मानसिकता है जो नवीन जीवन–मूल्यों को उनके नये आयामों में जीवंत रूप प्रदान करती है। अतः यह प्रस्तुती यथार्थ के धरातल पर होती है। सम– कालीनता देशकाल से सम्बद्ध है, ऐतिहासिक है, काल विशिष्ट है। समकालीनता शब्द वस्तुतः आधुनिकता का लघु रूप है यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है कि हम आधुनिक होकर समकालीनता से शत्–प्रतिशत् सम्बन्ध नहीं रख सकते। जबकि हम समकालीन होकर आधुनिकता से अपना शत्–प्रतिशत् सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।

आज कल हमारे यहाँ साहित्य में उत्तर आधुनिकतावादी दृष्टि देखने को मिल रही है जो घोर यथार्थवादी है, जिसे साहित्य और समाज की नयी सोच के रूप में देखा जा रहा है उत्तर आधुनिकता भी आधुनिकता की भाँति एक फिसलनदार पदावली है जिसे हम आसानी से स्थिर नहीं कर सकते। वैसे आधुनिकता के अभाव में हम उत्तर आधुनिकता की कल्पना नहीं कर सकते। अतः मेरे विचार से उत्तर आधुनिकता साहित्य संस्कृति, धर्म तथा शास्त्रों को पुर्नव्याख्यायित एवं पुनर्मूल्यांकित करने की कौशिश कर रही है।

आधुनिकता आज अपने विविध आयामो से गुजर चुकी है और गुजर रही है। साहित्य का चाहे कोई भी आन्दोलन रहा हो ; चाहे वह मनोविज्ञान हो, मार्क्सवाद हो समाजवादी यथार्थवाद हो, अतिमानववादी चेतना हो, अस्तित्ववादी दर्शन या शैली विज्ञान हो ये सब आधुनिकता के ही आयाम हैं।

आधुनिक हिन्दी कविता आधुनिकता के विविध चरणों से गुजर चुकी है और अपनी स्थिति में आज भी गतिमान है वैसे हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग की शुरूआत 1850 से मान जाती है। भारतेन्दु युग में हिन्दी की विविध विद्याओ का सूत्रपात हुआ तथा साथ ही 1857 की क्रान्ति ने भारतीय समाज को नवीन विचरणो के लिए उकसाया तो साहित्यकार एवं कवि पर भी उसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता का पहला चरण नवजागरण युग से माना जाता है। इसके पश्चात् आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता के अनेक दौरो की शुरूआत होती है जो स्वच्छन्दतावाद,छायावाद,छायावादोत्तर, कविता–नवस्वच्छन्दतावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, नवगीत, अकविता, सहजकविता तथा आज की वर्तमान कविता से होते हुए आज तक जारी है और आज की हिन्दी कविता भी उत्तर आधुनिक होने की गवाही दे रही है।

किसी भी कवि या साहित्यकार के लिए देशकाल व परिस्थितियां बहुत ही मुख्य होती है क्योंकि वह उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं परिस्थितियों से ही संघर्ष कर रचनाकार अपने काव्य का निर्माण करता है कविता कवि के मन की आत्माभिव्यक्ति होती है जिसके द्वारा वह अपने अन्तःमन की यात्रा को चित्रित करता है। इस प्रकार कवि केदारनाथ 'कोमल' का रचना संसार उसके जीवन संघर्ष की गवाही देता है केदारनाथ कोमल की रचना यात्रा चौराहे पर से होकर कोहरे से निकलते हुए से होकर, सुंगध, अन्धे सूरज का सफर, एक समन्दर : मेरे अन्दर तथा शब्द नाच आदि की यात्रा करता हुई ; वर्तमान समाज के मनुष्य को ऐसे चौराहे पर लाकर खड़ा करती है जहाँ से वह अपने लक्ष्य की ओर आसानी से जा सके। कवि ने वर्तमान मनुष्य की कुण्ठित एवं व्यथित स्थिति को उजागर तो किया है लेकिन साथ ही उसे संघर्ष करने की प्रेरणा भी देते है।

अतः आधुनिकता की दृष्टि से कविवर केदारनाथ कोमल की कविताओं का अध्ययन आपेक्षित है, कवि का काव्य समाज की यथास्थिति को ही चित्रित नहीं करता अपितु उसे सलक्ष्य हल भी प्रदान करते हैं। उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से आधुनिक मनुष्य के जीवन–बोध को भी प्रस्तुत किया है तथा साथ ही जो समाज में मानव मूल्यों का हृास हुआ है वह उसे भी पुनः स्थापित करना चाहते हैं। कवि केदार नाथ कोमल की कविताएं अपने अन्दर, स्वच्छन्दतावाद दृष्टि, मार्क्सवादी दृष्टि, प्रगतिवाद तथा प्रयोगवादी, नयी कविता के भाव बोध एवं शिखरो चित्रित करती है कुल मिलाकर कवि कोमल का काव्य मानव मूल्यों की स्थापना एवं नवमानव की तालाश में भटक रहा है।

❋ ❋ ❋

मूल शोध ग्रन्थ सूची (अ)

केदारनाथ 'कोमल'	चौराहे पर (काव्य संग्रह)	समकालीन प्रकाशन सत्याग्रह मार्ग, वराणसी, प्रथम सं. 1968
	कोहरे से निकलते हुए (काव्य संग्रह)	पाण्डुलिपि प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975
	सूरज के आस–पास (काव्य संग्रह)	मिलिन्दप्रकाशन 812 कंदास्वामी बाग, हैदराबाद –1 प्रथम संस्करण 1978
	मेरे शब्द : मेरा लहू	नटराज पब्लिशिंग हाउस होली मोहल्ला, करनाल (हरियाना) प्रथम संस्करण 1983
	अंधे सूरज का सफर (काव्य संग्रह)	पराग प्रकाशन, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली, प्रथम सं. 1986
	रेत पर लकीरें (काव्य संग्रह)	वाणी प्रकाशन, 21ए दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1988
	पतझड़ के हस्ताक्षर (काव्य संग्रह)	महाशक्ति साहित्य मंदिर, रंगीलादास चौखम्बा, वाराणसी प्रथम संस्करण 1991
	सुगन्ध	आन्तरा भारती प्रकाशन औरादशहाजानौ (महाराष्ट्र) प्रथम संस्करण 1992,
	परम्परा की पदचाप (काव्य संग्रह)	निर्मल पब्लिकेशन्स कबीर नगर शाहदरा, दिल्ली–94 प्रथम संस्करण 1995

	एक समन्दर : मेरे अन्दर	श्रीमारूती प्रकाशन गोल्लर हट्टी–,नागदेवनहलिल बेंगलूर–56 प्रथम संस्करण 1998
	शब्द नाच	अनुभव प्रकाशन, लाजपतनगर, साहिबाबाद–05, (गाजियाबाद), प्रथम संस्करण 1999

मूल ग्रंथ सूची (ब)

अज्ञेय	सदानीरा (सम्पूर्ण कविताएं)	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 – दरियागंज, नई दिल्ली–2 प्रथम संस्करण 1986 भाग 1
	सदानीरा (सम्पूर्ण कविताएं)	प्रथम संस्करण 1986 भाग 2
	आलवाल	राजकमल प्रकाशन, प्राइवेट लि. दिल्ली–6 प्रथम संस्करण 1971.
अज्ञेय (सम्पा0)	तीसरा सप्तक	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली तृतीय संस्करण 1967,
,डॉ0 इन्द्रनाथ मदान (सम्पा.)	कविता और कविता	राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लि. 8 नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–6,प्रथम संस्करण 1967
डॉ0 जयदेव सिंह, डॉ0 वासुदेव सिंह (सम्पा0)	साखी (कबीर वाड्.मय)	विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, खण्ड तीन प्रथम संस्करण 1976
डॉ0 नेमिचन्द्र जैन (सम्पा0)	मुक्तिबोध रचनावली,	राजकमल प्रकाशन, प्राइवेट लि. 8 नेताजी सुभाष मार्ग,नई दिल्ली भाग 2, प्रथम संस्करण 1980,

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'	हम विषपायी जनम के	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, काशी संस्करण 1964
महादेवी वर्मा	यामा (काव्य संग्रह)	भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबाद तृतीय सं. संवत् 2008
डॉ0 रामविलास शर्मा (सम्पा.)	राग विराग	लोक भारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 1969,
डॉ0 विजेन्द्र स्नातक डॉ0 रामेश्वर शुक्ल 'अचल' डॉ0 कुमार विमल (संपादक मंडल)	'तरूण' काव्य ग्रंथावली	नेशनल पब्लिशिंग हाउस 23 दरियागंज नई दिल्ली –2 प्रथम संस्करण 1989
डॉ0 रामवीर सिंह (संपा0)	आधुनिक काव्य संग्रह	विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी द्वितीय संस्करण 1982
डॉ0 श्यामसुन्दर दास (सम्पा.)	कबीर ग्रंथावली	नगरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 15वां संस्करण संवत् 2014 वि.

संदर्भ ग्रंथ सूची (स)

डॉ0 अजब सिंह	आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दता –वादी प्रवृत्तियाँ	विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी–1 प्रथम सं0 1975,
	स्वच्छन्दतावाद : छायावाद	" " " प्र0सं0 1975
	नवस्वच्छन्दतावाद	" " " प्र0सं0 1987
	चेतना शिक्षा एवं संस्कृति	" " " प्र0सं0 1997
	यथार्थवाद : पुनर्मल्यांकन	" " " प्र0सं0 1998
डॉ0 अम्बादन्त पाण्डेय	आधुनिकता और आलोचना	प्रेम प्रकाशन मंदिर, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1985

डॉ0 अवध त्रिपाठी,	नई कविता में वैयक्तिक चेतना	जवाहर पुस्तकालय, मथुरा प्रथम संस्करण जून 1979
डॉ0 इन्द्रनाथ 'मदान',	आधुनिक कविता का मूल्यांकन	हिन्दी भवन, जालधर इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1962
	आलोचना और साहित्य	नीलाम प्रकाशन, इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1962
	निबन्ध और निबन्ध	बंसल एण्ड कम्पनी, शाहदरा, प्रथम संस्करण अक्टूबर 1966,
	आधुनिकता और हिन्दी साहित्य	राजकमल प्रकाशन, प्रा0 लि0 नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–6 प्रथम संस्करण 1973
डॉ0 ई. चौलिशेव–	सुमित्रानन्दन 'पन्त' : आधुनिक हिन्दी कविता में परम्परा और नवीनता	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, दिल्ली–6, प्रथम संस्करण 1970.
ओमप्रकाश सहगल (अनु0)	मार्क्सवाद क्या है? (एमिलवर्न्स–मूल लेखक)	पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, प्रा0 लि0 नई दिल्ली-55 सातवां संस्करण 1963
डॉ0 कमला आत्रेय	आधुनिक मनोविज्ञान और सूरकाव्य	वि0भू0 प्रकाशन,साहिबाबाद प्रथम संस्करण अगस्त,1976
डॉ कमला प्रसाद,	रचना और आलोचना की द्वन्द्वात्मकता	
कमलेश्वर	नयी कहानी की भूमिका	अक्षर प्रकाशन, प्रा0 लि0 दरियागंज, दिल्ली–6 द्वितीय संस्करण 1969

डॉ0 कृष्णकुमार जमुआर,	मनोविज्ञान की रूपरेखा	बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना प्रथम संस्करण 1973,
डॉ0 कृष्णलाल	तारसप्तक के कवि : काव्य शिल्प के मान	साहित्य प्रकाशन, मालीबाग दिल्ली प्रथम सं0 1979,
डॉ0 कुमार विमल	नयी कविता : आलोचना और कला	भारतीय भवन पटना, प्रथम संस्करण 1963,
	आधुनिक काव्य	अर्चना प्रकाशन, आरा (बिहार) प्रथम संस्करण 1964,
	सौन्दर्यशास्त्र के तत्त्व	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0 दिल्ली–6 प्रथम संस्करण 1967
	कला विवेचन	भारतीय भवन पटना, प्रथम संस्करण 1968,
डॉ0 कुँवरपाल सिंह	साहित्य समीक्षा और मार्क्सवाद	अरूणोदय प्रकाशन शाहदरा, दिल्ली संस्करण 1992
डा0 कैलाश वजपेयी	आधुनिक काव्य में शिल्प	आत्माराम एण्ड सन्स कश्मीरी गेट, दिल्ली–6 प्रथम सं01963,
डॉ0 गंगाप्रसाद विमल	आधुनिकता : साहित्य के सन्दर्भ में	दी मैकमिलन ऑफ इण्डिया लि0, नई दिल्ली प्रथम सं0 1978
गजाननमाधव मुक्तिबोध	नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नेताजी सुभाष मार्ग,दिल्ली–6 संस्करण फरवरी 1960.
	एक साहित्यिक की डायरी	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन वाराणसी, तृतीय संस्करण,1969

	नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1971.
डॉ0 गणेश दत्त गौड़	आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन	सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, संस्करण जनवरी 1965.
गिरिजाकुमार माथुर,	नयी कविता : सीमाएं और सम्भावनाएँ	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण 1973.
डॉ0 गुलाब राय	सिद्धान्त और अध्ययन	आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली प्रथम संस्करण संवत् 1917.
चन्द्रदीप त्रिपाठी, (अनु0)	श्री अरविन्द के पत्र	श्री अरविन्द सोसायटी,पांडिचेरी खण्ड 16, भाग–1 प्रथम सं01974.
डॉ0 जगदीश गुप्त,	नयी कविता स्वरूप और समस्याएं	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1969.
डॉ0 जगदीशचन्द्र चौरे,	माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का अनुशीलन	सतेन्द्र प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1982.
जगदीश नारायण श्रीवास्तव,	समकालीन कविता पर एक बहस	चित्रलेखा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1978.
डॉ0 जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव,	जायसी के पदमावत का मूल्यांकन	स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1972.
जगन्नाथ वेदालंकार(अनु0)	योग समन्वय (उत्तार्द्ध)	श्री. अरविन्द सोसाइटी,पांडिचेरी खण्ड 4 प्रथम संस्करण 1969.
डॉ0 जनेश्वर वर्मा	हिन्दी काव्य में मार्क्सवादी चेतना	ग्रन्थम प्रकाशन रामबाग, कानपुर, प्रथम संस्करण 1974.

डॉ0 जयप्रकाश नारायण.	समाजवाद : सर्वोदय और लोकतंत्र	हिन्दी ग्रंथ अकादमी सम्मेलन भवन, पटना, प्रथम संस्करण अक्टूबर 1973.
डॉ0 तारकनाथ वाली	छायावाद और कामायनी	सार्थक प्रकाशन, गौतम नगर, नई दिल्ली, प्रथम सं0 1994.
डॉ0 त्रिभुवन सिंह	आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा	हिन्दी प्रचारक प्रकाशन, वाराणसी, तृतीय संस्करण,1973
देवेन्द्र इस्सर	साहित्य और आधुनिक युग बोध	कृष्णा ब्रादर्स, कचहरी रोड अजमेर, प्रथम संस्करण 1973.
	उत्तर आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच	इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन,कृष्णा, नगर, नई दिल्ली, प्रथम सं0 1996.
देवेन्द्र कुमार, (अनु0)	मनोविश्लेषण (मूललेखक–फ्रायड)	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली प्रथम संस्करण जुलाई 1958
श्री देवराहा बाबा	दिव्य दर्शन	सीवान सत्संग समिति, प्रथम संस्करण 1984.
डॉ0 देवराज	छायावाद का पतन	वाणी मन्दिर प्रेस, छपरा, संस्करण 1947.
	आधुनिक समीक्षा	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1954.
डॉ0 देवराज उपाध्याय	रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र	आत्माराम एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण 1954.
डॉ0 धनंजय (सम्पा.)	कमलेश्वर : कुछ विचार बिन्दु समकालीन कहानी :दिशा और दृष्टि।	अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद संस्करण 1970.

डॉ0 धनंजय वर्मा	आस्वाद के धरातल	विद्या प्रकाशन मंदिर दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1969.
	हस्तक्षेप	" " प्रथम संस्करण 1975
	आधुनिकता के बारे में तीन अध्याय	" " प्रथम संस्करण 1984
डॉ0 धर्मवीर भारती,	आधुनिक साहित्य बोध	प्रकाशक एवं प्रकाशन वर्ष उपलब्ध नहीं हैं।
डॉ0 नन्ददुलारे वाजपेयी	आधुनिक साहित्य	भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण संवत् 2018 वि.
	आधुनिक साहित्य	चतुर्थ संस्करण संवत् 2022 वि.
	हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी	इण्डियन प्रेस पब्लिकेशन्स, प्रा0 लि0 इलाहाबाद, संस्करण 1962.
	आधुनिक काव्य : रचना और विचार	साथी प्रकाशन, सागर (मध्यप्रदेश) द्वितीय संस्करण अगस्त 1963.
	नई कविता	मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लि0, नई दिल्ली, संस्करण,1976
	रीति और शैली	वाणी प्रकाशन, कमला नगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1979.
डॉ0 नगेन्द्र	आस्था का चरण	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज नई दिल्ली सं01968.
	आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ	अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1970.

	नई समीक्षा : नये सन्दर्भ	नेशलन पब्लिशिंग हाउस 23 दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1970.
	नई समीक्षा : नये सन्दर्भ	" " द्वितीय संस्करण 1974.
	शैली विज्ञान	" " प्रथम संस्करण 1976.
	साहित्य का समाज शास्त्र	
	काव्य शिल्प के आयाम	
	विचार और अनुभूति	गौतम बुक डिपो दिल्ली,द्वि0सं0.
डॉ0 नरेन्द्र भानावत	साहिय के त्रिकोण	अनुपम प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1968.
डॉ0 नरेन्द्र मोहन	आधुनिकता के सन्दर्भ में हिन्दी कहानी	आर्दश साहित्य प्रकाशन, वैस्ट सीलमपुर, दिल्ली, प्रथम सं0
	आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ	" " प्रथम संस्करण 1973
नरेन्द्र शर्मा	आधुनिक कवि	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वितीय संस्करण जनवरी 1967.
डॉ0 नामवर सिंह	कविता के नये प्रतिमान	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0 नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1968.
	कविता के नये प्रतिमान	" " तृतीय संस्करण 1982.
	इतिहास और आलोचना	" " संस्करण 1978.
	दूसरी परम्परा की खोज	" " संस्करण 1982.
	वाद विवाद संवाद	" " संस्करण 1989.

	छायावाद	" " पुर्नमुद्रित संस्करण 1995.
	आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, नवीन संस्करण 1999.
डॉ० निर्मला जैन	आधुनिक हिन्दी काव्य : स्वरूप एवं संरचना	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1984.
प्रभाकर माचवे (अनु०)	अस्तित्ववाद : पक्ष और विपक्ष (मूल लेखक–पालरूविचेक)	मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, संस्करण 1973.
डॉ० फूलबिहारी शर्मा	समीक्षा और मनोविश्लेषण	मैसर्स प्रेस लिंकर्स, खिरनी गेट, अलीगढ़, प्रथम सं० जून 1985.
डॉ० बच्चन सिंह	आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1994.
डॉ० भगवतीप्रसाद शुक्ल	आंचलिकता से आधुनिकता बोध	ग्रन्थम प्रकाशन, रामबाग, कानपुर, प्रथम संस्करण 1972.
डॉ० भोलानाथ तिवारी,	शैलीविज्ञान	शब्द घर प्रकाशन, तुर्कमान गेट, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977.
डॉ० मदनगोपाल गांधी,	गांधी और मार्क्स	मन्थन पब्लिकेसंस, रोहतक, (हरियाणा) प्रथम संस्करण 1992
डॉ० मनोहरलाल गौड़	धनानन्द और स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा	नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस प्रथम सं० संवत् 2015 वि.
'मार्क्स और एंगेल्स	कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र	मारटिन लॉरेंस लिमिटेड,लन्दन, संस्करण 1930.
डॉ० मीरारानी बल	राष्ट्रीय नवजागरण और हिन्दी पत्रकारिता	वाणी प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली , संस्करण 1994.

डॉ0 मोहन अवस्थी	आधुनिक हिन्दी काव्य–शिल्प	हिन्दी परिषद प्रकाशन, विश्वविद्यालय, प्रयाग, प्रथम संस्करण 1962,
योगेन्द्र शाही	अस्तित्ववाद ; किर्केगार्द से कामू तक	दी मैकमिलन कंपनी ऑफ इण्डिया लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975.
डॉ0 योगेश्वरी शास्त्री,	नन्ददुलारे वाजपेयी : स्वच्छन्दता –वादी आलोचना के सन्दर्भ में	ऋभचरण जैन एवम् संतति दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987.
डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ	आधुनिकता और आधुनिकीकरण	अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण 1969
डॉ0 रांगेय राघव	आधुनिक हिन्दी कविता में विषय और शैली	राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली, प्रथम संस्करण 1962.
डॉ0 रघुवंश	साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, काशी, प्रथम संस्करण 1963.
राजेन्द्र यादव,	कहानी : स्वरूप और संवेदना	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली, सं01978
डॉ0 रामचन्द्र तिवारी,	मध्ययुगीन काव्य साधना	विश्वविद्यालय प्रकाशन,,गौरखपुर प्रथम संस्करण सितम्बर 1962.
डॉ0 रामदरश मिश्र	आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि	अभिनव प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975.
डॉ0 रामधारी सिंह 'दिनकर'	शुद्ध कविता की खोज	1966 उदयाचल प्रकाशन,राजेन्द्र नगर, पटना, प्र0 सं0 1966
	संस्कृति के चार अध्याय	" " पंचम संस्करण 1970.

	आधुनिक बोध	पंजाबी पुस्तक भंडार, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1973,
	साहित्यामुखी	नेशनल पब्लिशिंग हाउस 23 दरियागंज, दिल्ली प्रथम संस्करण 1987.
डॉ0 रामविलास शर्मा	महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0 नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1977.
	अस्तित्ववाद और नयी कविता	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0 नई दिल्ली, प्रथम सं0 1978.
	मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1984.
	मार्क्स और पिछड़े हुए समाज	राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0 नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1986
डॉ0 रामेश्वरलाल 'खण्डेलवाल'	आधुनिक कविता में प्रेम और सौन्दर्य	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1958.
रैल्फ फाल्स	उपन्यास और लोक जीवन	पीपुल्स पब्लिगिंग हाउस प्रा0 लि0,नई दिल्ली, तृतीय संस्करण दिसम्बर 1980
डॉ0 रवीन्द्र 'भ्रमर'	समकालीन हिन्दी कविता	राजेन्द्र प्रकाशन, कृष्णानगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1972.
डॉ0 लक्ष्मीकांत वर्मा	नयी कविता के प्रतिमान	भारती प्रेस प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2014 वि.

	नये प्रतिमान : पुराने निकष	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1966.
डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	आधुनिक हिन्दी साहित्य	हिन्दी परिषद, इलाहाबाद यूनीवर्सिटी,, संस्करण 1954.
डॉ0 विजयदेव नारायण साही (सम्पा0)	नई कविता	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1966–67, अंक–8.
डॉ0 विजय द्विवेदी	नयी कविता प्रेरणा एवं प्रयोजन	प्रगति प्रकाशन, आगरा–3, प्रथम संस्करण 1978.
डॉ0 विद्यानिवास मिश्र	रीतिविज्ञान	कृष्णा प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1973.
डॉ0 विनयमोहन शर्मा	साहित्यान्वेषण	साहित्य सदन प्रकाशन, देहरादून प्रथम संस्करण 1969.
डॉ0 विरेन्द्र कुमार,	हिन्दी उपन्यासो में मार्क्सवादी चेतना	संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1994.
डॉ0 विश्वम्भरनाथ उपाध्याय	जलते और उबलते प्रश्न	बोहरा प्रकाशन, खजांची सदन जयपुर, प्रथम सं0 जुलाई 1969.
विश्वम्भर 'मानव'	आधुनिक कवि	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण,1965
डॉ0 शम्भुनाथ सिंह	छायावाद युग	सरस्वती मन्दिर, जतनवर, वाराणसी, संस्करण 1962.
	प्रयोगवाद और नयी कविता	समकालीन प्रकाशन वाराणसी, प्रथम संस्करण 1966.
डॉ0 शम्भूनाथ सिंह (सम्पा0)	नवगीत दशक	पराग प्रकाशन, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली, भाग 2, प्रथम

		संस्करण 1983.
डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त	कवि 'तरूण' दृष्टि और सृष्टि	
डॉ0 शिव कुमार मिश्र	यथार्थवाद	दि. मैकमिलन प्रकाशन कम्पनी ऑफ इण्डिया लि0, दिल्ली द्वितीय संस्करण 1978.
डॉ0 शिवदानसिंह चौहान,	आलोचना के मान	रणजीत प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिसर्स, चाँदनी चौक, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1950.
शिवप्रसाद सिंह	आधुनिक परिवेश और नवलेखन	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 1970.
डॉ0 श्याम सुन्दर झुनझुनवाला, (अनु0)	दिव्य जीवन	श्री अरविन्द सोसाइटी, पांडिचेरी, खण्ड 7, प्रथम संस्करण 1970.
बाबू श्यामसुन्दर दास,	साहित्यालोचन	इण्डियन प्रेस लि0, प्रयाग, 8वाँ संस्करण संवत् 2005.
डॉ0 श्यामसुन्दर मिश्र	अस्तिवाद और द्वितीय समरोत्तर हिन्दी साहित्य	विधा प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1971.
	अस्तित्त्ववाद और साहित्य	पंचशील प्रकाशन, फिल्म कॉलोनी,जयपुर, प्रथम सं0 1983
डॉ0 सन्तोष कुमार तिवारी,	कवि'तरूण'का काव्य संवेदना और शिल्प	उन्मेष प्रकाशन, जगदीश कालौनी, रोहतक(हरियाणा) प्रथम संस्करण अप्रैल 1990.
डॉ0 सत्यदेव चौधरी	भारतीय शैलीविज्ञान	अलंकार प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1983.

सुधीश पचौरी	उत्तर आधुनिकता : साहित्यिक विमर्श	वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम सं0 1996
सुधीश पचौरी (सम्पा0)	नामवर के विमर्श	प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995.
सुमित्रानन्दन पंत	आधुनिक कवि	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, दसवां संस्करण 5100.
समीक्षा ठाकुर (संकलन एवं संपादन)	कहना न होगा	वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 1994.
डॉ0 सुरेन्द्र सिन्हा,	हिन्दी उपन्यास	लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद संस्करण 1973.
स्टालिन	लेनिन के मूल सिद्धान्त	जनप्रकाशन ग्रह, बम्बई, संस्करण 1944
आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी,	मध्ययुगीनभाव बोध का स्वरूप	पंजाब यूनीवर्सिटी पब्लिकेशन ब्यूरो, चण्डीगढ़, प्र0 सं0 1970.
डॉ0 हरिचरण शर्मा,	नयी कविता, नये धरातल	पदम प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1969.
	नयी कविता का मूल्यांकन : परम्परा और प्रगति की भूमिका पर	आशा प्रकाशन ग्रह, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1972.
डॉ0 ज्ञानवती अरोरा	समकालीन हिन्दी कहानी विविधि आयाम	हिन्दी बुक सेन्टर यथार्थ के नई दिल्ली, प्र0 सं01999।

<u>इतिहास</u>

डॉ0 तारक नाथ वाली	पाश्चात्य काव्य शास्त्र का	दी मैकमिलन कंपनी ऑफ

	इतिहास	इण्डिया लि,शाहदरा, नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1974
डॉ. नगेन्द्र (सम्पा.)	हिन्दी साहित्य का इतिहास,	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज नयी दिल्ली–2 द्वितीय संस्करण 1976
	हिन्दी साहित्य का इतिहास	सं. 1987 " " " " "
	हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी प्रथम संस्करण, 10वां भाग
डॉ. बच्चन सिंह,	हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास	अंकुर प्रकाशन, जी 17 जगतपुरी, दिल्ली–53 प्रथम संस्करण 1996
आ0 रामचन्द्र शुक्ल	हिन्दी साहित्य का इतिहास	नगरी प्रचारिणी सभा, काशी संस्करण संवत् 2029 वि.
रामानन्द तिवारी एवं डॉ0 देवराज	भारतीय दर्शन शास्त्र का इतिहास	हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद द्वितीय संस्करण 1950
डॉ0 हरबंश लाल शर्मा (सम्पा0)	हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास	नागरी प्रचारिणी सभा काशी प्रथम संस्करण, 14वां भाग

<u>हिन्दी कोश</u>

कालिका प्रसाद (सम्पा0)	वृहद हिन्दी कोश	ज्ञान मंडल प्रकाशन लि. वाराणसी, तृतीय संस्करण
डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा,(सम्पा0)	हिन्दी साहित्य कोश	ज्ञान मण्डल प्रकाशन, वाराणसी संस्करण 1985, प्रथम भाग,
डॉ0 नगेन्द्र (सम्पा0)	भारतीय साहित्य कोश	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली–2

		प्रथम संस्करण 1981
नगेन्द्रनाथ वासु (सम्पा0)	हिन्दी विश्व कोश	बी. आर. पब्लिशिंग कॉपरेशन, दिल्ली–52, 14 वां भाग,
रामचन्द्र वर्म्मा (सम्पा0)	मानक हिन्दी कोश	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रथम खण्ड,
	मानक हिन्दी कोश	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रथम संस्करण, दूसरा खण्ड,
	मानक हिन्दी कोश	प्रथम संस्करण 1966 पाचवाँ खण्ड " " "
रामप्रसाद त्रिपाठी, (सम्पा0)	हिन्दी विश्व कोश	नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी प्रथम संस्करण 1967 नवांखण्ड,
डॉ0 श्यामदास सुन्दर दास, (सम्पा0)	हिन्दी शब्द सागर	नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी संस्करण 1965, प्रथम भाग
	हिन्दी शब्द सागर	संस्करण 1972 नवाँ भाग "
	संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ	रा. ना. वे. इलाहाबाद तृतीय संस्करण 1967

<u>पत्र–पत्रिकाऐं</u>

अभिनव भारती (वार्षिक)	अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी प्रेस, अलीगढ़ 1983–84, सुक्तांक वर्ष 1996–99,
आलोचना (त्रैमासिक)	राजकमल प्रकाशन, प्राइवेट लि0, नई दिल्ली जनवरी–मार्च 1957, अप्रैल–जून 1973, नवांक 25, वर्ष 19, जुलाई– सितम्बर 1973, नवांक 26 वर्ष 21,

इन्द्रप्रस्त भारती (त्रैमासिक)	हिन्दी अकादमी, दिल्ली जनवरी–मार्च 1991, जुलाई–सितम्बर 1991 अंक 3,वर्ष 4,
कसौटी (त्रैमासिक)	सारांश प्रकाशन प्राइवेट लि0, मयूर बिहार–1, दिल्ली–91 जुलाई–सितम्बर 1999
गगनाञ्चल (त्रैमासिक)	भारतीय सांस्कृतिक संबध परिषद,नई दिल्ली जनवरी–मार्च 1998, अंक 1, वर्ष 21,
दैनिक ट्रिव्यूनल(समाचारपत्र)	रविवार 5–11–78
श्री देवराहा बाबा	देवराहा दिव्य प्रकाशन, श्री देवराहा बाबा समाधि स्थल
दिव्य आलोक	दिव्य मचान, गुरू पूर्णिमा 1995
नयामान दण्ड (त्रैमासिक)	आ0 रामचन्द्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान वाराणसी। अक्टूबर 1996 से मार्च 1997 तक, संयुक्तांक 6–7, वर्ष 4,
नयी कविता	लोक भारती,इलाहाबाद अंक 7
परिशोध (वार्षिक)	पंजाब यूनिवर्सिटी, चण्डीगढ़,सन् 1981,संयुक्तांक 32–33 सन् 1982, अंक 34–35
पहल (त्रैमासिक)	प्रकाशन–101 रामनगर, आधारताल जबलपुर–4, अप्रैल–जून 1999, अंक 61, अप्रैल–जून 2000 अंक 64–65,
माध्यम (मासिक)	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, अप्रैल 1965, वर्ष 1, अंक 12, फरवरी 1966, वर्ष 2 अंक 10,
संचेतना कथा : समीक्षा	प्रकाशन एच 108 शिवाजी मार्ग, नई दिल्ली, सितम्बर– (त्रैमासिक) दिसम्बर 1969,अंक 3–4,वर्ष 3,
संस्कृति (त्रैमासिक)	प्रकाशन– शिक्षा और युवक सेवा मंत्रालय शास्त्रीभवन, नई–दिल्ली–1, हेमन्त, 1890 शक, अंक 1 वर्ष 10
समकालीन भारतीय साहित्य (द्विमासिक)	साहित्य अकादमी, नई दिल्ली जुलाई–अगस्त 1999, अंक 84,

हिन्दुस्तान साप्ताहिक 3–9 मई 1992

English Books

Anthony cronin	Question of Mordernity	Secker and Warburg, London Ed. 1966.
A.L. Lilleg	Modernism: A Record And a Reviues	
A. Oveckrenko	Socialist Realism and Modern Literary Process	
Benjamin. B. Wolman	Contemporary theories And system in Psyclogy	Happer and Raus, Newyork.
B. Russel	History of western Philosphy	Gorge Allen and Unwin, L.td, London 1954.
Charles Boudauin	The mith of Modernisty	
C.E.M. Joad	Guide of Modern Thought	Faber and Faber L.td. London.
C.G. Jung	Modern man in Search of Soul.	
Georg Lukeas	Studies in Eyropean Realism.	Hil way London, 1950.
G.S. Fraser	The Modern writer and His world.	KeuKyusha, Tokyo, 1960.
Heid breder	Seven Psychologys	N.Y. appelition country, Crofts 1993.

John Strachey	The Theory and Practice of Socialism	Victor Gallanez. L.td. London, 1936.
J.A. Symounds	A short History of Reanaissonce in Italy	Pearson Alfred. Newyork Ed. 1893.
Majed Husain	Evolution of Geographical thought	Rawat Publication Jaipur Ist Ed. August 1988.
Richard Ellmann and Charles feidelson	The Modern Tradition	Oxford University, Newyork, 1965.
Sigmund Freud	A General Introduction to Psycho-Analisis	Rajpal & Sons Delhi, (Hindi Ed) 1959.
	The Ego and the Id.	The Hogarth Press L.td, London 1952.
Stephen spender	The struggle of the modern	Hamish London, 1963.
Wallacek Ferguson	A Survey of European Civilization	IIIrd Ed, Part 1.
Wood worth	Contenporory school of Psychlology.	Methuen & Co. London. 1930.

English Excyelopedia

Chamber's Encyclopedia	Pergaman Press.	Ed. 1967. Val. 11.
Encyclopedia America	American corporation, Newyorck.Ist Ed.1829, vol. xxiii, Ed 1966. Part 23.	
Encyclopedia Britannica	Encyclopedia Bri, Inc University of chicago Ed. ix 1875- 1889, vol. xx, Part 15, Ed 1977 15th part xx	

नामानुक्रमणिका

डॉ0 अजब सिंह : 1, 3, 10, 53, 54, 59, 67, 68, 69, 70, 71, 83, 93, 96, 105, 113, 141,145, 154, 155, 224, 227, 230, 236, 239, 286, 288, 290, 311, 316 ।

अज्ञेय : 15, 28, 126, 136, 170, 171, 175, 217, 218, 263, 305 ।

महार्षि श्री अरविन्द : 141, 142, 143, 144 ।

अरस्तू : 92 ।

अर्नाल्ड टायनवी : 24 ।

अलफ्रेड एडलर : 98, 99 ।

अल्लामा इकबाल : 146 ।

अल्वर्ट हर्शमान : 24 ।

डॉ0 अवध नारायण त्रिपाठी : 302 ।

डॉ0 अशोक वाजपेयी : 55, 80, 138 ।

डॉ0 इन्द्रनाथ मदान : 1, 7, 8, 23, 27, 53, 59, 70, 72, 82, 134, 148, 150, 163, 168, 233, 320 ।

कबीरदास : 219 ।

कमलेश्वर : 83 ।

किर्केगार्द : 119, 120, 124 ।

डॉ0 कुमार विमल : 176, 311 ।

डॉ0 कुँवरपाल सिंह : 112 ।

डॉ0 केदारनाथ सिंह : 136, 246, 248 ।

डॉ0 कैलाश वाजपेयी : 112, ।

डॉ0 गिरिजाकुमार माथुर : 11, 26, 149, 171, 177 ।

डॉ0 गिरिश्वर मिश्र : 49 ।

डॉ0 गुलाब राय : 103 ।

गोर्की : 113, 114, 147 ।

डेकार्ट : 119 ।

डॉ0 त्रिभुवन सिंह : 193 ।

देकार्ते : 92, 93 ।

डॉ0 देवराज उपध्याय : 154 ।

श्री देवराहा बाबा : 141, 143, 145 ।

देवेन्द्र इस्सर : 30, 50, 74, 75, 76, 79, 85 ।

डॉ0 धनंजय वर्मा : 28 ।

डॉ0 धर्मवीर भारती : 285 ।

डॉ0 नगेन्द्र : 29, 43, 63, 119, 130, 157, 161, 265, 304 ।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी : 155, 160, 161, 287 ।

डॉ0 नरेन्द्र भानावत : 28 ।

डॉ0 नरेन्द्र मोहन : 5, 170 ।

डॉ0 नामवर सिंह : 45, 55, 125, 143, 160, 167, 186, 311 ।

निराला : 133, 143, 262 ।

डॉ0 निर्मला जैन : 132 ।

नीत्शे : 46, 122, 146, 213 ।

पन्त : 142, 167, 262 ।

डॉ0 पद्माधर त्रिपाठी : 178 ।

परमानन्द श्रीवास्तव : 77 ।

प्रह्लाद 'सूर्य' : 231 ।

प्रेमचन्द : 135 ।

प्लेटो : 92 ।

डॉ0 फूलविहारी शर्मा : 97 ।

फ्योरबाख : 123, 124 ।

डॉ0 बच्चन सिंह : 11, 87, 151 ।

डॉ0 भगवती प्रसाद शुक्ल : 29 ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : 153 ।

महादेवी वर्मा : 162 ।

महावीर प्रसाद द्विवेदी : 133, 153 ।

मार्क्स : 107, 110, 115, 116 ।

मार्विक : 49 ।

मुक्तिबोध : 125, 137, 172, 228, 263, 278 ।

मैथ्युअर्नाल्ड : 21, 22 ।
मोहन अवस्थी : 304 ।
मुकुटधर पाण्डे : 68 ।
युंग : 100, 101, 102 ।
योगेन्द्र शाही : 157 ।
रणवीर रांगा : 193 ।
डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी : 307 ।
डॉ0 रमेश कुन्तल मेघ : 7 ।
रवीन्द्र नाथ ठाकुर : 142, 159 ।
रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव : 79 ।
राजकमल चौधरी : 71 ।
रामचन्द्र शुक्ल : 69, 87, 116, 160, 161, 248 ।
डॉ0 रामदरश मिश्र : 28, 29 ।
रामधारी सिंह दिनकर : 14, 29, 40, 43, 83, 262 ।
डॉ0 रामविलास शर्मा : 49, 69, 82, 87, 163 ।
रामशरण शर्मा : 49, 82 ।
रामस्वरूप चतुर्वेदी : 27 ।
राहुल सांकृत्यायन : 107 ।
डॉ0 रामेश्वर खण्डेलवाल : 67 ।
राल्फब्राइटी : 23 ।
राफैल सैमुअल : 49 ।
डॉ0 लक्ष्मीकान्त वर्मा : 25, 30, 172 ।
डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : 40 ।
लियोनार्ड वाइण्डर : 23 ।
डॉ0 विजय द्विवेदी : 306 ।
डॉ0 विद्यानिवास मिश्र : 130 ।
डॉ0 विनय : 27 ।
डॉ0 विनय मोहन शर्मा : 25 ।
विन्सेट बकले : 22 ।

डॉ0 विपिन कुमार अग्रवाल : 26 ।

डॉ0 विश्वम्भर नाथ उपाध्याय : 26 ।

शंकर कुरूप : 190 ।

डॉ0 शम्भूनाथ सिंह : 25 ।

डॉ0 शिवदान सिंह चौहान : 129 ।

डॉ0 शैलाश जैदी : 48, 152 ।

डॉ0 श्यामसुन्दर दास : 105 ।

डॉ0 सत्यदेव चौधरी : 130 ।

डॉ0 सरगु कृष्ण मूर्ति : 265, 266 ।

प्रो0 साइडेल : 22 ।

सार्त्र : 118, 124 ।

सिगमंड फ्रायड : 93, 94, 95, 96, 99 ।

सुधीश पचौरी : 47, 84 ।

डॉ0 सुरेन्द्र सिन्हा : 13 ।

सुरेश विमल : 233 ।

स्टालिन : 112 ।

स्टीफेन स्पेण्डर : 21 ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : 24, 32, 33, 156, 157, 178, 190, 204 ।

डॉ0 हरिचरण शर्मा : 55 ।

डॉ0 हेमन्त जोशी : 51 ।

कृतियाँ

अकविता : 176 ।

अंधेरे में : 125, 173, 228 ।

आँसू : 309 ।

आधुनिक कवि : 167 ।

आधुनिक साहित्य : 287 ।

उत्तर आधुनिकता : साहित्य संस्कृति की नयी सोच : 76 ।

कंकावती : 71 ।

कलगी बाजरे की : 136 ।
कविता के नये प्रतिमान : 186 ।
कामायनी : 142, 309 ।
गीतांगिनी : 174 ।
ठेले पर हिमालय : 285 ।
ढोला मारू रा दुहा : 148 ।
तोड़ती पत्थर : 133 ।
नयी कविता : 172 ।
नयी कविता में वैयक्तिक चेतना : 302 ।
नये पत्ते : 172 ।
निकष : 172 ।
ब्रह्मराक्षस : 173, 278 ।
मानक हिन्दी कोश : 40, 91, 129, 141, 304 ।
मुक्ति प्रसंग : 71 ।
यामा : 162 ।
रीति विज्ञान : 130 ।
लिरिकल वैलेड्स : 65 ।
लोकायतन : 142 ।
वासंती (पत्रिका) : 174 ।
श्री शारदा (पत्रिका) : 68 ।
संदेश रासक : 148 ।
हिन्दी काव्य में मार्क्सवादी चेतना : 111 ।
हिन्दी विश्व कोश : 51 ।
हिन्दी शब्द सागर : 90, 129, 141, 304 ।
हिन्दी साहित्य कोश : 40, 148, 151 ।

स्थान

दिल्ली : 176, 260 ।
मुजफ्फरपुर : 174 ।, वाराणसी : 174, 248 ।